सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

४९

(जनवरी-मई १९३२)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डमें यरवदा जेलमे गाधीजी के कारावासके पहले पाँच महीनों (४ जनवरी ३२ से मई, १९३२ तक) की सामग्री आती है। लन्दनमे हुई गोलमेज-परिषदसे वापस आनेपर गाधीजी को गिरफ्तार कर लिया गया था। इस कारावाससे गाधीजी को आरामका एक मौका मिला जिसकी कि उन्हे बहुत जरूरत थी। इससे पहलेका लभभग एक साल वहुत ही कडी राजनीतिक हलचलोमे बीता था जिसने उन्हे बुरी तरह थका दिया था। इसलिए कारावासके पहले कुछ दिनोमे उन्होने अपनी दैनन्दिनीमे और मीराबहन व नारणदास गाधीको अपने पत्रोमे यही लिखा कि "अभी मुझे थकान लगती रहती है, नीदकी भूख भी मिटी नही है।" (पृष्ठ ४)। वल्लभभाई पटेलको गाधीजी के साथ ही गिरफ्तार किया गया था और यरवदा जेलमे उन्हीके साथ रखा गया था। फिर मार्चमे महादेव देसाई भी वहाँ आ गये। इन दोनोके साथ रहते हुए गांधीजी को, लगता है, कुछ महीने पूरा आराम मिला। जैसाकि इस खण्डकी सामग्री और महादेव देसाईकी उन दिनोकी डायरीसे स्पष्ट है, उनका समय ऐसी शान्तिसे गुजरा जैसी कि उन्हें जीवनमे फिर कभी नसीब नही हुई।

२८ दिसम्बर, १९३१ को बम्बईमे जहाजसे उतरनेपर गाधीजी ने देखा कि सरकार काग्रेसके प्रभावको मिटानेपर तुली हुई है। वह उनके साथ बातचीत करनेको तैयार नही थी, क्योकि उसके लिए उसने जो शर्ते रखी थी, उन्हे स्वीकार करना गांधीजी और काग्रेसके लिए अपमानजनक था। अत उन्होने देशको सत्याग्रह शुरू करनेकी सलाह दी। लेकिन, जैसा कि उन्होने भारत-मन्त्रीको जेलसे लिखे अपने एक पत्रमे वताया, वे "सहयोग देनेकी पूरी इच्छा लेकर ही बम्बई पहुँचे" थे (पृष्ठ ११) और मानसिक रूपसे फिर सघर्ष छेड़नेके लिए तैयार नही थे। कारावास इस तरह मानो एक वडी राहत बनकर आया। पुलिसके आनेकी खबर पाकर उन्होने वल्लभभाईको जो पुर्जा भेजा था, उसमे लिखा था, "ईश्वरकी कृपा निस्सीम है" (पृष्ठ २)।

जैसा कि गाधीजी का कायदा था, एक बार जेलमे पहुँच जानेके बाद उन्होने देशकी राजनीतिक हलचलोमे दिलचस्पी लेना एक तरहसे बन्द ही कर दिया। उन्होने केवल विनम्र विरोधके दो पत्र लिखे, एक बम्बईके गवर्नरको और दूसरा भारत-मन्त्रीको, जिनमे सत्याग्रह आन्दोलनको कुचलनेके लिए सरकार द्वारा की जा रही कठोर दमनकारी कार्रवाइयोका विरोध किया गया था। गिरफ्तारीके समय गाधीजी ने जल्दी-जल्दी वेरियर एल्विनको जो नोट लिखा था, उसमे उनसे ब्रिटिश लोगोको यह बता देनेके लिए कहा गया था कि "मै उन्हे भी वैसे ही प्यार करता हूँ जैसे अपने देशवासियोको। मैने उनके प्रति घृणा या द्वेषवश कभी कुछ नही किया और ईश्वरने चाहा तो भविष्यमे भी कभी ऐसा कुछ नही करूँगा" (पृष्ठ २)। गवर्नरको लिखे पत्रके अन्तमे भी इसी तरहका आश्वासन था: "मैने अग्रेजोका भला चाहनेवाले एक

मित्रकी हैसियतसे यह पत्र लिखा है। मैं चाहूँगा कि सघर्ष दोनो तरफसे सम्माननीय ढगसे चलाया जाये ताकि उसके अन्तमे दोनोमे से प्रत्येक पक्ष यह कह सके कि उसके कार्योंमे कोई द्वेषकी भावना नही थी" (पृष्ठ २९)। सर सैम्युअल होरको जो पत्र लिखा, उसकी भाषा अपेक्षाकृत तीखी थी. "मुझे लगता है कि आजकल जो दमन चल रहा है, वह जिसे औचित्यकी सीमा कहा जा सकता है, उससे बाहर हो गया है। सारे देशमे सरकारका आतक फैला हुआ है। अग्रेज अधिकारी और हिन्दुस्तानी अधिकारी दोनो ही मानवतासे भ्रष्ट होकर पशुओ-जैसा व्यवहार कर रहे हैं।" और उन्होने इस बातका सकेत दिया कि एक सत्याग्रहीकी हैसियतसे, उन्हे दोनो देशोके लोगोके सम्बन्धोको, जो पहले ही खराब है, और खराब होनेसे रोकनेके लिए अनिश्चित कालतक उपवास करना पड सकता है (पृष्ठ १८२)।

दमनके परिणामोकी उन्हे चिन्ता थी, पर उससे कही गहरी चिन्ता उन्हे इस बातकी थी कि ब्रिटिश सरकार दलित वर्गोंके लिए कही पृथक् निर्वाचक-मण्डल स्वीकार न कर ले, क्योकि उनका यह खयाल था कि यह कदम हिन्दू-समाजको "चीरकर उसके टुकडे-टुकडे" कर देगा। यद्यपि वे यह स्वीकार करते थे कि "सवर्ण हिन्दू कितना ही प्रायश्चित्त क्यो न करे, सदियोसे उन्होने हरिजनोको जान-बूझकर जैसा अध पतित जीवन जीनेके लिए बाध्य किया है, उसका परिशोधन वे नही कर सकते।" फिर भी उनकी यह धारणा थी कि "पृथक् निर्वाचक-मण्डल बनाना न तो . . . उनकी अधम स्थितिका प्रायश्चित्त है और न ही उसके निराकरणका उपाय है" (पृष्ठ १८१)। इसलिए उन्होने ब्रिटिश सरकारको यह जता दिया कि "अन्त्यजोके लिए अगर वह पृथक् निर्वाचक-मण्डल बनानेका निर्णय देगी, तो मुझे आमरण उपवास करना पडेगा", और अपने इस निर्णयके पक्षमे उन्होने कहा कि "मैंने जो कदम उठाना सोच रखा है वह कोई पद्धति नही, वह मेरे जीवनका एक अग है। वह अन्तरात्माका आदेश है, जिसकी मै अवज्ञा नही कर सकता" (पृष्ठ १८२)। बादमे सितम्बरमें उपवास जब शुरू हुआ तो उससे राष्ट्रीय आन्दोलनमे एक नया मोड़ आया और अन्तमे सत्याग्रह स्थगित कर दिया गया तथा हरिजनोकी दशा सुधारनेके लिए रचनात्मक कार्यका आरम्भ हुआ — दलित वर्गोंको अब हरिजन ही कहा जाने लगा था।

१९३०की तरह, इस बार भी गाधीजी ने जेलमे अपना अधिकाश समय कातने और पत्र लिखनेमे लगाया। लेकिन, इसके अतिरिक्त उन्होने, जैसाकि उनकी दैनन्दिनी की प्रविष्टियोंसे स्पष्ट है, पुस्तके भी काफी पढी, अर्थशास्त्र व खगोल विज्ञानका गहरा अध्ययन किया और आकाश-दर्शनमें बडे उत्साहसे रुचि ली। पत्रोका यद्यपि उनके लिए मुख्यतया नैतिक और शिक्षात्मक प्रयोजन था, (पृष्ठ ४४१), पर साथ ही वे उनकी मानवीय सम्पर्ककी भारी आवश्यकताकी भी पूर्ति करते थे। साथी कैदियोसे मिलनेकी अनुमतिके लिए सरकारसे प्रार्थना करते हुए गाधीजी ने लिखा. "यदा-कदा अपने कुछ साथियोसे मिलना मेरे लिए इन्सानियतका ऐसा तकाजा है जिससे मै अपनेको, अपने सम्पूर्ण मानसिक तन्त्रको झिझोड़े और तोड़े बिना, वंचित नही कर

सकता" (पृष्ठ १६४)। पत्रों द्वारा मानवीय सम्पर्ककी यह आवश्यकता भी पूरी होती रही। डॉ० प्राणजीवन मेहताके पुत्र मगनलालको अपने पत्रमे वे लिखते है: "यह याद रखना कि माँ-बाप अपने बच्चोके पत्रोसे कभी अघाते नही हैं" (पृष्ठ ४४८)। बहुत-से साथी कार्यकर्ताओ और आश्रमवासियोंके लिए गाधीजी पिता ही थे। इसीलिए वे उनके पत्रोंका, जिनमे गम्भीर आध्यात्मिक समस्याओंसे लेकर दात साफ करनेकी सर्वोत्तम विधितक (पृष्ठ २०६–७) सभी विषयोकी चर्चा रहती थी, स्वागत करते थे और उनका उत्तर देते थे।

गाधीजी के लिए कोई भी चीज इतनी तुच्छ नही थी कि उसपर ध्यान ही न दिया जाये। आश्रमके बच्चोंको यह बताते हुए कि अपने पत्रोको वे दिलचस्प कैसे बना सकते है, उन्होने लिखा: "तुम्हारे आसपास रोज कितनी बाते होती है। यदि तुम उनपर ध्यान दो, तो इतना लिख सको कि पन्नोपर-पन्ने भर जाये" (पृष्ठ ८८)। गाधीजी की यह अपार जिज्ञासा और जीवनकी छोटी-से-छोटी बातोमे उनकी रुचि खुद उनके कुछ पत्रोसे स्पष्ट होती है। बिल्लीके रग-ढग और अपने बच्चोके साथ उसके व्यवहारके जो वर्णन उन्होने दिये हैं (पृष्ठ ४००–१), वे गाधीजी की निरीक्षण-शक्तिके अच्छे उदाहरण है। 'आकाश-दर्शन' सम्बन्धी लेखो (पृष्ठ २८६–९) मे हमे गाधीजी के बौद्धिक व्यक्तित्वके ऐसे पक्षके दर्शन होते है जिसे उनके राजनीतिक और नैतिक कार्योने उन्हे पूर्णतया सन्तुष्ट करनेका अवसर नही दिया। सृष्टिकी विराटता, सुव्यवस्था और सुन्दरताकी अनुभूति उनमे प्राय. काव्यमयी शैलीमे व्यक्त हुई है। वे लिखते है: "जिस नाटककी योजना प्रकृतिने हमारे लिए आकाशमे की है उसको मनुष्यकृत एक भी नाटक नही पा सकता" (पृष्ठ २८८)। इस चिरन्तन नृत्यकी निरन्तर बदलती मुद्राओको देखते हुए उन्हे लगता था "आकाशमे अवस्थित दिव्यगण मानो ईश्वरका मूक स्तवन कर रहे हो" (पृष्ठ २८८)। मीराबहनको उन्होने लिखा, "इस अध्ययनसे अनन्त परमात्माके साथ मै अधिक एकराग हो जाता हूँ", (पृष्ठ ३३०) क्योकि "बाह्य दृष्टिसे वहाँ सहज ही ईश्वर रहता है" (पृष्ठ २८६)।

नारणदास गाधीको लिखे गये पत्र मुख्यतया आश्रमसे सम्बन्धित विषयोंपर है। वे यह दिखाते है कि गाधीजी को आश्रमवासियोकी नैतिक और आत्मिक उन्नति तथा नारणदासकी भलाई, दोनोकी फिक्र थी। जब-तब सामने आनेवाली मानवीय और प्रशासनिक समस्याओपर सलाह देनेके अलावा, गाधीजी आश्रममे नये-नये प्रयोग करनेके सुझाव भी रखते थे, ताकि आश्रम और भी अच्छी तरह सेवाकार्य कर सके। लेकिन साथ ही उन्हे इस बातका भी खयाल था कि नारणदासपर बहुत अधिक बोझ नही पडना चाहिये। और उन्होने उन्हे लिखा था: "विचारधारा चल रही है और मै उसे तुम्हारी ओर प्रवाहित करता चला जा रहा हूँ। . . . तुम समर्थ हो इसलिए मनमे जो नये-नये विचार आते हैं, उन्हें सामने रखते हुए सकोच नही करता। . . . जब तुम्हे लगे कि बहुत हो गया तब तुरन्त इशारा कर देना और मै चुप हो जाऊँगा" (पृष्ठ ४२७)।

मीराबहनको लिखे गये पत्रोमे उनसे उनके सम्बन्धका एक नया ही पहलू प्रकट होता है। प्रेमाबहनके नाम एक पत्रमे गाधीजी यह स्वीकार करते है कि "उसे (मीरा-बहनको) मैंने जितना रुलाया है उतना किसी भाई और बहनको नही रुलाया। और इसमे कारण मेरी कठोरता, अधीरता और मोह थे। . . मै उसे पूर्ण देखना चाहता हूँ। उसमे जरा भी कमी दिखाई देती है, तो . . मै उससे खीझकर बोलता हूँ। . . . मै इन अनुभवोसे अपने अन्दर भरी हुई हिंसाको पहचान सका और पिछले सस्मरणोको याद करके खुदको सुधारनेका प्रयत्न कर रहा हूँ" (पृष्ठ १४९)। गाधीजी के रुखमें हुआ यह परिवर्तन मीराबहनको लिखे उनके पत्रोमे भी प्रतिबिम्बित होता है। मीराबहनको यह सलाह देते हुए कि उनसे मुलाकातोके बारेमे वह अपने पर सयम रखे, वे कहते है. "परन्तु सयम वही है जिससे शक्ति मिले। अशक्ति या उदासी आती हो, तो वह यान्त्रिक या ऊपरसे लादा हुआ वन जाता है" (पृष्ठ ५९)। इसीलिए उन्होने मीराबहनको यह अनुमति दे दी कि यदि इस मामलेमे सयम उसके लिए कष्टकर हो तो वह जब इच्छा हो तब उनसे मिल सकती है। गाधीजी पहले प्राय इस बातपर जोर देते रहते थे कि मीराबहन उनके ध्येयमे लगकर ही उनकी सर्वोत्तम सेवा कर सकती है। लेकिन अब हम उन्हे नरम पडते देखते है। अपने एक पत्रमे उन्हे वे लिखते है. "जब मै बाहर आऊँगा, तुम निश्चय ही मेरे साथ रहोगी और निजी सेवाका पहलेवाला काम सँभालोगी। मै बिलकुल साफ देखता हूँ कि तुम्हारे पास आत्मविस्तारका केवल यही रास्ता है। मै पहलेकी तरह तुम्हे किसी भी प्रकार कुठित करनेका दोषी नही बनूँगा। . . मै इस सत्यको एक बार फिर समझ रहा हूँ कि सुराज्य स्वराज्यका स्थान नही ले सकता" (पृष्ठ २६)।

परन्तु गाधीजी के कुछ अत्यन्त दुर्लभ निजी प्रसग तो उन पत्रोंमें मिलते है जो उन्होने प्रेमाबहन कटकको लिखे। उसने प्रेमाबहनको इस बातके लिए प्रोत्साहित किया कि वह उससे मनचाहे प्रश्न पूछ सकती है और उसने, ऐसा लगता है, इस छूटका निस्सकोच उपयोग किया। आश्रमसे सम्बन्धित उसके प्रश्नोका उत्तर देते हुए गाधीजी ने समझाया कि किस तरह "इसमे धर्म और अर्थ दोनोकी भली-भाँति रक्षा होती है", और "आश्रमका अस्तित्व . . देशसेवाके द्वारा जगतसेवा करनेके लिए है और जगतसेवाके द्वारा मोक्ष प्राप्त करनेके लिए और ईश्वरका दर्शन करनेके लिए है" (पृष्ठ ३९)। अन्य लोगोको लिखे अपने पत्रोमे जहाँ वे शुद्ध चैतन्यकी स्थितिके बारेमे, जो विचार-तरंगोसे मुक्त होते हुए भी कोई निष्क्रिय स्थिति नही होती, यह सकेत-भर करते है कि मैंने उसकी "थोडी-सी झलक देखी है" (पृष्ठ ४३), और "मेरे लिए यह तो अनुभवगम्य-जैसा है" (पृष्ठ २१४), वहाँ प्रेमाबहनको वे ब्रह्मज्ञानके बारेमे कुछ विस्तारसे लिखते है. "यह मूक ज्ञान है—स्वयप्रकाश है", (पृष्ठ ४१३)। उसकी स्पष्ट आलोचनाओका गाधीजी स्वागत करते थे। प्रेमाबहनके नाम अपने एक पत्रमे उन्होने लिखा था. "किसी भी मामलेमे ईश्वरने मेरी जडताको लम्बे समयतक टिकने ही नही दिया। . . . तेरे पत्र इस जागृतिमें सहायक ही हैं" (पृष्ठ १४९)। उनकी असगतियोके बारेमे प्रेमाबहनने जो लिखा, उसे न्यायो-

चित ठहराते हुए गाधीजी ने कहा . " 'यग इडिया' का लेखक एक व्यक्ति है। आश्रममे सबके परिचयमे आनेवाला व्यक्ति दूसरा है। . . . उसपर मै सत्यका पुजारी हूँ, अत. जान-बूझकर दोष छिपानेका तो प्रयत्न भी मुझसे नही हो सकेगा। इसलिए मुझमे रहनेवाले कौरव जहाँ-तहाँसे निकल ही पडते है। . . . ऐसा दिखता है कि कौरवोकी हार हुआ करती है। लेकिन इस बारेमे अभी कुछ निश्चयपूर्वक नही कहा जा सकता। यह तो मृत्युके वाद ही कहा जा सकता है" (पृष्ठ ९२)।

इग्लैडसे लौटते हुए उन्होने रोमकी जो यात्रा की थी उसके बारेमे उसे लिखते हुए, गाधीजी ने कहा · "रोममे चित्रकला देखकर खूब आनन्द लिया .. वहाँ २–३ महीने रहनेको मिले, तो चित्र और मूर्त्तियाँ रोज देखूँ और धीरे-धीरे उनका अध्ययन करूँ" (पृष्ठ ३८)। यूरोपकी कलाकी भारतकी कलासे तुलना करते हुए उन्होने कहा, "भारतकी कला कल्पना-प्रधान है। यूरोपकी कलामे यथार्थताका अनुकरण है।" और अन्तमे लिखा, "इससे तू इतना तो देख ही सकेगी कि मै कलामे रस जरूर ले पाता हूँ। लेकिन ऐसे तो अनेक रसोका मैने त्याग किया है, मुझे करना पडा है। सत्यकी खोजमे जो रस मिले, उन्हे जी-भरकर मैने पिया है . . ." (पृष्ठ ३८)।

इग्लैडके अपने अनुभवोके वारेमे गाधीजीने आश्रमवासियोको लिखा। बच्चोको उन्होने एक मॉन्टेसरी स्कूलके अपने निरीक्षण और बच्चोकी एक 'चायपार्टी' का विवरण दिया। वहनोके आगे उन्होने यूरोपकी स्त्रियोकी निर्भीकता, सेवा-भावना और त्यागकी क्षमताका उदाहरण रखा। भारतकी स्त्रियोको वे यूरोपकी स्त्रियोसे किसी भी तरह कम नही समझते थे, फिर भी वे यह महसूस करते थे कि उनकी अधिकतर शक्ति दवी रहती है (पृष्ठ ३५)। उन्होने कहा "सवसे बडा दोष बहनोमे यह देखा गया है कि वे अपने मनकी वात छिपाये रखती है। . . . कदम-कदमपर जो उन्हे नही भाता, वही करती है और उन्हे वही करना भी चाहिए, ऐसा वे मानती है" (पृष्ठ २५७)।

आध्यात्मिक साधनाके अपने प्रचुर अनुभवके आधारपर गाधीजी ने सत्यके अन्य अन्वेषकोका अमूल्य पथ-प्रदर्शन किया। परन्तु उनके आगे जब एक 'स्मृति' रचनेका सुझाव रखा गया तो उन्होने उसे अस्वीकार कर दिया। अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए उन्होने कहा . "मै जो-कुछ कहता या लिखता हूँ, वह किसी विशेष पद्धतिके अनुसार किया गया विचार नही होता। सत्यकी आराधनाके सिलसिलेमे परिस्थितियोसे पार पाने लायक शक्ति ही मेरे पास है" (पृष्ठ २४८)। इसी बातको दूसरे ढगसे कहते हुए उन्होने नारणदास गाधीको अपने एक पत्रमे लिखा, "मेरा एक दोष कहो, गुण कहो, है। प्रसग आनेपर ही सम्बन्धित विचार प्रकट करता हूँ। . . . मेरा जहाज तो सहजभावसे यात्रा करनेवाला है। मेरे पास मार्गका नक्शा नही होता। हो भी काहे को? वह भक्तिके विरोधमे जाता है" (पृष्ठ ३३)। शास्त्रोकी व्याख्यामे भी वे हृदयकी सहजस्फूर्त अन्त:प्रेरणाओपर निर्भर रहते थे। वे कहते थे, "मुमुक्षुके हृदयमे जो अर्थ उतर आये, वह तो श्रद्धापूर्वक उसीपर दृढ रहे और उसे अनुभवमे

सिद्ध करे। . . जिन्हें अपना आचार दृढ करना है, उनके लेखे तो स्वीकृत अर्थके अनुसार आचरण करना ही समन्वय है" (पृष्ठ २४९)।

'गीता-पत्रावली' मे अधिकतर 'भगवद्गीता' का यह मुख्य कथ्य ही स्पष्ट और प्रवाहमयी शैलीमे सार-रूपमे रखा गया है कि सत्कर्मों और ईश्वरकी भक्ति द्वारा उत्तरोत्तर मनको पवित्र करता हुआ साधक अन्तमे परम सत्यका साक्षात्कार कर लेता है। प्रत्यक्ष जगत और आत्मिक जगतमे से आसानीसे और समयसे पूर्व एकको चुना जा सकता है, इस बातको अस्वीकार करते हुए गाधीजी ने इसपर जोर दिया कि "आश्रम जिस तरह साबरमतीके किनारे है, उसी तरह हमारे हृदयमे भी है" (पृष्ठ ४८)। वे यह मानते थे कि सभी आत्मिक व्याधियोका "मूल एक ही है और वह है अभिमान। दवा भी सबकी एक ही है। अभिमान त्याग दे और शून्य बन जाये" (पृष्ठ १०७)। गाधीजी के अनुसार मनको निर्मल करने और अहकारको मिटानेमे नि स्वार्थ सेवाके अलावा पौराणिक आख्यानोमे रस लेनेसे भी उपयोगी सहायता मिलती है। मनुष्यको अपने हृदयके अन्दर और बाहर दुनियामे एकसाथ बुराईके विरुद्ध सघर्ष करना है। बाहरी शत्रु सामाजिक या सस्थागत होता है, जिसका रूप हर युगमे बदलता रहता है। भीतरी शत्रु हमारे सामान्य मानव स्वभावमे निहित है और उसपर अन्तर्यामी ईश्वरका आह्वान करके ही काबू पाया जा सकता है। इसीलिए गाधीजी जातीय महाकाव्योकी आध्यात्मिक व्याख्या करके उनके 'काव्य-सत्य' को स्वीकार करते थे और उसका उपयोग करते थे। "रामायण और महाभारत दोनोमे देव और असुर, राम और रावणमे रोज चल रही लडाईका वर्णन है" (पृष्ठ ११०)। "सच्चा कुरुक्षेत्र हमारा अपना शरीर है। वह कुरुक्षेत्र भी है और धर्मक्षेत्र भी है" (पृष्ठ ११२)। सच्चे साधकका, जो समय-समयपर प्रत्यक्ष होनेवाले सापेक्ष सत्यको दृढतापूर्वक स्वीकार करता हुआ और उसे मुस्तैदीसे अमलमे लाता हुआ पूर्ण सत्यकी ओर बढता है, यह कर्त्तव्य है कि वह बुराईकी निर्ममतासे निन्दा करे, किन्तु बुराई करनेवालेके प्रति निर्ममता न दिखाये। "इस सापेक्ष सत्यको हम उस समय तो पूर्ण सत्य-जैसा ही मानकर चलेगे" (पृष्ठ ४६३)।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमे गाधीजी के स्वाक्षरोमे मिली है, उसे अविकल रूपमे दिया गया है। किन्तु दूसरों द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमे हिज्जोकी स्पष्ट भूले सुधार दी गई है।

अग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय उसे यथासम्भव मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। जो अनुवाद हमे प्राप्त हो सके हैं, हमने उनका मूलसे मिलान और सशोधन करनेके बाद उपयोग किया है। नामोको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोके उच्चारणमे सशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गाधीजी ने अपने गुजराती लेखोमे लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोमे दिये गये अश सम्पादकीय है। गाधीजी ने किसी लेख, भाषण आदिका जो अश मूल रूपमे उद्धृत किया है, वह हाशिया छोडकर गहरी स्याहीमे छापा गया है। भाषणोकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गाधीजी के कहे हुए नही हैं, बिना हाशिया छोडे गहरी स्याहीमे छापे गये हैं। भाषणो और भेटकी रिपोर्टोके उन अशोमे जो गाधीजी के नही है, कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कही कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि दाये कोनेमे ऊपर दे दी गई है, जहाँ वह उपलब्ध नही है वहाँ अनुमानसे निश्चित तिथि चौकोर कोष्ठकोमे दी गई है और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोमे केवल मास या वर्षका उल्लेख है, उन्हे आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमे रखा गया है। शीर्षकके अन्तमे साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गाधीजी की सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नही हुआ है, वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये है।

साधन-सूत्रोमे 'एस० एन०' सकेत साबरमती सग्रहालय, अहमदाबादमे उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमे उपलब्ध कागज-पत्रोका और 'सी० डब्ल्यू०' 'सम्पूर्ण गाधी वाङ्मय' (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा सग्रहीत पत्रोका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट दिये गये है। अन्तमे साधन-सूत्रोकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई है।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित सस्थाओ, व्यक्तियो, पुस्तकोंके प्रकाशको और समाचारपत्रके आभारी हैं

संस्थाएँ: साबरमती आश्रम सरक्षक तथा स्मारक न्यास और सग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद, गाधी स्मारक निधि व सग्रहालय, नई दिल्ली, बम्बई सरकार, इडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दन, भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इडिया), नई दिल्ली, और भारत कला भवन, वाराणसी।

व्यक्ति: श्री एल्डिथ एल्विन, कैन्टरबरी, श्रीमती मीराबहन, ऑस्ट्रिया, श्री वालजी गो० देसाई, पूना, श्री नारणदास गाधी, राजकोट, श्री छगनलाल गाधी, अहमदाबाद, श्रीमती लक्ष्मीबहन खरे, अहमदाबाद, श्री प्रभुदास गाधी, अल्मोडा, श्रीमती शान्ता देवी, श्रीमती प्रेमाबहन कंटक, ससवाड (पूना), श्रीमती गगाबहन वैद्य, बोचासण, मगला देसाई, बडौदा, श्रीमती वनमाला देसाई, नई दिल्ली, श्री हमीद कुरैशी, अहमदाबाद, श्री शिवाभाई पटेल, बोचासण, श्री हरिइच्छा कामदार, बडौदा, श्री नीलकण्ठ मशरूवाला, श्रीमती प्रेमलीला ठाकरसी, पूना, श्रीमती मेरी बार कोटगिरी; श्री पुरुषोत्तमदास दामोदर सरैया, बम्बई, श्रीमती मनु बहन मशरूवाला, अकोला, श्रीमती शान्ताबहन पटेल, अहमदाबाद, श्री परशुराम मेहरोत्रा, नई दिल्ली; श्रीमती पुष्पाबहन पटेल, अहमदाबाद, श्री कपिलराय मेहता, अहमदाबाद, श्री बनारसीलाल बजाज, वाराणसी; श्री घनश्यामदास बिडला, कलकत्ता, श्री कनुभाई मशरूवाला, अकोला, श्रीमती गंगाबहन झवेरी, अहमदाबाद, श्री द० बा० कालेलकर, नई दिल्ली, श्रीमती तहमीना खम्भाता, बम्बई, श्री शशिलेखा मेहता, अहमदाबाद, श्री भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्या, बढवान, श्री भाऊ पानसे, वर्धा, श्री शान्तिकुमार मोरारजी, बम्बई; वेणीलाल गाधी, और श्रीमती ह्यग लम्सडन, ओन्ट्रीओ, कनाडा।

पुस्तकें: 'ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेरियर एल्विन', 'माई डियर चाइल्ड', 'बापुना पत्रो – ६ · ग० स्व० गगाबहेनने', 'पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'महादेवभाईनी डायरी' भाग – १, 'बापुना पत्रो – ४. मणिबहेन पटेलने', 'बापुनी प्रसादी'।

समाचारपत्र: 'बॉम्बे क्रॉनिकल'।

अनुसन्धान व सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओके लिए अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी पुस्तकालय, सूचना एव प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग और श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र हैं। कागजातकी फोटो-नकल तैयार करनेमे सहायताके लिए हम सूचना एव प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभाग, नई दिल्लीके आभारी हैं।

विषय-सूची

१. सन्देश : अहमदाबादके मजदूरोंको[1]

[४ जनवरी, १९३२][2]

आपको अपनी सुकीर्तिकी रक्षा करनी है।

शराब छोड दीजिए, केवल खादी पहनिए, मिल-जुलकर रहिए। अनसूयाबहन और श्री शकरलाल बैंकरके आदेशोका पालन कीजिए।

अपने बच्चोको ठीक पढ़ाइए।

अपना काम निष्ठाभावसे कीजिए।

अपने अधिकारोकी रक्षा कीजिए, किन्तु मालिकोके प्रति किसी तरहका द्वेष रखे बिना।

स्वराज्य-यज्ञमे अपना पूरा योगदान दीजिए।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ५-१-१९३२

२. सन्देश : अमेरिकाको

४ जनवरी, १९३२

जिस प्रकार अमेरिकाने अनेक कष्ट सहकर तथा वीरता और त्यागके द्वारा अपनी स्वतन्त्रता पाई थी, उसी प्रकार भारत भी भगवान-द्वारा निर्दिष्ट शुभ घड़ीमे कष्ट सहकर तथा अहिंसा और त्यागके द्वारा अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करेगा।

[अंग्रेजीसे]

गृह विभाग, राजनीतिक, फाइल संख्या १४१, पृष्ठ १५-७, १९३२; सौजन्य : भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार।

१. यह और अनुवर्ती तीन शीर्षक गांधीजी ने अपनी गिरफ्तारीके बाद तत्काल ही लिखे थे। **यंग इंडिया**, ७-१-१९३२ में महादेव देसाईने अपने लेख, 'दि हिस्टारिक वीक' (ऐतिहासिक सप्ताह) में गांधीजी की इस गिरफ्तारीका विवरण देते हुए लिखा था कि पहलेकी भाँति गांधीजी की गिरफ्तारी इस बार भी १८२७ के रेग्युलेशन २५के तहत हुई थी।

२. **यंग इंडिया**, ७-१-१९३२ से।

३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको[1]

४ जनवरी, १९३२

ईश्वरकी कृपा निस्सीम है। कृपया लोगोसे कहे कि सत्य और अहिंसासे कभी न डिगे। डगमगाये कभी नही, बल्कि अपना जीवन-सर्वस्व स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए अर्पित करें।

[अंग्रेजीसे]

ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेरियर एल्विन, पृष्ठ ६७

४. पत्र : वेरियर एल्विनको

४ जनवरी, १९३२

प्रिय एल्विन,

आप आ गये है, इससे मुझे बहुत खुशी हुई है। मै चाहूँगा कि आप खुद ही अपने देशवासियोको बताये कि मै उन्हे भी वैसे ही प्यार करता हूँ जैसे अपने देशवासियोको। मैंने उनके प्रति घृणा या द्वेष-वश कभी कुछ नही किया और ईश्वरने चाहा तो भविष्यमे भी कभी ऐसा कुछ नही करूँगा। ऐसी ही परिस्थितियोमे मैंने अपने स्वजनोके प्रति जैसा व्यवहार किया है, मै उनके प्रति आज उससे कुछ भिन्न किस्मका व्यवहार नही कर रहा हूँ।

सप्रेम,

आपका,

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९६९७) से; सौजन्य : एल्डिथ एल्विन। ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेरियर एल्विन, पृष्ठ ६७ से भी।

१. यंग इंडिया, ७-१-१९३२ में प्रकाशित महादेव देसाईके लेख, 'दि हिस्टारिक वीक' के अनुसार गांधीजी ने वल्लभभाई पटेलके नाम एक परची लिखकर इन पंक्तियोंमें भारतीय जनताको अपना सन्देश दिया था। वल्लभभाई पटेल उस समय कांग्रेसके अध्यक्ष थे। किन्तु परची लिखते समय गांधीजीको यह पता नहीं था कि वल्लभभाई भी अन्यत्र उसी समय गिरफ्तार किये जा चुके थे।

५. पत्र : मीराबहनको

यरवदा जेल[1]
५ जनवरी, १९३२

चि० मीरा,[2]

यह कामकाजी पत्र है। इसलिए अखबारोमे इसका कोई जिक्र न हो।

और बडा फ्लास्क भेजो। यह गरम पानी रखनेमे उपयोगी होगा और सुबह-सुबह वार्डरोकी मेहनत बच जायेगी।

मैंने महादेवको हिदायतोके साथ ८०० रुपयेका एक चैक दिया था। मेरे खयालसे उसपर मेरे हस्ताक्षरोकी जरूरत नही है। देख लेना, वह उसके पास है या नही और उसपर मेरे हस्ताक्षरोकी आवश्यकता है या नही।

हम दोनो[3] सकुशल है।

सबको प्यार,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२०९) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६७५ से भी।

६. पत्र : शारदाबहन चि० शाहको

५ जनवरी, १९३२

चि० शारदा,

मै तुझे बराबर पत्र लिखता हूँ। एकाध-बार भले ही रह जाये। लेकिन अहिंसाका पालन करनेवाले व्यक्तिका व्यवहार 'जैसेको तैसा' के अनुसार नही होता। वह तो बुरा करनेवाले व्यक्तिका अथवा कुछ न करनेवालेका भी भला करता है। इसलिए यदि मै करूँ तो भी तुझे आलस्य नही करना चाहिए। ४७ तार निकालनेमे १२ बार तार टूटे, इसका मतलब यह हुआ कि यदि तार बिलकुल न

१. गांधीजी इसे यरवदा मन्दिर भी कहते थे; देखिए पत्र: विमलचन्द्र वालजी देसाईको, पृष्ठ ४। इसके आगेके पत्रोंमें स्थानका उल्लेख नहीं किया जा रहा है। गांधीजी ४ जनवरी, १९३२ से ८ मई, १९३३ तक यरवदा-जेलमें थे।

२. इस पत्रमें तथा मीराबहनको लिखे अन्य पत्रोंमें सम्बोधन देवनागरीमें है।

३. यरवदा-जेलमें सरदार वल्लभभाई पटेल बापूके साथ थे।

टूटता तो कम-से-कम ३६ तार और कात सकती। मेरा यह अनुभव है कि एक बार जो तार टूटता है, वह तीन तारका समय ले लेता है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९४३)से; सौजन्य: शारदाबहन गो० चोखावाला।

७. पत्र : विमलचन्द्र वालजी देसाईको

८ जनवरी, १९३२

चि० नानु,

तेरा पत्र मिला। बहुत खुशी हुई। ऐसे ही लिखते रहना। स्याही और कलमका इस्तेमाल कर सके तो अच्छा है।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ५७५८)से; सौजन्य: वालजी गोविन्दजी देसाई।

८. पत्र : नारणदास गांधीको

११ जनवरी, १९३२

चि० नारणदास,

निश्चित होकर या वैसे भी तुम्हे पत्र लिखनेके लिए जेल-यात्रा जरूरी थी न? आज ही पत्र लिखनेकी अनुमति मिली है, इसलिए पहला पत्र तुम्हीको लिखने बैठा हूँ।

इस बारकी खूबी यह है कि सरदार साथ हैं। अभी मुझे थकान लगती रहती है, नीदकी भूख भी मिटी नही है और पढने तथा सूत्र-यज्ञ करनेके बाद और कुछ नही करता। हम दोनोकी तबीयत अच्छी है। मेरी खुराक जैसी बाहर थी, लगभग वैसी ही है। शहदके बदले गरम पानीमे गुड लेता हूँ। सरदारकी खुराकमें चाय, रोटी और सब्जियाँ मुख्य हैं। बाहर भात खाते थे, यहाँ नही खाते। यहाँका भात उन्हे माफिक नही आता। दूध लेते हैं। गलेकी तकलीफ अभीतक है। मुझे नियमसे लिखते रहना। कौन-कौन जेलमे पहुँच चुके है, इसकी ठीक जानकारी नही मिली है, सो लिखना। उसके आधारपर पत्र किसे-किसे लिखना है, यह बात समझ सकूँगा।

जमनाको बम्बईमे देखा था। किसीके साथ ज्यादा बात करनेका समय मिला ही नही। उसकी और दूसरोकी खबरे तुम्ही मुझे देना, या फिर वे लोग ही लिखे। काका साहब, छगनलाल जोशी, वगैरह जेल पहुँच गये है, ऐसा मानकर उन्हे पत्र नही लिखा।

चप्पल बनानेका चमडा वहाँ नही रहता, यह आश्चर्यकी बात है। यह तो हम लोगोके पास कई जगह होना ही चाहिए। सुरेन्द्रसे बात करना। वह इस विषयमे लिखे।

आज पढ़ा कि बा गिरफ्तार हो गई है। खुशी हुई। अगर उसको पत्र पहुँचाना सम्भव हो, तो पहुँचाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८१९९ से भी; सौजन्य : नारणदास गाधी।

९. पत्र : मीराबहनको

१२ जनवरी, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। अब तुम सदाकी भाँति लिख सकती हो। क्या तुम्हे यह पता चल गया है कि तुम मेरे साथ वह धुनकी, जो मैंने चुनी थी, भेजना भूल गई? मैंने हलकी धुनकी इसलिए माँगी थी कि बड़ीके साथ और बहुत-सी चीजोकी जरूरत होती है। जब तुम या और कोई आये, तब बडी धुनकी आ सकती है। तुम्हारी दूरदर्शिताके प्रतापसे मेरे पास अभीतक काफी पूनियाँ है। इसलिए मुझे धुनकीके बारेमे चिन्ता नही है। मै इन दिनो आराम कर रहा हूँ और जितना सो सकता हूँ, उतना सोता हूँ। मेरे बारेमे बाकी जानकारी नारणदासको लिखे मेरे पत्रमे मिल जायेगी।

प्रिवा-दम्पती कहाँ है? उनका स्वास्थ्य कैसा है? उन्हे मेरा प्यार। वे मुझे पत्र लिखे। आशा है आश्रममे उनका समय अच्छा गुजरा होगा। क्या जर्मन मित्र आ गये? और कुमारी बार्कर? वेरियर और शामरावके[1] क्या समाचार है? आशा है प्यारेलालने ईवन्स और रोजर्सको[2] पार्सल भेज दिए होगे। वे कहाँ है? और देवदास कहाँ है? बर्नार्डकी क्या खबर है?

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२१०) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९६७६ से भी।

१. शामराव दिवाले, वेरियर एल्विनके मित्र और सहयोगी।

२. बापूज लैटर्स टु मीरामें मीराबहन लिखती है : "ईवन्स और रोजर्स दो जबर्दस्त गुप्तचर थे जिनको ब्रिटिश सरकारने बापूकी गोलमेज-यात्राके दिनोंमें हर वक्त उनकी सँभाल रखनेके लिए तैनात कर दिया था। बापूने दोनोंको विशेष नक्काशी कराकर एक-एक घड़ी भेजी थी।"

१०. पत्र : मैत्री गिरिको

१२ जनवरी, १९३२

चि० मैत्री,

तेरा खयाल कई बार आता रहा है। मुझे लिखना। तुझे जो चोट लगी थी, अबतक तो वह बिलकुल ठीक हो गई होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२३३) से।

११. पत्र : महालक्ष्मी माधवजी ठक्करको

१२ जनवरी, १९३[२][1]

चि० महालक्ष्मी,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम सबका खयाल तो बहुत बार आता है, लिखनेको मन भी चाहता है; पर इस बार बाहर बिलकुल ही फुरसत नही मिली। जान पडता है अब यहाँसे जरूर लिख पाऊँगा।

सबको एक-सी खुराक माफिक आ जाये, ऐसा नही होता। भोजनके वजन और प्रकारके सम्बन्धमे तो आखिरकार सबको अपनी मर्यादाका खयाल रखते हुए खुद ही पता लगाना पड़ता है। इतना तो मैने अपने और दूसरोके अनुभवसे देखा है कि मूंगफली किसीको भी अन्ततक माफिक नही आती। इसलिए उसे तो छोड ही देना चाहिए। बालकोको तो न ही दें। एकाध-बार खा ली जाये तो दूसरी बात है। बिलकुल ही न खाये तो उसमे हानि नही है। नारियल भी खाना जरूरी नही है। बादाम उपयोगी है; किन्तु तुम्हारे लिए तो निम्नलिखित खुराक ठीक मानता हूँ।

दूध कच्चा या उबाला हुआ, ज्यादा-से-ज्यादा ३ सेर। खजूर या मुनक्का, खट्टे नीबू दो या तीन, सोड़ाके साथ, जैसे मैं पीता हूँ, या शहद या गुडके साथ गरम पानीमे।

दिनमे एक बार कच्ची गाजर या मूली (फीके प्रकारकी) अथवा दो या तीन तोला सलादके पत्ते या गोभीके नरम पत्ते खूब चबाकर खाना। थोडा नमक लेना।

१. साधन-सूत्रमें '१९३१' है; जान पडता है, यह भूलसे लिखा गया है। देखिए "दैनन्दिनी, १९३२" और "पत्र : नारणदास गांधीको", १३-१-१९३२ भी।

इस तरह गाजर या पत्ते खानेसे सम्भव है, तुम्हारी भूख शान्त होगी। खजूर भिगोनेकी जरूरत नही है। दूधके साथ वैसे ही खा लेना। उनपर कचरा लगा हो तो उन्हे धो लेना चाहिए। भिगोये बिना खानेसे चबाकर खा सकोगी, और चबा पानेसे सम्भव है तृप्तिका अनुभव होगा। फिलहाल बादाम-पिस्ता न लेना। इतना करके देख लो। इससे शरीर हलका रहेगा। स्राव नियमित हो जायेगा। दूधकी जगह दही लेनेमे कोई हानि नही। दही खट्टा हो तो उसमे सोडा डाल ले। जितना खट्टा हो, उस हिसाबसे सोडा डाले। कच्चा टमाटर खाना। इस तरह खुराक लेनेसे पेटमें हवा नही बनेगी। कच्चा दूध माफिक न आये तो उबला हुआ दूध लेनेमे कोई बुराई न समझना। सोडा लेते रहनेसे अधिक सम्भावना तो इसी बातकी है कि हवा नही बनेगी।

मैंने बच्चोको बम्बईमे देखा था। उन्हे खाँसते देखकर दुखी भी हुआ था। उन्हे भी उपर्युक्त खुराक दी जा सकती है। उनका वजन बढ़ना ही चाहिए। अभी सूखा मेवा तो न ही खाये। उन्हे शहद ज्यादा देना चाहिए। शहद पानीमे ले या टमाटरके साथ। दूध तो ऐसे ही पी जानेकी आदत बनाये तो अच्छा है। मूंगफली और शहद दोनों एक-साथ नही चल पाते। अब मुझे लगता है कि मैंने तुम्हारे सभी सवालोका जवाब लिख दिया है। कोई रह गया हो और तुम बाहर हो तो फिर पूछना।

सभी बहनोको आशीर्वाद। धीरे-धीरे सबको लिखूंगा। रमा पत्र लिखे। अभी तुम सब बहनोको मेहमान ही मानता हूँ। स्वास्थ्य मत बिगडने देना। तुम्हारा स्वास्थ्य तो मैंने बहुत ही अच्छा माना था।

माधवजी लिखे। बच्चोकी खातिर इस पत्रको कलकत्ते भेजना ठीक लगे तो भेज देना। कलकत्तेमे जो देखभाल करनेवाला हो, वह मुझे पत्र लिखे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

तुम्हारा पत्र मुझे देरसे मिला, इसलिए आजकी तारीख डाल देनेपर भी यह डाकमे तो कल ही जायेगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८११)से।

१२. पत्र: काशीनाथ और कलावती त्रिवेदीको

१२ जनवरी, १९३२

चि० काशीनाथ,

तुम्हारा पत्र मिला। अभी तो अपनेको धैर्यपूर्वक वहीं गढ़ते रहो। आज तो बस इतना ही।[1]

चि० कलावती,

तुम्हारा खत मिला। मेरा कुछ ऐसा स्मरण है कि तुमने प्रतिज्ञा ली है। कैसे भी हो, जैसे नारणदास कहे करो।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती और हिन्दीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५२८४)से।

१३. पत्र: गंगादेवी सनाढ्यको

१२ जनवरी, १९३२

चि० गंगादेवी,

तुमारा और पंडितजीका स्मरण तो बहोत रहा करता था परंतु पत्र लिखनेका तो समय हि नहि मिलता था। दोनो कैसे हैं? तुमारा शरीर अब कैसा है? पंडितजी अभी भी खूब काम कर सकते हैं क्या? हरिप्रसादका[2] शरीर कैसा रहता है?

पंडितजीकी वाडी कैसे चलती है? क्या क्या फल होते हैं? भाजी कौन सी होती है? कुछ शहरमें बेचनेके लिये भेजा जाता है? वाडी स्वावलंबित हो गई है?

बापुके आशीर्वाद

हिन्दीकी फोटो-नकल (जी० एन० २५४५)से।

१. इसके बादका अंश हिन्दीमें है।

२. गंगादेवी और तोताराम सनाढ्यका दत्तक पुत्र।

१४. पत्र: अब्बासको

१३ जनवरी, १९३२

चि० अब्बास,

तूने पिंजाईमें क्या-क्या सुधार किये हैं, मथुरादासके[1] सुझाव माने हैं या नहीं, उसका काम कोई सँभाल रहा है या नहीं, आदि समाचार लिखना। तेरा स्वास्थ्य ठीक रहता होगा। इस समय वर्गमें कितने लोग सीखते हैं?

बापूकी दुआ और आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६३०५) से।

१५. पत्र : खुशालचन्द गांधीको

१३ जनवरी, १९३२

आदरणीय खुशालभाई,

आपका आशीर्वादरूपी पत्र मुझे बम्बईमें मिला था। उत्तरमें आश्रम ही पहुँच जानेकी आशा थी; किन्तु ईश्वरने और बात शुभ विचारी; इसलिए अब यहींसे आप दोनोंको प्रणाम भेज रहा हूँ। इतनी इच्छा जरूर है कि यदि आपका स्वास्थ्य ठीक रहे और आश्रम बना रहे तो आप वहीं रह जायें। कभी-कभी मुझे याद कर लिया करें। सरदार वल्लभभाई मेरे साथ हैं। हम दोनोंकी तबीयत ठीक रहती है। ठंड भी ज्यादा नहीं है।

मोहनदासके दण्डवत् प्रणाम

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९२२१) से; सौजन्य: छगनलाल गांधी।

१. मथुरादास पुरुषोत्तम, एक खादी-विशेषज्ञ।

१६. पत्र : नारणदास गांधीको

१३ जनवरी, १९३[२][1]

चि० नारणदास,

कल जो पत्र भेजा, उसके साथ लक्ष्मीदासका पत्र रह गया। वह इसके साथ है। और भी जितने लिख सका, भेज रहा हूँ। महालक्ष्मीका पत्र कल मिला। उस निमित्तसे कई दूसरे भी लिख डाले। अब इन्हें रवाना कर देना चाहिए। इसलिए ज्यादा नही लिखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

प्रोफेसर थॉमसन[2] १५ तारीखको बम्बई उतरेगे। अगर आश्रम आये तो उन्हें ठहराना। सुविधाओका ध्यान रखना। वे न आये तो पत्र या तार द्वारा आमन्त्रित करना। पी० एण्ड० ओ० जहाजसे आनेकी सम्भावना है। मीराबहनको मालूम है।

बापू

लक्ष्मीदासके पत्रके सिवा आठ पत्र और है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२०० से भी; सौजन्य . नारणदास गाधी।

१७. पत्र : सर सैम्युअल होरको

१५ जनवरी, १९३२

प्रिय सर सैम्युअल,[3]

मुझे यह आशा कतई नही थी कि मै आपको इतनी जल्दी किसी जेलसे पत्र लिखूँगा।

१. साधन-सूत्रमें १९३१ है। थॉमसनने पी० हटींगको अपने ५ दिसम्बर, १९३१ के पत्र (सी० डब्ल्यू० ९४०९) में १९३२ में भारत जानेका अपना इरादा व्यक्त किया था। फिर इस तिथिको १९३१ में मीराबहन आश्रममें नहीं थीं, १९३२ में थीं।

२. द अदर साइड ऑफ द मैडल, राइज एण्ड फुलफिलमेंट ऑफ ब्रिटिश रूल इन इंडिया, लाइफ ऑफ रवीन्द्रनाथ टैगोर आदि पुस्तकोंके रचयिता।

३. भारत-मन्त्री (१९३१-३५)।

मैंने वायदा किया था कि कोई भी गम्भीर कदम उठानेसे पहले आपको उससे अवगत कराऊँगा। लेकिन घटनाएँ इतनी आकस्मिक तेजीसे घटी कि मेरे पास न तो समय रहा, न कोई विकल्प। मुझे कोई सन्देह नही कि आपने वाइसराय और मेरे बीच आये-गये तार[1] देखे होगे। मैंने सहयोग बनाये रखनेकी भरसक कोशिश की लेकिन अपने विचारसे मेरा कोई दोष न होने पर भी मै असफल रहा। मै यह महसूस किये बिना नही रह सकता कि वाइसरायका असम्भव शर्तोंके सिवा, मुझसे किसी और तरह मिलनेसे इनकार करना पूरी तरह गलत था। मैंने अभी-अभी लॉर्ड विलिंगडनको अपने रुखपर पुर्नविचार करनेका आग्रह करते हुए एक निजी पत्र लिखा है।

मै आपको विश्वास दिला सकता हूँ कि मै सहयोग देनेकी पूरी इच्छा लेकर ही बम्बई पहुँचा था। आपके पत्रने, उसके लिए मेरा धन्यवाद स्वीकार करें, एक कठिनाई हल कर दी। मै आशा करता था कि वाइसरायसे दिल खोलकर साफ-साफ बात करनेसे अन्तरिम कालमे अध्यादेशों और प्रशासन-विषयक कठिनाई हल हो जायेगी। वस्तुत. मैंने हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न तथा अन्य मामलोके बारेमे सर अकबर हैदरीके साथ, जो मेरे साथ उसी जहाजमे थे, योजना बना ली थी और चूँकि भारतमे जो-कुछ हो रहा था, उसे मै जानता नही था इसलिए उतरनेसे एक दिन पहले जहाजपर मौजूद रायटरके प्रतिनिधिको एक आशापूर्ण सन्देश भी दे दिया था। आपने शायद उसे देखा भी होगा लेकिन भारतमे मैंने जो घटते देखा, उससे मै निस्सन्देह चकित हो गया। मैंने तुरन्त वाइसरायसे भेंट करनेकी कोशिश की; परिणाम आप जानते है।

मै यह भी कह दूं : समाचारपत्रोमे इस आशयके क्लेशकारी विचार छपे है कि मेरे साथियोने मुझे यह रुख अपनानेपर बाध्य किया। यह बात बिल्कुल निराधार है। मेरे द्वारा उठाया गया हर कदम मैंने अपनी प्रेरणासे उठाया था और वह सत्याग्रहके मेरे सिद्धान्तकी तर्कसगत परिणति थी। मैं इससे अधिक सच्चे सहयोगियोकी कामना ही नही कर सकता। सत्याग्रहके मामलेमे वे मेरे सामने मुझे एक विशेषज्ञ मानकर झुक जाते है। मै आपसे इस पत्रका उत्तर देनेकी आशा नही करता। मैंने सोचा कि मुझे आपको केवल यह बता देना चाहिए कि मै इस सबके विषयमे क्या सोचता हूँ। जो भी हो, आपसे अपनी मुलाकातोके सुखद संस्मरण मै सदैव सँजोये रखूंगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५५६) से; सौजन्य : इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दन।

१. देखिए खण्ड ४८।

१८. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

१५ जनवरी, १९३२

चि० पण्डितजी,

काशी-यात्राका वर्णन तो तुमने बहुत अच्छा लिख भेजा है। सभी शिष्य आचार्यजी[1] के कामको अच्छी तरह चला रहे हैं और उसकी शोभा बढ़ा रहे हैं, यह तो बहुत सन्तोषकी बात है। अब छाराओं[2] में फिर जाना शुरू कर देना। उनसे परिचय हो जाये और उनपर असर होने लगे तो यह बहुत बड़ा काम माना जायेगा।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २२०) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे।

१९. पत्र : पद्माको

१५ जनवरी, १९३२

चि० पद्मा,

तू अभी पूरी तरह स्वस्थ नहीं हुई है, ऐसा वसुमतीबहनने बताया है। मुझे अपनी तबीयतके बारेमें ब्यौरेवार पत्र लिखना। सरोजिनी देवी[3] कहाँ है, कैसी है? क्या पिताजी की कोई खबर मिलती है? उन्हें पत्र लिखती है? अपना कार्यक्रम लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१२८) से। सी० डब्ल्यू० ३४८० से भी; सौजन्य : प्रभुदास गांधी।

१. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर, नारायण मोरेश्वर खरेके संगीत-शिक्षक।

२. मध्य गुजरातके आदिवासी, जो आश्रमवासियोंको परेशान किया करते थे।

३. पद्माकी माँ।

२०. पत्र : वालजी गोविन्दजी देसाईको

१५ जनवरी, १९३२

भाई वालजी,

तुम दोनोकी तबीयत कैसी है? किसीका स्वास्थ्य कुछ सुधरा या नही? कमलनयन कैसा है? उससे लिखनेके लिए कहना। क्या उसने अध्ययनमे कुछ प्रगति की है? क्या वह सन्तुष्ट है? आशा है तुम वहाँ घूम-फिर रहे होगे। याद रहे, वहाँ तुम पढनेके लिए नही बल्कि स्वास्थ्य सुधारनेके लिए गये हो; और वहाँ तो घूमने निकले कि प्रकृति रोज नया पाठ पढ़ाती ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४१७) से; सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई।

२१. पत्र : नारणदास गांधीको

१७ जनवरी, १९३२

चि० नारणदास,

मीराबहनके नाम लिखे पत्र[1] से मेरे समाचार मालूम हो जायेंगे। आश्रममे कौन-कौन बचे है, यह मालूम हो तो पत्र किसे लिखना है, यह समझ पाऊँ। तुम्हारी ओर से पत्रोंकी प्रतीक्षा करते रहते है। जब चाहो तभी लिख सकते हो। अभीतक न लिखा हो तो यह पत्र पाते ही लिखना।

मेरी ओरसे दो बार[2] पत्र जा चुके है। यह तीसरी बार है। चीजे भेजनेके बारेमे लिखा था, वह अलग। राधाका क्या हाल है? अन्य सभीकी तबीयतके बारेमे लिखना।

सबको आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

पूंजाभाई कैसे है? कहाँ रहते है?

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२०१ से भी; सौजन्य : नारणदास गाधी।

१. देखिए अगला शीर्षक।

२. ११ और १३ जनवरीको, देखिए पृष्ठ ४ और १०।

२२. पत्र : मीराबहनको

१७/१८ जनवरी, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारी भेजी हुई चीजे मिल गई। चप्पले इतनी हलकी है कि एक-दो महीनेसे ज्यादा नही चलेगी, यानी तले घिस जायेंगे। इसलिए तलेका चमड़ा जरूरी है। अगर तुम नही जुटा सकोगी, तो मुझे रबरके तलेका आश्रय लेना पड़ेगा।

क्या प्रिवा-दम्पती अभी भी वहाँ है? मेरा उन्हे प्यार कहो या लिख भेजो। रोलाँ भाई-बहनको भी मेरा प्यार लिख भेजना।

हम दोनोकी तबीयत अभीतक अच्छी है। मेरी खुराक बाहर-जैसी ही है। सिर्फ शामके भोजनमे मैंने दही और जोड़ लिया है। रोज सुबह-शाम मिलाकर कम-से-कम दो घटे घूम लेता हूँ। अभीतक सूतके दो सौ तारसे आगे नही पहुँचा। लेकिन मेरा खयाल है कि अगले सप्ताहतक मैं बाकीकी नीद पूरी कर लूँगा। २४ घटोमें कुल मिलाकर ९ घटे जरूर सो लेता हूँ। पढ़ाई भी काफी कर रहा हूँ।

इस समयतक आश्रमकी किसी डाकके आनेकी आशा रखी थी। अभी मुझे दूसरी धुनकी न भेजना।

सस्नेह,

बापू

१८ जनवरी, १९३२

[पुनश्च :]

मैं क्षमा चाहता हूँ। मुझे आज पता लगा कि तुमने धुनकी चटाईमे बाँध दी थी।[1]

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२११) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९६७७ से भी।

२३. पत्र : जयशंकर पी० त्रिवेदीको

१८ जनवरी, १९३२

भाई त्रिवेदी[2],

दो बार भेजे गये फल और सब्जीकी कडियाँ मिल गई हैं। लेकिन अब और न भेजिएगा। हम दोनोको अपनी आवश्यकतानुसार चीजे यही से मिल जाती है। आप अपना समय, अपना धन किसी और उपयोगी काममें लगाये, यह सब प्रकारसे ज्यादा अच्छा है। इतना विश्वास रखें कि कुछ जरूरत होनेपर आपके पाससे मँगवाने

१. देखिए "पत्र : मीराबहनको", १२-१-१९३२।
२. पूना कृषि कॉलेजके प्रोफेसर।

म संकोच नही करूँगा, यह बात आपको अज्ञात तो है नही? मनु[1]को विलनेवमे मिला था। उसे मेरा आशीर्वाद लिखे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १००१) से।

२४. पत्र : किंग्सले हॉल, लन्दनके बच्चोंको

२० जनवरी, १९३२

प्यारे नन्हे दोस्तो,

मैं आपकी और उस दिन तीसरे पहर जब हम और आप इकट्ठे बैठे थे तब आपने मेरे प्रश्नोके जो सुन्दर उत्तर दिये थे, उनकी याद अक्सर कर लेता हूँ।

किंग्सले हॉलमे रहते हुए मुझे आपके प्रेमोपहारोके लिए धन्यवादका पत्र भेजनेका अवसर ही नही मिल पाया। मै अब आपको जेलसे धन्यवाद भेज रहा हूँ। मुझे आशा थी कि मै ये उपहार आश्रमके बच्चोको दे दूँगा। आप 'आटी' म्यूरियल[2]से कहे, वे आपको उनके बारेमे कुछ बतायेगी। मै आश्रम पहुँच ही नही सका।

आपको कोई जेलसे लिखा पत्र मिले, यह क्या एक विचित्र-सी बात नही है? यो मै होनेको जेलमे हूँ, किन्तु मुझे ऐसा नही लगता कि मै कोई कैदी हूँ। मैने कोई गलत काम किया, मुझे ऐसा भान नही है।

आप सबको मेरा प्यार।

आपका,
जिसे आप चाचा कहते है,
गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१६-ए) से।

२५. पत्र : मणिबहन न० परीखको

२० जनवरी, १९३२

चि० मणिबहन,

तुम बच्चोकी कक्षा देख रही हो, यह मुझे अच्छा लगा है। तुम्हे इस कामका हिसाब मुझे भेजते रहना चाहिए : लड़कोमे से कौन अच्छा, कौन निकम्मा, होशियार या बुद्धू है, आदि समाचार तथा उसी तरह अपनी कठिनाइयाँ भी। नरहरि[3] नासिकमे पढ़ा रहे है और तुम आश्रममें, यह बढ़िया तालमेल है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९६३)से।

१ जयशंकर त्रिवेदीका पुत्र मानशंकर।

२. किंग्सले हॉलकी प्राचार्या म्यूरियल लेस्टर, जो गांधीजी के लन्दन-प्रवासके दिनोंमें उनकी मेजबान थीं।

३. नरहरि परीख।

२६. पत्र : एस्थर मेननको[1]

२१ जनवरी, १९३२

रानी बिटिया,

बीमार बहन[2] से मुलाकातका तुम्हारा विवरण हृदयस्पर्शी है। जब तुम फिर उससे मिलने जाओ, उसे मेरा प्यार देना।

आशा है कि अब तुम्हारा मन शान्त हो गया होगा। बच्चे[3] बिलकुल ठीक होंगे। उनको मेरी ओरसे चुम्मा देना—अगर तुम्हे लगे कि वे मुझे ऐसा करने देंगे तो।

मेरिया[4] बम्बईमे मेरे साथ थी। परन्तु उससे बात करनेका मुझे वक्त नहीं मिला।

आशा है मेननका स्वास्थ्य ठीक होगा। उसे और वुडब्रूक[5] मे सबको मेरा प्यार। कुमारी हेरीसनको मेरा प्यार कहना और मुझे लिखना इन दिनो वह कहाँ है। क्या तुम मॉड चीसमैनको भी पत्र लिखती हो?

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

सरदार वल्लभभाई मेरे साथ है। हम दोनो बिलकुल ठीक है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (१०७)से; भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार। माई डियर चाइल्ड, पृष्ठ ८७-८ से भी।

१. मेनन-परिवार इंग्लैंडमें सेली ओक, बर्मिंघममें था।

२. एक गरीब और बीमार अंग्रेज लड़की, जिसकी गांधीजी के प्रति बड़ी श्रद्धा थी।

३. एस्थर मेननकी पुत्रियाँ नन और टंगी।

४. ऐन मेरी पीटर्सन।

५. बर्मिंघमके पास एक क्वेकर-सेन्टर, जिसकी गतिविधियोंमें एस्थर मेनन और उसके पति भाग लिया करते थे।

२७. पत्र : महावीर गिरिको

२१ जनवरी, १९३२

चि० महावीर,

तेरा पत्र मिला। तू अभीतक पूरी तरह स्वस्थ नही हुआ, यह दु:खकी बात है। क्या तू भी दार्जिलिंग जाना चाहता है? जाना किसीके लिए अनिवार्य नही है। जाना हो तो स्वास्थ्य सुधारकर ही लौटनेका निश्चय करके जाना। वहाँ जाकर और ज्यादा बीमार पड गया तो मुझे दु:ख होगा। यदि न जाये तो डॉ० तलवरकरके कहनेके अनुसार इलाज चलाते रहना। और यदि जाये तो कहाँ रहेगा, आदि बातोके बारेमे लिख देना। वहाँ तू जाये और रहनेकी ठीक सुविधा न हो पाये तो मुझे उसमे जोखिम दिखाई देता है। तुझे मै बच्चा नही समझता। समझदार सियाने व्यक्तिकी तरह सोच-समझकर निर्णय करना और कृष्णमय्यादेवी[1] से भी सलाह-मशविरा करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२३१)से।

२८. पत्र : नारणदास गांधीको

२१ जनवरी, १९३२

चि० नारणदास,

बहुत प्रतीक्षाके बाद आज आश्रमकी डाक मिली। उत्तर न आनेसे थोडी चिन्ता हो रही थी। तुमने पार्सलके रूपमे उसे भेजा, इसलिए मिलनेमे देर हुई। पहले भी ऐसा ही हुआ था। मै यह समझता हूँ कि इस तरह खर्च कम पडता है। इसलिए हमेशा यही करना चाहो तो करते रहना। यह किया जा सकता है। ज्यादा डाक पार्सल बनाकर और अपना अकेलेका पत्र डाकसे भेजो तो पैसा बचे और मुझे रोज एक ताजा पत्र मिलता रहे। मोटे तौरपर जब जरूरत हो तभी तुम या दूसरे लोग पत्र लिख सकते हो। ज्यादातर तो वे मुझे तुरन्त दे दिये जायेगे।

मेरे पत्रसे 'आश्रम समाचार'[2] मे जो उद्धरण दिया है, उसमे कोई दोष नही है।

१. महावीरकी माँ।

२. आश्रमका हस्तलिखित समाचारपत्र।

हम दोनोसे आश्रमके जो लोग मिलने आना चाहे, आ सकते हैं। दूसरे ऐसे लोग भी जो राजनीतिके क्षेत्रमे प्रसिद्ध नही हैं, आ सकते हैं, जैसे प्यारे अली[1], रमा (रणछोडभाई); एक ही बारमे दो-चार लोग आ सकते हैं। हफ्तेमें भेट एक बार हो सकती हैं। पर हमे इस तरह फिजूलखर्ची नही करनी है। इसलिए तुम जिसका आना ठीक समझो, वही आये तो अच्छा है। मैं तो, क्या हो सकता है, वही बताकर अलग हो जाना चाहता हूँ। मेरी ओरसे बन्धन मत मानना। लोगोकी जरूरत, स्नेह या मोहका नाप मैं कैसे कर सकता हूँ?

कृष्णमय्यादेवी, आदिको दार्जिलिंग जाने देना। खर्च तो होगा, पर वह बर्दाश्त करने-जैसा है। दार्जिलिंगमे रहेगे तो किसी मित्रके यहाँ ही न?, हमे तो सिर्फ रेल-किराया ही लगेगा न? जानेका किराया दे देना। आते समय जो किराया लगें, उसके बारेमे भाई जीवनलाल या बिडला-बन्धुओको वही देनेके लिए पत्र लिख देना। यानी जब वे वापस आने लगे, तब उन्हे सलाह देते हुए पत्र लिखा जा सकेगा। क्या महावीर भी साथ जायेगा? जाये तो चार-छः महीने रुक सकता है। अच्छा होने पर वह बाहर कोई काम हाथमे ले सकता है। इसी तरह जब लडकियाँ जाना चाहे, उन्हे भी भेज देना।

अब्बास साहब कहाँ हैं? वे कैसे रहते हैं? खबर जानकर लिखना। रावजीभाईकी विमला कैसी है? सोजित्राके रावजीभाई मणिभाई कहाँ हैं? शिवाभाई कहाँ हैं?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

वेणीलाल[2] बम्बईमे बहुत बीमार था। अब वह कैसा है? तुमने लिखा है, फिलहाल नवीन वहाँ रहने आ गया है; इसलिए लिखना कि वह अभी कहाँ रहता है, क्या करता है?

सभीके दूसरे पत्र तो यहाँसे मगलवारको निकलेंगे। आज तो यह समझो कि पत्र दलबहादुर गिरिके परिवार और कुसुमके लिए लिखा है। कान्ति[3], बाल[4], पृथुराज[5], वगैरह योद्धाओको धन्यवाद। उन्हे पत्र बादमे।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२०२ से भी, सौजन्य : नारणदास गाधी।

१. बम्बईके एक व्यापारी। वे अपनी पत्नी नूरबानू सहित गांधीजी के उत्साही अनुयायी थे।
२. वेणीलाल गांधी।
३. कान्ति गांधी, हरिलाल गांधीका पुत्र।
४. द० बा० कालेलकरका द्वितीय पुत्र।
५. लक्ष्मीदास आसरका पुत्र।

२९. पत्र : रामानन्द चटर्जीको

२२ जनवरी, १९३२

प्रिय रामानन्द बाबू,

पिछली बार कारावासकी अवधिमें[1] आपने मेरे प्रति जो सौजन्य दिखाया था, क्या मैं आपसे फिर वही सौजन्य[2] दिखानेको कहूँ? 'मॉडर्न रिव्यू' का ताजा अंक तो मैंने देखा था।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत रामानन्द चटर्जी
शान्तिनिकेतन[3]

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९५२६)से; सौजन्य: शान्तादेवी।

३०. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२२ जनवरी, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। जेलकी बहनोंसे मिली, यह ठीक किया।

चमत्कार जैसी कोई चीज इस जगतमें नहीं है अथवा सब चमत्कार ही है। पृथ्वी अधरमें लटक रही है और आत्मा शरीरमें है, यह जानते हुए भी हम उसे देख नहीं सकते, ये महान चमत्कार ही तो है। इनके सामने दूसरे कहे जानेवाले चमत्कार तो जादूगरके आमके पेडकी तरह तुच्छ लगते हैं।

'आँख एक रखना'[4] का अर्थ है: टेढ़ा न देखना, अर्थात् दृष्टि निर्मल रखना, उसके द्वारा कुदृष्टि न डालना। इसके सिवा दूसरा अर्थ है ही नहीं।

१. ५ मई, १९३० से २६ जनवरी, १९३१ तक।
२. देखिए खण्ड ४३, "पत्र: रामानन्द चटर्जीको", १८-६-१९३०, ।
३. पत्र २/१ टाउनशैंड रोड, भवानीपुर, कलकत्ताके पतेपर दिगन्तरित कर दिया गया था।
४. सेंट मेथ्यू–४, २२ की पंक्ति 'कीप दाइन आई सिंगल' का रूपान्तर।

सरोजिनीदेवीका किस्सा दु:खद है। लेकिन हम अनासक्तिपूर्वक उसके साथ व्यवहार करेंगे तो उसकी गाडी सीधी चलने लगेगी, फिर वह वहाँ रहे या प्रयागमें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२६७) से। सी० डब्ल्यू० ६७१६ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक।

३१. पत्र: सर फ्रेडरिक साइक्सको[1]

२३ जनवरी, १९३२

प्रिय मित्र,

पिछले वर्ष आपसे मेरी जो सद्भावपूर्ण बातचीत हुई थी, उसीसे मुझे आपको यह पत्र लिखनेका साहस होता है। यदि आपको ऐसा लगे कि मैं तो कैदी हूँ, इसलिए मुझे आपको पत्र नही लिखना चाहिए तो मैं फिर पत्र नही लिखूँगा और यह पत्र आप चाहे तो फेंक सकते हैं। लेकिन यदि आपने मेरे यह पत्र लिखनेका बुरा न माना तो यथा-अवसर मैं फिर लिखनेका साहस करूँगा।

यद्यपि मेरी रायमे सभी अध्यादेश एक अत्यन्त दु:खद भूल हैं और बिलकुल ही अनावश्यक हैं, फिर भी सरकार-द्वारा एक दूसरे ही दृष्टिकोणका अपनाया जाना और कांग्रेसको कुचलनेकी उसकी कोशिशकी बात मैं समझ सकता हूँ। संगठनको कुछ समयके लिए शायद निष्क्रिय बनाया जा सके, परन्तु उसकी भावना कभी नही कुचली जा सकेगी। लेकिन यह एक अलग बात है।

मैं आपका ध्यान जिस बातकी तरफ दिलाना चाहता हूँ, वह तो वे ज्यादतियाँ हैं जो अध्यादेशोके अन्तर्गत की जा रही हैं।

अहमदाबादमें एक शान्तिपूर्ण सभाको जबर्दस्त लाठीचार्जसे तितर-बितर करना और सभामें लोगोपर घोडे दौडाना एक नृशस तरीका लगता है। अनेक नौजवानोको गम्भीर चोटें आईं और कुछ औरतोको भी थोडी-बहुत चोटें लगी। एक युवा स्त्रीको बाल पकडकर घसीटा गया। यह सूचना मुझे उन समाचारपत्रोसे मिली है जो मुझे दिये जाते हैं। कहा जाता है कि नडियादमें और भी ज्यादा क्रूरतापूर्ण बरताव किया गया और प्रकाशित खबरोके अनुसार सूरतमें तो वह सबसे ज्यादा बुरा रहा। कहा जाता है कि दो छात्रावासोसे लडकोको आनन-फानन बाहर निकाल दिया गया और छात्रावासोपर अधिकारियोने कब्जा कर लिया। ऐसा तरीका उसे अमलमे लानेवाले लोगोको नृशस बना देता है। यह बात ध्यानमे रखनी चाहिए कि यह सारा बरताव उन लोगोके प्रति किया जा रहा है जो इसके जवाबमे कुछ

१. बम्बईके गवर्नर।

नही करते और जिनके विषयमे कोई यह नही कहेगा कि उन्होने पहले कभी कोई हिंसक कार्य किया है।

अधिकारियोने अहमदाबादमे राष्ट्रीय विद्यापीठकी इमारतपर कब्जा कर लिया है। इस विद्यापीठमे सावधानीसे चुनी गई पुस्तकोका काफी बडा सग्रह है। पुस्तकालय मे एक धार्मिक पुस्तकोका विभाग भी है। यह एक मानी हुई बात है कि वह निष्ठावान विद्वानो-द्वारा बनाया हुआ अपने ढगका एक ही पुस्तकालय है। उसमे कुछ दुर्लभ और बहुमूल्य पाण्डुलिपियाँ है। इसमे एक छोटा-सा सग्रहालय है, जिसमे कलाकृतियोंका सग्रह है। मैदानमे मूल्यवान पेड-पौधे लगे हुए है। यह सारा-का-सारा प्रयास जो दस वर्षोंके धैर्ययुक्त परिश्रमका परिणाम है, कदाचित् बिना किसी उचित कारणके नष्ट हो जानेवाला है।

कहा जाता है कि सुप्रसिद्ध तैयब-परिवारके सदस्य श्री अब्बास तैयबजी, जो देशके अत्यन्त आदरास्पद भारतीयोमे से एक है, जो बडौदा उच्च न्यायालयके भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश है और जिनकी उम्र इस समय ७८ वर्षकी है, नडियादमे अन्य कैदियोके साथ इस तरह कैद करके रखे गये है कि उसे एक कठघरेमे बन्द कर देना कहा जा सकता है।

मै आपसे इन बातोंकी जाँच करनेको कहता हूँ। जो इन अपराधोके लिए जिम्मेदार कहे जाते है, उनका अपने अपराधोसे इनकार कर देना ही जाँच-पड़ताल नही माना जा सकता। ऐसी इनकारियाँ बहुधा बेकार साबित हुई है।

ज्यादतियोके जो दृष्टान्त मुझे स्पष्ट प्रतीत हुए है, यहाँ मैने उनमे से केवल कुछ चुनकर सामने रखे है। यदि पिछले अनुभवसे कोई अनुमान लगाया जा सकता हो तो जो मामले सबसे बुरे रहे होगे, उन्हे अखबारोमे छपने ही नही दिया गया होगा। और फिर मुझे सभी अखबार मिलते भी नही है।

मैने अग्रेजोका भला चाहनेवाले एक मित्रकी हैसियतसे यह पत्र लिखा है। मै इस बातका इच्छुक हूँ कि दोनो तरफसे कटुताका ऐसा प्रत्येक कारण बचाया जाना चाहिए जो बचाया जा सकता है। मै चाहूँगा कि सघर्ष दोनो तरफसे सम्माननीय ढगसे चलाया जाये ताकि उसके अन्तमे दोनोमे से प्रत्येक पक्ष यह कह सके कि उसके कार्योमे कोई द्वेषकी भावना नही थी।

मै हूँ आपका सच्चा मित्र
मो० क० गांधी

सर फ्रेडरिक साइक्स
बम्बई

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रेक्ट्स, गृह विभाग, विशेष शाखा, फाइल सं० ८००(४१), भाग-१, पृष्ठ १५-१६। जी० एन० ३८५६ से भी।

३२. पत्र : मीराबहनको

२३ जनवरी, १९३२

चि० मीरा,

आश्रमकी डाक, जिसकी मैं कितने ही दिनोसे प्रतीक्षा कर रहा था, कल ही आई। आशा है अब डाक मुझे नियमित रूपसे मिल जाया करेगी। बेशक, तुम्हारा बम्बई जाना ठीक था। तुम कहाँ ठहरोगी और क्या करोगी, इसका अन्तिम निर्णय तुम्हीको करना चाहिए।

तुम जब प्रिवा-दम्पतीको लिखो तो उन्हें बताना कि मैं उनकी याद बराबर करता रहता हूँ। उन्हे अपने स्वास्थ्यकी किसी भी हालतमें उपेक्षा नही करनी चाहिए। उन्हे चाहिए कि वे मुझे लिखे।

मैं तुम्हे पहले ही बता चुका हूँ कि बड़ी धुनकी[1] न तो लाना और न भेजना। तुमने मुझे इतनी अधिक पूनियाँ भेज दी हैं कि अभी मुझे कुछ सप्ताहतक पीजनेकी जरूरत नही होगी। और इसकी मुझे खुशी है। अभीतक मेरे शरीरमें पहले-जैसी ताकत नही आई है। नौ बजे रातसे पौने चार बजे सुबहतक पूरी नीद लेनेके बावजूद दिन-भरमें कम-से-कम तीन बार सोता हूँ। अभीतक मुझे नीद और आरामकी आवश्यकता है। पिछले सालकी तरह मैं पाँच सौ गज नही कातता[2]। इतना दो दिनमें कातता हूँ। लेकिन मुझे आशा है कि मैं जल्दी ही रोज पाँच सौ गज कातने लगूंगा। इसके लिए मैं अपने ऊपर जोर नही डालूंगा। मुझमें जो शक्ति अभी बाकी है, उसे बचाकर रखनेका प्रयत्न करूंगा। यह तुम्हें अधिक पूनियाँ लाने या भेजनेके लिए सूचना नही है। उनकी जरूरत होते ही मैं सूचित कर दूंगा। मेरा स्वास्थ्य खूब अच्छा है और सरदार वल्लभभाईका भी। मैंने तुम्हें सिर्फ यह बताया है कि मुझे अभीतक कितने आरामकी जरूरत है। लन्दनके कामकी थकान भयंकर थी। और मेरे खयालसे शरीरको अभी लम्बे आरामकी जरूरत है। समुद्र-यात्राने बेशक लाभ हुआ था; किन्तु लन्दनके बाद ही बम्बईकी धूमधामने उसपर पानी फेर दिया।

मुलाकातोंके बारेमें इस बार कोई कठिनाई नही है। मैंने पिछली बार जो-कुछ माँगा था, वह सब इस बार दे दिया गया है। इसलिए हर सप्ताह मुलाकातें हो सकती हैं। लेकिन इसका अर्थ यह नही कि हर सप्ताह किसीको आना ही चाहिए। मेरी तरफसे कोई प्रतिबन्ध नही है। मैं सिर्फ चेतावनी देता हूँ कि हम गरीब लोग हैं और इसलिए प्रेमकी खातिर मिलने आनेमें किफायत करनी चाहिए। काम तो इतना नही हो सकता और प्रेम तो त्यागसे ही पनपता है। खैर, तत्वज्ञानकी बात छोड़ो। मैं जानता हूँ, तुम सब जो उत्तम है, वही करोगे। अवश्य

१. देखिए पृष्ठ १४।

२. बापूज लैटर्स टु मीरा से।

ही, जिन लोगोकी राजनीतिक क्षेत्रमे ख्याति है, वे विशेष अनुमतिके बिना नही मिल सकते।

बहनोको, कमलाको और खुद तुमको मेरा प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२१२) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९६७८ से भी।

३३. पत्र: कान्ति गांधीको

२३ जनवरी, १९३२

चि० कान्ति,

तुमने पत्र लिखकर ठीक ही किया। तुम सबको प्रसाद मिला, यह जानकर तो मैं बहुत ही खुश हुआ हूँ। प्रसाद मिलनेपर भी मनमें क्रोध न आये, दया ही आये और इसके बाद भी ऐसा प्रसाद लेनेकी तैयारी हो तो जीवन सार्थक माना जायेगा। सन्त फ्रांसिसको कोई गाली देता था तो वह मनमें प्रसन्न होते थे और ईश्वरका आभार मानते थे कि उसने गाली देनेवालेको मारनेकी प्रेरणा नही दी और मार खानेपर यह आभार मानते थे कि उसने उसे जानसे मार डालनेकी प्रेरणा नही दी। जानसे मारनेवालेके लिए कहते थे कि उसने यातना दे-देकर मारनेकी कोशिश तो नही की। तात्पर्य यह है कि जिसने शरीरका मोह छोड दिया है और जिसने शरीरको केवल सेवाका ही साधन माना है, उसे शारीरिक प्रहार स्पर्श ही नही कर सकते।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९०५) से; सौजन्य : नारणदास गाधी।

३४. पत्र: बाल कालेलकरको

२३ जनवरी, १९३२

चि० बाल,

तेरा पत्र मुझे मिल गया था, पर उसका जवाब कहाँसे देता? अब तो तुझे जो-कुछ पूछना हो सो यही लिखकर पूछना। मैं उसका जवाब देनेका प्रयत्न करूँगा। जिन्हे लड़ाईका रग लगा है, ऐसे सब लोगोको धन्यवाद तो भेज ही दिया है। मैं सबको अलग-अलग पत्र नही लिख रहा हूँ तथापि, वे सब अपने-अपने अनुभव लिखकर भेजे। कान्तिके पत्र[1] मे जो थोडा-सा लिखा, वह तुम सबपर लागू होता

१. देखिए पिछला शीर्षक।

है। उस पत्रमें जो-कुछ लिखा है, इस वक्त तो उससे ज्यादा मुझे कुछ नही कहना है। याद रखें, कि हम कोई सेवा कर पायें तो हमें उससे फूल नही उठना चाहिए। बल्कि जो-कुछ कर पायें, उसे हम कम ही मानें। संसारमें हम कर्ज लेनेके लिए जन्म नही लेते, उसे उतारने आते हैं। जिसे कर्ज उतारनेकी जरूरत नही, उसे शरीररूपी जंजाल सिरपर लेनेकी क्या जरूरत है। वह मुक्त प्राणी है। और कर्जदार सोलह आने भरपाई कर दे तो भी इसमें उसके लिए गर्व करनेका कोई कारण नही। इतना करनेपर ही वह विश्राम लेनेके योग्य बन पाता है। कर्जसे मुक्त हुआ अर्थात् बन्धनसे मुक्त हुआ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९०४)से, सौजन्य: नारणदास गांधी।

३५. पत्र: गंगाबहन वैद्यको

२३ जनवरी, १९३२

चि० गंगाबहन (बडी),

तुम्हारे पत्रसे मैं निश्चिन्त हो गया हूँ। सबकी परीक्षा हो रही है। हम तो सिर्फ यही इच्छा करें कि ईश्वर हमें पूर्ण आहुतिके योग्य माने। जिसके हिस्सेमें जो सेवा आये, वह उसे पूरी तरह कर पाये, इतना ही काफी है।

काकु कैसा है? क्या करता है?

तुम दूध और फल कॉफी ले लेती हो न? इसमें लोभ न करना और संकोच भी न करना। औषधि समझकर लेना। कॉफी पीनेसे शरीर अच्छा रहता हो तो कॉफी भी लेना।

नाथ[1] को कभी-कभी आ जानेके लिए लिखना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६: गं० स्व० गंगाबहेनने, पृष्ठ ६२। सी० डब्ल्यू० ८७८८ से भी; सौजन्य: गंगाबहन वैद्य।

१. केदारनाथ कुलकर्णी, किशोरलाल मशरूवालाके गुरु।

३६. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

२३ जनवरी, १९३२

चि० पण्डितजी,

तुम्हारा पत्र मिला।

तालके बारेमे तुमने ठीक जानकारी भेजी है। समय निकालकर उसके अनुसार करके देखूंगा। पुस्तक तो अभी नही मिली है।

मथुरी[1] के विषयमे तुमने ठीक किया है। उसे जल्दी उठनेकी जरूरत नही है। उसपर कामका या पढाईका बोझ नही होना चाहिए। वह अपनी मर्जीसे उठे-बैठे। खान-पानके बारेमे मर्यादाका पालन करना। मुख्य खुराक तो दूध होना चाहिए। भात बहुत कम ले। दाल बिल्कुल नही। आवश्यक है कि सब्जी सीधे-सादे ढगसे पकाई हुई ले। एक-दो कच्चे टमाटर उबालकर खा ले तो ठीक है।

गजानन[2] के बारेमे तुम्हारी सलाह मुझे उचित लगती है।

गुरु पण्डितजी[3] के बारेमे तुमने जो लिख भेजा है, वह मजेदार है। मण्डल बनाया है यह भी ठीक लगता है। पहले तो तुम सब शिष्य अपने पुरुषार्थसे कुछ करो और फिर समाजसे मदद माँगो: यही योग्य लगता है, और यही तुम्हे शोभा देता है। फिलहाल, जबतक यह दावानल सुलग रहा है, अपनी योजना धीमी गतिसे चलने देना। जितना बिलकुल आवश्यक हो, उतना जरूर करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २२१)से; सौजन्य . लक्ष्मीबहन ना० खरे।

३७. पत्र : मथुरी ना० खरेको

२३ जनवरी, १९३२

चि० मथुरी,

तेरा पत्र मिला। तेरा पहला काम तो अपने स्वास्थ्यको अच्छी तरह सुधारना है। खेल-खेलमे जितना सीख सके उतनेसे अधिक सीखनेका लोभ मत करना। हमारा सच्चा शिक्षण तो अच्छा बननेमे है। और यह तो बीमार या स्वस्थ सभी

१. नारायण मोरेश्वर खरेकी बेटी, एक गायिका।

२. नारायण मोरेश्वर खरेका भतीजा।

३. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर; देखिए पृष्ठ १२।

लोग कर सकते हैं। अक्षर-ज्ञान तो आभूषणकी तरह है। वे सबको थोड़े ही मिलते हैं?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २६०)से, सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

३८. पत्र: गजानन वि० खरेको

२३ जनवरी, १९३२

चि० गजानन,

तुमारा खत मिला। काकाश्रीने जो अभिप्राय दीया है सही है। दुःख सहनेके लिये तैयार रहना काफी है। जब तुमारे बलिदानका आवश्यकता होगी तब तुमको कोई नहिं रोकेगा। दरम्यान तुमारे निजी कार्यमें तन्मय रहना चाहिये।

ड्राइंगमें आजकल क्या चलता है?

बापूके आशीर्वाद

हिन्दीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३०६)से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

३९. पत्र: लीलावती आसरको

२३ जनवरी, १९३२

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिल गया है। हम मिले तो थे न। दूसरी बहनोंसे तो मुलाकात भी नहीं हुई। उनके लिए क्या कहें? किन्तु तेरी अधीरता समझकर मुझे तुझे खास पर्ची भेजनी चाहिए थी। सो अब भेज रहा हूँ। अपनी शक्तिसे बढ़कर मेहनत न करो तो अच्छा है। बाकी तुम सबकी देखभाल करनेवाला ईश्वर है। स्त्रियोंकी प्रार्थनाका पहला श्लोक[1] याद करना। यह श्लोक सबपर लागू होता है। ऐसा न समझना कि यह प्रार्थना तो हजार वर्ष पहले की गई थी।

हम सब द्रौपदीके समान निस्सहाय हैं। ईश्वरके सामने नर-नारीका कोई भेद नहीं है। नर और नारीके शरीरमें वास करनेवाली आत्मा तो एक ही है। हम

१. गोविन्द, द्वारिकावासिन्, कृष्ण, गोपीजनप्रिय,।
कौरवैः परिभूता मा किं न जानासि केशव॥

मोहवश शरीरकी भिन्न आकृति देख भ्रममे पड जाते है और विकारवश भी हो जाते है। यदि अन्तरमे वास करनेवाले जीवको पहचान ले और सभी जीव एक ही है, यह समझकर सबकी सेवामे ही लीन हो जाये तो इसके बाद इधर-उधरके विचार मनपर हावी होकर हमे परेशान नही करेगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३२२)से। सी० डब्ल्यू० ६५९७ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर।

४०. पत्र : मंगला शं० पटेलको

२३ जनवरी, १९३२

चि० मगला,

तेरा सुन्दर अक्षरोमे लिखा पत्र मिला। हाँ, विलायतमे भी 'लकडी'[1] मिल जाती है। तुम्हे 'गीता'के सभी अध्याय जबानी याद है? पुष्पाको कितने याद है? वह बीमार कैसे पडी? उसकी नाक कुछ बढ गई है। उसे कहना कि नाक बढ़ाकर उसे कटाये नही। क्या दोनो सुबह उठती हो? कमला कहाँ है? कभी पत्र लिखती है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०७२)से। सी० डब्ल्यू० ३६ से भी; सौजन्य : मंगलावहन ब० देसाई।

४१. पत्र: निर्मला ह० देसाईको

२३ जनवरी, १९३२

चि० निर्मला (बुआ),

सच बात है। बम्बईमे तुझे देखा न होता तो पत्र लिखनेके लिए नही कहता। किन्तु देखा और इसलिए तुझे अलगसे पत्र लिखनेके बदले आनन्दीको ही लिखा कि तुझे पत्र लिखनेके लिए कहे। तेरे अक्षर अच्छे हो गये है।

मुझे लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४६२) से।

१. अर्थात् पैदल चलते समय जिनका सहारा लिया जा सके, ऐसी लड़कियाँ।

४२. पत्र: वनमाला न० परीखको

२३ जनवरी, १९३२

चि० वनमाला,[1]

अच्छा हुआ तूने पत्र लिखा। तेरी लिखाई अच्छी हो गई है। वहाँ ध्यान लगाकर पढना। विद्यापीठकी याद आती है? मोहन[2] क्या करता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७६२) से। सी० डब्ल्यू० २९८५ से भी, सौजन्य· वनमाला म० देसाई।

४३. पत्र: शारदाबहन चि० शाहको

२३ जनवरी, १९३२

चि० बबु,

तू गले-पडी लडकी लगती है! तू मुझे जब लिखे तब लिखूं और जब न लिखे तब भी क्या लिखा ही करूँ? जान पडता है तुझे अभी भी दमा बना हुआ है। ऐसा क्यो? कॉडलिवर आयल कितना पिया? इससे लाभ मालूम पडा या नही? तू अब क्या कर रही है? खाँसी चलती है क्या? वर्षके आरम्भमे कितना वजन था? धूपमे बैठती है या नही? तेलकी मालिश करती है या नही? खुली हवा, धूप और शरीरमे तेलकी मालिश, यह तो तेरे लिए बहुत ही आवश्यक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती सी० डब्ल्य० (९९०४) से, सौजन्य. शारदाबहन गो० चोखावाला।

१ व २ नरहरि परीखकी पुत्री तथा पुत्र।

४४. पत्र: वासुदेवको

२३ जनवरी, १९३२

भाई वासुदेव,

तुम्हारा खत मीला। आत्माकी उन्नति सयम पालनसे होती है। आत्माका स्वभाव निर्विकारता है। ईस लीये विकारमात्रका सयम आवश्यक है।

बापुका आशीर्वाद

हिन्दी (सी० डब्ल्यू० ८९०३-ए) से, सौजन्य: नारणदास गाधी।

४५. पत्र: रैहाना तैयबजीको

२४ जनवरी, १९३२

चि० रैहाना,

तेरा पत्र मिला। बाबाजानको नडियादमे कितने दिन रखा गया था? वहाँ उन्हे कोई कष्ट तो नही हुआ? बाबाजानके खाने-पीनेका क्या प्रबन्ध है? पिछली बार उनकी दाढीमे जूँ पड गई थी। इस बार सावधान रहे। इसके लिए किसीसे मदद लेनी पडे तो ले या मुझे बुला ले। क्या सबसे मिल सकते है? तुम सब [महीनेमे] कितनी बार मिल सकते हो? बाबाजानसे कहना कि सरदार और मै उन्हे बहुत याद करते है और अक्सर उनकी कुर्बानीकी बाते करते है।

तू किसलिए परेशान होती है। ईश्वरकी जो मर्जी होगी, वही काम तुझसे लेगा। अम्माजानको हम दोनोकी ओरसे बहुत-बहुत वन्देमातरम् और सलाम, खुदा हाफिज और जो सब कहना ठीक हो, सो कह देना। सोहेला[1] का बेटा कितने महीनेका हो गया है? दिये हुए वचनका तू पालन करेगी, यह तो मै जानता ही हूँ। ईश्वर जब फिर मिलायेगा, तब ज्यादा बात करेगे। मुझे पत्र लिखती रहना। ज्यादातर, जितने पत्र आते है, वे सब मुझे दे दिये जाते है। यहाँसे भी लिखनेके लिए सख्यापर कोई बन्धन नही है। राजनैतिक मामलोपर नही लिख सकता और अब्बाजान-जैसे बडे-बड़े लोगोको नही लिख सकता। लेकिन तुम-जैसी बच्चियो और लडकोको मजेसे शिक्षापत्र और प्रेमपत्र लिख सकता हूँ। इतनी सुविधा भी काफी मानी जायेगी।[2]

१. रैहाना तैयबजी की बहन।

२. अगले अनुच्छेदकी भाषा ज्यों-की-त्यों रखी गई है।

अब उर्दू शुरू होता है। हमीदा बहादुर लड़की है। खुदा उससे बड़ा काम लेगा और उसको बडप्पन देगा। बस खुदा हमीदाको उम्र दराज करे। इस बारेमें तुमको भी तो धन्यवाद मिलना चाहिए। क्योंकि हमीदा आखिरमें तुम्हारी सहेली है-न? मेरी गलतियाँ बता दो। आजके लिए इतना काफी है न? खुदा हाफिज।

बापूके आशीर्वाद और दुआ

[पुनश्चः]

रोहिणी, राधाबहन, आदिसे मिलो तो मेरा आशीर्वाद कहना।[1]

गुजराती व उर्दूकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६३६) से।

४६. पत्र : कुसुम देसाईको

२४ जनवरी, १९३२

चि० कुसुम (बड़ी),

तुझे बम्बईमें देखा तो जरूर, मगर कुछ पूछ ही नहीं सका। अब सारे महीनोंका अपना हिसाब भेजना। तेरा स्वास्थ्य देखनेमें तो ठीक लगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८२७) से।

४७. पत्र : लालजी के० परमारको

२४ जनवरी, १९३२

चि० लालजी,

मामासाहब[2] लिखते हैं कि इन दिनों तू खाली बैठा रहता है। सूत नहीं है इसलिए बुन भी नहीं रहा है। जो कातना जानता है उसके लिए सूतका अभाव कैसा? तू खुद ही कात और जब एक थानके लिए जितना चाहिए उतना सूत हो जाये तो उसे बुन डाल। इसके अलावा आसपासके लोगोंको भी कातनेके लिए प्रोत्साहित करना। जिसके मनमें सेवाकी इच्छा है, उसे उसका अवसर मिल ही जाता है। तुझे सिखानेके लिए जो परिश्रम किया गया है उसे व्यर्थ न जाने देना। मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२९५) से।

१. यह वाक्य गुजरातीमें है।
२. अनुमानतः वि० ल० फड़के जो उन दिनों गोधराके हरिजन आश्रमकी देख-रेख कर रहे थे।

४८. पत्र : रुक्मिणी बजाजको

२४ जनवरी, १९३२

चि० रुक्मिणी,

भला तू पत्र क्यो लिखेगी? और अब तो माँ हो गई है इसलिए कहना ही क्या? बच्चेका नाम मैने तेरे ससुरसे पूछा था; यह भी उन्होने मुझपर ही लाद दिया है। तू इसमे मेरी मदद कर। तुम दोनोको जो नाम अच्छे लगे, वे मुझे लिख भेजना। फिर उनमे से जो मुझे अच्छा लगेगा, वह मै चुन लूंगा। बनारसी कैसा है? तुम्हारे ससुर तो, जिसे तू उत्तम कहे, ऐसे व्यक्ति है। परोपकारी भी बहुत है। किन्तु पैसा कमाये बिना विलायत छोड़नेकी हिम्मत नही करते और विलायतमे कमा पानेकी स्थिति है नही। हो सकता है कि तू आग्रह करे तो वे आ जाये। उन्हे लिखना कि जिनके लिए वे पैसा कमानेका परिश्रम कर रहे है, उन्हे उसकी जरूरत नही है। फिर वे क्यो इस चक्करमे पड़ते है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०५९) से।

४९. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

२४ जनवरी, १९३२

भाई विट्ठलदास,

तुम्हारे बारेमे सरदारसे पूछ ही रहा था कि इतनेमे तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी कमजोरी लम्बी चल रही है। पर इसकी चिन्ता न करना। पूरी तरह आराम करो। बिलकुल स्वस्थ होनेपर ही काम शुरू करना। इस बीच विचारधारा तो चलती ही रहेगी। जो व्यक्ति किसी काममे निपुण[1] होता है, वह अपने विचारोसे भी बहुत काम कर सकता है। यह कर्मयोगकी खूबी है; उसकी विशेषता है।

हम दोनो मजेमे है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

सासवड आश्रमके सभी भाई-बहनोको आशीर्वाद।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७७९) से।

१. विट्ठलदास जेराजाणी खादी-विशेषज्ञ थे।

५०. पत्र : हरिप्रसादको

२४ जनवरी, १९३२

चि० हरिप्रसाद,

गंगादेवीकी सेवा भली भांती कर रहे हो उसका फल तुमको ईश्वर अच्छा हि देगा। गीता माता तो हमें सीखाती है कि कोई कार्य कोई सेवा हम फलेच्छासे न करें। इसलिये तुमारे मनसे तो सेवा हि पूर्ण फल है और ऐसे हि होना चाहिये। तुमारा शरीर अच्छा होगा। तुमारी दिनचर्या लिखो।

बापुके आशीर्वाद

हिन्दीकी फोटो-नकल (जी० एन० २५५०) से।

५१. पत्र : तुलसी मेहरको

२४ जनवरी, १९३२

चि० तुलसी मेहर,

तुमारे दोनों खत आये थे। तुमको क्या लिखना? तुमारा कार्य सूर्यकी गतिसा नियम बद्ध चल हि रहा है। चलाते रहो। मूझे दतुन मिलते रहते हैं। आजकल दतून सरदार तैयार करते हैं।

बापुके आशीर्वाद

हिन्दीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५३९) से।

५२. पत्र : नारणदास गांधीको

२३[1]/२५ जनवरी, १९३२
शनिवार, अपराह्न ३ बजे

चि० नारणदास,

जितने लिखे जा सकें, उतने पत्र लिखूँगा और मंगलवारकी डाकसे जानेके लिए दे दूंगा। मैं जितना नियमित होना चाहता हूँ, नहीं हो पाता। आरामकी जरूरत है। यों तबीयत तो ठीक ही है। मीराबहनके पत्रसे अधिक मालूम होगा। आज वजन लिया गया। १०६$\frac{3}{4}$ पौण्ड निकला। सरदारका १४४$\frac{3}{4}$ हो गया है। मुझे केवल अब काफी आरामकी जरूरत है और मैं आराम कर रहा हूँ।

१. साधन-सूत्रमें २४ तारीख है किन्तु शनिवार २३-१-१९३२ को पड़ा था।

अब्बाससाहब तुम्हारे पड़ोसी है। उनके समाचार लेते रहते होगे। खानेकी जरूरी चीजे पहुँचाते रहना। हमीदाबहन, कानजीभाईकी पत्नी और उनकी लड़की भी वही है। कोई बहन उनसे मिलने भी जाती होगी।

तिलकमको क्या विशेष काम सौपा जाये, यहाँसे यह नही सूझता। उसे हिन्दी तो सीख लेनी चाहिए। कातना-बुनना सीखे, यह भी इष्ट है। वह सन्तोष तो देता है न?

अपराह्न, २५[1] जनवरी, १९३२

चम्पाने दुःखद पत्र लिखा है। लगता है, रतिलाल काफी तकलीफ दे रहा है। किसी तरह चम्पाको उससे अलग किया जा सके तो इष्ट होगा। चम्पा अब और सन्तानका बोझ सहने लायक नही रही है। सम्भवतः रतिलाल अपनेपर अंकुश नही रख पाता है। पूरा धर्म-संकट है। चम्पाके अनुसार रतिलाल दिन-भर बगलेमें पड़ा रहता है और जब जी मे आता है, बच्चोको पीटने लगता है। समझ नही पाता, इसमे तुम क्या कर सकते हो। कोई भाई या बहन वेतन ले और उसके साथ रहे तो ठीक हो। देखना, और कुछ सूझे और योग्य लगे, तो करना।

जो मिलने जाये, वह मगनभाईसे कह दे कि उनका पत्र मिल गया है। उन्हे अभी तो पत्र कैसे लिख सकता हूँ? काकासाहबसे वह यह कह दे कि लिखनेकी सब बाते ध्यानमे तो है। यथाशक्ति और यथासमय लिखना सोचा है।

तुम देखोगे कि बाहरके लिए अनेक पत्र मैं तुमको भेज देता हूँ। जानता हूँ कि इन्हे यथास्थान भेजनेमे खर्च दुगना होता है और तुम्हारा काम बढ़ जाता है। तुम चाहो तो उन पत्रोको सीधा ही भेजकर खर्च और समयकी बचत कर सकता हूँ। मुझे कुछ ऐसी याद है कि पहले भी मैंने यह प्रश्न पूछा था और मुझे याद है तब तुमने पत्र अपने मारफत भेजनेके लिए लिखा था। क्या करूँ, लिखना।

इसके साथ अलग कागजपर १४वाँ[2] अध्याय है। अब शुरू कर दिया है तो यथासम्भव हर हफ्ते लिखता रहूँगा।

आजकी डाकमे कुछ उपयोगी पत्र (कुछ कतरने भी) है। देखनेका समय मिले तो देख जाना। मेरा एक दोष कहो, गुण कहो, है। प्रसंग आनेपर ही सम्बन्धित विचार प्रकट करता हूँ। उनका ठीक प्रसग न आये तो वे रह जाते है। इसलिए जो विचार इस तरह फुटकर रूपमे कह देता हूँ, यदि उन्हे सँभालकर न रखे तो सम्भव है वे चले ही जाये। इससे कोई बडी हानि होगी, ऐसा तो नही है। किन्तु महादेव, काका, वगैरहने संग्रह किया है, इसलिए मैं भी कुछ मोहमे पड गया हूँ। यो मेरा जहाज तो सहज भावसे यात्रा करनेवाला है। मेरे पास मार्गका नक्शा नही होता।

१. साधन-सूत्रमें २४ है पर १४ वाँ अध्याय २५-१-१९३२ को समाप्त हुआ था; देखिए "गीता-पत्रावली', २१-२-१९३२, १४ वाँ अध्याय; तथा "दैनन्दिनी, १९३२", इस खण्डका अंतिम शीर्षक।

२. परन्तु गांधीजी इसे भेजना भूल गये थे और इसे फिर उन्होंने २६-१-१९३२ के पत्रके साथ भेजा था। इसके लिये तथा गीताके अन्य सारांशोंके लिए देखिए "गीता-पत्रावली", २१-२-१९३२।

हो भी काहेको? वह भक्तिके विरोधमे जाता है। जो प्रभुके नचाये नाचना चाहता है, उसका अपना क्या आरम्भ? जो वस्तु जब प्राप्त हो जाती है, उसमे तन्मय हो सके तो बहुत हो गया। किन्तु यह सब 'तत्त्व-मीमासा' है। इससे क्या लाभ? जैसा लगे वैसे रहो, किसी भी तरह प्रभुको लहो।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

तुम्हारे पत्रके सिवा आठ और है।

लक्ष्मण गिरि ९६ हैरिसन रोड, कलकत्तासे लिखते है कि गिरि-कुटुम्बको रवाना कर दिया जाये। तुम्हारी जानकारीके लिए लिख रहा हूँ। तुम वहींसे उत्तर दे देना। मै नही दे रहा हूँ।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से।

५३. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

मौनवार
२५ जनवरी, १९३२

बहनो,

सब बहनोको लिख सकूँ, ऐसा कैसे हो सकता है? हाँ, जिसे लिखनेकी जरूरत महसूस होती है, उसे समय मिलनेपर मै लिख देता हूँ। किन्तु जिस प्रकार मै पहले सारी बहनोके नाम एक पत्र लिखा करता था, इस बार भी उसी तरह लिखते रहनेका विचार तो अवश्य है।

इन दिनो, जब हम सब लोगोकी परीक्षा हो रही है, मेरी कामना है कि द्रौपदीकी प्रार्थना तुम्हारे लिए महान आश्वासन देनेवाली सिद्ध हो। सच पूछो तो हम सब द्रौपदीकी ही स्थितिमे हैं। हमारी लाज कोई मनुष्य नही ढक सकता; उसे तो ईश्वर ही ढक सकता है। ऐसा जरूर होता है कि वह अपनी सहायता मनुष्यके द्वारा भेजता है, किन्तु मनुष्य तो निमित्त मात्र है। इतना तो-उस कठिन परिस्थितिके विषयमे, जिसमे से हम इस समय गुजर रहे हैं।

अब थोडा अपने इग्लैंडके अनुभवोके सम्बन्धम। जो प्रेम मुझे भारतकी बहनोसे मिलता रहा है, लगभग वैसा ही मुझे इग्लैडमे भी मिला है, ऐसा कह सकता हूँ। जिस तरह तुम मुझसे कुछ छुपाती नही हो, उसी तरह इंग्लैडमे भी मुझे ऐसी अनेक बहने मिली जिन्होने मेरे समीप अपना हृदय सम्पूर्ण भावसे खोलकर रख दिया। वे जाने कितनी-कितनी दूरसे प्रातः भ्रमणमे मेरा साथ देनेके लिए और बातचीत करनेके लिए आती थी। इन अनुभवोसे मैने यही सार निकाला कि अहिंसा बड़ी व्यापक वस्तु है। अहिंसामे निर्विकारिताका समावेश तो हो ही जाता है।

मैंने यह भी देखा कि भारतकी स्त्रियाँ यूरोपकी स्त्रियोकी तुलनामे किसी भी तरह कम नही है। भारतकी स्त्रियोमे कुछ शक्तियाँ दबी हुई पड़ी हैं। कुछ शक्तियोको प्रकट होनेका अवकाश ही नही मिला। यूरोपकी स्त्रियोंमें जहाँ-जहाँ मैंने कोई विशेषता देखी, वहाँ-वहाँ उन विशेषताओके कारण भी देख सका। हमारे यहाँ भी यदि वे कारण प्रस्तुत हो तो भारतकी बहनें भी वैसी ही बन सकती हैं। तथापि वहाँ स्त्रियोमे जो विशेषताएँ दिखती है, उनपर हमें विचार तो करना ही चाहिए। हममें भी वे सब विशेषताएँ अप्रकट अवस्थामे है, ऐसा मानकर हमे फूल नही जाना चाहिए। सन्तोष मानकर नही बैठ जाना चाहिए। उनमे सगठन-शक्ति है। वे पुरुषोकी भाँति इकट्ठी होकर अच्छी तरह काम कर सकती हैं। वे अपनेको कमजोर नही मानती, वे चाहे जहाँ निर्भयतापूर्वक आती-जाती हैं। कोई बहन अकेली हो तो वहाँ रातके समय या दिनमे उसके साथ किसीको भेजनेकी जरूरत नही होती। अस्पतालोमे सेवाका काम तो वहाँ विशेष रूपसे स्त्रियोका ही कार्य-क्षेत्र हो गया है और वे इस कामको बहुत शोभापूर्वक करती है। वहाँकी कुछ बहनोका त्याग अवर्णनीय है। म्यूरियल लेस्टर — जो हमारे यहाँ रह गई है — धनिक माँ-बापकी लड़की है। मीराबहनकी तरह उसने भी, उत्तराधिकारमे जो सम्पत्ति उसे मिली थी, वह सारी सम्पत्ति अपने ही द्वारा स्थापित आश्रमको दे दी है। उसने और उसकी बहन डोरिसने सेवामे अपना सर्वस्व अर्पित कर दिया है। डोरिस बालकोकी पाठशाला चलाती है। उसके पास लगभग १० शिक्षिकाएँ हैं जो थोडा-बहुत वेतन लेकर काम कर रही हैं। म्यूरियल उस आश्रमको चलाती है जहाँ मैं ठहरा था। दोनो बहनोको रात-दिन सेवाकी ही धुन लगी रहती है। दोनो कुमारिकाएँ हैं। अब तो उनकी उम्र इतनी अधिक हो गई है कि सामान्यतः उनके मनमे विवाहका विचार आयेगा ही नही। दोनो बहनोकी पवित्रता हम उनके चेहरेपर झलकती देख सकते हैं। म्यूरियलके आश्रममें ऊँच-नीचका या काले-गोरेका भेद होता ही नही है। उसने अपने आश्रममे मुझे ठहराया, कह सकते है कि इससे तो उसे कुछ बडप्पन भी मिल सकता था। किन्तु उसने तिलकमको भी आश्रय दिया था; सो उसके लिए हम क्या कहे? तिलकमसे ही पूछना कि उसे इस आश्रममे कितनी अच्छी तरह रखा गया था। तिलकम तो बिलकुल ही गरीब था। मैंने कहा था कि उसका खर्च मैं दूँगा, किन्तु तिलकमने इस आश्रममे दूसरे आश्रमवासियोकी तरह पूरा काम किया, इसलिए उन लोगोने उसकी ओरसे मुझे एक कौडी भी नही देने दी। इस आश्रममे हब्शियोको भी इतने ही आदर और प्रेमसे रखा जाता है। ऐसे मीठे संस्मरण तो अनेक है, किन्तु इस बार तो तुम इतनेको ही काफी मान लोगी न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से।

५४. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

मौनवार, [२५ जनवरी, १९३२][1]

बालको और बालिकाओ,

सबको अलग-अलग पत्र तो नही लिख सकता इसलिए पहलेकी तरह तुम सबके लिए एक पत्र हर सप्ताह लिखनेका प्रयत्न करूँगा। जो बाते मैं तुम्हें तुमसे मिलनेपर सुनाना चाहता था, वे अब लिखकर बतानेका इरादा है। इस इच्छाको पूरा करना तो भगवानके हाथमें है। वे हमे जैसा रखे वैसे हम रहें और उसीमें सुख मानें। इसीलिए हम नरसी मेहताका वह भजन गाते हैं: 'सुख-दु:ख मनमें न आने दें। वे तो विघाताने शरीरके साथ ही गढे हैं'।[2]

अब अपनी बात कहता हूँ। पहले तो डोरिस बहनकी शालाके विषयमे कहना चाहता हूँ। हमारे यहाँ म्यूरियल बहन आकर रही थी न? उसकी बहन डोरिसने अपना जीवन बालकोको अर्पित कर दिया है। इन बालकोके लिए डोरिस बहन एक सुन्दर शाला चला रही है। शालामें कोई पुरुष शिक्षक नही है। सभी शिक्षिकाएँ ही हैं। शालाकी इमारत दोमंजिली है। छत बडी है। उसके थोड़े हिस्सेपर छप्पर डाल दिया गया है। बरसात हो तो बच्चे उसके नीचे खेलें, सोये, आदि। एक बात मैंने वहाँ देखी और वह मुझे अच्छी लगी। वहाँ सभी बालकोको दोपहरको आधा घंटा सुला देते हैं। इसके लिए छोटी-छोटी खाटें रखी हुई हैं जिन्हे मोडकर रखा जा सकता है। याद रहे कि यह सब बालक-बालिकाएँ आठ वर्षसे कम आयुके हैं। जितना काम वे अपने हाथसे कर सकते हैं, उतना काम उनसे ही कराया जाता है। खेलमे शिक्षिका उनके साथ ही खेलती है। बच्चोंको हाथ-मुँह धोना, दाँत साफ करना भी शिक्षिका ही सिखाती है। बच्चोका एक भी काम ऐसा नही जिसकी देख-रेख शिक्षिका नही करती। सब बच्चोंके माँ-बाप गरीब हैं। इसलिए वे फीस कुछ नही देते। वहाँ खेल-कूद, व्यायाम, उद्योग तो हैं ही। तुम लोगोकी तरह वे बालक मेरे साथ हिल-मिल गये थे। उन्होने मुझे वर्षगाँठके दिन खिलौने भेजे थे जिन्हें मैं सँभालकर तुम्हारे लिए ले आया था। पर अब देखें तुम्हे कब दे सकूँगा। आज इतना ही काफी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८८९६ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१. बच्चोंके नाम यरवदा-जेलसे लिखा गया यह पहला पत्र है और सम्भवतः आश्रमकी बहनोंको लिखे गये पिछले पत्रके साथ ही लिखा गया होगा।

२. "सुख-दुख मनमां न आणीये घट साथे रे घडीआं"।

५५. पत्र : जमनादास गांधीको

२५ जनवरी, १९३२

चि० जमनादास,

तू जैसा आया वैसा ही चला भी गया — बातचीत तो कुछ हो ही नही पायी। अब मुझे जी-भरकर लिख। तेरा काम कैसा चल रहा है? पाठशालामे कितने लड़के हैं? कितने शिक्षक है? जगन्नाथ कहाँ है? उसके भाई कहाँ है? तेरा स्वास्थ्य कैसा है?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९३६१) से।

५६. पत्र : प्रभावतीको

२५ जनवरी, १९३२

चि० प्रभावती,

मेरा पत्र तुझे मिल गया होगा। तूने उत्तर नही दिया। तो भी कही तू चिन्ता न करे, इसलिए पत्र लिख रहा हूँ। पिताजी, आदिकी खबर जाननेके लिए उत्सुक हूँ। आशा है, तू चिन्तित नही होगी।

हम दोनों मजेमे हैं। मेरी खुराक लगभग वैसी ही है, जैसी बाहर थी।

तुम दोनोको

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४२४) से।

५७. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२५ जनवरी, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तू जो चाहती है[1], वह सब लिख सकूँगा या नही, यह मै नही जानता।

धुरन्धरके 'शाही मेहमान' बननेकी बातका मुझे पता नही था।

रोममे चित्रकला देखकर खूब आनन्द लिया, लेकिन दो घटेमे देखकर क्या राय दूं? मेरी शक्ति ही कितनी है? अनुभव कितना है? मुझे उसमे से बहुत-कुछ पसन्द आया। वहाँ २-३ महीने रहनेको मिले, तो चित्र और मूर्तियाँ रोज देखूं और धीरे-धीरे उनका अध्ययन करूँ। सलीबपर चढे हुए ईसाकी मूर्ति देखी। उसने मुझे सबसे ज्यादा अकर्षित किया, यह तो मै लिख ही चुका हूँ।

लेकिन वहाँकी कला भारतसे अधिक ऊँची है, ऐसा मुझे बिलकुल नही लगा। दोनो भिन्न रीतिसे विकसित हुई है। भारतकी कला कल्पना-प्रधान है। यूरोपकी कलामें यथार्थका अनुकरण है। इससे पश्चिमकी कलाको समझना तो शायद सरल हो; लेकिन समझनेके बाद वह हमे पृथ्वीपर चिपकाये रखती है। और भारतकी कला जैसे-जैसे समझमे आती है, वैसे-वैसे वह हमें ऊँचाईपर ले जाती है। यह सब तेरे जैसे लोगोके लिए ही लिखा है। इन विचारोकी मेरे लिए कोई कीमत नही है। हो सकता है कि भारतके बारेमें मेरा छिपा पक्षपात यह लिखवाता हो, या मेरा अज्ञान मुझे कल्पनाके घोड़ेपर चढाता हो। लेकिन ऐसे घोडेपर चढनेवाला अन्तमें तो गिरेगा ही न?

ऐसा होते हुए भी अगर इसमें से तुझे कुछ मिले तो ले लेना। तू इससे आगे बढ गई हो तो इसे फेंक देना। अपनेसे कम जाननेवाले बालकोके समक्ष माता-पिता, जैसी उन्हे आती है, वैसी रामायण-महाभारतकी कहानियाँ कह सकते है और अपने बच्चोकी जरूरत पूरी कर सकते है। ऐसा ही मेरे बारेमे भी समझना।

इससे तू इतना तो देख ही सकेगी कि मै कलामे रस जरूर ले पाता हूँ। लेकिन ऐसे तो अनेक रसोका मैने त्याग किया है: मुझे करना पडा है। सत्यकी खोजमें जो रस मिले, उन्हे जी-भरकर मैने पिया है, और अब भी नया रस पीनेको तैयार हूँ। सत्यके पुजारीको सहज ही काम प्राप्त हो जाता है। इसलिए वह स्वभावत: 'गीता' के तीसरे अध्यायका अनुसरण करनेवाला होता है। मै मानता हूँ कि तीसरा अध्याय पढनेसे पहले ही मै कर्मयोगकी साधना करने लग गया था।

१. प्रेमाबहन कंटकने गांधीजी की रोम और कलात्मक महत्त्वके अन्य स्थानोंकी यात्राका विवरण माँगा था।

लेकिन यह तो विषयान्तर हुआ।

आश्रमके बारेमे अच्छा प्रश्न पूछा है।[1] आश्रममें उद्योग प्रधान है, क्योकि मनुष्यका धर्म शरीर-श्रम करना है। जो ऐसा नही करता, वह चोरीका अन्न खाता है। फिर आश्रमका श्रम जितना अपने लिए है, उतना ही परमार्थके लिए भी। चरखेको केन्द्र-बिन्दु बनाया है, क्योकि भारतके करोडो लोगोके लिए खेतीके सामान्य सहायक धन्धेके रूपमे केवल इसीकी कल्पना की जा सकती है। इसमे धर्म और अर्थ दोनोंकी भली-भाँति रक्षा होती है।

आश्रमका अस्तित्व केवल देशसेवाके लिए ही नही है, बल्कि देशसेवाके द्वारा जगतसेवा करनेके लिए है और जगतसेवाके द्वारा मोक्ष प्राप्त करनेके लिए और ईश्वरका दर्शन करनेके लिए है।

आश्रममे हर कोई भरती नही हो सकता। आश्रम अपगालय नही है, अनाथालय भी नही है। वह सेवक, सेविकाओ और साधकोके लिए है। इसलिए जो शरीरसे काम न कर सके, उनके लिए आश्रम नही है। फिर भी जो सेवाभावसे ओतप्रोत हो, फिर चाहे शरीरसे भले ही अपग हो, उन्हे जरूर आश्रममे लिया जा सकता है। ऐसे थोडे ही लोग लिये जा सकते है। लेकिन जो आश्रममें आश्रमवासीके रूपमे भरती हुए हो, अगर वे भरती होनेके बाद अपग हो जायें तो उन्हे निकाला नही जा सकता। बाह्य दृष्टिसे देखनेपर आश्रमके बहुत-से कार्योमे विरोधाभास दिखाई दे सकता है, लेकिन अन्तर्दृष्टिसे जाँचनेपर विरोधका आभास उड जायेगा। इतनेसे जो समझमे न आये, वह फिर पूछ लेना। और कोई शकाएँ हो तो वे भी बिना किसी सकोचके पूछना।

विलायतमे फोटो खिचवानेके लिए मै कभी-कभी ही खडा हुआ था। उसमे व्रतभग नही हुआ, ऐसा मै मानता हूँ।

मेरे साथ रहनेवाले सब लोग मेरे-जैसे ही होने चाहिए, ऐसा बिलकुल नही है; यह इष्ट भी नही है। यह तो नकल करने-जैसा हुआ। मुझमे जो-कुछ अच्छा हो, उसमे से भी जितना पचे, उतना ही ग्रहण करनेमे लाभ है। सरदार चाय पीते है; उन्हे कौन रोक सकता है?[2] और चाय उनके लिए औषधिका काम करती हो तो? मेरे साथ रहनेवाले यानी मेरे साथी मांसाहारी भी है। उनका क्या हो?

जिसे चाय अनुकूल न आती हो अथवा जो उसकी पैदावारसे सम्बन्धित बातोका विचार करके चायसे दूर रहता है, वही चाय नही पियेगा। बा मेरे साथ रहते हुए भी चाय पीती है, कॉफी भी। उसे मै प्रेमपूर्वक चाय-कॉफी बनाकर पिला भी सकता हूँ, यह कैसे? तेरे प्रश्नमे केवल विनोद है, यह मै जानता हूँ। लेकिन ऐसा होते हुए भी हम लोगोमे ऐसी बातोके बारेमे कुछ भ्रम है और थोडी असहिष्णुता है, हमे यह निकाल देनी चाहिए। तुझमे यह दोष है या नही, मै

१. प्रेमावहन कंटकने पूछा था कि आश्रमके सिद्धान्त क्या है और वह जीवनके प्रति ऊपरसे विरोधी दिखाई देनेके दृष्टिकोणोंके उदाहरण देकर इसके बारेमें गांधीजी की राय जानना चाहती थी।

२. प्रेमाबहन कटकने पूछा था कि वल्लभभाई गांधीजी के साथ जेलमें रहते हुए चाय कैसे पी सकते है।

नही जानता। लेकिन इस बारेमें मेरे विचार तू जान ले, यह अच्छा है। और तो बहुत-कुछ इस बारके दूसरे पत्रोमे है। वे तुझे पढनेको मिले तो पढ़ना और उनपर विचार करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२६९)से। सी० डब्ल्यू० ६७१७ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कटक।

५८. पत्र: रमाबहन छ० जोशीको

२५ जनवरी, १९३२

चि० रमा[1]

तुम्हे लिखे बिना नही रह सकता। मुझे तुम्हारे आँसू बहुत बार याद आते है। क्या अब मन शान्त है? विमला[2] और धीरू[3] कैसे है? गगादेवी धीरूकी जितनी देखभाल करती है, क्या वह भी उसकी उतनी ही सेवा करता है? दोनोका झगडा कुछ कम हुआ?

छगनलालसे कहना कि समाचारपत्र पढकर मै खुश हुआ था। अब उसे जेलमें 'गीता' याद करनेका समय मिले तो वह उसे याद कर डाले।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३३४)से।

५९. पत्र: जमनाबहन गांधीको

२६ जनवरी, १९३२

चि० जमना,

तुम्हारा पत्र मिला। दुर्बलता और अतिसारके तीन उपाय है। दही और फल ही खाना। फलोमें नारगी, जामुन, अनार, पपीता, अनन्नास, हरे अगूर। भूखे पेट कटिस्नान और सुबहके समय भूखे पेट ही सूर्यस्नान करना। एक वक्तमे दही कम ही लेना। चार बार लेना। न पचे तो कम कर देना और यह आशका मत करना कि इससे दुर्बलता बढेगी।

१. छगनलाल जोशीकी पत्नी।

२. और ३. छगनलाल और रमाबहन जोशीके बच्चे।

काम करनेकी बहुत इच्छा हो तो हमारे यहाँ तो हलका-भारी सभी तरहका काम पड़ा हुआ है। सेवाभावसे किये गये सभी कामोका मूल्य एक-सा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८५०) से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

६०. पत्र : नारणदास गांधीको

मंगलवार, २६ जनवरी, १९३२

चि० नारणदास,

पिछले कारावासका मेरा सूत वहाँ बुननेके लिए भेजा था। यदि बुन लिया गया हो तो लिखना। उसका अक क्या था और बुननेमे ठीक था या कमजोर।

रामजी वगैरह कहाँ है? वहाँ कितने बुनकर रह रहे हैं? आश्रममे हर महीने कितना काता जाता है, कितना बुना जाता है? क्या सूतके प्रकारमे कुछ सुधार हुआ है?

मैं विलायतसे जो किताबे लाया था, क्या जानते हो उनका क्या हुआ?

देखता हूँ, कागज पैडके नीचे रखा रह जानेसे 'गीता' का १४वाँ अध्याय[1] रह गया था; आज भेज रहा हूँ।

प्रेमाबहनके पत्रसे जाना कि तुमने मूँगफली खाकर शरीरको थोड़ा-बहुत बिगाड़ लिया है। मूँगफली न खाओ, यह मेरा आग्रह है। तेलवाला कोई फल खाना ही हो तो बादाम ही खाना चाहिए। मै दूसरी चीजकी सलाह नही देता। बादाम अधिक-से-अधिक ५ तोला लेना चाहिए। यदि दूसरी कोई पौष्टिक खुराक न ले तो ५ तोला लेनेमे बहुत खर्च नही आता। ठीक तो यही लगता है कि अगर रोटी आदि न लेनी हो तो, जैसा मैंने कुसुमको बताया है, दूध, फल और कच्ची सब्जियाँ लो। या फिर रोटी, शाक और दूध या दही तथा थोडी कच्ची सब्जी – यह पूर्ण भोजन हो जाता है। बीचमे कभी-कभी दूध, रोटी छोडनेसे फायदा तो होता ही है। दो-तीन दिन केवल फलाहार कर ले। तब कोई तेलवाला फल नही लेना चाहिए। आजकी खोज तो यह कहती है कि आदमीको दाल और दूध-जैसी पौष्टिक खुराककी जरूरत कम ही है। अनेक रोगोकी उत्पत्ति पौष्टिक, स्निग्ध और श्वेत सारयुक्त पदार्थ खानेसे होती है। कह सकते है, ऐसा सिद्ध हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२०४ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१. देखिए "गीता-पत्रावली", २१-२-१९३२

६१. पत्र : नारणदास गांधीको

२७ जनवरी, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। मीराबहन वगैरह आकर मिल गये। महावीरके पत्रके अनुसार सबको दार्जिलिंग भेज देना और उन्हे खर्च दे देना। वालजीभाईसे कहना कि वे अनुवाद[1] भेज सकते है। सुधार करनेके बाद वापस भेजने देते हैं या नही, सो देखूंगा। सुरेन्द्रको धन्यवाद। उसे बहुत चोट तो नही पहुँची।

शेष अगले हफ्ते। आज पत्र[2] भेजा था, मिला होगा। उसके साथ १४वां अध्याय जो रह गया था, भेजा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एन० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२०५ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

६२. एक पत्र

२८ जनवरी, १९३२

प्रिय,

आपका यह कहना कि अनेक लोग प्रार्थनाको अर्थ समझे बिना ही दुहराते हैं, सही है। इस दोषको दूर करनेका बहुधा प्रयत्न किया गया है। लेकिन ऐसी जगह जहांकी कोई आबादी जगम हो, यह काम कर पाना कठिन है। प्रार्थनाके भावसे किन्ही शब्दोको दुहराना अपने-आपमे बुरी चीज नही है। वह उस सगीतकी तरह है, जिसमें कोई शब्द नही होते। शब्दोके अलावा संगीतका अपना एक अलग असर होता है। अलबत्ता बचावमें यह बात कहना सिर्फ वहीपर सही है जहाँ कोई मिथ्याचार न हो और मन सचमुच प्रार्थनाके स्वरमे बँधा हुआ हो।

यदि मैं गलतीपर नही हूँ तो जानवरोको जूठन इसलिए नही दी जाती क्योकि यह उनके स्वास्थ्यके लिए हितकर नही है। उन्हे वैज्ञानिक ढगसे [चारा आदि] खिलाया जाता है। जूठनको भूमिके अन्दर दबा देनेसे वह बेकार नही जाती। वह खाद बन जाती है। सही बात तो यह है कि अन्न बिलकुल बरबाद ही न हो। हम गरीबो-जैसा जीवन बितानेकी कोशिश करते हैं, अतः थालियोमे उतना ही भोजन

१. आश्रम-व्रत सम्बन्धी प्रवचनोंका; देखिए खण्ड ४४, पृ० ४१।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

परोसना चाहिए जितने कि जरूरत हो। मैं जानता हूँ कि यह सब-कुछ कर पानेमें बड़ी कठिनाइयाँ हैं।

आपका,

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९२०) से; सौजन्य : नारणदास गाधी।

६३. एक पत्र

२८ जनवरी, १९३२

भाई,

मैंने 'गीता' पर जो-कुछ लिखा है, आप उससे ज्यादा और क्या चाहते हैं? विचार विकारी चित्तमें ही उठते हैं। यहाँ विकार शब्दको विस्तृत अर्थमें लेना चाहिए। विकार अर्थात् कोई भी फेरफार। समाधिमें अच्छे-से-अच्छे विचार भी मनमें नही आते; तो भी समाधि कोई निर्जीव दशा नही है। ईश्वरको विचार नही करना पड़ता क्योकि वह निर्विकार है। विचारके अभावका अर्थ जडता नही बल्कि शुद्ध चैतन्य है। इसका वर्णन नही किया जा सकता, सिर्फ अनुभवसे जान सकते हैं। इसका अर्थ यह नही है कि मुझे अनुभव है। यह तो श्रद्धाके आधारपर मेरी मान्यता है। थोड़ी-सी झलक देखी है, ऐसा भी कह सकता हूँ।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९०७) से; सौजन्य : नारणदास गाधी।

६४. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

२८ जनवरी, १९३२

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। जो कुछ हो रहा है, उसमें मुझे कोई नई बात नही लगती। यह सब सोचा ही था। अभी तो और बाकी है। तेलकी कडाहीमें उबालकर सुधन्वाकी परीक्षा ली गई थी न? सीताको अग्निमें प्रवेश करना पडा, प्रह्लादको धधकते हुए स्तम्भका आलिंगन करना पडा। जिसकी ईश्वरपर पूर्ण श्रद्धा है, उसकी सहनशक्तिका कोई अन्त ही नही है। हाथीको मन और चीटीको कण ईश्वर दे ही रहा है। "ये यथा मा प्रपद्यन्ते तास्तथैव भजाम्यहम्"[1] 'गीता' का श्लोक है। इसका यही अर्थ है : ससारमें मुझे जो जिस प्रकार भजता है, मैं उसे उसी प्रकार

१. अध्याय ४, श्लोक ११।

देता हूँ। कुएँमे कटोरेसे लेनेवालेको कटोरा-भर और घड़ेसे लेनेवालेको घडा-भर पानी मिलता है।

चचलबहनका काम बहुत बड़ा है। उसे पत्र लिख रहा हूँ। पत्र उसे दे आना या पढकर सुना आना। इसे छापना नही है।[1]

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो–६: गं० स्व० गंगाबहेनने, पृष्ठ ६२। सी० डब्ल्यू० ८७८९ से भी; सौजन्य: गगाबहन वैद्य।

६५. पत्र: लक्ष्मीबहन ना० खरेको

२८ जनवरी, १९३२

चि० लक्ष्मीबहन,

मुझे बिलकुल ही भूल न जाना। पत्र लिखना। कैसी हो? मथुरी कमजोर क्यो रहती है?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७९)से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

६६. पत्र: अमीना गु० कुरैशीको

२८ जनवरी, १९३२

चि० अमीना,

तेरा पत्र मिला। कल नूरबानूने भी तेरी खबर दी। मुझे विश्वास है कि तुम दोनो अब्बाकी गद्दीके सम्मानकी रक्षा करोगी। ईश्वर तुम दोनोको लम्बी जिन्दगी दे। मुझे तेरी हिम्मतकी खबर है।

बापूकी दुआएँ

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६६०) से। सी० डब्ल्यू० ४३०५ से भी; सौजन्य: हमीद कुरैशी।

१. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", २८-१-१९३२।

६७. पत्र : मणिबहन न० परीखको

२८ जनवरी, १९३२

चि० मणिबहन,

क्या वहाँ अच्छा लगता है? क्या कानसे पहलेसे कुछ ज्यादा सुनाई देने लगा है? विद्यापीठमें कोई रहता है? नरहरि कैसा है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९६५)से। सी० डब्ल्यू० ३२८२ से भी; सौजन्य: वनमाला म० देसाई।

६८. पत्र : शकरीबहन चि० शाहको

२८ जनवरी, १९३२

चि० शकरीबहन,[1]

जबतक यहाँ हूँ तबतक किसी बहनको मुझे [पत्र लिखनेकी परेशानीसे] बचानेका विचार करनेकी जरूरत नहीं है। मैं बाहर होऊँ तो उनके लिखनेसे मेरा बोझ कुछ बढ सकता है। मेरे यहाँ रहते हुए तो बाहर न लिखनेका बदला लिया जा सकता है। इसलिए मुझे पत्र लिखना। क्या अब मन शान्त है? बबू[2] कमजोर क्यों रहती है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० जी० २९)से।

६९. पत्र : शिवाभाई गो० पटेलको

२८ जनवरी, १९३२

चि० शिवाभाई,

तुम्हारा क्या हालचाल है? मुझे ब्यौरेवार पत्र लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ४२२) से; सौजन्य: शिवाभाई गो० पटेल।

१. चिमनलाल शाहकी पत्नी।

२. शकरीबहनकी पुत्री, शारदा।

७०. पत्र : हरिइच्छा पी० कामदारको

२९ जनवरी, १९३२

चि० हरिइच्छा,

रसिकने लिखा है कि तेरे बेटा हुआ और चार मास जीकर चल बसा। ससार इसी तरह चलता है। जो जन्म लेते हैं, वे सब जीते नही और जो जीवित रहते हैं सो भी मरनेके लिए। इसलिए तुझे धीरज क्या बँधाना है! पहली पत्नीके बच्चे हैं, वे भी तो तेरे ही हैं न? बालक जीवित रहता तो तू उसके लिए आशीर्वाद जरूर ले जाती। मुझे मिल गई होती तो अच्छा लगता। अब तो जब ईश्वर मिलायेगा तभी मिलेंगे। इस बीच पत्र लिखना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

सीधा पत्र लिखना चाहो तो लिख सकती हो।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४६८) से। सी० डब्ल्यू० ४९१४ से भी; सौजन्य : हरिइच्छा पी० कामदार।

७१. पत्र : जानकीदेवी बजाजको

२९ जनवरी, १९३२

चि० जानकीबहन,

मैं तुम्हे केवल देख ही सका। एक शब्द भी बोलनेका समय न मिला। खैर, अब लिखनेका वक्त तो मिलेगा ही। अब तुम भी, जबतक यह सुविधा रहे, तबतक लिखती रहना। कमलनयन[1] किस जेलमें है? उसकी क्या खबर है? मदालसा,[2] ओम[3] पत्र लिखे। तबीयत कैसी रहती है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

सरदार मेरे साथ हैं, यह तो जानती ही हो। हम मजेमे हैं। खाना, सोना और टहलना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २८९४) से।

१. जानकीदेवी बजाजका पुत्र।

२. और ३. जानकीदेवी बजाजकी पुत्रियाँ।

७२. पत्र : नीलकण्ठ बी० मशरूवालाको

२९ जनवरी, १९३२

चि० नीलकण्ठ,

तुम्हारा पत्र मिला। किशोरलाल क्या खाता है? 'यग इडिया' मेरे साथ आ गया है। 'गाधी विचार दोहन'[1] भी यही होनेकी ज्यादा सम्भावना है। उसे यहाँसे सुधारकर नही भेज सकता। इसलिए फिलहाल वह जैसा है, वैसा ही छपा लिया जाये तो कोई हर्ज नही। सभी कैदी एक साथ ही रहते हैं न? नाथजी से कहना कि आश्रमका चक्कर लगा आये। उनकी खाजका क्या हाल है? तुम किशोरलालसे कितनी बार मिल पाते हो? तारा[2] कहाँ है? कैसी है? क्या करती है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

लखू कौन है? मैं भूल गया हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४१९)से; सौजन्य: नीलकण्ठ बी० मशरूवाला।

७३. पत्र : प्रभावतीको

२९ जनवरी, १९३२

चि० प्रभावती,

तेरा सीवानसे लिखा हुआ पत्र मिल गया है। उससे पहले लिखा हुआ पत्र भी बादमें मिल गया। मेरे पत्र मिलते रहते होगें। स्वरूपरानीजी[3] से कहना कि स्वरूप और कृष्णा[4] के चले जानेपर भी वे कोई चिन्ता न करे। ईश्वर सबकी खबर रखता ही है। उनकी तबीयत कैसी रहती है? मेरा आहार लगभग वैसा ही है जैसा बाहर था। इस समय वजन १०६ रतल है। सरदार वल्लभभाई साथ हैं। दोनो मजेमें हैं। तू कोई समाचारपत्र पढती है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४२३)से।

१. किशोरलाल मशरूवाला द्वारा लिखित पुस्तककी पाण्डुलिपि जो उसी वर्ष प्रकाशित हुई
२. तारा मशरूवाला, सुशीला गांधीकी छोटी बहन
३. जवाहरलाल नेहरूकी माँ।
४. पण्डित मोतीलाल नेहरूकी बेटियाँ।

७४. एक पत्र

३० जनवरी, १९३२

चि०,

तुम्हारा पत्र मिला। आनेकी तुम्हारी इच्छा हो और शरीर साथ दे तो जरूर आ सकते हो। किन्तु यह न समझना कि आना जरूरी है। जहाँ आत्माका मेल आत्मासे हुआ है, वहाँ मिलनेके लिए शरीररूपी साधनकी जरूरत उतनी नहीं है। और हम जो अप्रत्यक्ष रूपसे ले-दे सकते हैं, वह प्रत्यक्ष रूपसे नहीं लिया-दिया जा सकता है, इसका मुझे तो नित्य अनुभव हो रहा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९२१)से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

७५. एक पत्र

३० जनवरी, १९३२

चि०,

तुम्हारा पत्र मिला। आश्रम जिस तरह साबरमतीके किनारे है, उसी तरह हमारे हृदयमें भी है। साबरमतीवाला आश्रम तो सरकार ले सकती है, वह बाढ़में डूब सकता है या चोर उसे लूट सकते हैं। किन्तु हृदय-स्थित आश्रमको कोई लूट या जला नहीं सकता। सच्चा आश्रम यही है; इसीको मनमें रखकर बम्बईमें रहो। वहाँ स्वास्थ्यको सँभालकर जिन नियमोंका पालन कर सको, उनका पालन करो। स्वास्थ्य चाहे जैसा रहे, मुख्य व्रतोंका पालन तो किया ही जा सकता है, जैसे कि सत्यादि।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९२२)से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

७६. पत्र : मंगला शं० पटेलको

३० जनवरी, १९३२

चि० मंगला,

तूने तो अपनी लिखाई खूब सुधार ली है। 'गीताजी'का क्या हुआ? सभी अध्याय जबानी याद हो गये हैं न? और किसको याद हुए हैं? 'लाकड़ी'[1] और 'लाड़की'[2] मे बहुत अन्तर नही लगता, इसलिए कह सकते है कि ऐसी 'लाकडी' 'लाड़की' तो होगी ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०७३) से। सी० डब्ल्यू० ३७ से भी; सौजन्य : मंगला ब० देसाई।

७७. पत्र : महालक्ष्मी मा० ठक्करको

३० जनवरी, १९३२

चि० महालक्ष्मी,

तुम्हारा पत्र मिला।

हवा दूधकी वजहसे भी बन सकती है। ऐसा करो : दूधके बदले दही लेकर देखो। एक बार मे आधा सेरसे ज्यादा दही मत लो। उसमे दस ग्रेन सोडा डालो। पूरे दिनमे डेढ़ सेर दही लो। चाहो तो उसके साथ डेढ सेर खजूर भी ले सकती हो। खजूर भी एक समय आधा सेरसे ज्यादा न लेना। खजूर गन्दे हो, यह सम्भव है; इसलिए उन्हे धो लेना चाहिए। फिर बीज निकाल लेनेके बाद दहीमे डाल देनेमे कोई हानि नही। वे दहीमें डालते ही नरम नही पड जायेंगे। इसके बाद मैंने जो कच्ची सब्जी बताई है, वह थोडी-सी ही खाना। बीचमें प्यास तो लगेगी ही। प्यास लगनेपर पानीमें सोडा और नीबू डालकर पीना। इससे हवा नही बनेगी और शरीरमे हलकापन लगेगा। खजूरसे हवा नही बनती। दूध ही उसका कारण हो सकता है। दहीसे कब्ज हो जाये तो एक बार दूध ले लेना। दूध ताजा और ठंडा हो तो उसमें भी खजूर डालकर खाओ। खजूर भिगोनेसे नरम हो जाते है। ठंडे दूधमे डालकर फौरन खाओगी तो वे सख्त रहेंगे। उनसे शरीर कभी भारी नही हो सकता,

१. छड़ी।
२. लाडली।

दूधसे हो सकता है। यदि शरीर-श्रम करना हो तो सिर्फ खजूरसे बहुत दिन काम नहीं चल सकता। माधवजी के पत्रमें मैंने एक सेर खजूर लिखी है। यहाँ उसमें परिवर्तन किया है; अब मैंने तीन सेर दूधके बदले डेढ़ सेर दही या दूध लेनेके लिए ही लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मैंने जो मात्रा बताई है, उतनी ही खाना जरूरी न समझना। जो चीज ज्यादा लगे, उसे कम करना। सेरका अर्थ है ४० तोला।

अभी समझ न आया हो तो पूछना। माधवजी को माधवजी क्यों नहीं कहती? श्रीयुत किसलिए?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८१९) से।

७८. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

३० जनवरी, १९३२

बालको और बालिकाओ,

पिछले सप्ताह तुम्हेंडोरिस बहनकी शालाके बारेमें लिखा था। उस शालाके और संस्मरण भी लिख सकता हूँ किन्तु आज वह न लिखकर, मॉन्टेसरी [स्कूलके] बच्चोंके बारेमें लिखता हूँ। मॉन्टेसरीको वृद्ध महिला कहा जा सकता है। उसने बच्चोंकी शिक्षाके काममें ही अपना जीवन अर्पित कर दिया है। वह इटलीकी रहनेवाली है। इटली कहाँ है और आजकल उसका राज्य-शासन किस तरह चल रहा है, यह अपनी शिक्षिकाओंसे मालूम कर लेना। यूरोपका नक्शा सामने रख लेना। उसका आकार ऐसा है, मानो शरीरसे अलग किसीका एक मोटा पैर हो।

लेकिन इस बातको छोड़ दें। हम तो विदुषी मॉन्टेसरीकी शालाकी बात करें। इस महिलाने, जब वह इंग्लैंडमें थी और जब वहाँ उस पद्धतिके अनुसार शिक्षा देनेवालोंका सम्मेलन हो रहा था, मुझे आमन्त्रित किया और यह बताया कि बालकोंको क्या पढ़ाया जाता है और कैसे। पद्धतिकी सबसे बड़ी बात यह बताई कि बच्चे [सब-कुछ] खेल-ही-खेलमें सीखते हैं। इसलिए उन्हें पढ़ाई बोझ नहीं लगती और दूसरी बात, उनकी सभी इन्द्रियाँ — अर्थात् हाथ, पैर, नाक, कान, जीभ, त्वचा और मन, पूरी तरह विकसित हो जाते हैं। उन्हें शिक्षा देनेके क्रमकी व्यवस्था बहुत सोच-विचारकर तय की गई है। इसमें रटकर सीखनेका स्थान ही नहीं है। संगीतका महत्त्वपूर्ण स्थान है। कसरतके साथ भी संगीत चलता है। नृत्य भी सिखाते हैं। नृत्यमें काफी कसरत होती है। बच्चे बहुत-से काम खुद ही करते हैं और उनमें दिलचस्पी

लेने लगते है। मुझे उनकी सबसे अच्छी बात तो यह लगी कि उन्हे मौन रहना और एकाग्र होना सिखाया जाता है। सो इस तरह, कि बच्चे आँखे बन्द करके बैठ जाते है और शिक्षिका इतने धीमे बोलती है जैसे कानमे बोल रही हो। बच्चे पूरा ध्यान लगाकर बात सुननेका प्रयत्न करते है। जो सुन लेता है, वह चुपचाप पंजोके बल चलकर शिक्षिकाके पास जा बैठता है। इस तरह, जबतक एकके-बाद-एक बच्चा आकर बैठता रहता है, तबतक सब शात बैठे रहते है। तुम भी ऐसा करो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से।

७९. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

३० जनवरी, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। पुस्तकोकी जो पेटी मै लाया था, क्या वह वहाँ पहुँच गई है? विद्यापीठमे कोई रहता है? पुस्तकोकी देखभाल होती है या सब बरबाद हो रही है? मासिकपत्र भी बहुत-से तो सभालकर रखने-जैसे होते है। बात यह है कि पुस्तके सँभालनेके लिए पूरा समय देनेवाला एक आदमी होना चाहिए और उसके मातहत दो आदमी होने चाहिए। वरना हमें पुस्तकालयको इतना बडा होने ही नही देना चाहिए। यह काम विद्यापीठका ही माना जायेगा। यह काम हमारा नही है। नही है, इसलिए तो विद्यापीठ खोला। नही तो आश्रमको ही विद्यापीठ बना डालते। आश्रमका यह क्षेत्र ही नही है। आश्रमका काम मुख्यत. आन्तरिक है। विद्यापीठका मुख्यतः बाह्य है और होना भी चाहिए। दोनोके उद्देश्य एक ही है, लेकिन दोनोकी प्रवृत्तियाँ अलग है। इसलिए आश्रममे तो जरूरी पुस्तके ही रखे; बाकी जिनकी जरूरत पड़े, वे विद्यापीठसे पढनेके लिए ले आये। यह तो जब चैनसे बैठें, तबकी बात है। अभी तो सब-कुछ बाढ़मे बहा जा रहा है; और यह अच्छा ही है। बाढके अन्तमे भरपूर और काँच-जैसा साफ-स्वच्छ पानी ही रहता है न?

नागपंचमीका उत्सव मुझे याद है। जो उत्तर मैंने उस समय दिया था, उसमें आज भी कोई परिवर्तन नही हुआ। सिरोके फूटनेको मैंने पटाखे छूटनेकी उपमा दी है न? और जो आत्माके गुण जानता है, वह तो उसे अक्षरश· मान सकता है। अगर आत्मा मरती नही, तो फिर उसके घर या कपडे भले ही फटा करे, सडा करे, जला करे, उससे क्या बिगडना है? फिर, आत्मा तो सदा ही पूर्ण है, इसलिए उसे नये घरबारकी कमी नही है। समझे तो उसे इनकी जरूरत ही नही है। लेकिन यह सब अपने लिए है। इसलिए जहाँ अपने सिर फूटे, वहाँ पटाखे ही फूटते हैं, यह समझना। लेकिन आत्माके लिए अपना क्या और पराया क्या? ऐसा सवाल

नही पूछना चाहिए। शरीर है, तबतक थोडे-बहुत अशमे अपना और पराया है, ऐसा मानकर ही चलना पड़ेगा। अह जैसे-जैसे मरता जाता है, वैसे-वैसे अपने और पराया मानकर परायेका भेद कम होता जाता है। पर दूसरोको मारते रहनेसे यह भेद बढता जाता है। बात जैसे-जैसे समझमे आती जायेगी, वैसे-वैसे नौजवानोकी तरह बच्चे भी समझदार होते जायेगे। इसमे धीरजकी जरूरत है। इस बारेमें बच्चोका पत्र[1] देखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२७०)से। सी० डब्ल्यू० ६७१८ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कटक।

८०. पत्र: विद्या रावजी पटेलको

३० जनवरी, १९३२

चि० विद्या,

तू पत्र क्यो नही लिखती? तेरा क्या हालचाल है? क्या पढती है? किसके साथ दोस्ती है? सबसे ज्यादा अच्छा कौन लगता है? तू कहाँ रहती है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४२०) से; सौजन्य: रवीन्द्र रावजीभाई पटेल।

८१. पत्र: आश्रमकी बहनोंको

३० जनवरी, १९३२

बहनो,

आज मैं एक बहनके विषयमे लिखना चाहता हूँ। उसका नाम मॉड रायडन है। अब वह लगभग वृद्ध हो गई है और कुमारिका है। इग्लैडमे यह पहली महिला है जिसने धर्मशास्त्रोके अध्ययनमें ऊँची-से-ऊँची डिग्री प्राप्त की है। इसके अतिरिक्त आजतक केवल एक ही अन्य स्त्री ऐसी है जिसने यह उपाधि प्राप्त की है। इसका यह अर्थ नही है कि इस विषयका अध्ययन बहुत कठिन है। कठिन तो है, किन्तु इस विषयके प्रति स्त्रियोको कभी ज्यादा आकर्षण हुआ ही नही। इसके द्वारा ज्यादा प्रतिष्ठा आदि नही प्राप्त की जा सकती। मॉड रायडनने इस विषयका इतना गहरा अध्ययन तो किया ही है, उससे भी बडी चीज यह है कि उसने अपना सारा जीवन

१. देखिए पिछला शीर्षक।

गरीबोंकी सेवामें अर्पित किया है। म्यूरियलकी भाँति उसके मनमें भी काले और गोरेका कोई भेद नहीं है। अपने ही परिश्रमसे उसने एक गिरजाघरका निर्माण कराया है, जहाँ गरीबोंको आश्रय मिलता है और जहाँ उनकी सभाएँ होती हैं। ऐसी सेवाके कारण ही इस बहनके सम्मानमें बहुत वृद्धि हुई है। उसकी विद्वत्ताका आदर तो कम ही हुआ है, किन्तु उसने गरीबोंकी जो सेवा की है, उससे उसे बहुत ही यश मिला है। उसकी भाषण-शक्ति भी ज्यादा है। उसके चरित्रके विषयमें तो कहना ही क्या? सारा काम वह अपनी ही जिम्मेदारीपर करती है। वह अपनेको अबला या किसी भी तरह कमजोर तो मानती ही नहीं। उसने देशाटन भी बहुत किया है और इस तरह बहुत अनुभव प्राप्त किया है। सम्भव है कि हमारे कामके लिए वह भारत भी आये। सवाल इतना ही है कि उसे अपने कामसे इस यात्राके लिए फुरसत मिलेगी या नहीं?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

८२. एक पत्र

३० जनवरी, १९३२

चि०,

विवाह कार्यमें आश्रममें रहनेवालोंको हरगीज बुलाने नहिं चाहिये और उसमें जो ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहते हैं उसको विवाहके साथ कैसे संबंध हो सकता है। इसलिए हर प्रकारसे तुमको उस विवाहसे दूर रखना चाहिये। द्रढतासे इतना लिखो।

बापुका आशीर्वाद

हिन्दी (सी० डब्ल्यू० ८९२३)से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

८३. पत्र : मीराबहनको

३१ जनवरी, १९३२

तुम सबके आनेकी बात कलकी-सी मालूम होती है।

मुझे खुशी है कि तुम राधाके इतने निकट सम्पर्कमें आ रही हो। उसमें एक नेक स्त्री बननेकी सम्भावनाएँ हैं। तुमने मुझे बताया है कि तुम शामकी प्रार्थनाके समयका पालन नहीं कर सकती। ऐसा है तो तुम्हें समय बदलकर उसकी पाबन्दी नियमित रूपसे करनी चाहिए। हाँ, आश्रमकी प्रार्थनाके समय कुछ क्षणोंके लिए प्रार्थनाका ध्यानकर लिया करो। यह केवल सुझाव ही है। इसपर अमल करनेका उत्तम ढंग तुम अच्छी तरह जानती हो।

कृपया नरगिसबहनसे कहो कि मुझे लिखे। अन्य तीनो बहनोके बारेमे भी सब बातें लिखो।

हमारी तबीयत अभीतक अच्छी है। मुझे अब भी जितनी नीद मिल सके या जितनी मैं ले सकूँ उसकी आवश्यकता है।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२१३) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६७९ से भी।

८४. पत्र: नारणदास गांधीको

रात, २८ जनवरी/१ फरवरी, १९३२

चि० नारणदास,

देखता हूँ कि दाहिना हाथ बहुत काम नही देता, इसलिए दोनो हाथोसे काम लेनेका विचार कर रहा हूँ। थोडा समय तो लगेगा; पर यहाँ तो समयका अभाव नही मानना चाहिए। दूसरे काम कम करूँगा। चंचलबहनको, जिसके बेटे बिसूका देहान्त हो गया है, पत्र लिखा है। वह पत्र न छपाया जाये, न उसपर चर्चा हो। मेरा काम विश्वासपर चलता है। छुपाकर कुछ नही करता। इस पत्रके बारेमे बात करूँगा। संवेदना-पत्र लिखनेमे कुछ अनुचित नही दिखाई देता; पर ऐसा पत्र छप जाये तो वह अनुचित होगा। वह प्रचार होगा। इसीलिए मैंने गंगाबहनको लिखा है[1] कि चंचलबहनके पढ़ लेनेपर पत्र वापस ले ले। मेरे पत्र किसी अखबारके लिए नही हैं। 'आश्रम समाचार'में नीति सम्बन्धी या मेरे स्वास्थ्य-सम्बन्धी जो अंश छापते हो, वह ठीक है।

पारनेरकर अभी शान्त नही हुआ। मैं मानता हूँ कि उसकी समस्या नैतिक ही है। तुम बुलाकर उसे आश्वस्त करना। अन्तमे तो वही करना है जो तुम्हे योग्य लगे।

बाग-बगीचा लगाना कोई हाथी पालना नही है। यह तो उपयोगी काममे पूँजी लगाना भी है। अतमे उसपर किया गया खर्च सिरपर नही पडना चाहिए। बगीचेसे हमेशा जमीनकी कीमत बढ जाती है। नमी सोखकर हवा ठंडी बनती है। यह सभीका अनुभव है। झाड़ चुननेमे विचार जरूर करना चाहिए। मैंने तो एक मोटी बात कही। प्रो० त्रिवेदीसे राय लेना। जमीन तो उनकी देखी हुई है। झाडोकी तफसील और उनकी संख्या लिखना। वे कोई बात सुझा सकेंगे तो सुझायेंगे। प्रो० हिगनबॉटमसे भी पूछकर देखना और पट्टणी साहबके यहाँ तो क्यूरेटर होगा ही। उसकी भी मदद ली जा सकती है। आजके कामोसे इस सबपर विचार करनेका

१. २८ जनवरीके उनके पत्रोंमें, देखिए पृष्ठ ४४।

समय न हो, यह सम्भव है। परिस्थिति ऐसी ही हो, तो मेरे लिखेको भूल जाना। तोतारामजी हमारे सब-कुछ हैं। वे जो कर सके, वही ठीक।

सोमाभाई कहाँ हैं? भणसाली कहाँ है? क्या लीलाबहनकी कोई खबर है? हसमुखरामका क्या हाल है?

दोपहर, २९ जनवरी, १९३२

आज तुम्हारा दूसरा पत्र मिला। चप्पलके तलेके लिए चमडा डाकसे मत भेजना। जब कोई आये तब लेता आये। . [1] को अकेले . . .[2] के साथ रखनेमे बडा खतरा देखता हूँ। उसके लिखनेमे अतिशयोक्ति हो सकती है लेकिन... अपने प्रति भी जिम्मेदार नही है। उसपर कब भूत सवार हो जाये, कौन कह सकता है? अगर ..को उसके साथमे रहने दे तो साथ कोई जवाबदार व्यक्ति होना चाहिए। चिमनलालका अगर पर वश चलता हो तो वह रहे अथवा कोई दूसरा व्यक्ति। . . .मे . . के साथ रहनेकी स्वतन्त्र रूपसे शक्ति होती तो दूसरी बात थी। फिर . . विषयासक्त भी है। विषयके आवेशमे . . . के साथ बलात्कार करे और . . . को गर्भ रह जाये तो वह बडे कष्टकी बात हो जायेगी। इन सब बातोपर विचार करके जो ठीक लगे, सो करना। तुम सारा बोझ उठा सकते हो, इसलिए लिखता हूँ।

अब्बाससाहबको बाहरसे खाना भेज सकनेकी इजाजत है? क्या हम कुछ भेजते हैं? मृदुलाकी तबीयत कैसी रहती है? क्या रणछोडभाईके बारेमे अखबारकी खबर ठीक है?

बुधाभाई और पार्वतीबहनको पत्र लिख रहा हूँ। क्या नानीबहन वही है?

रात, १ फरवरी, १९३२

वहाँसे जो कोई मुझसे मिलने आना चाहे, वह डाह्याभाईसे मिलता हुआ आये या उनका सन्देश जान ले। इस तरह दोनोको नही भटकना पडेगा और कुछ कहना होगा तो सन्देश भी मिल जायेगा।

इस बार ५७ पत्र हैं। तुम्हारा अलग। 'गीता' का अध्याय भी अलग।

बापूके आशीर्वाद[3]

---

१. २. नाम छोड दिये गये है।

३. इसके बाद साधन-सूत्रमें गीताके १५ वें अध्यायका सारांश है। देखिए "गीता-पत्रावली", २१-२-१९३२।

रात, १ फरवरी, १९३२

चि० नारणदास,

बहनोंसे पूछकर लिखो कि क्या वे साथके सारांशका अर्थ समझ पाती हैं। अधिक सोचनेपर लगता है कि तीसरा प्रयत्न करके और भी सरल सारांश प्रस्तुत करना चाहिए। वैसा कर सकूँगा या नहीं, सो नहीं जानता; लेकिन मैं जिसे पूरा करने जा रहा हूँ, उसपर कुछ टीका-टिप्पणी देखनेको मिले तो वह सहायक हो सकती है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२०६ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

८५. पत्र: मार्कियोनेस कार्ला विटेलस्चीको

२ फरवरी, १९३२

प्रिय कार्ला,

मुझे आपका पत्र मिला। हाँ, आप ठीक कहती हैं। यदि आपके प्रति मेरा भाव मेरी अपनी पुत्री-जैसा ही न होता, तो उस दिन सुबह जिस कड़ाईसे मैंने आपसे बात की, वैसी न की होती। आपने जो कदम उठाया है, उसकी अब मुझे खुशी है। मुझे पूरा निश्चय है कि आपका स्थान आपके पतिके पास ही है। आप अपने अनिश्चय और अस्थिर स्वभावको दूर कर दें।

जब भी आप चाहें, पत्र लिखें।

ईश्वर आपको प्रकाश और शान्ति दे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च:]

आपका पूरा नाम मुझे याद नहीं है इसलिए मैं लिफाफेपर आपका विवाहसे पहलेका ही नाम लिख रहा हूँ।

मदाम कार्ला,
ओतेल देजांजेनर
५२, रू ल्यांग
पेरिस मौंमात्रे,
फ्रांस

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २५११) से।

८६. पत्र : प्रेमलीला ठाकरसीको

२ फरवरी, १९३२

प्रिय बहन,

तुम्हारे पाससे प्रसाद मिलता रहता है। मै तुम्हारे प्रेमको समझता हूँ; पर कुछ दया करो। हम दोनोको यहाँ सब-कुछ मिल जाता है। यहाँ जो खर्च होता है, वह भी तो देशका ही पैसा है। मुझे जिस चीजकी जरूरत होगी, वह तुम्हारे पाससे मगवानेमे संकोच नही करूँगा। . . .[1] से कहलाया तो था कि बार-बार फलादि न भेजा करो। उसपर भी आते ही रहते हैं। इसीलिए यह लिख रहा हूँ। तुमने यात्राके लिए जो शहद भेजा था, वह मैंने बहुत दिनोतक खाया था। शहद अच्छा था।

मोहनदासके वन्देमातरम्

लेडी विट्ठलदास ठाकरसी
यरवदा हिल

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८२१)से, सौजन्य : प्रेमलीला ठाकरसी।

८७. पत्र : पी० जी० मैथ्यूको

३ फरवरी, १९३२

प्रिय मैथ्यू,

तुम्हारा पत्र मिला। देखता हूँ कि तुम हमेशाकी तरह अबतक शर्मीले बने हुए हो। इस शर्मको छोड दो और निस्संकोच लिखो।

मुझे खुशी है कि तुम तिलककी देख-भाल कर रहे हो और भारतनकी भी जिम्मेदारी ले ली है।

तुम्हे जरूर कोशिश करनी चाहिए और मुझे चद पक्तियाँ हिन्दीमे लिखनी चाहिए। परशुरामने मुझे लिखा है कि तुमने प्रगति की है।

सस्नेह,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५४८)से।

१. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

८८. पत्र : वालजी गोविन्दजी देसाईको

३ फरवरी, १९३२

भाई वालजी,

आश्रममे तोतेको कोई पीजरमे नहि रख सकते है।

यदि कोइ पूरे तो मन्त्री उसे छोड देगा। तोताको यदि मौका मिला तब तो वह उड हि जायगा।

बापुके आशीर्वाद

हिन्दीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४१८) से; सौजन्य . वालजी गोविन्दजी देसाई।

८९. एक पत्र

३ फरवरी, १९३२

भाई,

कोई भी करनेके समय सत्य, अहिंसासे अतिरिक्त ईश्वरार्पण बुद्धिकी भावना रखना और केवल सेवावृत्तिसे ही करना।

बापुके आशीर्वाद

हिन्दी (सी० डब्ल्यू० ८९३२)से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

९०. पत्र : शारदाबहन चि० शाहको

३ फरवरी, १९३२

चि० शारदा,

तेरी चिट्ठी मिली। अक्षर तो तूने सुधार लिये है। किन्तु वजन बहुत कम है। ८ बजेके बाद धूपमे बैठ जाया कर। पहले ओढकर और फिर जैसे-जैसे धूप चढती जाये और ठंड न लगे, तब कपडे उतारकर फिर शरीरकी मालिश की जाये। ऐसा करेगी तो ठंड महसूस ही नही होगी। कॉडलिवर आयल गंगाबहनकी चिकित्साके दरम्यान भले ही न लिया जाये किन्तु शरीरपर तो उसकी मालिश इस अवधिमें भी की जा सकती है। कहते है, इससे भी फायदा होता है।

दूध कितना पीती है?

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९०५)से, सौजन्य . शारदाबहन गो० चोखावाला।

९१. पत्र : मीराबहनको

दुबारा नहीं पढ़ा

४ फरवरी, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरा इरादा इस पत्रको सीधा ही डाकमे डलवानेका है। तुम्हारी तन्दुरुस्तीका जो हाल दामोदरदासने सुनाया, उससे मुझे बैचैनी हुई। उसने बताया और तुम्हारे पत्रसे उसका समर्थन होता है कि तुम बहुत ही सरगरमीसे काम कर रही हो।[1] तुम्हे रफ्तार धीमी कर देनी चाहिए। तुम्हे रोज आधी राततक जागकर प्रातः ४ बजे नही उठना चाहिए। अगर आधी राततक काम करना जरूरी हो, तो प्रार्थनाके बाद तुरन्त पूरा आराम लेना चाहिए।[2]

अगर हर सप्ताह यरवदा आनेसे तुम्हारे चित्तको शान्ति मिलती हो, तो तुम जरूर आ जाया करो। मैंने कोई मनाही नही की है। मैंने इस मामलेमे केवल अपनी भावना प्रकट कर दी है। कैदी कैदी ही है। इस वक्त तो अधिकारियोने हफ्तेवार मुलाकातोकी इजाजत दे रखी है, और अभीतक मुझे इस इजाजतका उपयोग न करनेके लिए कोई कारण नही दिखता। लेकिन यह ज्यादा-से-ज्यादा एक अनिश्चित विशेपाधिकार है, जिसपर बहुत भरोसा नही करना चाहिए। एक कैदी और उसके इष्ट मित्रोके लिए सयम ही उत्तम वस्तु है। परन्तु सयम वही है, जिससे शक्ति मिले। अशक्ति या उदासी आती हो, तो वह यान्त्रिक या ऊपरसे लादा हुआ बन जाता है। अगर तुम सयमके सौन्दर्यको समझ लो और समझनेके बाद उसका स्वाभाविक रूपमे पालन करो, तभी तुम यहाँ कम आओगी। अगर इससे तुम्हे उदासी होती है, तो समझ लो कि यह प्रयत्न तुम्हारे लिए भारस्वरूप और अस्वाभाविक है। उस सूरतमे तुम्हे जरा भी सकोच न रखकर आना ही चाहिए।

मेरा वजन एक पौड बढा है। अब १०७ पौड है। वल्लभभाईका वही १४४½ पौड है। शहद फायदा करेगा।

प्रिवा-दम्पतीका एक छोटा-सा पत्र मुझे मिला है।

घरमे और कौन-कौन महिलाएँ है?

नरगिसबहन, जालभाई और कमलाको मेरा स्नेह। क्या कमला पचगनी नही जा रही है?

१. "मैं सविनय अवज्ञा आन्दोलनके बारेमें जितने अधिकृत समाचार मिल सकते थे, इकट्ठे करनेके काममें लगी हुई थी। उन्हें चुनकर और सम्पादन करके साइक्लोस्टाइलमें प्रतियाँ निकालकर विदेशोंमें भेजती थी"—मीराबहन।

२. "प्रार्थनाका वक्त सामान्यतः ४ बजे सुबहका था"—मीराबहन।

आश्रमकी डाकमें मेरे दूसरे पत्रकी आशा न रखना।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२१४) से, सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६८० से भी।

९२. पत्र: निर्मला ह० देसाईको

४ फरवरी, १९३२

चि० निर्मला,[1]

यह सही है कि कुछ लोगोंको खुशीमें रोने और दुःखमें हँसनेकी आदत होती है। प्रयत्न तो यही करना है कि दोनों स्थितियोंमें न हँसें, न रोयें।

तुमने कौन-कौनसे निबन्ध लिखे हैं? सातवींकी पुस्तकमें कौन-सी कविता बहुत अच्छी लगी?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४६३) से।

९३. पत्र: मीराबहनको

५ फरवरी, १९३२

चि० मीरा,

आखिरकार तुमको पत्र लिखनेका एक बहाना फिर मुझे मिल गया।

क्या तुम जानती हो कि उन खिलौनोंका क्या हुआ जो डोरिसके बच्चोंने मुझे भेजे थे और जिन्हें यहाँ अपने बच्चोंको देनेके लिए मैंने तुमसे रखनेको कहा था। यदि तुम जानती हो कि वे कहाँ हैं और यदि वे आसानीसे ढूँढे जा सकते हैं तो बच्चोंको दे देना।

दूसरी बात है किताबोंवाली पेटीकी। क्या तुम्हें कुछ अन्दाज है कि प्यारेलाल या महादेवने वह पेटी आश्रम या विद्यापीठको भेजी है या नहीं? शायद मणिलाल जानता है। यदि तुम्हें इस कामको करना-करवाना तो दूर, इसके बारेमें सोचने तकका भी समय न हो तो परेशान न होना।

आशा है कि मैंने कल जो पत्र[2] लिखा था, वह सीधा तुम्हें मिल गया होगा। यद्यपि यह पत्र आज [शुक्रवारको] लिखा जा रहा है, मंगलवारको ही डाकसे भेजा जायेगा।

१. महादेव देसाईकी सौतेली बहन।

२. देखिए "पत्र: मीराबहनको", ४-२-१९३२।

स्मरण रहे कि मैं सीधे तुम्हे जो भी पत्र लिखूँ, उन्हे तुम दूसरे आश्रमवासियोको भी पढनेको देती रहना।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२१५) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६८१ से भी।

९४. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

५ फरवरी, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,[1]

मैं देखता हूँ कि आपके पास २०० से ऊपर सत्याग्रही कैदी 'एक्सटेन्शन' मे है। इनमे से कई-एक मेरे अन्तरग सहयोगी है। आपके पास पूनाके कुछ लोग पहले ही से थे, यह मैं जानता था। लेकिन चूँकि वे प्रमुख नेता थे इसलिए मैंने उनसे मिलनेकी माँग नही की। लेकिन अब बडी संख्यामे जो सत्याग्रही दाखिल हुये है, उनसे कभी-कभी मुलाकातकी इच्छा इनसानियतका एक ऐसा तकाजा है जिसे मैं शायद दबाऊँगा नही। ठीक यही सवाल पिछले साल उठा था और मेजर मार्टिनके साथ और फिर मेजर डॉयलके साथ बातचीतके बाद मुझे इन कैदियोसे कभी-कभी और दो या तीनके छोटे-छोटे समुदायोमे मिलनेकी इजाजत दे दी गई थी। मैं फिरसे वही विनती करता हूँ और आशा है कि निस्सन्देह पिछले ही साल-जैसी मर्यादाओके तहत, इन साथी कैदियो और सहयोगियोसे मेरे भेट करनेपर अधिकारियोको कोई आपत्ति नही होगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५१३१) से।

1. अधीक्षक, यरवदा सैन्ट्रल जेल।

९५. पत्र : अब्बासको

. ५ फरवरी, १९३२

चि० अब्बास,

तेरा पत्र मिल गया है। तूने बाँसके चरखेका बहुत सुन्दर वर्णन किया है। यह बहुत सस्ता माना जायेगा। मुझे तो पेटीवाला गाण्डीव बहुत पसन्द आ गया है। तेरी कताईकी गतिमे कोई वृद्धि हुई है क्या? पिंजाईके बारेमे तेरी बात समझ गया। क्या ओटाईकी मशीनमे कुछ सुधार किया है? हम अब कितने अकतक का सूत बुन पाते है?

बापूके आशीर्वाद और दुआ

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६३०६) से।

९६. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

५ फरवरी, १९३२

बालको और बालिकाओ,

तुम्हारी ओरसे चि० कनु-द्वारा लिखित पत्र मिला।

अब तो तुम्हे अपने कर्त्तव्यका भान होना ही चाहिए। जिनकी प्रतिज्ञा ली है, उन नियमोका पालन पूरी तरहसे करना चाहिए। जिसने जो अधिकार[1] स्वीकार किया हो, वह उसे छोडे नही। अधिकार तो हमारे लिए ज्यादा सेवा और ज्यादा सयमके पालनका साधन होना चाहिए। और किसीका भी सेवाके पदसे यो ही जल्दीमे त्यागपत्र दे देना उचित नही हो सकता। तुमने नियम-भगके लिए जो प्रायश्चित्त निश्चित किये है, वे अच्छे है। अब उनपर दृढ रहना चाहिए।

डोरिसबहनकी शालाकी थोडी-सी बात लिखनी बच गई थी,[2] वह आज लिख रहा हूँ। एक बार उनकी शालाके बच्चोका एक समारोह था। विलायतके लोगोमे इकट्ठे होकर चाय पीने और कुछ खानेका रिवाज है। इस समारोहमे बच्चोका काम प्रदर्शित किया गया था। बालकोको सबके सामने खेलोका प्रदर्शन करना था और सबको नाश्ता परोसना था। यह सब काम उन्होने बिना घबराये या शोरगुल किये कर दिखाया। उन्हे नाच, कसरत और कुछ सवाद बोलकर दिखाने थे। छोटे-छोटे

१. अर्थात्, जिम्मेदारीका पद।

२. देखिए "पत्र : आश्रमके बच्चोंको", पृष्ठ ३६।

बच्चोको चाय आदि सबको परोसना बहुत अच्छा लग रहा था। खयाल रहे कि ये सभी आठ वर्षसे कम आयुके थे। इन बालकोका एक तश्तरीमे चायके प्याले, खानेकी चीजे, आदि रखकर घूमना कोई साधारण बात नही मानी जा सकती। यह सब करते हुए किसीने कुछ गिराया हो, यह मैने नही देखा। उनके बनाये चित्र, की हुई सिलाई, कढाई, आदिके बमूने भी अच्छे थे। उन्होने मेरे लिए एक ऐलबम तैयार किया था। इसे भी तुम्हारे लिए लाया तो हूँ, पर यह सब अब तो [मेरे ही पास] रह ही गया। मै चाहता हूँ तुममे से कोई इन बच्चोको पत्र लिखे; वह चाहे गुजरातीमे हो या हिन्दीमे, फिर कोई उसका अनुवाद कर दे। मूल पत्र अनुवादके साथ भेज सकते हो।

बापूके आशीर्वाद

पता है:
द्वारा कुमारी डोरिस लेस्टर
चिल्ड्रन हाउस
लन्दन ईस्ट

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८९२७ से भी; सौजन्य: नारणदास गाधी।

९७. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

५ फरवरी, १९३२

बहनो,

अब तो तुम्हारी सख्या बहुत कम रह गई है। किन्तु दुनियामे ऐसा ज्वार-भाटा तो आता ही रहता है। 'गीता-माता' हमे सिखाती है कि उतार-चढाव, ठड और गर्मी, सुख और दु.ख — इन्हे समान समझना चाहिए। इस समय हमे 'गीता-माता'की इस शिक्षाका पदार्थ-पाठ मिल रहा है। यदि हम उसे पचा सके तो हमारा उसकी गोदमे सिर रखना सफल हुआ कहा जा सकता है।

मैने देखा है कि कुछ बातोमे यूरोपके लोग 'गीता'की शिक्षासे अपरिचित होते हुए भी उसके अनुसार आचार-व्यवहार करते है। अभी तो एक ही बात याद आ रही है; उसे यहाँ लिख देता हूँ। लन्दनके बाहर जहाँ-जहाँ मै गया और वहाँ जिन मित्रोके घर ठहरा, वे काफी सम्पन्न लोग थे। उनके यहाँ मैने देखा कि उनके घरमे जो नौकर थे, वे नौकरोकी तरह नही, बल्कि उनके कुटुम्बियोकी तरह रहते थे। वे नौकरोपर कामका ज्यादा बोझ नही पडने देते, उनके साथ-साथ स्वय भी काम करते है, प्रात काल जल्दी उठना हो तो नौकरको उठाए बिना ही अपना काम निपटाते है। ज्यादातर घरोमे मैने यह देखा कि उनके घरोके ये नौकर बहुत पुराने

थे। लगभग हर जगह वे लोग मुझसे उनका परिचय कराते थे। उनकी सुघड़ताका तो कहना ही क्या? यह सब देखकर इन मित्रोके लिए मेरे मनमे जो आदर था, वह और बढ़ गया। इन नौकरोका वेतन बहुत अच्छा था, इसमे तो कोई आश्चर्यकी बात है ही नही। हमें स्वीकार करना चाहिए कि अपने नौकरोके साथ हम जो व्यवहार करते है, वह व्यवहार इस कोटिका नही होता।' मुझे तो ऐसा ही लगता है। तुम्हारी भी यही राय है न? साम्ययोग इसीको कहेगे। अर्जुनने भगवानसे इस योगकी कठिनाई बताई और भगवानने कहा कि यह कठिन तो है किन्तु अभ्यास और वैराग्यसे साधा जा सकता है। हम भी इसे साधें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८९२८ से भी; सौजन्य: नारणदास गाधी।

९८. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

५ फरवरी, १९३२

चि० गगाबहन (बडी),

तुम्हारा पत्र मिला। तुम ठीक काममे लग गई हो। जहाँ हो, वहीसे मुझे लिखते रहना। ईश्वर तो चीटीकी भी रक्षा करता है; वह हमे छोड थोडे ही देगा। वही तो कर्त्ता, हर्त्ता व भर्त्ता है। इसीसे तो पैदा करते हुए या मारते हुए भी वह रक्षा ही करता है।

हमारा तो पूछना ही क्या? खाते, सोते, घूमते तो है ही। बीचमे पढाई और कताई, आदि भी चलती है।

जहाँ रहो, प्रार्थना न भूलना। और कुछ न हो तो रामधुन तो है ही।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने, पृष्ठ, ६३। सी० डब्ल्यू० ८७९० से भी; सौजन्य: गगाबहन वैद्य।

९९. एक पत्र

५ फरवरी, १९३२

चि०,

लगता है, जैसे तेरी सारी जिन्दगी बीमारीमें ही कटनेवाली है। ऐसा होना तो नही चाहिए। तूने इसकी चिन्ता छोड़ दी लगती है। एक तरहसे यह अच्छा ही है। मगर चिन्ता छोडनेका यह अर्थ नही है कि इलाज ही न कराओ। रोज दवा लेना सही इलाज नही है। खुराकमें फेरफार और व्यायाम करनेसे कब्ज तो अवश्य चला जाता है। कैसी खुराक और कैसी कसरत ठीक रहेगी, यह तुझे ढूंढ निकालना है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९३०) से; सौजन्य: नारणदास गाधी।

१००. पत्र: प्रेमाबहन कंटकको

५ फरवरी, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। सरदारने सचमुच चाय छोड दी है। सुबहकी तो छोड़ ही दी थी, यह मै जानता था। फिर दस बजे पीते थे। अब वह भी छोड़ दी है। यह मुझे उनके छोड देनेके बाद मालूम हुआ। मैंने एक शब्द भी नही कहा। उन्होंने अपनी इच्छासे ही छोडी है।

बच्चोंको विलायतके खिलौने भेजे है, ऐसा लिखनेका मेरा इरादा नही था। ऐसा अर्थ निकलता है, तो लिखनेमें मुझसे भूल हुई। लिखनेका आशय तो यह था कि मै खिलौने लाया हूँ। वे कब दिये जा सकेंगे, मै नही जानता। मीराबहनने सँभालकर रखे थे। शायद उसे याद हो कि वे कहाँ है।

पुस्तकोंकी पेटी है। उसके बारेमें या तो मीराको या प्यारेलालको मालूम होगा। पेटी खोले बिना ही उसके वजनकी जाँच करनेसे पता चल जायेगा कि उसमें पुस्तकें है या और कुछ? शायद महादेवको मालूम हो।

विरोधाभासकी बात ऐसी है। मेरे या आश्रमके जीवनमें जहाँ विरोधका आभास है, वहाँ मेल बताया जा सकता है। सर्दीमें ओढनेवाले और गर्मीमें खुला शरीर रखनेवाले मनुष्यके जीवनमें विरोधका आभासमात्र ही है। वह एक ही नियमके

वशीभूत होकर कपड़े पहनता या छोड़ता है। ऐसे विरोधके आभासोंमें से बहुतोंका मेल बैठाया जा सकता है। दूसरी असंगतियाँ तो असंगतियाँ ही हैं। उनका कारण आश्रमकी या मेरी कमजोरी है। इन असंगतियोंको दोष ही माना जायेगा, और उन्हें दूर करनेका प्रयत्न करना चाहिए। कौन-सी असंगतियाँ वास्तवमें असंगतियाँ होनेके कारण दोष हैं या कौन-सी आभासमात्र हैं, यह तो सबको एक-एककर जाँचने बैठें, तभी पता चल सकता है। तुझे जो असंगतियाँ मालूम हुई हों, उनके बारेमें पूछना हो तो पूछना।

मनुष्य अकारण द्वेष नहीं करता। इसलिए यदि कोई द्वेषका कारण उपस्थित करे, तो भी द्वेष न करते हुए उससे प्रेम करना, उसपर दया करना, उसकी सेवा करना ही अहिंसा है। प्रेमीके प्रति किये जानेवाले प्रेममें अहिंसा नहीं है; वह तो व्यवहार है। अहिंसाको दान कहेंगे? प्रेमके बदले प्रेम करना, यह फर्ज अदा करनेके बराबर है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२७१) से। सी० डब्ल्यू० ६७१९ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक।

१०१. पत्र: पुष्पा शं० पटेलको

५ फरवरी, १९३२

चि० पुष्पा,

बहुत दिनोंके बाद तूने पत्र लिखनेकी फुरसत निकाली, इसके लिए मुझे यहाँसे ही तेरी नाक खींचनी चाहिए। यह खींच रहा हूँ। गुरुवारकी रात है और आठ बजे हैं। नाक खिंची या नहीं, सो लिखना। तेरे हिसाबसे तेरी लिखावट अच्छी ही कही जायेगी। अभी और सुधारना। 'गीताजी' में कितनी प्रगति की?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९७८) से।

१०२. पत्र : रामानन्द चटर्जीको

६ फरवरी, १९३२

प्रिय रामानन्द बाबू,

'मॉडर्न रिव्यू'[1] के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। 'गोल्डन बुक ऑफ टैगोर' कृपया जरूर भेजिए। उसकी अनुमति मिल जायेगी। जब आप गुरुदेवको मिलें, मेरा स्नेह कहें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत रामानन्द चटर्जी
'मॉडर्न रिव्यू'
अपर सर्कुलर रोड, कलकत्ता

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९५०१) से; सौजन्य : शान्तादेवी।

१०३. पत्र : एफ० मेरी बारको

६ फरवरी, १९३२

प्रिय मेरी,[2]

आपका पत्र पाकर मुझे खुशी हुई। हाँ, मुझे आपके पत्र-जैसे गैर-राजनीतिक पत्र लिखने और पानेकी इजाजत है।

जिस कागजपर[3] आपने पत्र लिखा है, वह मेरे लिए कोई नई चीज नहीं है। अहमदाबाद तो ऐसे कागजोंका घर हुआ करता था। वहाँ अब भी यह तैयार किया जाता है, लेकिन बहुत कम परिमाणमें। भारतमें ऐसे कई स्थान हैं।

'गीता' के द्वितीय अध्यायको समझनेमें कई लोगोंको कठिनाई महसूस हुई है। मैं आपको 'गीता' पर अपनी प्रस्तावना[4] पढ़नेकी सलाह दूँगा। उस प्रस्तावनामें मैंने उक्त कठिनाईको सुलझाया है। अगर आपने उसे नहीं पढ़ा है तो उसकी एक प्रति आश्रमसे प्राप्त कर लीजिए। वह 'यंग इंडिया' में छपी थी। प्रथम तो यह

१. देखिए "पत्र : रामानन्द चटर्जीको", २२-१-१९३२।

२. हैदराबादके समीप मिशन बोर्डिंग स्कूलसे सम्बद्ध, मेरीबहन नामसे मशहूर। गोलमेज-परिषद्के समय १९३१ में इंग्लैंडमें जब वे वहाँ अपनी छुट्टियाँ बिता रही थीं, गांधीजी के भाषणों और लेखोंमें दिलचस्पी लेने लगी थीं। वे भारत लौटते समय जहाजपर गांधीजी से परिचित हो गई थीं।

३. हाथका बना।

४. देखिए खण्ड ४१ पृष्ठ ९२-९।

भूल जाइए कि 'गीता' के जरिए ईश्वर बोल रहा है। ईश्वर जब कभी बोलता है, सदोष मानवीय माध्यमके द्वारा ही बोलता है। दूसरे यह, कि 'गीता'को एक ऐतिहासिक पुस्तक नही मानना चाहिए। तीसरी बात यह है कि यह एक ऐसे व्यक्ति द्वारा लिखी गई है जिसके समयमें युद्ध [प्रचलित धार्मिक मान्यताओके अनुसार] निषिद्ध नही था और वह अहिंसाके साथ असंगत नही माना जाता था, जैसे कि आज भी सामान्य तौरपर भोजनके लिए या आत्मरक्षणके लिए जानवरोको मारना अहिंसासे असगत नही समझा जाता; यद्यपि वास्तवमें वह है अहिंसासे असगत ही। इसलिए 'गीता'के लेखकने अपना उपदेश हृदयगम करानेके लिए एक ऐसा दृष्टान्त चुना है जिसे दोषपूर्ण माननेका हमें हक है। खुद मुझे 'गीता'का द्वितीय अध्याय समझनेमे कोई कठिनाई नही होती। 'गीता' की मूल शिक्षा, बाइबिलकी भाषामे कहे तो, यह है कि किसी भी वस्तुके विषयमे निरर्थक चिन्ता मत करो, फल हमारे बसकी बात नही है। कर्त्तव्य-पथको पहचान लेनेपर परिणामकी तनिक भी परवाह न करते हुए उसपर बढते ही जाना चाहिए। अर्जुनका तर्क दोषपूर्ण था और सासारिक नातोके प्रति आसक्तिसे पैदा हुआ था। वह युद्धको गलत नही मानता था। केवल वह सम्बन्धियोसे युद्ध नही करना चाहता था। धर्मकी ओरसे इस आसक्तिका उत्तर यही होगा, कि न कोई आत्मीय है और न कोई अनात्मीय। या तो यह सारी सृष्टि हमारी आत्मीय है या फिर कोई आत्मीय नही है। इसलिए यदि युद्ध करना न्यायसगत ही है तो इस बातसे कोई फर्क नही पडता कि वह सम्बन्धियोके विरुद्ध है या अपरिचितोके विरुद्ध। लेकिन यह स्थूल, बाह्य युद्ध उस युद्धकी छाया मात्र है जो भीतर चल रहा है,—ईश्वर और शैतानके बीच, बुराई और अच्छाईकी शक्तियोके बीच। और क्या हमारे अन्दर हमेशा ही कर्त्तव्य-अकर्त्तव्यकी ऐसी कठिन और नाजुक समस्याएँ नही उठती रहती है जिनका सम्बन्ध हमारी अन्तरात्मासे होता है? 'गीता' कहती है, "सब-कुछ ईश्वरपर छोड दो। वही तुम्हारी और तुम्हारी शकाओकी चिन्ता करेगा, किसी भी बातके लिए अपने-आपको परेशान मत करो, बल्कि जो भी सेवा-कार्य सामने आता है, उसे ईश्वरके नामपर और ईश्वरके लिए करो। परम आत्मत्यागकी भावना पैदा करो और सब ठीक हो जायेगा।" आत्मत्यागकी भावनासे प्रेरित इस अनासक्तिके परिणामरूपमे चरम सत्य और अहिंसा ही फलित होने चाहिए। इस प्रकार पढें, तो मेरी रायमे द्वितीय अध्याय कठिनाई पैदा करनेके बजाय सहायक बन जाता है। यदि इससे आपको सन्तोष नही हो और आप इस विषयपर और चर्चा करना चाहे तो कृपया लिखनेमे संकोच न कीजिएगा।

हम लोग [प्रार्थनाके लिए] ब्राह्ममुहूर्त्तके नियमका पालन कर रहे है। मेरा मतलब है कि सरदार वल्लभभाई और मैं।

मुझे खुशी है कि आपको आश्रममें अपना अल्पकालीन निवास पसन्द आया। निश्चय ही जब भी आप ऐसा चाहे, वहाँ जायें।

पुस्तकोको भेजनेकी बातके लिए धन्यवाद। मेरे पास काफी पुस्तकें है, मित्र और अपरिचित ऐसी पुस्तकें भेजते रहते है जो उनकी समझमे मुझे पढ़ लेनी चाहिए।

'गीता' की कठिनाईके अलावा भी जब चाहो, जरूर पत्र लिखो।[1]

आपका,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९८१) से। सी० डब्ल्यू० ३३०९ से भी; सौजन्य: मेरी बार।

१०४. पत्र : जयसुखलाल गांधीको

६ फरवरी, १९३२

चि० जयसुखलाल,

तुम मिलकर तो गये, पर बात नही हो सकी। वेणीलाल[2] मे मन रखा हुआ था, इसलिए एक बार बा को लेकर उससे मिल आया था। अब उसका क्या हाल है? मुझे तफसीलसे लिखना। उमिया[3] कहाँ है, कैसी है? और लडकियाँ कैसी है? कसुंबी[4] के साथ कैसी निभ रही है? कामके बारेमे तो लिखना ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/३) से।

१. अपनी पुस्तक, 'बापू-कन्वर्सेशन्स एँड कॉरेस्पोंडेंस विद महात्मा गांधी' में मेरी बार लिखती है: "मैंने इस पत्रका जवाब दिया और उसके बाद उनकी तरफसे लम्बा मौन रहा। मुझे उनका कोई उत्तर नहीं मिला। मुझे विश्वास था कि यदि उन्हें मेरा पत्र मिला होता तो वे जरूर उत्तर देते। इसलिए मैंने फिर लिखा, मात्र एक पोस्टकार्ड, यह पूछते हुए, कि क्या उन्हें मेरा दूसरा पत्र मिला था। उनका जवाब भी उतना ही संक्षिप्त और साफ था"। देखिए खण्ड ५०, "पत्र : एफ० मेरी बारको", १६-८-१९३२।

२. वेणीलाल गांधी।

३. जयसुखलालकी बेटी।

४. जयसुखलालकी पत्नी।

१०५. पत्र : मंगला शं० पटेलको

६ फरवरी, १९३२

चि० मगला,

अब तो फास निकल गई होगी? अध्यायका[1] पाठ करते हुए जहाँ भूल होती हो, वहाँ सुधार लेना। श्लोकोका अर्थ तो आता है न? कुछ सस्कृत सीखी है या नही?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०७४) से। सी० डब्ल्यू० ३८ से भी, सौजन्य . मगलावहन ब० देसाई।

१०६. पत्र : मथुरी ना० खरेको

६ फरवरी, १९३२

चि० मथुरी,

तू जल्दी उठती है, यह तो मुझे अच्छा ही लगता है, किन्तु तुझ-जैसी दुर्बल लडकीको तो जब जी करे, तभी सोनेकी छूट है। तुझे तो उतना ही काम करना है, जितना तू थके या उकताये बिना कर सके।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २६१) से; सौजन्य लक्ष्मीबहन ना० खरे।

१०७. पत्र : शिवाभाई गो० पटेलको

६ फरवरी, १९३२

चि० शिवाभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। प्रार्थनाको तो नही भूलना चाहिए। जिस तरह शरीर खुराक माँग लेता है, उसे भूलता नही है, उसी तरह आत्माको प्रार्थनाकी लगन होनी चाहिए। [प्रार्थनामें] चाहे सिर्फ रामनाम ही हो, लेकिन उसे भुलाये नही। भूल जाते हैं तो मानना चाहिए कि वह उतनी हदतक बाहरकी चीज हो गई, जब कि वह हमारे अन्तरकी वस्तु हो जानी चाहिए और सो भी इस हदतक, कि हर साँसके

१. गीताके।

साथ मुँहसे रामनाम ही निकले। जिस तरह पलके अपना काम करती रहती है, उसी तरह हर श्वास राम-रटन करेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५०७) से। सी० डब्ल्यू० ४२३ से भी; सौजन्य: शिवाभाई गो० पटेल।

१०८. पत्र : वनमाला न० परीखको

६ फरवरी, १९३२

चि० वनमाला,

किसी बच्चेको लिखना न आये तो वह मन्दबुद्धि माना जायेगा। तू मन्दबुद्धि थोड़े ही है। जिस दिन पत्र लिखने बैठे, उसी दिनकी घटनाएँ ही लिख दे, तो भी पत्र भर जाये। इसका जवाब लिखते समय ऐसा ही करके देखना। फौरन लिखने लायक बातें मिल जायेंगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७६३) से। सी० डब्ल्यू० २९८६ से भी; सौजन्य: वनमाला म० देसाई।

१०९. पत्र : रामजी जी० बधियाको

६ फरवरी, १९३२

भाईश्री रामजी,

आपका पत्र पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई है। शकरलालभाई जैसा कहे, वैसा करनेका निर्णय बहुत अच्छा है। मुझे तो आपसे बहुत आशा है। जीवनलालका स्वास्थ्य ठीक है, यह जानकर चिन्ता दूर हो गई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/३) से।

११०. पत्र : निर्मला ह० देसाईको

६ फरवरी, १९३२

चि० निर्मला,

तूने विलायती कपड़ेके बारेमें जो सवाल पूछा है, उसका जवाब यहाँसे नहीं दे सकता क्योंकि उसका सम्बन्ध राजनीतिसे है। इसलिए यह सवाल तू नारणदास-भाईसे पूछना और उनके जवाबसे सन्तोष न हो, तो जब हम मिलेंगे, तब पूछना।

महादेवसे कहना कि इस तरह वजन कम होते जाना ठीक नहीं। . . .[1] के लिए जैसी खुराककी आवश्यकता हो, वैसी लें। आजकल महादेव क्या पढ़ रहा है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४६४) से।

१११. पत्र : रैहाना तैयबजीको

७ फरवरी, १९३२

चि० रैहाना,

तुम्हारा खत पाकर बहुत खुशी हासिल हुई। मैं गलतियाँ तो बहुत करता हूँ। धीरज रखना। जब तुमको थकान आवे तब दुरुस्त करनेका छोड़ दो। मैं तो हर हफ्ते लिखनेकी कोशिश करूँगा। शुरू किया है उसे नहीं छोड़ूँगा। मेरी उस्तादनीकी उम्र खुदा दराज करे। बाबाजानसे कहो, हम दोनों दिनमें बहुत दफा उनको याद करते हैं। उनसे कहो, नौजवान होकर जेल महलमें से निकलना है। रविशंकर उनकी सेवामें है, यह अच्छी बात है। हमीदा और दूसरी लड़कियों और बहनोंको मेरे आशीर्वाद।[2]

फिलहाल आजके लिए इतना काफी है न? तुझे भी कितनी तकलीफ दूँ। यदि मुझे उर्दू नहीं आती तो गलती गुरुकी मानी जायेगी। शिष्य बेचारा क्या करे?

अम्माजानको हम दोनोंकी ओरसे बहुत-बहुत सलाम, वन्देमातरम् और प्यार, सुहैलाको आशीर्वाद, बच्चेको बोसा और तुझे चपत। अपने दर्दका खयाल न करना। जिन्हें ईश्वरकी लौ लगी है, उन्हें दर्दकी या दूसरी कोई चिन्ता क्यों होनी चाहिए? 'मैं तो हरिगुण गावत नाचूँगी' — यह भजन जानती है न? मैंने तो इसे उमा नेहरूकी

१. मूल पत्र यहाँ कटा हुआ है। सम्भवत: 'स्वास्थ्य'के आशयका कोई शब्द रहा होगा।

२. पत्रका यह अनुच्छेद उर्दूमें है।

बेटीसे, जो वकील बन गई है, सुना था। वह अच्छा गाती है। किन्तु तुझसे भजनकी बात क्या करना है? तू तो स्वयं उनकी खान है।

बापूकी बहुत-सी दुआएँ

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६३७) से।

११२. पत्र : नारणदास गांधीको

बुधवार ३/८ फरवरी, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा खरीता ठीक आज शामको मिला।

दोपहरको लेडी विट्ठलदास, भाई त्रिवेदी, विद्या हिंगोरानी और दामोदर आकर मिल गये। चप्पलके लिए चमडा मिल गया है। रामदास, छगनलाल, सुरेन्द्र, सोमभाई, आदि १९० व्यक्ति यहाँ आ गये है, ऐसी खबर मिली है। बहुत करके तो इनमे से कुछसे मुलाकात होगी।

अपनी खुजलीके लिए तुम्हे हरे पत्तोकी सब्जी और टमाटरका सेवन करना चाहिए। [पोटाशियम] परमेगनेटका स्नान तो ठीक है ही।

सी० पी० स्कॉटके बच्चेके पत्रके नीचे तुमने लिखा है कि स्व० स्कॉटका जीवनचरित्र तुमने बुकपोस्टसे भेजा है। वह यहाँ मिला नही लगता। याद हो तो फिर लिखना जिससे यहाँ तलाश की जा सके।

'आश्रम समाचार' मे मेरे दो दिनमे ५०० तार सूचित किये गये है। मैं दो दिनोमे ५०० तार नही कातता – ५०० गज कातता हूँ। दो दिनोमे ३३५ तार होते है। रोज इतने करनेकी अभिलाषा है। लेकिन जितनी जल्दी सोचता था, यह उतनी जल्दी होते नही दिखता।

रात, ६ फरवरी, १९३२

तिलकमका पत्र है। लगता है, उसे खुराक माफिक नही आई। उसके नामका पत्र पढ जाना। अगर वह मान जाये तो पत्रके अनुसार अमल करना। जिसे माँसाहारकी आदत हो, उसे दाल लागू नही होती। दूधसे शुरू करे तो कोई भी नुकसान नही होता। वे रोटी आदि तो मांसके साथ ही खाते है। मासके बदले वे दाले लेते है; मगर मांसके अभ्यासी पेटको दाले हजम नही होती। मूंगफली आदि तो लेनी ही नही चाहिए। दूध-दही सात्विक माँसाहार ही है।

इसके साथ ईश्वरके अस्तित्वके विषयमे हिन्दी-लेख है। यह 'यग इडिया' के एक लेख[1] के एक भागका अनुवाद है। इतना हिस्सा मैंने ग्रामोफोनके लिए बोल दिया था[2]।

१. देखिए, खण्ड ३७, पृष्ठ ३६१-५।

२. १७ अक्टूबर, १९३१ को; देखिए खण्ड ४८, पृष्ठ ५०८।

८ फरवरी, १९३२

ग्रामोफोनवाले इस रिकार्डको बेचते है। उसे आनन्द[1] ने सुना और उसे लिखकर उसका अनुवाद करनेके लिए मुझे प्रति भेजी। यह हिन्दी-लेख उस प्रतिका अनुवाद है। अभी इस अनुवादको छापना नही है। आनन्द सिन्धीमे अनुवादकी सहूलियत के लिए हिन्दी रूप चाहता है, यह उसे भेज देना और लिख देना कि इसे वह प्रकाशित न कराये। आश्रमवासी पढ सकते है। 'आश्रम-पत्रिका' में शायद दे भी सकते हैं। यदि छापो तो मूल लेखके रूपमे छापना। परसराम हिन्दी ठीक कर दे। पत्रिकामें छापने न छापनेकी बात तुमपर छोडता हूँ। उसका अनर्थ हो या कोई पत्रिकामे से लेकर अन्यत्र छाप दे, ऐसी सम्भावना हो तो पत्रिकामे देनेकी बात भी छोड देना। वहाँ रहनेवाले आश्रमवासी पढे, विचारे, समझे — इतना बस है।

आश्रममे थोडी जब्ती करनेका समाचार अखबारोमे पढा। तुम्हारी ओरसे तफसील मिलेगी।

आज थोडा समय है, इसलिए थोडी बात यहाँकी लिखता हूँ।

हम दोनो ३.४० पर उठ जाते है। दातुन करके तुरन्त प्रार्थना। फिर, दोनो गरम पानीमे शहद-नीबू लेते है और पाँचका घटा बजनेतक पढते है। पाँचसे छ बजेतक घूमते है। छ बजे हाजत हुई तो उससे निपटकर कोई बीस मिनिट सो जाता हूँ। जेलके कैदियोको खोलनेकी घटी बजते-बजते यानी ६.४५ के आसपास उठ बैठता हूँ और सात बजेतक पढता हूँ। सरदार शौचसे निवृत्त होकर घूमते रहते है और दूध आ जानेपर नाश्तेके लिए बैठते है। इस बीच अखबार आ जाता है। वह भी पढकर सुनाते है। दिनमे मै पढता, लिखता और कातता हूँ। बीचमें दो बार सो लेता हूँ। सरदार मेरे मुकाबलेमे बहुत ज्यादा घूमते है। जो अखबार आता है, उसका ज्यादातर भाग सरदार मुझे पढकर सुनाते है। मै दो बार खाता हूँ। सरदार कभी-कभी १२ बजे सलाद या ऐसी कोई चीज लेते है। मै इस समय फिर शहद और गरम पानी लेता हूँ। शहद चुक जाता है तो गुड तथा नीबू लेता हूँ। एक बार बात करते-करते मै यह कह बैठा कि मीराबहन या प्यारेलाल मेरे लिए फल वगैरा तैयार करते थे। तबसे वह सरदारका इजारा हो गया है। अब खजूर, टमाटर वगैरा मेरे लिए वे ही तैयार करते है और उसमें अपना सारा स्नेह उँडेल देते है। मैने कोई भी आनाकानी किये बिना यह प्रेमप्रसादी स्वीकार कर ली है। एक बार मीराबहन और प्यारेलालकी बात कह देनेपर इस सेवासे इनकार करना निरर्थक था। सरदार सुबह दूध और डबल रोटी लेते है। शामको ४ बजे रोटी, दही, सब्जी और ज्यादातर सलाद। मै सबेरे दूध और खजूर, टमाटर और लेडी ठाकरसी या प्रो० त्रिवेदीके भेजे हुए फलोमें से सन्तरे, चीकू लेता था। आजकल खजूर और टमाटर और सबेरे आधा पौण्ड दूध, शामको इतना ही दूध। लेकिन देखता हूँ, मुझे अब दूध

१. आनन्द हिंगोरानी, जिसने इसे सिन्धी भाषामें 'ईश्वर आहे? हा, आहे'–शीर्षकसे बादमें प्रकाशित करा दिया है।

कम करना चाहिए। यह तो जानते हो न, कि मेरा वजन बढ गया है? इस तरह लगता है, मुझे ज्यादा पौष्टिक आहारकी आवश्यकता नही है — और वह भी जब एकान्तमे और दौड-धूपके बिना रह रहा हूँ। पिछले वर्ष यह अनुभव कर लिया था। दूधके बिना काम चलाते रहकर वजन टिकाये रह सका था। जेलमे से निकलनेके बाद दूधके बिना वजन एकदम खो बैठा था और दूध लेने लगा था। विलायतमें शक्ति दूधके बलपर ही बनी रही थी। यहाँ कदाचित् दूधकी जरूरत नहीं पडेगी। इतना ही नही, यह भी सम्भव है कि लूँ तो मुझे नुकसान हो। जबर्दस्ती नही करनी है। दूधके प्रति हिचक तो बनी ही है। मगर शरीर माँगेगा तो दूँगा। इसलिए यह पढकर किसीको चिन्तित होनेकी आवश्यकता नही है। सरदार एक काम और करते है, वह भी बता दूँ। तुम जो लिफाफे भेजते हो, उन्हे सँभालने-सवारनेवाले भी सरदार ही है। ऐसी तो बहुत-सी मधुर बाते है। लेकिन इतनी ही काफी है न? जिस तरह ५ से ६ बजेतक हम घूमते है, उसी तरह शामको ५–६ के बीचका समय घूमनेमे लगाते है। ६ से ७ तक मै पढता हूँ। सरदार मेरे लिए खजूर, दातुन, वगैरह तैयार करते है और फिर कोठरीमे आ जाते है। ७ बजे प्रार्थना शुरू हो जाती है। प्रार्थनाके बाद फिर ८ ३० तक पढना-लिखना होता है। रातके ९ बजे दोनो बिस्तरोमे पहुँच जाते है। दोनो खुलेमे आकाशके नीचे सोते है। अखबारोमे 'टाइम्स' [ऑफ इडिया], [बॉम्बे] 'क्रॉनिकल,' 'ट्रिब्यून,' 'हिन्दू,' और 'लीडर' मिलते है। साप्ताहिकोमे 'सोशल रिफॉर्मर', मासिकोमे 'मॉडर्न रिव्यू'। पुस्तके बाहरसे आती रहती है और थोडी मै साथ ले आया था। उनसे हम दोनोकी गुजर हो रही है।

मै इतना पढ चुका हूँ: ड्यूरट कृत 'इडिया,'[1] क्रोजियर कृत 'मुझसे दो बोल'[2] ब्रेइल्सफोर्ड कृत 'हिन्दुस्तान,'[3] अल हज सालमीन कृत 'इमाम हुसैन' और 'खलीफा अली', सेम्युअल होर कृत 'फोर्थ सील', रैम्जे० मैक्डॉनल्ड कृत यात्रा-वर्णन 'दि सर्वे ऑफ मातर तालुका,'[4] रामनाथन कृत 'खादीपर भाषण,'[5] विल हे कृत 'हिन्दू धर्मका निचोड'[6], रस्किन कृत 'सेट जॉर्ज्स गिल्ड', शाह कृत 'फेडरल फाइनेन्स', राथनस्टाइन कृत 'इजिप्टका नाश,'[7] हेज कृत 'गौ का गुह्यार्थ,'[8] ए० ई० कृत 'केन्डल ऑफ विजन,' किनले कृत 'मनी' और 'शख अने कौडी' (गुजराती)। इस समय मै एण्ड्रयूज कृत मुन्शी जकाउल्लाकी जीवनी और शाह कृत 'भारतके साथ वर्षके

१. द केस फॉर इडिया।
२. ए वर्ड टु गाधी।
३. रैबल इडिया।
४. जे. सी. कुमारप्पा द्वारा लिखित।
५. स्पीच ऑन खादी।
६. इसेन्स ऑफ हिन्दूइज्म।
७. रुइन ऑफ इजिप्ट।
८. दि बुक ऑफ दि काऊ।

आर्थिक प्रशासनका इतिहास"[1] पढ रहा हूँ। सरदार होर और मैक्डॉनल्डकी पुस्तकें पढ़ चुके हैं और अब इजिप्ट-सम्बन्धी पुस्तक पढ रहे ह। सरदार अखबारोको पर्याप्त समय देते है। मैंने उनके जो दो घटे घूमनेकी बात पहले कही, उसके सिवा वे दो घटे और चलने-फिरनेमे लगाते हैं।

तुम्हारे पत्रके सिवा ३६ पत्र और हैं।

बापूके आशीर्वाद[2]

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२०७ से भी, सौजन्य: नारणदास गाधी।

११३. पत्र: अगाथा हैरीसनको

८ फरवरी, १९३२

प्रिय अगाथा,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे क्या हाल-चाल होगे, यही मै सोच रहा था। इसलिए तुम्हारा पत्र पाकर खुशी हुई। अपना स्नेह भेजनेके सिवाय मै कुछ और नही कहना चाहूँगा। सरदार वल्लभभाई मेरे साथ हैं और हम दोनो ठीक हैं।

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

कुमारी अगाथा हैरीसन
२ क्रैनबोर्न कोर्ट
अल्बर्ट ब्रिज रोड
लन्दन, एस० डब्ल्यू० ११

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४५०) से।

१. सिक्सटी इयर्स ऑफ इकोनॉमिक एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ इंडिया।

२. साधन-सूत्रमें इसके आगे भगवद्गीताके १८ वें अध्यायका सारांश है; देखिए "गीता-पत्रावली", २१-२-१९३२'

११४. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

८ फरवरी, १९३२

चि० पण्डितजी,

तुम्हारे दो पत्र मेरे सामने है। 'नाम हसुदे'की पहेली समझमे आ गई है। नारायणरावने अपनी पूजा करानेका अच्छा मार्ग निकाला है। मुफ्तमे तो रावसाहव नही वना।

गजाननने किसे पूछा था? यहाँके किसी भी जिम्मेदार व्यक्तिको मालूम नही है। दिन और समय भी लिखना। मैने तो उसकी वहुत बाट देखी।

जिस समय 'सत्य ही परमेश्वर' सूझा, उस समय 'हिरण्मयेन'[1] वाला मन्त्र मेरे सामने था या नही, इसकी कुछ याद नही है। जब ऐसी बाते सूझती है, तव वे जाने कैसे इस तरह हृदयसे निकलती है मानो मौलिक ही हो। मेरे लिए तो यह वात एक अनुभवसिद्ध वात ही कही जा सकती है।

गजानन यही कही हो और अभी कोई यहाँ आनेवाला हो तो उसके साथ आये। नारायणके आनेके बारेमे मैने सबके लिए लिखे गये पत्रमे लिखा है। 'भजनावली'के बारेमे कोई जल्दी तो नही है न? कोई सुझाव देने है?

क्या तुम्हें लगता है कि रामभाऊने काफी प्रगति की है? आजकल मन लगाकर संगीत सीखनेवालोमे कौन-कौन है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २२६) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे।

११५. पत्र : पुरुषोत्तम दा० सरैयाको

१० फरवरी, १९३२

चि० काकू,

तेरा सुन्दर अक्षरोमे लिखा हुआ पत्र मिला। तेरे पास लिखनेको तो वहुत-सी वातें है। तू पिछले बारह महीनोका हाल भी लिखे, तो लिखनेको बहुत मिल जायेगा। कताईको यज्ञ समझकर नियमपूर्वक कताई करते रहना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८०७) से; सौजन्य : पुरुषोत्तमदास दामोदर सरैया।

1. ईशोपनिषद्–१५, देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ३९७।

११६. पत्र : वालजी गोविन्दजी देसाईको

१० फरवरी, १९३२

भाईश्री वालजी,

तुम्हारी भिजवाई वस्तु मिल गई। जब कभी समय मिलेगा, अनुवाद तो देख ही लूंगा, फिर पूरा देख लेनेपर लिखूंगा। तुम्हारे पिछले पत्रका उत्तर[1] तो दे चुका हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४१९)से, सौजन्य वालजी गोविन्दजी देसाई।

११७. पत्र : वनमाला न० परीखको

१० फ़रवरी, १९३२

चि० वनमाला,

तुझे लिखाईके लिए पाँच नम्बर। यदि तू शब्दोको अलग-अलग लिखे और अच्छी कलमसे लिखे तो आठ नम्बर मिल सकते हैं। मनुष्यका मूल क्यो नही है? मनुष्य अपना मूल अपने साथ लिए घूमता है। वृक्षका मूल जमीनमें होता है क्योकि वह जमीनमें उगता है। मनुष्य माँके पेटसे जन्म लेता है और वहीसे वह मूल अपने साथ लेकर निकलता है। कह सकते हैं कि उसका मूल उसकी नाभि है। इससे समझमें न आया हो, तो यह पत्र प्रेमाबहनको दिखाकर उससे पूछना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७६४) से। सी० डब्ल्यू० २९८७ से भी, सौजन्य. वनमाला म० देसाई।

१. देखिए "पत्र: वालजी गोविन्दजी देसाईको", ३-२-१९३२।

११८. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

१० फरवरी, १९३२

चि० पण्डितजी,

बर्वेकी पुस्तक मिल गई है। अवकाश मिलनेपर उसमे डुबकी लगाऊँगा।

पहली शकाके विषयमे तुम्हारा समाधान ठीक ही है। मुझे भी सत्रहवे अध्याय की ध्वनि ऐसी ही लगी है। अन्तमे मनुष्यको श्रद्धासे ही काम लेना पडता है। जो एकको सत्य लगता है, वह बहुत बार दूसरेको वैसा नही लगता, यह बात हम समय-समयपर देखते रहते है। किन्तु जो व्यक्ति इस तरह अपने माने हुए सत्यके अनुसार चलता है, उसे तलवारकी धारपर चलना पडता है। वह जागृत रहे और यम-नियमोका कठोरतासे पालन करे। आलसी, व्यभिचारी, पाखण्डी, आदिको अपनी मतिके अनुसार चलनेका अधिकार बिलकुल नही है। यह अधिकार तो केवल साधक और सत्यार्थीको प्राप्त है।

दूसरी शकाके बारेमे मुझे लगता है कि सत्यशोधक इस चक्करमे नही पडेगा कि अमुक कार्यसे समाजका कल्याण होगा या नही। वह तो कहेगा कि मै कल्याण-अकल्याणकी बातमे नही पडता, सत्यमे ही सबका कल्याण है, क्योकि सत्य ही साक्षात, पूर्ण पुरुषोत्तम है। ईश्वरके दूसरे नाम उसके किसी एक अशके बोधक है। सत्य उसका पूर्ण स्वरूप बताता है। इसलिए जो चीज सत्यके विरुद्ध है, उससे किसीका कल्याण नही हो सकता। सत्यके पालनके लिए वाणी, विचार और कर्मका ऐक्य जरूरी है। अर्थात्, हमे जो सत्य लगे, वही बोलना चाहिए, उसीपर आचरण और विचार करना चाहिए। किन्तु एक बहुत बडा भ्रम हमारे बीच प्रचलित है। हमसे कोई व्यक्ति कुछ प्रश्न पूछे तो हम हमेशा उसका उत्तर देनेके लिए बाध्य नही है। इसलिए हम उत्तर न दे तो उसमे असत्य नही है। जब उत्तर देना हमारा कर्त्तव्य हो, तब हम न बोले तो यह झूठ बोलनेके बराबर है। जैसे कि यदि मुझसे पिता पूछे कि तुमने अमुक प्रमाणमे सोना चुराया है या नही ? — तो इसका जवाब देना मेरा कर्त्तव्य है। किन्तु यदि पिता यह पूछे कि अमुक भाईने चोरी की है, तो इसका उत्तर देना मेरे लिए जरूरी नही है। इसलिए मै जवाब न दूँ तो मै झूठ नही बोलता। मुझे 'गीता-रहस्य'[1] का प्रकरण याद है, मुझे वह खटका था। अन्य गति न होनेपर झूठ बोलना सत्यका प्रयोग नही है। ऐसा प्रसग कभी नही आता कि झूठ बोलना मनुष्यके लिए अनिवार्य हो जाये। आता हो, तो सत्य बोलने और तदनुसार ही आचरण करनेका सिद्धान्त अपूर्ण ठहरे। सिद्धान्तका अपवाद हो ही नही सकता। इसलिए जो झूठ जान-बूझकर बोला गया हो, उसका तो प्रायश्चित्त नही हो सकता। या यही हो सकता है कि आइन्दा झूठ न बोले। प्रायश्चित्त तभी हो सकता है, जब

१. बाल गगाधर तिलक-द्वारा लिखित गीताकी मीमांसा।

अनजानमें कोई दोष हो जाये। मुझे लगता है कि अब तुम्हें अपनी दूसरी शंकाका उत्तर भी पूरी तरह मिल गया है। अब भी कुछ रह गया हो, तो पूछना।

इसे दुबारा नहीं पढ़ा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २२२)से, सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे।

११९. पत्र : शारदाबहन चि० शाहको

१० फरवरी, १९३२

चि० शारदा,

तूने तो ऐसी बात लिखी है जैसे तुझे पकौड़े खाना तो अच्छा लगता है और चपाती खाना नहीं। जिसका शरीर ऐसी माँग करने लगे, वह रोगी माना जाता है। निरोगी मनुष्यका पेट पकौडोंसे नहीं भरता। वह तो रोटी ही माँगेगा। ठीक यही बात 'गीता' के बारेमें समझ। हृदयके पट खुल जानेपर तो 'गीता' अवश्य अच्छी लगती है। जबतक 'गीता' अच्छी नहीं लगती, तबतक यह समझ कि कहीं कुछ कमी है। लेकिन इसमें मुझ रसोइयेका भी दोष है। मैंने जो 'गीता' भेजी, वह कच्ची है, इसलिए वह तुझे पचती नहीं है। तो फिर बात कैसे बने?

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९४४)से, सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला।

१२०. पत्र : मीराबहनको

११ फरवरी, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। तसल्ली हुई। ईश्वरके पथ-प्रदर्शनमें जिनका विश्वास है, वे वही करते हैं जो अच्छे-से-अच्छा हो सकता है, और फिर चिन्ता नहीं रखते। सूर्यको कभी अधिक परिश्रमसे थकावट नहीं होती और सूर्यके बराबर अद्वितीय नियमितताके साथ कौन बेगार करता है? और हम यह क्यों समझें कि सूर्य जड़ पदार्थ है? उसके और हमारे बीच यह अन्तर हो सकता है कि उसे आजादी नहीं है और हमें थोड़ी-बहुत है, भले ही वह कितनी ही अनिश्चित हो। लेकिन इस तरहकी अटकलोंमें क्या धरा है? हमारे लिए इतना काफी है कि अथक शक्तिके रूपमें हमारे सामने उसका उज्ज्वल उदाहरण मौजूद है। अगर हम अपनेको पूरी तरह

उसकी[1] मर्जीपर छोड़ दे और सचमुच शून्य बन जाये तो हम स्वेच्छासे चुनावका अपना अधिकार छोड़ देते हैं और फिर हमें थकनेकी और, शक्तिका क्षय करनेकी जरूरत नही रहती।

मैंने अभी दूधके बजाय बादामकी लुगदी शुरू की है। मै रोज दूधकी मात्रा घटा रहा था, क्योंकि वह अनुकूल नही पड रही थी। सम्भव है, जबतक मै आराम कर रहा हूँ, तबतक मुझे प्राणिज प्रोटीनकी आवश्यकता न हो। मै सिर्फ प्रयोग कर रहा हूँ। इसलिए हमारे पास लन्दनमे बादामकी लुगदीकी जो बोतले थी, उनमें से तुम्हारे पास बची हो तो साथ लेती आना। अभी तो २४ घंटेमे दो बार नीबू और शहदके पानीके साथ खजूर, टमाटर और बादामकी लुगदीसे खूब अच्छी तरह काम चल रहा है। अभी यह कहना, कि दूधके बिना मेरा क्या हाल होगा, जल्दबाजी होगी। यद्यपि दूध कतई छोड़ देना मुझे बहुत अच्छा लगेगा, मगर अपने स्वास्थ्यको हानि पहुँचानेवाला कोई काम जान-बूझकर नही करूँगा।

जब तुम आओगी, तब शायद तुम्हे बतानेका वक्त न मिले, इसलिए मुझे पत्र द्वारा ही बता दो कि ऊनी कम्बलोको तुमने कैसे धोया था? ठडे पानीमें भिगोया था या गरममे, और कितनी देर? कितना लक्स साबुन इस्तेमाल किया और कितने पानीमें? मेरा विचार 'अपना साबुन' का चूरा इस्तेमाल करनेका है। मुझे जल्दी नही है।

मैंने मान रखा है कि तुम मेरे पत्र आश्रमको सुनाती होगी और जानने लायक अन्य बाते तुम्हे आश्रमके पत्रोसे मिल जाती होगी?

मुझे प्रिवा-दम्पतीसे सीधा एक पत्र मिला है। लगता है कि उन्हे यहाँ ठहरना खूब अच्छा लगा और मुझे इस बातकी खुशी है।

क्या तुम कभी हमारे मेजबान मणिलाल और उनकी पत्नीसे मिलती हो?

यदि तुम प्यारेलालसे मिलो तो उससे कह देना या फिर किसीसे कहला देना कि और खजूर न भेजे। मुझे जेराजाणीसे लगभग २० पौड मिल गये हैं। इसके अलावा प्यारेअलीको मिलनेवाले खजूर पुराने हैं और इसलिए घुन-खाये हैं।

दामोदरदास और उसके घरके लोगोको मेरा प्यार।

हम दोनोकी तरफसे प्यार,

बापू

[पुनश्च:]

साथका पत्र नरगिसके लिए है। मुझे अगाथा हैरीसनका पत्र मिला है। वह कहती है कि परसी बर्टलेट, हियाम और विश्वविद्यालयकी एक लड़की आ रही हैं[2]। मैं उसका नाम भूल गया हूँ। लेकिन तुम्हे भी शायद उसका पत्र मिला होगा। देवी वेस्टका बा के नाम पत्र मुझे मिला है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५०४)से; सौजन्य: मीराबहन।

१. ईश्वरकी।

२. ये तीनों सोसाइटी ऑफ फ्रेंडसके सदस्य थे और 'मैत्रीके मिशन' पर स्वतन्त्र रूपसे भारत आनेवाले थे।

१२१. पत्र : मनु गांधीको

११ फरवरी, १९३२

चि० मनुडी,[1]

तेरा पत्र मिला। तुझे मौसीकी तो सेवा करनी चाहिए। अब तुझे बच्चा नही कहा जा सकता। तू तो सयानी हो गई है। मौसीने तो तेरी बहुत सेवा की है और तुझसे लाड भी बहुत किया है। मुझे तो ऐसा लाड भी नही करना आता। अपने [स्वास्थ्य] का ध्यान रखकर ज्ञान भी खूब बढ़ा। तेरे लिए तस्वीरवाले कार्डोका ढेर बढता जा रहा है। मुझे पत्र लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५१०)से, सौजन्य : मनुबहन मशरूवाला।

१२२. पत्र : मानशंकर ज० त्रिवेदीको

११ फरवरी, १९३२

चि० मनु,

तुझे पत्र लिखनेका विचार तो मनमें काफी पहले आया था। पर मै तो यहाँ भी काम ले बैठता हूँ। इसलिए जिस कामको छोडा जा सके, उसे छोड देता हूँ।

तू तो सोच-विचारके भँवरमें पड़ गया होगा। लेकिन विचारमें पडनेकी कोई बात नही है। फिलहाल तेरा कर्त्तव्य वहाँका काम पूरा करनेका है। स्वास्थ्यका ध्यान रखते हुए जितना सीख सके, उतना सीखना। हंसकी गति अपनाना। तुलसीदास [की रामायण] पढ़ते हो क्या? उसे पढनेका अभ्यास बनाये रखना बहुत अच्छा है। उसमें यह दोहा है:

जड़चेतन गुणदोषमय
विश्व कीन्ह करतार।
सन्त हंस गुण गहहिं पय
परिहरि वारि विकार।।

इस तरह तू भी वहाँके गुणोको ग्रहण करना और दोषोसे बचे रहना। और इसी तरह वहाँ तो तू देशका प्रतिनिधि माना जायेगा, इसलिए देशकी जो अच्छी

१. हरिलाल गांधीकी बेटी।

बाते है, वहाँ उन्हीका प्रतिनिधि बनना। देशकी बुरी बाते वहाँकी ही खातिर छोड़े रहना। जबसे तुझे सैसून अस्पतालमे मिला हूँ, तबसे, तुझमे कुछ बुराई हो सकती है, इसकी तो मैंने कल्पना भी नही की।

अब तो जर्मन भाषा अच्छी तरह सीख ली होगी? अपने अध्ययन, अपने स्वास्थ्य और अपने साथियोके बारेमे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

सरदार मेरे साथ है, यह तो तुझे मालूम ही होगा। उनका आशीर्वाद।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १००४)से।

१२३. पत्र : नारणदास गांधीको

११ फरवरी, १९३२

चि० नारणदास,

चम्पा मुझसे मिलनेके लिए व्याकुल है। चाहे तो वह अगले सप्ताहमे आ जाये। रतिलाल आडे तो नही आयेगा?

तुम्हारी डाक कल मिली। 'आश्रम समाचार' उसमे नही है। और तुम्हारे पत्रके दूसरे पन्नेका निचला भाग फाडा हुआ था। वह यहाँ तो नही फाडा गया। खयाल हो तो बताना। रणछोड़भाईका अलगसे पत्र भी दिखाई नही दिया।

समझमे नही आया कि चचलबहनको लिखा गया पत्र और उस विधवा बहनके नामका पत्र अर्थात्, पत्र सख्या १ और २२ तुम्हे क्यो नही मिले। वे मेरे पास तो नही है। सम्भव है, यहाँ दफ्तरमे जाँच-पडतालके वक्त वे दो खिसक गये हो और गुम हो गये हो। आगेसे मै नाम और सख्या दोनोकी सूची देनेकी कोशिश करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

यह लिख चुकनेके बाद तुम्हारी दूसरी डाक मिली। चम्पाका मन शान्त है और इसलिए, न आना चाहे तो न आये।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२०९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१२४. पत्र : रामचन्द्र ना० खरेको

११ फरवरी, १९३२

चि० रामभाऊ उर्फ रामचन्द्र खरे,

वाह! तूने अच्छा हिसाव लगाया है। सब लिखते हैं, इसलिए तू क्यों लिखे। ऐसा सभी सोच ले, तो किसीका पत्र न आये। इस तरहका हिसाव मैं भी तो लगा सकता हूँ। सही हिसाव यह है कि हम अपने कर्त्तव्यका पालन करते रहे तो सभी, आज नही तो कल, किसी-न-किसी दिन तो उसका पालन करेंगे ही। इसके वारेमें कहावत है: 'आप भले तो जग भला'।

क्या अब झूठ वोलनेकी आदत विलकुल छोड़ दी है?

वापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २९०)से; सौजन्य: लक्ष्मीवहन ना० खरे।

१२५. पत्र : जयशंकर पी० त्रिवेदीको

११ फरवरी, १९३२

भाई त्रिवेदी,

मनुको पत्र[1] तो पहले ही लिखना चाहता था पर नही लिख सका। जव जी में आये, तब मिलनेके लिए नियत दिनोंमें कभी आ जाना। तुम्हें तो शामिल किया ही जा सकेगा।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १००३) से।

१. देखिए "पत्र: मानशंकर ज० त्रिवेदीको", ११-२-१९३२।

१२६. पत्र : पुष्पा शं० पटेलको[1]

११ फरवरी १९३२

चि० पुष्पा,

तुमारा खत मिला। तुमको पहचान नहिं सका हु। पूरा परिचय दो। उम्मर भी बताना।

बापुके आशीर्वाद

हिन्दीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९७९)से।

१२७. पत्र : मणिबहन न० परीखको

१२ फरवरी, १९३२

चि० मणिवहन (परीख),

कानका दर्द इतना बढ़ गया है तो क्या उसे किसीको दिखाया था? मुझे लगता है कि एक वार दिखा देना चाहिए। हरिभाईको देखनेपर समझ न आये, तो एक चक्कर वम्बईका लगा आओ। वहाँ कानके एक-दो अच्छे डाक्टर हैं। डॉ० जीवराज[2] वहाँ ले जायेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९६४)से। सी० डब्ल्यू० ३२८१ से भी; सौजन्य: वनमाला म० देसाई।

१. गांधीजी को इन्हें पहचाननेमें गलती हो गई थी। इन्हें लिखे गये तारीख ५ मार्च, १९३२ के पत्रसे स्पष्ट है कि यह वास्तवमें पुष्पा शंकरभाई पटेल थी। गलतफहमीका कारण यह था कि इनका पत्र असाधारण रूपसे अच्छी हिंदीमें लिखा हुआ था।

२. डॉ० जीवराज मेहता।

१२८. पत्र: मंगला शं० पटेलको

१२ फरवरी, १९३२

चि० मंगला (लाडकी),[1]

तेरा पत्र मिला। 'गीताजी' [के पाठ] में कही-कही भूल होती है तो उसे भी सुधारना चाहिए। नही तो लाड़की न रहकर, सिर्फ लाकड़ी ही रह जायेगी।[2]

कमू[3] कहाँ रहती है? उसका स्वास्थ्य कैसा रहता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०७५) से। सी० डब्ल्यू० ३९ से भी; सौजन्य: मंगलाबहन ब० देसाई।

१२९. पत्र: मथुरी ना० खरेको

१२ फरवरी, १९३२

चि० मथुरी,

तेरा सब-कुछ माफ किया जाता है, लेकिन यदि अक्षर अच्छे न लिखे तो माफ नही कर सकता। अक्षर चित्रकी तरह सुन्दर बना। गजानन तो तेरे पास है ही। उसे कहेगी तो वह बतायेगा कि अक्षर किस तरह सुन्दर बनाये जा सकते हैं। यह तो खेल है। इसपर ज्यादा समय मत लगाना। रोज थोडा-थोडा अभ्यास करना। त्रिपाठी भाईका[4] मनु[5] चारपाईपर पडा-पड़ा चित्र बनाया करता था। उसे एक वर्षतक चारपाईपर पडे रहना पड़ा था।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २६३) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

१. अर्थात्, लाडली।
२. देखिए "पत्र: मंगला शं० पटेलको", ३०-१-१९३२।
३. शायद मंगलाकी बडी बहन कमलाबहन पटेलका नाम।
४. 'त्रिवेदी भाई' की जगह भूलसे लिखा गया जान पडता है।
५. जयशंकर त्रिवेदीका पुत्र मानशंकर त्रिवेदी; १९३० में बीमार था।

१३०. पत्र : शान्ता शं० पटेलको

१२ फरवरी, १९३२

चि० शान्ता,

सरदार यहाँ है, इसमे शर्मानेकी क्या बात है? वे सरदार है, इसलिए या पटेल है, इसलिए? सरदारसे शर्म करके कहाँ जा सकते है? और पटेल तो वे रहे ही नही। जो भगीका साथी बन जाये, वह सभी जातियोका हो जाता है।

तूने काफी समाचार लिख भेजे है। जो मनमे आये, सो लिखते रहना। बीमार न पडना। सब-कुछ ईश्वरपर छोड देगी तो बीमार नही पडेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०६४) से। सी० डब्ल्यू० १५ से भी; सौजन्य: शान्ताबहन पटेल।

१३१. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

१२ फरवरी, १९३२

चि० परसराम,

तुमारा खत मिला। विमलके[1] बाल लोचन[2] हुए सो मुझको तो अच्छा हि लगता है। हिंदी शिक्षाके बारेमे कुछ भी सुचना देने जैसी तुमने रखा है ऐसा यहां से तो मालुम नहि होता है। रामायणका शोख सबको हो जावे तो एक पंथ और दो काज सो होगा।

बापुके आशीर्वाद

मूल हिन्दी (सी० डब्ल्यू० ४९६७)से, सौजन्य: परशुराम मेहरोत्रा। जी० एन० ७४९०से भी।

१. परशुराम मेहरोत्राका छोटा पुत्र।
२. सम्भवत: गाधीजी हिन्दुओंमें बालकोंके मुण्डन-संस्कारकी बात कर रहे थे।

१३२. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

१३ फरवरी, १९३२

बालको और बालिकाओ,

मैंने इग्लैडके बच्चोमें एक बात देखी जो आश्रममें नही दिखाई देती। तुममे से बहुतोको यह समझ नही आता कि पत्रमें क्या लिखे। यह ठीक नही है। विलायतके बच्चे इस मामलेमें तेज है। आश्रमसे बाहर रहनेवाले बच्चे भी तुम्हारे-जैसे ही है या नही, यह मैं निश्चित रूपसे नही कह सकता। तुम्हे यह दोष दूर करना चाहिए।

तुम्हारे आस-पास रोज कितनी ही बातें होती है। यदि तुम उनपर ध्यान दो, तो इतना लिख सको कि पन्नोपर-पन्ने भर जायें। तब मुझे पत्र लिखते समय तुम्हे कोई बात क्यो नही सूझती? दिन-भरमें क्या किया, क्या देखा, क्या सोचा, —यह सब लिख सकते हो। कोई दिन आनन्दपूर्वक बीता, तो किस तरह और कोई दिन दुःखमें बीता, तो किस तरह? किसी दिन मनमें अच्छे खयाल आये और किसी दिन बुरे, इसका पूरा वर्णन किया जा सकता है। यह भी हो सकता है कि यह सब पत्रमें लिखा जा सकता है या नही, इसके बारेमे तुम्हे शका हो तो तुम्हे मालूम होना चाहिए कि ऐसी शकाका कोई कारण ही नही है। तुम इस तरह पत्र लिख सकते हो, मानो मुझसे बात कर रहे हो। अब मै देखूंगा कि अगले सप्ताह तुम कितनी प्रगति करते हो। पत्र लिखना भी एक कला है। हमारी सभी कलाएँ सत्यकी पूजासे आरम्भ होती है। मुझे पत्र लिखना है और उसमे सत्य ही लिखना है और उसमे प्रेम उँडेल देना है, ऐसा सोचकर लिखने बैठोगे तो सुन्दर पत्र ही लिखोगे। क्योंकि सत्य ही ईश्वर है और सत्यको साक्षी मानकर और उसकी आराधना करते हुए हम जो-कुछ भी कहते या करते या लिखते है, वह सहज ही कलात्मक बन जाता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८९३६ से भी, सौजन्य: नारणदास गाधी।

१३३. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

१३ फरवरी, १९३२

बहनो,

इस समयतक तो तुम्हारा घोसला लगभग उजड गया है। फिर भी मुझे जो-जो बाते लिखने-जैसी लगी है और जो याद आ जाती है, उन्हे लिख दिया करता हूँ। ये पत्र जमा कर लिये जाते है इसलिए सम्भव है, भविष्यमे जब तुम लोग फिर इकट्ठा होओगी, तब इनका कुछ उपयोग होगा।

श्री रोलाँका नाम तो तुमने सुना है। वे यूरोपके महान लेखक है और साधु पुरुष है। मै उनसे मिलने गया था। उनकी एक बहन है। वे भी अब, रोलाँकी तरह, बूढी ही कही जायेगी। वे कुमारी रही है और यह केवल अपने भाईकी मदद करनेके विचारसे। भाई-बहनकी भाषा फ्रेंच है। रोलाँ अग्रेजी नही जानते। बहन जानती है। अगर कहे कि बहन भाईमें विलीन हो गई है तो यह ठीक ही माना जायेगा। वह रोलाँकी पूरी सार-सँभाल करती है। उनके सचिवका काम भी करती है। अग्रेज मिलने आते है तब वे दुभाषियेका काम करती है। रोलाँका शरीर कमजोर है। बहन उसकी देख-रेख भी करती है। जगतमें त्यागके ऐसे उदाहरण विरले ही देखनेमें आते है। फिर भी पश्चिममे मिलते है। हमारे यहाँ ऐसे उदाहरण हो तो मुझे उनका ध्यान नही है। हमने ब्रह्मचर्यको मोक्षसे जोड दिया है। इस तरह उसे हमने दुर्लभ बना दिया है और इसके कारण वह कठिन भी हो गया है। पश्चिममें माता-पिता या भाईके लिए महिलाएँ स्वेच्छासे ब्रह्मचर्य पालन करती है और उनके लिए तब वह सरल भी होता है। मै इसमें से तुम लोगोके लिए दो सार निकालना चाहता हूँ। एक तो यह कि किसी भी पारमार्थिक कारणसे ब्रह्मचर्य-पालन उचित है और दूसरा यह, कि वह ऐसे किसी भी व्यक्तिके लिए सरल है जिसके सामने रोलाँकी बहनकी तरह कोई प्रत्यक्ष कारण है। उसे अपने चुने हुए कामके कारण अवकाश ही नही मिलता। इस उदाहरणसे बहनोको जो खास बात सीखनी है, वह तो इसके अतिरिक्त ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८९३५ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१३४. एक पत्र

१३ फरवरी, १९३२

चि०,

मुझे ईश्वरका स्मरण प्रति क्षण बना रहता है, इसका अर्थ यह है कि अपनी जाग्रत अवस्थामे भी ऐसा समय नही होता जब मुझे इस बातका भान न हो कि ईश्वर मुझमें है और वह सब देख रहा है। यह भान मेरी बुद्धिका है और यह अभ्याससे प्राप्त हुआ है। हृदयको भी उसका भान है, ऐसा मै नही कहता। कारण, मै अपनेको भय-मुक्त नही मानता। सर्प आदिका भय तो मुझे लगता ही है। मृत्युको मै मित्र समझता हूँ किन्तु भीतर-ही-भीतर मेरे मनमे जीनेकी इच्छा भी मौजूद है, यह मै देखता हूँ। मुझे ऐसा लगता है कि जीवन मुझे प्रिय है और साथ ही मै मृत्युको भेंटनेके लिए भी तैयार हूँ। इन दोनो भावनाओका एक-साथ होना विचित्र है। अपनी इस कमजोरीके कारण मै यह नही कह सकता कि ईश्वरका वास मेरे हृदयमे हो गया है। यह अलग बात है कि मेरी बुद्धि यह स्वीकार करती है कि ईश्वर हृदयमे निवास कर रहा है। ईश्वर हृदयमे निवास कर रहा है, इसका जिन्हे ठीक अनुभव होता है, वे देहके विषयमे अत्यन्त अनासक्त होते हैं। मै देखता हूँ कि मै अभी उस अवस्थाको नही पहुँचा हूँ। तथापि, बुद्धिने तो इस विचारको स्वीकार किया ही है और उसका यह स्वीकार इतना दृढ है कि वह हृदयमे भी उतरता जा रहा है। इस . . से[1] आगे मै अभी नही जा सकता।

आहारके विषयमे अब तुम्हारा कोई आग्रह तो नही है? दूधके साथ फल लेना आवश्यक है। फल ताजे हो तो अच्छा है। थोडी कच्ची पत्ता-भाजी भी लेनी चाहिए। टमाटर और सलाद नामकी भाजीके पत्ते अच्छे माने जाते हैं। आहारका भी एक विज्ञान तो है ही। उसकी अवज्ञा करना ठीक नही। आहार सात्विक होना चाहिए, यह हम जानते हैं। सात्विक आहार किसे कहा जाये, यह अनुभवसे सीखना चाहिए। 'गीता' ने सात्विक आहारके सम्बन्धमे जिन विशेषणोका उपयोग किया है[2], वे सब लागू होने ही चाहिए, ऐसी बात नही है। यह तो हम अनुभवसे देख ही सकते है कि आगकी जरूरत बहुत ही कम है। मेरा मन तो कहता है कि अन्नको सूर्य जिस हदतक पकाता है, उतना काफी है। मुझे तो तुमसे इतना ही कहना है कि शरीरको जिस वस्तुकी आवश्यकता हो, हम उसे वह वस्तु अपने लिए स्वीकार्य चीजोमे से चुन कर दे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९३८) से, सौजन्य . नारणदास गाधी।

१. यहाँ साधन-सूत्रमें कुछ छूटा हुआ है।
२. देखिए खण्ड ३२, पृष्ठ ३२५–६।

१३५. एक पत्र

१३ फरवरी, १९३२

चि०,

रामराज्यका अर्थ है प्रजाका राज्य। राम-जैसे मनुष्यको राज करनेकी इच्छा नही होती। ईश्वरने अपना नाम दासानुदास रखा है।

कसरत करते समय, खाना बनाते समय और अन्य कई काम करते समय जाँघिया और कुरता पहना जा सकता है। क्या मालिश करती हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९६४) से; सौजन्य : नारणदास गाधी।

१३६. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१३ फरवरी, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। जब भी मेरा पत्र देरसे मिले, तब उसके ऊपरकी छाप देखकर मुझे तारीख लिख भेजनी चाहिए।

किसनको कितनी सजा हुई? उसे कहाँ रखा गया है?

पेटियाँ तू जरूर खोल सकती है। उनमे पुस्तके हो, तब तो उनकी व्यवस्था होनी चाहिए, और दूसरा कोई सामान हो तो उसकी सूची बनाकर उसे यथास्थान रखा जाना चाहिए। उस सामानका क्या करना है, यह समझमे न आये तो लिख भेजना, जिससे मै बता सकूँ कि क्या करना है। पुस्तके दूसरोकी हो तो भी कोई हर्ज नही है। उनके नाम पुस्तकोपर हो, तब तो वे सरलतासे अलग रखी जा सकती है। अगर नाम न हों तो उनपर आश्रमकी मुहर लगानेमे कोई हानि नही। इसके बावजूद उनके कोई मालिक हुए, तो वे उन्हे ले जायेगे। हमे तो जो पुस्तके हमारे कब्जेमे हो, उन्हे यथासम्भव सँभालकर रखनेकी व्यवस्था कर देनी चाहिए।

आश्रमका पढाईके साथ कोई सम्बन्ध ही नही है, यह मेरे किस वाक्यसे तूने समझ लिया? मेरे मनमे जो विचार है, वह यह है : अक्षरज्ञान — बाहरी पढाईका आश्रममे गौण स्थान है। इसलिए वह विद्यापीठ नही बन सका। लेकिन बाहरी शिक्षाकी उपयोगिता आवश्यक तो है ही; इसीलिए विद्यापीठकी स्थापना हुई। दोनो एक-दूसरेके पूरक है। इस तरह क्षेत्रोकी मर्यादा होनेके कारण आश्रमके पुस्तक-संग्रहकी

भी मर्यादा[1] होनी चाहिए। इस सम्बन्धमें विद्यापीठकी कोई मर्यादा हो ही नही सकती। उसकी मर्यादा आन्तरिक प्रयोगोके वारेमें जरूर है। आश्रमका नाम प्रसिद्ध हो गया है। उसके वारेमे कई अतिशयोक्तिकी हदतक पहुँचनेवाली मान्यताएँ वन गई हैं; इसलिए वहाँ अनेक प्रकारकी और अनेक भाषाओकी पुस्तकें आती हैं। उन सवको सँभालकर रखनेकी जगह विद्यापीठ ही हो सकती है। फिर भी आश्रममें जो पढ़ाई हम करते हैं, उससे सम्बन्धित पुस्तके जरूर होनी चाहिए। ये पुस्तके कौन-सी हों, यह तो तुम और अन्य लोग सरलतासे तय कर सकते हैं। कोई परेशानी खड़ी हो तो मुझसे पूछा जा सकता है। लेकिन मेरी दृष्टिसे तो परेशानीका सवाल ही नही है। इतने वर्षोके आश्रमके अस्तित्वके वाद हम आसानीसे इतना कह सकते हैं कि सामान्य रूपसे हमें किन पुस्तकोकी जरूरत होती है। उसके वाद अगर और पुस्तकोकी जरूरत महसूस हो तो हम विद्यापीठके भण्डारका आश्रय ले सकते हैं। दोनो संस्थाएँ अलग हैं, यह मानना ही नही चाहिए। दोनोंके क्षेत्र अलग हैं, लेकिन दोनोमें समानता भी वहुत है और दोनोमे समानता और अधिक होती जायेगी।

अभी इसमें कुछ और समझना वाकी हो तो मुझसे फिर पूछना।

किसीके वारेमे मेरे विचार वन जानेपर भी उसके विरुद्ध मैं कुछ नही सुनूं या देखूं, ऐसा जान-बूझकर तो मैं नही ही करता[2]। सुनता हमेशा हूँ, लेकिन उससे विचार हमेशा नही वदलते। अवलोकनके वाद वने हुए विचार जल्दी ही वदल जायें, इसे मैं दोष मानता हूँ। कभी वदले ही नही, यह हठ माना जायेगा। इसलिए यह भी दोष है। विचारोंके वदलनेके लिए सवल कारण चाहिए। वहुत वार तो मुझे प्रत्यक्ष प्रमाणकी जरूरत पडती है। इस स्वभावकी मैं रक्षा करता हूँ। और वैसा करनेसे मैं वहुत-से भयोसे वच गया हूँ और दूसरोके साथ मेरा सहवास निर्मल रह सका है।

इसलिए तुझे पूछना हो, वेधड़क होकर पूछना। ऐसा मौका फिर नही मिलनेवाला है।

तूने जो भेद किया है[3], वह सही है। 'यंग इंडिया'का लेखक एक व्यक्ति है; आश्रममें सवके परिचयमें आनेवाला व्यक्ति दूसरा है। 'यंग इंडिया'मे तो मैं पाण्डव वनकर वैठ सकता हूँ। लेकिन आश्रममें जैसा हूँ, वैसा दिखे विना कैसे रह सकता हूँ? उसपर, मैं सत्यका पुजारी हूँ, अतः जान-बूझकर दोष छिपानेका तो प्रयत्न भी मुझसे नही हो सकेगा। इसलिए मुझमें रहनेवाले कौरव जहाँ-तहाँमे निकल ही पड़ते हैं। मेरे भीतर देवासुर-संग्राम चलता ही रहता है, यह तो तूने कहा ही है न? लेकिन ऐसा दीखता है कि कौरवोंकी हार हुआ करती है। लेकिन इस वारेमें अभी कुछ निश्चयपूर्वक नही कहा जा सकता। यह तो सोलन[4]के कथनानुसार मृत्युके वाद ही

१. प्रेमावहन कंटकने पुस्तकें विद्यापीठमें ले जानेपर आपत्ति की थी क्योंकि इससे आश्रमको बड़ी हानि होती।

२. प्रेमावहन कंटकने गांधीजी पर यह आरोप लगाया था

३. यंग इंडियाके लिए लेखन-कार्य करनेवाले गांधीजी, मानव गांधीजी से, जिनकी मानवीय सीमाएँ हैं, कहीं ज्यादा ऊँचे व्यक्ति लगते हैं।

४. प्राचीन ग्रीक-तत्त्वज्ञानी

कहा जा सकता है। मैंने करोडोकी कीमत रखनेवालोको क्षण-भरमे कौडीकी कीमतका बनते हुए देखा है। इसलिए मुझे किसी तरहका घमण्ड नही है। घमण्ड है भी किस कामकी चीज?

पत्र फिरसे नही पढता हूँ, यह ध्यानमे रखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२७२) से। सी० डब्ल्यू० ६७२० से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कटक।

१३७. पत्र : दुर्गा देसाईको[1]

१४ फरवरी, १९३२

चि०,

महादेवसे कहना कि 'सी' श्रेणी भाग्यवानको ही मिलती है। और जिनका नसीब खोटा हो, उन्हे 'सी' माँगनेपर भी 'ए' श्रेणी मिलती है। किन्तु हमे तो जो मिले, उसमे ही सन्तोष मानना है; उससे जो-कुछ सीख सकते हो, वह सीख ले। 'ए' और 'सी'का झमेला उनके लिए है जिन्हे भोगकी चिन्ता है। जिनके लिए त्यागमे ही भोग है, उनको हर स्थितिमे त्यागका अवसर खोजना है और त्यागके लिए तो असीम क्षेत्र है। पर, त्याग ऐसा नही होना चाहिए कि कमर ही टूट जाये। ऐसा त्याग त्याज्य है।

"अशास्त्रविहितं घोर तप्यन्ते ये तपो जना:"।
[और] "कर्षयन्त: शरीरस्थं भूतग्राममचेतस"।
ये दोनो श्लोकाश[2] याद रखे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९३४) से; सौजन्य: नारणदास गाधी।

१. देखिए "पत्र: निर्मला देसाईको", १८-२-१९३२।
२. गीता, अध्याय १७, श्लोक ५ व ६।

१३८. पत्र : पद्माको

१४ फरवरी, १९३२

चि० पद्मा,

तेरा पत्र मिला। जहाँ तू रहती है, वहाँसे भुवालीका सेनिटोरियम पास है। वहाँ अपनी जाँच करा ले तो अच्छा है। वहाँ कोई सहायक है या नही? जोशीजी[1] है? वहाँ 'गीता' पढानेवाला नही मिलता, यह आश्चर्यकी बात है। क्या शान्तिलाल वहाँ है? उसे तो इसका ज्ञान होना चाहिए। लेकिन, मुझे इसकी चिन्ता नही है। तुझे भी नही करनी है। तुझे पहले तो अपने शरीरको स्वस्थ बना डालना है।

मैत्री और दुर्गी थोड़े दिनोके लिए दार्जिलिंग गई है, यह तो तुझे मालूम ही होगा। सरोजिनीदेवीको तो तेरे पास ही रहना चाहिए। ऐसा करना ठीक ही है। अब तो शीला खूब बडी हो रही होगी। क्या तू उसका ध्यान रखती है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१२९)से। सी० डब्ल्यू० ३४८१ से भी; सौजन्य : प्रभुदास गाधी।

१३९. पत्र : नारणदास गांधीको

रात, ११/१५ फरवरी, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारे दोनो बडे लिफाफे मिले। रामजी को सूत नही मिलता, इसका यही अर्थ हुआ न, कि हमारे पास उसकी कमी है? दूसरी जगहोमे भी क्या ऐसा ही हाल होगा? इसका समाधान तो तुम्हीको करना है।

मदनमोहन बोहरा यहाँ 'दर्शन' करने आना चाहता है। लगता है, तुम यह जानते हो। उसको भेजा मेरा उत्तर देख लेना।

बुधाभाई और पार्वतीकी समस्या कठिन लगती है। मुझे तो लगता है कि अभी उन्हे अलग-अलग रहना चाहिए। यदि तुम्हे यह सलाह ठीक लगती हो तो इस दिशामें कदम उठाना। और कुछ सूझे तो मुझे लिखना। पार्वती आश्रममे तो ठीक रहती है? नियमोका पालन करती है?

लगता है, तुम्हारी खासी कसौटी हो रही है।

१. सम्भवत : छगनलाल जोशी; वे कुछ दिनोंके लिए अलमोडा गये थे।

१२ फरवरी, १९३२

तुम्हें दुग्धालयका काफी काम देखना पड़ता है। तुम समर्थ हो और सारा बोझ सत्यनारायणपर डाल देते हो, इसलिए मैं निश्चिन्त रहता हूँ। पारनेरकर शान्त भावसे रह सके तो काफी है। उसे जो ठीक लगे, सो करे।

फूल-पौधोंके बारेमें मेरे विचार किसी अनुभवहीनके विचार समझना। इसलिए जबतक कोई विशेषज्ञ समर्थन न करे, तबतक उन्हें साबरमती नदीमें फेंक देने लायक मानना।

प्रभुदासके समाचार प्राप्त करना। आवश्यक जान पड़े तो उसे जहाँ सजा सुनाई गई थी, वहाँ उसके अभिभावकके नाते पूछताछ करना कि वह किस जेलमें है। वह जिस जेलमें हो, वहाँ उसके स्वास्थ्यके बारेमें डॉ० तलवलकरका पत्र भिजवाना।

मीराबहनने सीधे ही पत्र लिखा था; वह मिला था और उसका उत्तर[1] भी मैंने सीधे ही दे दिया। वह पत्र तुम्हारे पास भेज देनेको लिखा है।

तोतारामजीके अर्शके कष्टकी जाँच हरिभाईसे करवाना जरूरी है। उन्हें बद्धकोष्ठ तो नहीं रहता न?

धीरूको पालनपुरमें किसके पास रखेंगे? विमलाका क्या हाल है?

जीवनजी[2] को सूचित करके जापानी लेखकको 'यंग इंडिया' के लेखोंके अनुवादकी अनुमति भेज देना।

जयरामदासके पत्रमें कोई आपत्तिजनक बात न हो तो वह जरूर भेज सकते हो।

तीसरा पहर, १५ फरवरी, १९३२

मैं हर पत्रमें सरदारके आशीर्वाद या यथायोग्य नहीं लिखता। लेकिन वे तो सबके प्रति रहते ही हैं, ऐसा समझना चाहिए। तुम्हारे नाम पत्र और 'गीता' पर लेखके सिवा ६८ पत्र हैं। उनकी तफसील साथ रख रहा हूँ। इससे कोई पत्र न मिला तो कौन-सा नहीं मिला, यह तुम्हें और मुझे मालूम हो जायेगा।

बापूके आशीर्वाद[3]

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२०३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. देखिए पृष्ठ ८०-१।

२. जीवनजी डाह्याभाई देसाई, नवजीवनके मुद्रक व प्रकाशक।

३. साधन-सूत्रमें इसके आगे भगवद्गीताके १७ वें अध्यायका सारांश है; देखिए "गीता-पत्रावली" २१-२-१९३२।

१४०. पत्र : फिलिप हार्टोगको

१५ फरवरी, १९३२

प्रिय मित्र,

मुझे खेद है कि अपने बगके बाहरकी कुछ परिस्थितियोंके कारण मैं अपना वह वायदा पूरा नही कर सका जो मैंने ब्रिटिशकालसे पहले भारतमें प्राथमिक शिक्षाकी हालतके सम्बन्धमें अपने वक्तव्य[1] के बारेमें आपसे किया था। भारतमें उतरनेके तुरन्त बाद ही मैंने तत्सम्बन्धी शोधका काम बम्बई विश्वविद्यालय सीनेटके एक सदस्य एडवोकेट मुंशी तथा शिक्षासे सम्बद्ध दो अन्य शिक्षाविद् मित्रोको सौंप दिया था। परन्तु वे खुद भी मेरी तरह सत्याग्रही बन्दी हो गये हैं। मने एडवोकेट मुंशीसे कहा था कि आपसे सीधा सम्पर्क स्थापित कर लें। परन्तु मेरी गिरफ्तारीके बाद वे इतनी जल्दी गिरफ्तार हो गये कि मेरी समझमें, उन्हे शायद आपसे पत्र-व्यवहारका अवसर ही नही मिला। चूँकि मुझे गैर-राजनीतिक पत्र-व्यवहार जारी रखनेकी इजाजत है, मैंने अब प्रोफेसर शाहसे अपने वक्तव्यकी जाँच करने और आपको अपनी जाँचका परिणाम देनेको कहा है। आप मुझे एक सत्यशोधक सहयोगी जान पड़े थे; इसलिए मेरी बड़ी इच्छा थी कि आपको अपने वक्तव्यका पुष्टीकरण देकर या फिर उसे मैंने जिस तरह सार्वजनिक रूपसे दिया था, उसी तरह वापस लेकर आपको सन्तोष दूँ। मैंने सोचा कि अपने वायदेको पूरा करनेकी दिशामें मैंने क्या किया, सो तो आपको बता ही दूँ।

चूँकि आपका निजी पता मेरे पास नही है, मैं यह पत्र इंडिया ऑफिसकी मारफत भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४१०) से; सौजन्य: इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी।

१. २० अक्टूबर, १९३१ को रायल इंस्टीट्यूट ऑफ इंटरनेशनल अफेयर्समें गांधीजी ने कहा था कि भारतमें पिछले ५० से १०० वर्षोंके बीच साक्षरता घटी है। देखिए खण्ड ४८, पृष्ठ २२०

१४१. पत्र : निर्मला ह० देसाईको

मौनवार [१५ फरवरी, १९३२ या उसके पश्चात्][1]

चि० निर्मला (बुआ),

तू कैसी लडकी है, खुद तो खत नही लिखती और मेरा खत न मिलनेकी शिकायत करती है। दुर्गाने मेरा सन्देश महादेवको दिया था या नही? दुर्गा कैसी है? उसे कहना, पत्र लिखे। बबलो[2] कैसा है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४६१) से।

१४२. पत्र : आर० वी० मार्टिनको

१६ फरवरी, १९३२

प्रिय मेजर मार्टिन,

मेजर भण्डारीको लिखे पत्रके[3] सिलसिलेमे, और आजकी अपनी बातचीतकी पुष्टि करते हुए मै निवेदन करता हूँ कि मै अपने उन सहयोगियोसे जो राजनीतिक दृष्टिसे विख्यात नही है और जो यहाँ यरवदा-जेलमे लाये गये है, सहज मानवीय सम्पर्क रखना चाहता हूँ। मेरे ध्यानमे विशेष रूपसे सर्वश्री छगनलाल जोशी, सुरेन्द्रनाथ, सोमभाई और मेरा पुत्र रामदास है। मेरी जानकारीके अनुसार वे यरवदा लाये गये बंदियोकी पहली टोलीमे है। मुझे यह कहनेकी जरूरत नही कि मै उनसे कोई राजनीतिक बात नही करना चाहता। जेल-अनुशासनमे दखल देनेका भी मेरा कतई कोई इरादा नही हो सकता।

चूंकि यह मामला काफी दिनोसे लटका हुआ है, इसपर जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी निर्णय करवानेकी कृपा करें। आभार मानूँगा।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

गृह विभाग, बम्बई सरकार, आई० जी० पी० फाईल सं०–९

१. पत्रमें दुर्गा-द्वारा महादेवको सन्देश दिये जानेके उल्लेखसे जान पडता है कि वह १४-२-१९३२ को लिखित "पत्र : दुर्गा देसाईको", के बाद पडनेवाले मौनवारको लिखा गया होगा।

२. महादेव देसाईका पुत्र, नारायण देसाई।

३. देखिए पृष्ठ ६१।

१४३. पत्र : रामानन्द चटर्जीको

१६ फरवरी, १९३२

प्रिय रामानन्द बाबू,

मुझे 'गोल्डन बुक'[1] यथासमय मिल गई है। इसमें आपने प्रेमकी कैसी मूल्यवान निधियाँ सजोई हैं? मैं इसे तुरन्त पढ़ने बैठ गया और दो घटेतक पढ़ता रहा। इसे मेरे पास यहाँ भेजनेकी बात सोचनेके लिए आपको धन्यवाद। यदि यह मुझे [जेलके] बाहर मिली होती तो मैं इसे खोलने, और फिर एक साँस खींचकर रख देनेके सिवाय अधिक कुछ न कर पाता।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९५०२)से, सौजन्य : शान्ता देवी।

१४४. पत्र : त्रिवेणी ज० मेहताको

१८ फरवरी, १९३२

चि० त्रिवेणी,

तुम्हारा पत्र मिला। शिक्षाकी अपनी कोई निश्चित पद्धति नहीं होती। वह तो शुद्ध प्रेममें निहित होती है। माँ अपने बालकको अपना समझकर बिगाड़ लेती है। अपना न मानकर ईश्वर-द्वारा सौंपी हुई धरोहर समझकर उसका पालन करे, तो वह सहज सुधर जाये। आज बहनोंके पत्रमें इसी विषयपर लिख रहा हूँ। इसे पढ़कर विचार करना। दूसरोंके दोषोंको न देखकर हम स्वयं अच्छा बननेका प्रयत्न करें।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती त्रिवेणी[2] जगजीवनदास मेहता
साबरमती

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०)से। सी० डब्ल्यू० ८९४१ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. 'गोल्डन बुक ऑफ टैगोर'; देखिए "पत्र : रामानन्द चटर्जीको", ६-२-१९३२।
२. डॉ० प्राणजीवन मेहताके भाई जगजीवनदासकी पत्नी।

१४५. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

१८ फरवरी, १९३२

बहनो,

बहनें चाहे जितनी कम रह गई हों फिर भी तुममें से किसीको उत्तरदायित्व लेकर अपने मण्डलको ठीक चलाते रहना चाहिए। प्रार्थना [का दैनिक क्रम] अटूट रहना चाहिए। मुझे बहनोंकी ओरसे पत्र मिलते रहने चाहिए। नहीं तो आखिरकार मैं भी सुस्त हो जाऊँगा न? मेरे पत्र कौन रखता-सँभालता है?

आज मैं एक ऐसी शालाकी बात लिखता हूँ जो मुझे अद्भुत लगी थी। एक-दो भाई और एक-दो बहनें इसे मिलकर चलाते हैं। उनकी मान्यता यह है कि जड़-से-जड़ बालक भी प्रेमके नियमको मानने लगते हैं। इसलिए उन्होंने मातृपितृ-विहीन परित्यक्त और एकदम मूढ़-जैसे हो चुके बच्चोंके शिक्षा-कार्यको हाथमें लिया है। शिक्षकोंने प्रेमके प्रयोगोंके आधारपर कुछ नियम खोज निकाले हैं। यह शाला उन्हींके अनुसार चलाई जाती है। उक्त भाइयों और बहनोंने अपना सब-कुछ इन बालकोंको अर्पित कर रखा है। बच्चे जानते भी नहीं हैं कि वे अनाथ या बिना माँ-बापके हैं। खुले और फैले मैदानमें बनी इमारतमें वे रहते हैं और मुक्त हवा और प्रकाशमें उनका पालन-पोषण होता है। उन्हें मुख्यतः संगीत-द्वारा सुधारा जाता है। संगीतकी तालपर बच्चे आहिस्ता-आहिस्ता कुछ मुद्राएँ साधते हैं और संगीतकी लयमें डूबेतक रहते हैं। वे बहनें बच्चोंको इस प्रकार रखती हैं मानो वे उनके ही बच्चे हों, उन्हींके साथ खाती-पीती हैं। वे उन्हें हर समय आनन्द और खेल-कूदमें लगाये रखती हैं और धीरे-धीरे इस तरह वे अपनी मूढ़तासे छुटकारा पा जाते हैं। ये परोपकारी भाई-बहन इस प्रयोगको दो-चार बरसोंसे ही कर रहे हैं। जहाँ श्री होरेस अलेक्जेंडर रहते हैं, यह अद्भुत पाठशाला उसी जगहके नजदीक है। यह देखकर मेरा सिर अपने-आप झुक गया और मैंने देखा कि प्रेम क्या नहीं कर सकता — वह गूंगेको वाणी देता है और उसके बलपर पंगु गिरिवर चढ़ जाता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८९४७ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१४६. पत्र : मंगला शं० पटेलको

१८ फरवरी, १९३२

चि० मंगला,

तेरा पत्र मिला। कोई भी परीक्षक पूरे नम्बर नही देता इसलिए चाहे तुझे पूरे नम्बर न दूं, लेकिन मेरे हिसाबसे तुझे मिलने तो चाहिए। मुझे तुझसे सीखना चाहिए। हमेशा इतने ही सुन्दर अक्षर लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०७६) से। सी० डब्ल्यू० ४० से भी; सौजन्य: मंगलाबहन ब० देसाई।

१४७. पत्र : मथुरी ना० खरेको

१८ फरवरी, १९३२

चि० मथुरी,

तेरे पत्र तो नियमपूर्वक मिलते रहते हैं। किन्तु मेरी माँग स्वीकार करेगी न? गजाननसे अक्षर ठीक बनाना सीख ले और फिर सुन्दर अक्षरोंमें मुझे पत्र लिख। इतना करेगी न?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २६२)से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

१४८. पत्र : पुष्पा शं० पटेलको

१८ फरवरी, १९३२

चि० पुष्पा,

तेरा पत्र मिला। तूने भी अपने अक्षर काफी सुधार लिये हैं। और अब हारमोनियम बजाने लगी है। क्या मुझे सुननेके लिए आना पड़ेगा? किन्तु सुनने लायक बजा सकनेके लिए तो कौन जाने कितने वर्ष लगेंगे? तबतक क्या हम दोनोंको यही पड़ा रहना है?

क्या विचार है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९८०) से। सी० डब्ल्यू० २६ से भी, सौजन्य: पुष्पाबहन शं० नायक।

१४९. पत्र : वनमाला न० परीखको

१८ फरवरी, १९३२

चि० वनमाला,

ले, तेरी ही पर्चीपर तुझे पत्र लिख रहा हूँ। सीधी लकीरोंवाला कागज न हो तो लकीरें अपने हाथसे खींच लेनी चाहिए।

नरहरिको मिलना, तब कहना कि 'सी' श्रेणी माँगी और मिल गई, यह अच्छा हुआ। किन्तु यही शर्त है कि वह स्वास्थ्यका ध्यान बनाये रखे। फिर बीमार न पड़े। देख, तुझे अब ठीक पत्र लिखना सीख लेना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७६५)से। सी० डब्ल्यू० २९८८ से भी; सौजन्य: वनमाला म० देसाई।

१५०. पत्र : विद्या रा० पटेलको

१८ फरवरी, १९३२

चि० विद्या,

तेरा पत्र मिला। पत्रमें क्या लिखें, यह समझ न आये तो प्रेमाबहनसे पूछना। कुछ ही दिनोंमें सुन्दर पत्र लिखना सीख जायेगी। तुझे वह जगह पसन्द आ गई है, यह तो बहुत अच्छा हुआ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४२१)से; सौजन्य: रवीन्द्र रा० पटेल।

१५१. पत्र : शारदाबहन चि० शाहको

१८ फरवरी, १९३२

चि० शारदा,

तूने ठीक सवाल पूछा है। तू मानती है कि मारने-पीटनेमें हिंसा है ही, लेकिन बात ठीक ऐसी नहीं है। मान लो कि साँप के काटनेसे कोई मूर्च्छित हो गया हो तो उसे मूर्छासे जगानेके लिए मारना जरूरी हो जाता है। यह हिंसा नहीं है क्योंकि यह मारना प्रेमका है और रोगीके भलेके लिए है। अगर मेरे मनमें तेरे प्रति जहर भरा हुआ है मगर अवसर न मिलनेके कारण मैं तेरी पिटाई नहीं करता, तो मनका यह भाव हिंसा ही है। हिंसाका मूल हमारे मनमें है।

यदि तूने मछलीका तेल कभी न खाया हो तो भी उसकी मालिश तो करवाई ही जा सकती है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९४५)से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला।

१५२. पत्र : कपिलराय मेहताको

१९ फरवरी, १९३२

चि० कपिल,

अच्छा किया, तुमने पत्र लिखा। मैं तो सोच ही रहा था कि तुम कहाँ हो। मेरी तो यही सलाह है कि तुम जरा भी उतावली न करो, पूरी तरह आराम करके स्वास्थ्य सुधार लो। अभी अनाज खानेकी जल्दी न करना और दूध, दही और फलसे निबाहते रहना। साथमें थोडा कच्चा सलाद और टमाटर लेना। टमाटर बिना पकाये लो, मगर वे हरे न हों। बिना राँधे हुए तो लेने हैं, पर (डालपर) अच्छी तरह पके हुए होने चाहिए। मुझे पत्र लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

नानाभाईसे[1] कहना कि उन्हें तथा दक्षिणामूर्ति[2] के लोगोंको बहुत बार याद करता हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९७७) से। सी० डब्ल्यू० १५९८ से भी; सौजन्य : कपिलराय मेहता।

१. दक्षिणामूर्तिके आचार्य नृसिंहप्रसाद कालीदास भट्ट।

२. भावनगरमें स्थित शैक्षणिक संस्था।

१५३. पत्र : लक्ष्मीबहन ना० खरेको

१९ फरवरी, १९३२

चि० लक्ष्मीबहन,

मै बहनोको पत्र तो लिखता रहता हूँ; किन्तु अब यह काम[1] कौन सँभालता है? तुम क्यो नही लिखती? जो कक्षा शुरू की गई है, उसे बन्द नही किया जाना चाहिए। वहाँ जो बहने रह गई है, वे मिलकर निर्णय कर ले और फिर मुझे लिखे। यह बोझ तो तुम्हे उठाना ही चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७९-ए) से, सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

१५४. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१९ फरवरी, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र अच्छा है। निस्संकोच होकर लिखा, यह ठीक ही किया।

तूने जो आलोचना[2] की है, उसका यह उत्तर है: मुझे सम्बन्धित व्यक्तियोकी बात सुननी चाहिए। उसके बाद ही मै उन मामलोके बारेमे कुछ कह सकता हूँ। लेकिन सामान्य रूपसे कह सकता हूँ कि जिन-जिनको छूट दी गई है, उनको विशेष सुविधा देनेका खयाल नही था, बल्कि उसमे ध्यान उनकी आवश्यकताका रहा है। मुझपर ऐसी छाप पड़ी है कि जो लोग सुविधाएँ लेते है, वे आलस्यकी वजहसे नही, बल्कि इसलिए लेते है कि उनके शरीरको उन सुविधाओकी जरूरत है; या यों कहो कि उनके स्वभावके कारण वे जरूरी है। हम किसीके काजी नही बन सकते। हो सकता है कि उनके प्रयत्नोका हमे पता न हो। इसका यह अर्थ नही है कि उनमे अपूर्णता नही है। अपूर्णता न हो, तो वे आश्रममे आये ही क्यो? वे ढोगी नही है। मै जो-कुछ करता हूँ, सो दूसरोको भी करना ही चाहिए या सब उसे कर सकते है, यह मानना ही महादोष है। जो बोझा हरियोमल[3] उठाता है,

१. पत्रका सब बहनोंकी ओरसे उत्तर देनेका काम। देखिए "पत्र: आश्रमके बालक और बालिकाओं-को", २१-२-१९३२।

२. आश्रमवासियोंको आश्रमके किसी-न-किसी नियमसे छूट मिल जाती है, इसके बारेमें।

३. सिन्धसे आये हुए एक बलिष्ठ आश्रमवासी जो आश्रमके फार्मपर काम करते थे।

वह मै उठाने जाऊँ, तो मेरे प्राण-पखेरू उसी क्षण उड जाये। और हरियोमल अगर मेरी निर्बलतासे द्वेप करे, तो यह गलत ही कहा जायेगा।

बहुतोने यह आरोप लगाया है कि लोग मुझे धोखा देते है। कोई भी धोखा नही देता, ऐसा नही है; लेकिन अधिकतर लोग मुझे धोखा नही देते। मैने अनुभव किया है कि बहुत-से लोग मेरे सामने जैसा व्यवहार करते है, वैसा मेरे पीछे नही कर पाते। इस वजहसे कुछ लोग मुझे छोड भी देते है। ऐसा अक्सर होता है, इसीलिए मुझपर आकर्षण-शक्तिका आरोपण किया जाता है।

लेकिन इतना कह देनेसे तुझे या दूसरोको सन्तोष होनेकी सम्भावना कम ही है। यह मैने बचावके लिए लिखा भी नही है। अपनी मनोदशा बताई है। लेकिन सच बात यह है और मै इसे वर्षोसे मानता आया हूँ कि आश्रमकी त्रुटियाँ मेरी त्रुटियोका प्रतिबिम्ब है। मैने अनेक लोगोसे कहा है कि मुझसे मिलकर मुझे नही पहचाना जा सकता। मिलनेपर मै अच्छा भी दिखाई दे सकता हूँ। जो वस्तु मुझमें न हो, उसका भी लोग मुझपर आरोपण कर सकते है। कारण, मै सत्यका पुजारी हूँ, मेरी यह सत्य-पूजा दूसरोको क्षण-भर विमुग्ध भी कर सकती है। मुझे पहचाननेके लिए मेरी गैर-हाजिरीमें आश्रमको देखना चाहिए। उसमे दिखाई देनेवाले सारे दोप मेरे दोषोके प्रतिबिम्ब है, ऐसा मानना कोई भूलकी बात नही होगी, मेरे प्रति अन्याय नही होगा। जो समुदाय आश्रममे इकट्ठा हुआ है, उसे मै खीच लाया हूँ, ऐसा ही कहा जायेगा। और आश्रममे रहकर भी वे दोषोको दूर न कर सके हो, या कुल मिलाकर उनके दोषोमें वृद्धि हुई हो, तो उसमे उनका दोष नही, मेरा दोष है। उसमें मेरी साधनाकी कमी है। इन कमियोको मै जानता या देखता नही, ऐसा भी नही है। सिर्फ इतना ही कह सकता हूँ कि जो कमियाँ है, वे प्रयत्न करनेके बावजूद है। और क्योकि मै प्रयत्नशील हूँ, इसलिए कुल मिलाकर आश्रमका पतन नही हुआ, ऐसा मेरा विश्वास है। मुझे खुदको इससे आश्वासन मिलता है कि तीन जगह आश्रम बनाये और तीनो स्थानोपर उनके तात्कालिक हेतु सफल हुए दिखाई दिये है। लेकिन इस आश्वासनसे भी मै अपनेको या दूसरोको धोखा नही देता। मुझे तो बहुत दूर जाना है। मार्गमे घाटियाँ और पहाड खडे है। फिर भी यात्रा तो करनी ही है। और सत्यकी शोधमें असफलताके लिए अवकाश ही नही है, इस ज्ञानसे मै निश्चिन्त रहता हूँ।

विद्वत्समाजको आश्रम आकर्षित नही कर सका, यह बिलकुल सच है। क्योकि मै अपनेको विद्वान नही मानता। इसके सिवा जो मुट्ठी-भर विद्वान आश्रमके प्रति खिंचे है, वे विद्वत्ताका पोषण करनेके लिए नही, बल्कि दूसरा ही कुछ लेने और उसका पोषण करनेके लिए इकट्ठे हुए है। वे सत्य-शोधक है। और सत्यकी खोज तो अपढ कर सकता है, बच्चा कर सकता है, स्त्री कर सकती है, पुरुष कर सकता है। अक्षर-ज्ञान कभी-कभी हिरण्मय मात्रका काम करता है और सत्यका मुँह ढँक देता है। यह कहकर मै अक्षरज्ञानकी निन्दा नही करता, लेकिन उसे उसके उचित स्थानपर रखता हूँ। अनेक साधनोमे यह भी एक साधन है।

आश्रममे मुख्यतः संस्कृत-प्रार्थना पसन्द की गई है, क्योकि उसमे मुख्य रूपसे हिन्दू समुदाय ही आया है। दूसरी प्रार्थनाओसे द्रोह नही है। कभी-कभी हम दूसरी प्रार्थनाएँ करते भी है न? अगर हिन्दुओके बजाय मुसलमान अधिक आ जाये, तो कुरान शरीफ रोज पढा जायेगा और उसमे मै भी भाग लूँगा।

इतनेसे तुझे कुछ उत्तर मिलता है? सन्तोष होता है? उत्तर न मिले, सन्तोष न हो, तो बार-बार पूछना। मै नही थकूँगा। तुझे सन्तोष देना चाहता हूँ। तू थकना मत।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२७३) से। सी० डब्ल्यू० ६७२१ से भी; सौजन्य . प्रेमाबहन कटक।

१५५. पत्र : मथुरादास पुरुषोत्तमको

२० फरवरी, १९३२

चि० मथुरादास[1],

अच्छा हुआ, तुम आ गये। मैने कमुको तो यह बहुत साल पहले लिखा ही था। डॉक्टरोकी भी यही राय बनती जा रही है कि सभी बीमारियोकी एक ही जड होती है और इसलिए उनका मुख्य इलाज भी एक ही है। इस इलाजमे जो फेरफार होते रहने चाहिए, यदि कोई उन्हे न भी करे तो इससे ज्यादा क्या, कम नुकसान भी नही होता। ऐसा भले ही कहा जाये कि बीमारी गयी नही, पर बीमारी चली भी जाये तो उससे क्या होता है? शरीरको अमरताका वरदान तो नही मिल जाता। इसलिए यदि कोई श्रद्धापूर्वक एक ही इलाज करता रहे, तो वह कोई पाप नही करता।

यही हाल आध्यात्मिक रोगोका है। मूल एक ही है और वह है अभिमान। दवा भी सबकी एक ही है। अभिमान त्याग दे और शून्य बन जाये। शून्य किस तरह चोरी कर सकता है, किस तरह झूठ बोल सकता है या दुराचार कर सकता है? तुमने जिस प्रकारके प्रश्न पूछे है, उनमे तुम्हारा अज्ञान दिखाई देता है। एक ही उदाहरण ले। सामान्य प्रकारकी चोरी तुम नही करते, पर तुम अखाद्य खाते हो और तुम्हारा यह मानना ठीक है कि यह चोरी ही है। इस चोरी और सामान्य चोरीका उपाय तो एक ही है कि चोरी न करे अर्थात् निषिद्ध चीज न खाये। किन्तु निषिद्ध भोजन कौन करता है? अभिमानी जीव। जिसमे अहभाव नही रहा, उसके लिए शरीरमे रहनेवाला जीव खाते हुए भी नही खाता, क्योकि वह तो शरीरको केवल अपने रहनेका किराया-भर चुका देगा। फिर तो स्वादकी जड ही काट दी गई। यह

१. मथुरादास पु० आसर, आश्रमके कुशल धुनिया व खादी-कार्यकर्ता।

सब तुम्हारी बुद्धि शायद स्वीकार कर लेगी। किन्तु जब हृदयमें बैठ जायेगा, तभी इसका कुछ अर्थ होगा। इसे हृदयमें बैठानेके लिए ही हम आश्रममें रहकर सत्संग खोजते रहते हैं। रोज भजन आदि करते हैं। ऐसा करते-करते किसी दिन जो हम चाहते हैं, वह हमें मिल जायेगा और हमारा 'मैं' का रोग शान्त हो जायेगा। न समझ सको तो इस स्पष्टीकरणसे तुम अपनी सारी शंकाओंके उत्तर निकाल सकते हो। न निकाल सको तो मैं चाहे जितना लिखूँ, तो भी तुम किनारे नहीं लग पाओगे। जबतक तुम्हारी शंकाओंका निवारण न हो, तबतक बार-बार पूछते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७५३) से।

१५६. पत्र : हरिइच्छा पी० कामदारको

२० फरवरी, १९३२

चि० हरिइच्छा,

तेरा पत्र मिला। तूने अपने अक्षर खराब कर लिये हैं। ऐसा मत कर। विवाह हो गया है इसलिए पहले सीखी हुई बातें भूल मत, बल्कि आगे बढ़। अरविन्द[1] का शोक करना छोड़ दे। ऐसे वियोग तो शरीरके साथ जुड़े हैं और उन्हें सहन करना चाहिए।

तू जब चाहे पत्र लिख सकती है। और जबतक मुझे किसीसे भी मिलनेकी अनुमति है, तबतक तू मुझसे मिलनेके लिए अवश्य आ सकती है। आ जाना। यह अनुमति कबतक रहने देंगे, यह मैं नहीं जानता।

हम दोनोंका आशीर्वाद। दोनों मजेमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४६९) से। सी० डब्ल्यू० ४९१५ से भी; सौजन्य: हरिइच्छा पी० कामदार।

१. हरिइच्छाका बेटा जो चल बसा था।

१५७. पत्र : शिवाभाई गो० पटेलको

२० फरवरी, १९३२

चि० शिवाभाई,

तुम्हारा पत्र मिला।

हमारे साथ रहनेवाले असत्य बोले या असत्य आचरण करे और हम उसे प्रोत्साहन दें या उल्टे-सीधे ढगसे उसका लाभ उठाये तो हम भी उस असत्यके भागीदार बन जाते है, इसमे कोई सन्देह नही है। इसीलिए तुलसीदासने सत्संग खोजनेका उपदेश दिया है। किन्तु संसारमे हम सदा आदर्शतक नही पहुँच पाते है। साथियोको सहन करना ही पड़ता है। तब यही हो सकता है कि हम प्रत्येक स्थितिपर विचार करें और फिर यथाशक्ति कदम उठाये। जहाँ जान-बूझकर असत्य आचरण किया जा रहा हो, वहाँ हम उसमे भाग न ले। किन्तु कभी ऐसी स्थिति भी आ जाती है जिसमे से हठात् निकला भी न जा सकता हो। जहाँ स्थिति ही असत्यपूर्ण हो, वहाँ असहयोगका शस्त्र तो है ही। ऐसा तो है नही कि आश्रममे कोई असत्य आचरण करनेवाला ही नही है। फिर भी हम आश्रम बन्द नही करते और असत्य भी सहन नही करते। साथियोको सहन करते हैं और रोज आगे बढ़नेके लिए प्रयत्न करते है। संसारमे कोई भी व्यक्ति इससे ज्यादा नही कर सकता।

क्या तकलीसे कातनेका नया तरीका तुम्हे मालूम हो गया है? वह वर्धामे प्रचलित है, उसे अपनानेपर आधे घटेमे १६० तार कात सकते है। अपनी दैनन्दिनीमे तुम्हे दैनिक कार्यक्रमके अलावा और कुछ लिखनेकी क्या जरूरत है? उसे भी छोड़ना पड़े तो छोडा जा सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५०८) से। सी० डब्ल्यू० ४२४ से भी; सौजन्य : शिवाभाई गो० पटेल।

१५८. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

२० फरवरी, १९३२

भाई विट्ठलदास,

तुम्हारा पत्र मिला। अपने स्वास्थ्यको पूरी तरह सुधरनेका समय देना। तनिक भी जल्दी न करना। इस बार खादीकी बिक्री कम हुई है, इसका कारण दीपकके प्रकाशकी तरह स्पष्ट है। किन्तु उसकी चिन्ता छोड दो। "जगन्नियताको जो अच्छा लगता है, उसके लिए शोक करना बेकार है।"[1]

सरदार मजेमें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७७८) से। सी० डब्ल्यू० २८०८ से भी, सौजन्य: पुरुषोत्तम दा० सरैया।

१५९. पत्र : लक्ष्मी जेराजाणीको[2]

२० फरवरी, १९३२

चि० लक्ष्मी,

तेरे अक्षर तो सुन्दर हैं। स्याहीसे क्यो नही लिखती? विट्ठलदासकी जो सेवा कर रही है, वह तो तेरे भविष्यके लिए उत्तम तैयारी है।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत विट्ठलदास जेराजाणी
सासवड
जिला अलीबाग

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७७८) से। सी० डब्ल्यू० २८०९ से भी; सौजन्य: पुरुषोत्तम दा० सरैया।

१. गुजरातीमें "जे गमे जगत-गुरु देवने, ते तणो खरखरो फोक करवो"। देखिए आश्रम भजनावली, खण्ड, ४४ पृष्ठ ४६१।

२. यह पत्र विट्ठलदास जेराजाणीको लिखे गये पोस्टकार्डपर लिखा हुआ है। देखिए पिछला शीर्षक।

१६०. पत्र : रामेश्वरलाल बजाजको

[२१ फरवरी, १९३२ के पूर्व][1]

भाई रामेश्वरलाल,[2]

आपका पत्र मिला है। मेरी उमेद है कि मैंने मिस लेस्टरके मार्फत जो खत भेजा वह मिला होगा।

मेरा स्वास्थ्य बिलकुल अच्छा है। आजकल दूध नहिं लेता हु। बदाम पीसी हुई, खजुर, टमाटा प्रायः लेता हु। कोई वखत पपीटा लेता हु। जेलमे खानेकी कोई मर्यादा सरकारके तरफसे नहिं रखी गई है। मेरा वजन १०९ रतल है। ऐसा हि बाहर था। वहासे कोई चीज भेजनेकी आव[श्यकता] नहिं है। बादाम बहोत अच्छी मिलती है। म[धु] महाब[लेश्वरका] मिलता है। जब दिल चाहे तब लिखा करो।

मेरा समय कातनेमे और पढनेमे जाता है। आश्रमवासियोको खत लिखनेकी इजाजत है इसलिए खत लिखनेमें भी ठीक समय जाता है। दिनमे काफी सोता भी हु। दो घण्टा टहलता हुं। मेरे साथमे सरदार वल्लभभाई है।

रुक्मिणीके[3] खत मिलते होगे। वह और बालक अच्छे हैं। अब वापिस कब आओगे?

आपका प्रेम हमेशा याद आता है।

बापुके आशीर्वाद

हिन्दी (सी० डब्ल्यू० ९४४६) से, सौजन्य: बनारसीलाल बजाज।

१. पत्रमें गांधीजी की खुराकके बारेमें दिये गये विवरणसे स्पष्ट है कि यह पत्र २१ फरवरी, १९३२ से पूर्व लिखा गया था। गांधीजी ने इस तिथिसे ही पपीतेके स्थानपर सब्जियाँ खाना शुरू किया था; देखिए "दैनन्दिनी, १९३२"।

२. बनारसीलाल बजाजके पिता जो उस वक्त ब्रिटेनमें थे।

३. मगनलाल गांधीकी पुत्री, रुक्मिणी बनारसीलाल बजाज।

१६१. गीता-पत्रावली[1]

(२१ फरवरी, १९३२)

प्रस्तावना[2]

मगलप्रभात, ११ नवम्बर, १९३०

'गीता' महाभारतका एक छोटा-सा हिस्सा है। महाभारत ऐतिहासिक ग्रन्थ माना जाता है, लेकिन हम महाभारत और रामायण दोनोको ऐतिहासिक ग्रन्थ नही, धर्म-ग्रन्थ मानते है। अथवा उन्हे इतिहास कहे ही तो वे आत्माके इतिहास है। उनमे हजारो वर्ष पहले क्या हुआ था, इस बातका नही बल्कि प्रत्येक मनुष्यके अन्तरमे आज क्या हो रहा है, इसका वर्णन है। महाभारत और रामायण दोनोमे देव और असुर, राम और रावणमें रोज चल रही लडाईका वर्णन है। 'गीता'मे कृष्ण और अर्जुन का सवाद ऐसा ही एक वर्णन है। इसका वर्णन सजय धृतराष्ट्रके सामने करता है। 'गीता' शब्दका अर्थ है 'गाई हुई'। यहाँ उपनिषद् शब्द जोड लेना चाहिए। दोनो शब्दोका सम्मिलित शाब्दिक अर्थ हुआ 'गाई हुई उपनिषद्'। 'उपनिषद्' शब्दका अर्थ है 'ज्ञान' या 'बोध।' इसलिए 'गीता'का अर्थ हुआ श्रीकृष्ण-द्वारा अर्जुनको दिया हुआ बोध। हमें 'गीता' यह समझकर पढनी चाहिए कि हमारे हृदयमे अन्तर्यामी भगवान

१. ये पत्र गांधीजी ने यरवदा सेन्ट्रल जेलमें कैदके दौरान १९३० और १९३२ में लिखे थे। ये प्रति सप्ताह नारणदास गांधीको पत्रोंके साथ भेजे जाते थे ताकि ये आश्रमकी प्रार्थना-सभाओंमें पढ़े जायें। गांधीजी ने यह पत्रावली अध्याय १२ के साथ शुरू की थी; देखिए खण्ड, ४४ पृष्ठ २७४। अगले सप्ताह गांधीजी ने पहला अध्याय भेजा जिसमें गीतापर प्रस्तावनात्मक टिप्पणी भी थी।

सब अध्याय यहाँ २१ फरवरी, १९३२ तारीखके अन्तर्गत दिये गये हैं। यह तारीख नारणदास गांधीको पत्र भेजने की है जिसमें अठारहवें अध्यायपर प्रवचन था। पत्रावली यहीं समाप्त हो जाती है। देखिए अगला शीर्षक।

गांधीजी का गीताका गुजराती अनुवाद १२ मार्च, १९३० को प्रकाशित हुआ था। यह साबरमतीसे दाँडी-यात्राके लिए प्रस्थानका अविस्मरणीय दिन है। आश्रमके एक सदस्यने इसे पढनेपर देखा कि इसे समझ पाना बड़ा कठिन है। उन्होंने इस आशयकी शिकायत गांधीजी से की। गांधीजी उन दिनों यरवदा-जेलमें थे। इसपर गांधीजी ने यह पत्रावली लिखकर आश्रमको भेजी जिसमें गीताके प्रत्येक अध्यायपर उन्होंने एक पत्र लिखा।

१९२६ में प्रार्थना-सभाओंमें गीतापर गांधीजी ने जो प्रवचन दिये उनके लिए देखिए खण्ड ३२, पृष्ठ १००-३६९। १९२९ में लिखे गए गांधीजी के गीता के गुजराती अनुवादके लिए देखिए खण्ड ४१, पृष्ठ ९२-१६७।

२. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", ११-११-१९३० के साथ भेजा गया था; देखिए खण्ड ४४ पृष्ठ २९१-२।

श्रीकृष्ण सदा विराजमान हैं और हम जब भी धर्म-सकटमे अर्जुनकी भाँति जिज्ञासु बनकर इस अन्तर्यामी भगवानकी शरण लेते है, तो वह हमेशा हमे शरण देनेको तैयार रहता है। हम सो रहे हैं, अन्तर्यामी नित्य जाग रहा है। वह हमेशा इस बातकी राह देखता है कि हममे जिज्ञासा जाग्रत हो। पर हमे प्रश्न पूछना नही आता, प्रश्न करनेका मन भी नही होता। इसलिए हम प्रतिदिन 'गीता'-जैसी पुस्तकका मनन करते है। उसका मनन करते हुए हम अपनेमे धर्म-जिज्ञासा पैदा करना चाहते हैं, सवाल पूछना चाहते हैं। और जब-जब हम सकटमे होते हैं, तब-तब अपने संकट-निवारणके लिए 'गीता' के पास दौडे जाते है और उससे आश्वासन प्राप्त करते हैं। हमे 'गीता' इसी दृष्टिसे पढ़नी है। 'गीता' हमारे लिए सद्‌गुरु-रूप है, माता-रूप है और हमे यह विश्वास होना चाहिए कि उसकी गोदमे सिर रखनेसे हम हमेशा सुरक्षित रहेंगे। 'गीता' हमारी सारी धार्मिक उलझने सुलझायेगी। जो रोज इस तरह गीता'का मनन करेगा, उसे उसमे से रोज नया आनन्द मिलेगा, नये-नये अर्थ मिलेगे। ऐसी कोई धार्मिक उलझन नही है जिसे 'गीता' न सुलझा सके। अपनी अपर्याप्त श्रद्धाके कारण हम उसे ठीक तरहसे पढना और समझना न जाने, यह दूसरी बात है। हमारी श्रद्धा लगातार बढ़ती रहे और हम जाग्रत बने, इसीलिए हम प्रतिदिन 'गीता'का पारायण करते है। इस तरह 'गीता'का मनन करते हुए मुझे जो अर्थ मिले है और आज भी मिल रहे है, उनका सार आश्रमवासियोकी मददके लिए मै यहाँ देता हूँ।

पहला अध्याय

पाण्डव और कौरव अपनी-अपनी सेनाएँ लेकर कुरुक्षेत्रकी युद्धभूमिमे खड़े होते है, उस समय दुर्योधन द्रोणाचार्यके समक्ष दोनो पक्षोके मुख्य योद्धाओका वर्णन करता है। दोनों सेनाएँ लडाईके लिए तैयार होती है, दोनो पक्षोके योद्धा अपने शख बजाते हैं और श्रीकृष्ण भगवान, जो अर्जुनके सारथी है, अपना रथ दोनो सेनाओके मध्यमे ले जाते हैं। यह देखकर अर्जुन घबराता है और श्रीकृष्णसे कहता है: "इनके साथ मै कैसे लड सकता हूँ? कोई दूसरे होते तो मै अभी लड़ लेता। लेकिन ये तो स्वजन है, मेरे ही है। कौरवो और पाण्डवोमे आखिर क्या फर्क है? हम सब, चचेरे ही सही, पर भाई-भाई है। हम साथ ही पलकर बडे हुए हैं। द्रोण केवल कौरवोके नही, हमारे भी आचार्य हैं। हमे भी सारी विद्या उन्होने ही सिखाई है। भीष्म हमारे सारे परिवारके प्रमुख हैं। उनके साथ लड़ाई कैसी? यह सच है कि कौरव आततायी है, उन्होने अनेक दुष्ट-कर्म किये है, अन्याय किये है; पाण्डवोकी जमीन छीन ली है, द्रौपदी-जैसी महासतीका अपमान किया है। ये सब दोष उन्होने किये हैं, लेकिन उन्हे मारनेसे क्या लाभ? वे तो मूढ है। मै क्यो उन जैसा बनूँ? मुझे कुछ ज्ञान है, सारासारका विवेक है। इसलिए मुझे जानना चाहिए कि अपने सगे-सम्बन्धियोसे लड़नेमे पाप है। वे पाण्डवोका भाग पचा गये है तो इससे क्या हुआ? भले वे हमे मार डाले, लेकिन हम अपना हाथ उनके खिलाफ कैसे उठा सकते

हूँ? हे कृष्ण, मैं अपने इन स्वजनोंसे नहीं लडूँगा।"—ऐसा कहकर अर्जुन लड़खडा कर रथमें बैठ गया।

इस तरह यह पहला अध्याय पूरा होता है। इसका नाम अर्जुन-विषाद योग है। विषाद यानी दुःख। जैसा दुःख अर्जुनने अनुभव किया, वैसा हम सबको अनुभव होना चाहिए। आध्यात्मिक व्याकुलता और आध्यात्मिक जिज्ञासाके बिना ज्ञान नहीं मिल सकता। क्या अच्छा है और क्या बुरा है, यह जाननेकी इच्छा भी जिसे नहीं होती, उसके लिए धर्म-चर्चाका क्या मूल्य हो सकता है? कुरुक्षेत्रकी युद्धभूमिका उल्लेख तो प्रसंगवश हुआ समझना चाहिए। सच्चा कुरुक्षेत्र हमारा अपना शरीर है। वह कुरुक्षेत्र भी है और धर्मक्षेत्र भी है। यदि हम उसे ईश्वरका निवास-स्थान मानें और वैसा बनायें तो वह धर्मक्षेत्र है। इस युद्धभूमिमें हमारे सामने रोज एक-न-एक लडाई खडी ही रहती है और इनमें से अधिकांश लड़ाइयाँ 'यह मेरा और यह तेरा' के विचारोंसे ही पैदा होती हैं। स्वजन और परजनके भेदसे ही ऐसी लडाइयाँ उपजती हैं। इसीलिए आगे चलकर भगवान कृष्ण अर्जुनसे कहते हैं कि अधर्म मात्रका मूल राग-द्वेषमें है। किसी वस्तुको 'मेरी' मानते ही राग उत्पन्न होता है और उसे 'पराई—दूसरेकी' मानते ही द्वेष उत्पन्न होता है, वैरभाव उत्पन्न होता है। 'गीता' और दुनियाके दूसरे धर्मग्रन्थ हमें पुकार-पुकारकर कहते हैं कि मेरे और तेरेका भेद भूलना चाहिए, अथवा राग और द्वेष छोडना चाहिए। यह कहना एक बात है और करना दूसरी बात। 'गीता' हमें वैसा करनेके लिए कहती है। सो कैसे, आगे हम इसे समझनेका प्रयत्न करेंगे।

दूसरा अध्याय

सोमप्रभात, १७ नवम्बर, १९३०

अर्जुनको जब चेत हुआ तो भगवानने उसे उलाहना दिया और कहा कि यह मोह तुझे कहाँसे आ गया? तेरे-जैसे वीर पुरुषको यह शोभा नहीं देता। पर अर्जुनका मोह यों टलनेवाला नहीं था। वह लडनेसे इनकार करके बोला, "इन सगे-सम्बन्धियों और गुरुजनोंको मारकर, मुझे राजपाट तो दरकिनार, स्वर्गका सुख भी नहीं चाहिए। मैं कर्त्तव्यविमूढ हो गया हूँ। इस स्थितिमें धर्म क्या है, यह मुझे नहीं सूझता। मैं आपकी शरण हूँ, मुझे धर्म बतलाइए।"

इस भाँति अर्जुनको बहुत व्याकुल और जिज्ञासु देखकर भगवानको दया आई। वे उसे समझाने लगे : तू व्यर्थ दुखी होता है और बेसमझे-बूझे ज्ञानकी बातें करता है। जान पड़ता है कि तू देह और देहमें रहनेवाले आत्माका भेद ही भूल गया है। देह मरती है, आत्मा नहीं मरती। देह तो जन्मसे ही नाशवान है, देहमें जैसे जवानी और बुढापा आता है वैसे ही उसका नाश भी होता है। देहका नाश होनेपर देहीका नाश कभी नहीं होता। देहका जन्म है, आत्माका जन्म नहीं है। वह तो अजन्मा है। उसे घट-बढ नहीं है। वह तो सदैव थी, आज है और आगे भी रहनेवाली है।

फिर तू काहेका शोक करता है? तेरा शोक तेरे मोहका कारण है। इन कौरव आदिको तू अपना मानता है, इसलिए तुझे ममता हो गई है। पर तुझे समझना चाहिए कि जिस देहसे तुझे ममता है, वह तो नाशवान ही है। उसमे रहनेवाले जीवका विचार करनेपर तत्काल तेरी समझमे आ जायेगा कि उसका नाश तो कोई कर ही नही सकता। उसे न अग्नि जला सकती है, न वह पानीमे डूब सकता है, न वायु उसे सुखा सकती है। इसके सिवा, तू अपने धर्मको तो सोच! तू तो क्षत्रिय है। तेरे पीछे यह सेना इकट्ठी हुई है। अब अगर तू कायर बन जाये तो तू जो चाहता है, उससे उल्टा नतीजा होगा और तेरी हँसी होगी। आजतक तेरी गिनती बहादुरोमें हुई है। अब यदि तू अधबीचमे लडाई छोड़ देगा तो लोग कहेगे कि अर्जुन कायर होकर भाग गया। यदि भागनेमे धर्म होता तो लोक-निन्दाकी कोई परवाह न थी। पर यहाँ तो यदि तू भागे तो अधर्म होगा और लोक-निन्दा उचित समझी जायेगी, यह दोहरा दोष होगा।

यह तो मैंने तेरे सामने बुद्धिकी दलील रखी, आत्मा और देहका भेद बताया और तेरे कुल-धर्मका तुझे भान कराया। पर अब तुझे मै कर्मयोगकी बात समझाता हूँ। इस योगपर अमल करनेवालेको कभी नुकसान नही होता। इसमे तर्ककी बात नही है, आचरणकी है, करके अनुभव पानेकी बात है। और यह तो प्रसिद्ध अनुभव है कि हजारो मन तर्ककी अपेक्षा तोला-भर आचरणकी कीमत अधिक है। इस आचरणमे भी यदि अच्छे-बुरे परिणामका तर्क आ घुसे तो फिर वह दूषित हो जाता है। परिणामके विचारसे ही बुद्धि मलिन हो जाती है। वेदवादी लोग कर्मकाडमे पडकर अनेक प्रकारके फल पानेकी इच्छासे अनेक क्रियाएँ आरम्भ कर बैठते है। एकसे फल न मिलनेपर दूसरीके पीछे दौडते है। फिर कोई तीसरी बात बता देता है तो उसके पीछे हैरान होते है, और ऐसा करनेमे उनकी मति भ्रममे पड़ जाती है। वास्तवमे मनुष्यका धर्म फलका विचार छोड़कर कर्त्तव्य-कर्म करते रहना है। इस समय यह युद्ध तेरा कर्त्तव्य है, इसे पूरा करना तेरा धर्म है। लाभ-हानि, हार-जीत तेरे हाथमे नही है। तू गाडीके नीचे चलनेवाले कुत्तेकी भाँति इसका बोझ क्यो ढोता है? हार-जीत, सरदी-गरमी, सुख-दुःख देहके साथ लगे हुए है, उन्हे मनुष्यको सहना चाहिए। जो भी नतीजा हो, उसके विषयमे निश्चिन्त रहकर तथा समता रखकर मनुष्यको अपने कर्त्तव्यमे तन्मय रहना चाहिए। इसका नाम योग है और इसीमे कर्म-कुशलता है। कार्यकी सिद्धि कार्यके करनेमे छिपी है, उसके परिणाममे नही। तू स्वस्थ हो, फलका अभिमान छोड़ और कर्त्तव्यका पालन कर।

यह सुनकर अर्जुन पूछता है: यह तो मेरे बूतेके बाहर जान पडता है। हार-जीतका विचार छोड़ना, परिणामका विचार ही न करना, ऐसी समता, ऐसी स्थिरबुद्धि कैसे आ सकती है? मुझे समझाइए कि ऐसी स्थिर बुद्धिवाले कैसे होते है, उन्हे कैसे पहचाना जा सकता है?

तब भगवानने जवाब दिया:

हे अर्जुन! जिस मनुष्यने अपनी कामना-मात्रका त्याग किया है और जो अपने अन्तरमे से ही सन्तोष प्राप्त करता है, वह स्थिरचित्त, स्थितप्रज्ञ, स्थिरबुद्धि या समाधिस्थ

कहलाता है। ऐसा मनुष्य न दु खसे दुखी होता है, न सुखसे फूल उठता है। सुख-दु खादि पाँच इन्द्रियोके विषय है। इसलिए ऐसा बुद्धिमान मनुष्य कछुएकी भाँति अपनी इन्द्रियोको समेट लेता है, पर कछुआ तो जब किसी दुश्मनको देखता है तब अपने अगोको ढालके नीचे समेटता है, लेकिन मनुष्यकी इन्द्रियोपर तो विषय नित्य चढाई करनेको खडे ही है, अत. उसे तो हमेशा इन्द्रियोको समेटे रखना और स्वय ढालरूप होकर विषयोके मुकाबलेमे लडना है। यह असली युद्ध है। कोई तो विषयोसे बचनेके लिए देह-दमन करता है, उपवास करता है। यह ठीक है कि उपवास-कालमे इन्द्रियाँ विषयोकी ओर नही दौडती; अकेले उपवाससे रस नही सूख जाता। उपवास छोडनेपर वह और भी बढ जाता है। रसको दूर करनेके लिए तो ईश्वरका प्रसाद चाहिए। इन्द्रियाँ तो ऐसी बलवान है कि वे मनुष्यको उसके सावधान न रहनेपर जबरदस्ती घसीट ले जाती है। इसलिए मनुष्यको इन्द्रियोको हमेशा अपने वशमे रखना चाहिए। यह तब हो सकता है जब वह ईश्वरका ध्यान धरे, अन्तर्मुख हो, हृदयमे रहनेवाले अन्तर्यामीको पहचाने और उसकी भक्ति करे। इस प्रकार जो मनुष्य ईश्वरपरायण रहकर अपनी इन्द्रियोको वशमे रखता है, वह स्थिरबुद्धि योगी कहलाता है। इससे विपरीत करनेवालेके हाल भी मुझसे सुन। जिसकी इन्द्रियाँ स्वच्छन्द रूपसे बरतती है, वह नित्य विषयोका ध्यान करता है। तब उनमे उसका मन फँस जाता है। उनके सिवा उसे और कुछ सूझता ही नही। ऐसी आसक्तिमे से काम पैदा होता है। बादको उसकी पूर्ति न होनेपर उसे क्रोध आता है। क्रोधातुर तो बावला-सा हो ही जाता है, आपेमे नही रह जाता। अत स्मृतिभ्रशके कारण जो-सो बकता और करता है। ऐसे व्यक्तिका अन्तमे नाशके सिवा और क्या होगा? जिसकी इन्द्रियाँ यो भटकती फिरती है उसकी हालत पतवारहीन नावकी-सी हो जाती है। चाहे जो हवा नावको जिधर-तिधर घसीट ले जाती है और अन्तमे किसी चट्टानसे टकराकर नाव चूर-चूर हो जाती है। जिसकी इन्द्रियाँ भटका करती है, उसके ये हाल होते है। अत. मनुष्यको कामनाओको छोडना और इन्द्रियोपर काबू रखना चाहिए। इससे इन्द्रियाँ न करने योग्य कार्य नही करेगी, आँखे सीधी रहेगी, पवित्र वस्तुको ही देखेगी, कान भगवद्भजन सुनेगे, या दु खीकी आवाज सुनेगे। हाथ-पाँव सेवा-कार्यमे लगे रहेगे और ये सब इन्द्रियाँ मनुष्यके कर्तव्य-कर्ममे ही लगी रहेगी और उसमे से उन्हे ईश्वरकी प्रसादी मिलेगी। वह प्रसादी मिली कि सारे दु ख गये समझो। सूर्यके तेजसे जैसे बर्फ पिघल जाती है, वैसे ईश्वर-प्रसादीके तेजसे सारे दु ख भाग जाते है और ऐसे मनुष्यको स्थिरबुद्धि कहते है। पर जिसकी बुद्धि स्थिर नही है, उसमे अच्छी भावना कहाँसे आयेगी? जिसमें अच्छी भावना नही, उसमे शान्ति कहाँ? जहाँ शान्ति नही, वहाँ सुख कहाँ? स्थिरबुद्धि-मनुष्यको जहाँ दीपककी भाँति साफ दिखाई देता है वहाँ अस्थिर मनवाले दुनियाकी गडबडमे पडे रहते है और देख ही नही सकते। और ऐसी गडबडवालोको जो स्पष्ट लगता है, वह समाधिस्थ योगीको स्पष्ट रूपसे मलिन लगता है और वह उधर नजरतक नही डालता। ऐसे योगीकी तो ऐसी स्थिति होती है कि नदी-नालोका पानी जैसे समुद्रमे समा जाता है, वैसे विषयमात्र इस

समुद्ररूपी योगीमे समा जाते है। और ऐसा मनुष्य समुद्रकी भाँति हमेशा शान्त रहता है। इससे जो मनुष्य सब कामनाएँ तजकर, निरहकार होकर, ममता छोडकर, तटस्थ रूपसे बरतता है, वह शान्ति पाता है। यह ईश्वरप्राप्तिकी स्थिति है और ऐसी स्थिति मृत्युतक बनाये रखनेवाला मोक्ष पाता है।

तीसरा अध्याय[1]

सोमप्रभात, २४ नवम्बर, १९३०

स्थितप्रज्ञके लक्षण सुनकर अर्जुनको ऐसा लगा कि मनुष्यको शान्त होकर बैठे रहना चाहिए। उसके लक्षणोमे कर्मका तो नामतक उसने नही सुना। इसलिए भगवानसे पूछा—"आपके वचनोसे तो लगता है कि ज्ञान, कर्मसे बढकर है। इससे मेरी बुद्धि भ्रमित हो रही है। यदि ज्ञान अच्छा हो तो फिर मुझे घोर कर्ममे क्यो उतार रहे है? मुझे साफ कहिए कि मेरा भला किसमे है?"

तब भगवानने उत्तर दिया :

"हे पाप-रहित अर्जुन! आरम्भसे ही इस जगतमे दो मार्ग चलते आये है : एकमे ज्ञानकी प्रधानता है और दूसरेमे कर्मकी। पर तू स्वय देख ले कि कर्मके बिना मनुष्य अकर्मी नही हो सकता, बिना कर्मके ज्ञान आता ही नही। सब छोड़कर बैठ जानेवाला मनुष्य सिद्ध पुरुष नही कहला सकता।

तू देखता है कि प्रत्येक मनुष्य कुछ-न-कुछ तो करता ही है। उसका स्वभाव ही उससे कुछ करायेगा। जगतका यह नियम होनेपर भी जो मनुष्य हाथ-पाँव ढीले करके बैठा रहता है और मनमे तरह-तरहके मनसूबे बाँधता रहता है, वह मूर्ख कहा जायेगा और वह मिथ्याचारी भी गिना जायेगा। क्या इससे यह अच्छा नही है कि इन्द्रियोको वशमे रखकर, राग-द्वेष छोडकर, शोर-गुलके बिना, आसक्तिके बिना, अर्थात् अनासक्तभावसे मनुष्य हाथ-पाँवोसे कुछ कर्म करे, कर्मयोग का आचरण करे? तू नियत कर्म, अपने हिस्सेमे आया हुआ सेवा-कार्य इन्द्रियोको वशमे रखकर करता रह। आलसीकी भाँति बैठे रहनेसे यह कही अच्छा है। आलसी होकर बैठे रहनेवालेके शरीरका अन्तमे पतन हो जाता है; पर कर्म करते हुए इतना याद रखना चाहिए कि यज्ञ-कार्यके सिवा सारे कर्म लोगोको बन्धनमे रखते है।

यज्ञके मानी है, अपने लिए नही, बल्कि दूसरेके लिए, परोपकारके लिए किया हुआ श्रम अर्थात् सक्षेपमे 'सेवा'। और जहाँ सेवाके निमित्त ही सेवा की जायेगी वहाँ आसक्ति, राग-द्वेष नही होगा। ऐसी सेवा तू करता रह। ब्रह्माने जगत उपजानेके साथ-ही-साथ यज्ञ भी उपजाया; मानो हमारे कानमे यह मन्त्र फूंका कि पृथ्वीपर जाओ, एक-दूसरेकी सेवा करो और फूलो-फलो, जीवमात्रको देवतारूप जानो। इन देवोकी सेवा करके तुम उन्हे प्रसन्न रखो, वे तुम्हे प्रसन्न रखेंगे। प्रसन्न हुए देव तुम्हे

१. यह "पत्र· नारणदास गाधीको", २१/२५-११-१९३० के साथ भेजा गया था; देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ३१३-७।

बिना माँगे मनोवांछित फल देंगे। इसलिए यह समझना चाहिए कि लोक-सेवा किये बिना, उनका हिस्सा उन्हे पहले दिये बिना जो खाता है, वह चोर है और जो लोगोका, जीवमात्रका भाग उन्हे पहुँचानेके बाद खाता है या कुछ भोगता है, उसे वह भोगनेका अधिकार है अर्थात्, वह पापमुक्त हो जाता है। इससे उलटा, जो अपने लिए ही कमाता है — मजदूरी करता है — वह पापी है और पापका अन्न खाता है। सृष्टिका नियम ही यह है कि अन्नसे जीवोका निर्वाह होता है। अन्न वर्षासे पैदा होता है और वर्षा यज्ञसे अर्थात् जीवमात्रकी मेहनतसे उत्पन्न होती है। जहाँ जीव नही है वहाँ वर्षा नही पाई जाती, जहाँ जीव है वहाँ वर्षा अवश्य है। जीवमात्र श्रमजीवी है। कोई पडे-पडे खा नही सकता। और मूढ जीवोके लिए जब यह सत्य है तो मनुष्यके लिए यह कितने अधिक अशमें लागू होना चाहिए? इससे भगवानने कहा, कर्मको ब्रह्माने पैदा किया। ब्रह्माकी उत्पत्ति अक्षर-ब्रह्मसे हुई, इसलिए यह समझना चाहिए कि यज्ञमात्रमें — सेवामात्रमें — अक्षर-ब्रह्म, परमेश्वर विराजता है। ऐसी इस प्रणालीका जो मनुष्य अनुसरण नही करता, वह पापी है और व्यर्थ जीता है।

मगलप्रभात

यह कह सकते है कि जो मनुष्य आन्तरिक शान्ति भोगता है और सन्तुष्ट रहता है, उसका कोई कर्त्तव्य नही है, उसे कर्म करनेसे कोई फायदा नही, न करनेसे हानि नही है। किसीके सम्बन्धमे उसका कोई स्वार्थ न होनेपर भी यज्ञ-कार्यको वह छोड नही सकता। इससे तू तो कर्त्तव्य-कर्म नित्य करता रह, पर उसमें राग-द्वेष न रख, उसमें आसक्ति न रख। जो अनासक्तिपूर्वक कर्मका आचरण करता है वह ईश्वरका साक्षात्कार करता है। फिर जनक-जैसे नि स्पृही राजा भी कर्म करते-करते सिद्धिको प्राप्त हुए, क्योकि वे लोकहितके लिए कर्म करते थे। तो तू कैसे इसके विपरीत बरताव कर सकता है? नियम यही है कि जैसा अच्छे और बडे माने जानेवाले मनुष्य आचरण करते है, उसका अनुकरण साधारण लोग करते है। मुझे देख, मुझे काम करके क्या स्वार्थ साधना था? पर मै चौबीसो घटे बिना थके कर्म करता ही रहता हूँ और इससे लोग भी उसके अनुसार अल्पाधिक प्रमाणमें बरतते हैं। पर यदि मै आलस्य कर जाऊँ तो जगतका क्या होगा?

तू समझ सकता है कि सूर्य, चन्द्र, तारे, इत्यादि स्थिर हो जाये तो जगतका नाश हो जाये। और इन सबको गति देनेवाला, नियममे रखनेवाला तो मै ही ठहरा। किन्तु लोगोमे और मुझमें इतना फर्क जरूर है कि मुझे आसक्ति नही है, लोग आसक्त है, वे स्वार्थमें फँसकर भागते रहते है। यदि तुझ-जैसा बुद्धिमान कर्म छोडे तो लोग भी वही करेगें और बुद्धिभ्रष्ट हो जायेगें। तुझे तो आसक्तिरहित होकर कर्त्तव्य करना चाहिए, जिससे लोग कर्म-भ्रष्ट न हो और धीरे-धीरे अनासक्त होना सीखें। मनुष्य अपनेमे मौजूद स्वाभाविक गुणोके वश होकर काम तो करता ही रहेगा। जो मूर्ख होता है, वही मानता है कि 'मै करता हूँ।' साँस लेना—यह जीवनमात्रकी प्रकृति है, स्वभाव है। आँखपर किसी मक्खी-आदिके बैठते ही तुरन्त मनुष्य स्वभावत:

ही पलकें हिलाता है, उस समय वह नहीं कहता कि मैं साँस लेता हूँ, पलक हिलाता हूँ: इस तरह जितने कर्म किये जायें, सब स्वाभाविक गुणोंके अनुसार क्यों न किये जायें? उनके लिए अहंकार क्या? और यों ममत्वरहित सहज कर्म करनेका सुवर्ण मार्ग है सब कर्म मुझे अर्पण करना और ममत्व हटाकर मेरे निमित्त करना। ऐसा करते-करते जब मनुष्यमें से अहंकार-वृत्ति और स्वार्थका नाश हो जाता है तब उसके सारे कर्म स्वाभाविक और निर्दोष हो जाते हैं। वह बहुत-से जंजालोंसे छूट जाता है। उसके लिए फिर कर्म-बन्धन-जैसा कुछ नहीं है और जहाँ स्वभावके अनुसार कर्म हो, वहाँ बलात्कारसे न करनेका दावा करनेमें ही अहंकार समाया हुआ है। ऐसा बलात्कार करनेवाला बाहरसे चाहे कर्म न करता जान पड़े, पर भीतर-भीतर तो उसका मन प्रपंच रचता ही रहता है। बाहरी कर्मकी अपेक्षा यह बुरा है, अधिक बन्धनकारक है।

वस्तुतः इन्द्रियोंका अपने-अपने विषयोंमें राग-द्वेष विद्यमान है। कानोंको यह सुनना रुचता है, वह नहीं, नाकको गुलाबके फूलकी सुगन्ध भाती है, मल वगैरहकी दुर्गन्ध नहीं। सभी इन्द्रियोंके सम्बन्धमें यही बात है। इसलिए मनुष्यको इन राग-द्वेषरूपी दो ठगोंसे बचना चाहिए। और इन्हें मार भगाना हो तो कर्मोंकी शृंखलामें न पड़े। आज यह किया, कल दूसरा काम हाथमें लिया, परसों तीसरा, यों भटकता न फिरे। बल्कि अपने हिस्सेमें जो सेवा आ जाये, उसे ईश्वर-प्रीत्यर्थ करनेको तैयार रहे। तब यह भावना उत्पन्न होगी कि जो हम करते हैं, वह ईश्वर ही कराता है। यह ज्ञान उत्पन्न होगा और अहंभाव चला जायेगा। इसे स्वधर्म कहते हैं। स्वधर्मसे चिपटे रहना चाहिए, क्योंकि अपने लिए तो वही अच्छा है। देखनेमें परधर्म अच्छा दिखाई दे तो भी उसे भयानक समझना चाहिए। स्वधर्मपर चलते हुए मृत्यु होनेमें मोक्ष है।

राग-द्वेषरहित होकर किये जानेवाले कर्मको यज्ञरूप बतलानेपर अर्जुनने भगवानसे पूछा, "मनुष्य किसकी प्रेरणासे पाप-कर्म करता है? अक्सर तो ऐसा लगता है कि पाप-कर्मकी ओर कोई जबर्दस्ती ढकेल ले जाता है।"

भगवान बोले, "मनुष्यको पाप कर्मकी ओर ढकेल ले जानेवाला काम है और क्रोध है। दोनों सगे भाईकी भाँति हैं। कामकी पूर्तिके पहले ही क्रोध आ धमकता है। काम-क्रोधवाला रजोगुणी कहलाता है। मनुष्यके महान शत्रु यही है। इनसे नित्य लड़ना है। जैसे मैल चढ़नेसे दर्पण धुँधला हो जाता है, या अग्नि धुएँके कारण ठीक नहीं जल पाती और गर्भ झिल्लीमें पड़े रहनेतक घुटता रहता है, उसी प्रकार काम-क्रोध ज्ञानीके ज्ञानको प्रज्वलित नहीं होने देते, फीका कर देते हैं या दबा देते हैं। काम अग्निके समान विकराल है और इन्द्रिय, मन, बुद्धि, सबपर काबू करके मनुष्यको पछाड़ देता है। इसलिए तू इन्द्रियोंसे पहले निपट, फिर मनको जीत, तो बुद्धि तेरे अधीन रहेगी, क्योंकि इन्द्रियाँ, मन और बुद्धि यद्यपि क्रमशः एक-दूसरेसे बढ़-चढ़ कर हैं तथापि आत्मा उन सबसे बढ़-चढ़कर है। मनुष्यको आत्माकी अपनी शक्तिका पता नहीं है, इसीलिए वह मानता है कि इन्द्रियाँ वशमें नहीं रहती, मन

वशमें नही रहता या बुद्धि काम नही करती। आत्माकी शक्तिका विश्वास होते ही बाकी सब आसान हो जाता है। इन्द्रियोको, मन और बुद्धिको ठिकाने रखनेवालेका काम, क्रोध या उनकी असख्य सेना कुछ नही कर सकती।"[१]

चौथा अध्याय[२]

सोमप्रभात [१ दिसम्बर, १९३०]

भगवानने अर्जुनसे कहा कि मैंने जो निष्काम कर्मयोग तुझे बतलाया है, वह बहुत प्राचीन कालसे चला आता है, नया नही है। तू प्रिय भक्त है और इस समय धर्मसकटमें है इसलिए, उससे मुक्त करनेके लिए, मैंने तेरे सामने इसे रखा है। जब-जब धर्मकी निन्दा होती है और अधर्म फैलता है तब-तब मैं अवतार लेता हूँ और भक्तोकी रक्षा करता हूँ, पापियोका सहार करता हूँ। जो मेरी इस मायाको जाननेवाला है, वह विश्वास रखता है कि अधर्मका लोप अवश्य होगा, साधु पुरुषका रक्षक ईश्वर है। ऐसे मनुष्य धर्मका त्याग नही करते और अन्तमें मुझे पाते है, क्योकि वे मेरा ध्यान धरनेवाले, मेरा आश्रय लेनेवाले होनेके कारण काम-क्रोधादिसे मुक्त रहते है और तप तथा ज्ञानसे शुद्ध बने रहते है। मनुष्य जैसा करता है, वैसा फल पाता है। मेरे नियमोसे बाहर कोई रह नही सकता। गुण-कर्म-भेदसे मैंने चार वर्ण पैदा किये है। फिर भी मुझे उनका कर्त्ता मत समझ; क्योकि मुझे इस कर्ममे से किसी फलकी आकांक्षा नही है, न इसका पाप-पुण्य मुझे होता है। यह ईश्वरकी माया समझने योग्य है। जगतमे जितनी प्रवृत्तियाँ है, सब ईश्वरी नियमोके अधीन होती है, फिर भी ईश्वर उनसे अलिप्त रहता है, इसलिए वह उनका कर्त्ता है और अकर्त्ता भी। यो अलिप्त रहकर, अछूता रहकर, फलेच्छा-रहित होकर जैसे ईश्वर चलता है, वैसे मनुष्य भी निष्काम रहकर चले तो अवश्य मोक्ष पा जाये। ऐसा मनुष्य कर्ममे अकर्म देखता है और ऐसे मनुष्यको न करने योग्य कर्मका भी तुरन्त पता चल जाता है। कामनासे सम्बन्धित कर्म, जो कामनाके बिना हो ही नही सकते, वे सब न करने योग्य कर्म कहलाते है — उदाहरणके लिए चोरी, व्यभिचार, आदि कर्म कोई अलिप्त रहकर नही कर सकता। इसलिए जो कामना और सकल्प छोडकर कर्त्तव्य-कर्म करता है उसके बारेमे कहा जाता है कि उसने अपनी ज्ञानरूपी अग्नि-द्वारा अपने कर्मोको जला डाला है। यो कर्मफलका संग छोडनेवाला मनुष्य सदा सन्तुष्ट रहता है, सदा स्वतन्त्र होता है। उसका मन ठिकाने होता है, वह किसी सग्रहमे नही पड़ता और जैसे आरोग्यवान पुरुषकी शारीरिक क्रियाएँ अपने-आप चलती रहती है, उसी प्रकार ऐसे मनुष्यकी प्रवृत्तियाँ अपने-आप चला करती है।

१. इसके बाद गांधीजी-द्वारा लिखित एक टिप्पणी है जो, २४-११-१९३० के अन्तर्गत पहले ही प्रकाशित हो चुकी है; देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ३३३-४।

२. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", २७-११/३-१२-१९३० के साथ भेजा गया था; देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ३४७-९।

उनको चलानेका उसे अभिमान नही होता, भानतक नही होता। वह स्वय निमित्त-मात्र रहता है— सफलता मिली तो भी 'वाह-वाह', न मिली तो भी। सफलतासे वह फूल नही उठता, विफलतासे घबराता नही। उसके सब कर्म यज्ञरूप सेवाके लिए होते है। वह सारी क्रियाओमे ईश्वरको ही देखता है और अन्तमे उसीको पाता है।

यज्ञ तो अनेक प्रकारके कहे गये है। उन सबके मूलमे शुद्धि और सेवा होती है। इन्द्रियदमन एक प्रकारका यज्ञ है; किसीको दान देना दूसरे प्रकारका। प्राणायामादि भी शुद्धिके लिए आरम्भ किये जानेवाले यज्ञ है। इनका ज्ञान किसी ज्ञाता गुरुसे प्राप्त किया जा सकता है। वह विनय, लगन और सेवासे ही सम्भव है। यदि सब लोग बिना समझे-बूझे यज्ञके नामपर अनेक प्रवृत्तियाँ करने लग जाये तो अज्ञानके निमित्त होनेके कारण, भलेके बदले बुरा नतीजा भी हो सकता है। इसलिए हरेक काम ज्ञानपूर्वक होनेकी पूरी आवश्यकता है। यहाँ ज्ञानसे मतलब अक्षर-ज्ञान नही है। उस ज्ञानमे शकाकी कोई गुजाइश नही रहती। उसका आरम्भ श्रद्धासे होता है और अन्तमे उसका अनुभव आता है। ऐसे ज्ञानसे मनुष्य सब जीवोको अपनेमे देखता है और अपनेको ईश्वरमे देखता है, यहाँतक कि यह सब प्रत्यक्षकी भाँति उसे ईश्वरमय लगता है। ऐसा ज्ञान पापी-से-पापीको भी तार देता है। यह ज्ञान मनुष्यको कर्मबन्धनसे मुक्त करता है। अर्थात् कर्मका फल उसे स्पर्श नही करता। इसके समान पवित्र इस जगत्मे दूसरा कुछ नही है। इसलिए तू श्रद्धा रखकर, ईश्वरपरायण होकर, इन्द्रियोको वशमे रखकर ऐसा ज्ञान पानेका प्रयत्न कर, उससे तुझे परम शान्ति मिलेगी।[1]

पाँचवाँ अध्याय[2]

९ दिसम्बर, १९३०

अर्जुन कहता है, "आप ज्ञानको [कर्मसे] विशेष बतलाते है, तब मै समझता हूँ कि कर्म करनेकी आवश्यकता नही है; सन्यास ही अच्छा है। फिर आप कर्म की स्तुति करते है, और तब यह लगता है कि योग अच्छा है। इन दोनोंमे अधिक अच्छा क्या है, यह मुझे निश्चयपूर्वक बताइए। तभी मुझे कुछ शान्ति मिल सकती है।"

यह सुनकर भगवान बोले, "सन्यास अर्थात् ज्ञान और कर्मयोग अर्थात् निष्कामकर्म, ये दोनो अच्छे है। पर यदि चुनाव ही करना है तो मै कहता हूँ कि योग अर्थात् अनासक्तिपूर्वक किया गया कर्म अधिक अच्छा है। जो मनुष्य किसी वस्तु या

१. इसके बाद गांधीजी-द्वारा लिखित एक टिप्पणी है जो १-१२-१९३० के अन्तर्गत पहले ही प्रकाशित हो चुकी है, देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ३३९।

२. यह "पत्र: नारणदास गाधीको", ४/९-१२-१९३० के साथ भेजा गया था; देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ३६५-८।

मनुष्यसे न द्वेष करता है, न कोई इच्छा रखता है और सुख-दु.ख, सर्दी-गर्मी, इत्यादि द्वद्वोसे परे रहता है, वह संन्यासी ही है। फिर वह कर्म करता हो या न करता हो। ऐसा मनुष्य सहज बन्धनमुक्त हो जाता है। अज्ञानी ज्ञान और योगमे भेद करता है, ज्ञानी नही। दोनोका परिणाम एक ही होता है अर्थात्, दोनोसे वही स्थान मिलता है। इसलिए सच्चा जाननेवाला वही है जो दोनोको एक ही समझता है; क्योकि शुद्ध ज्ञानवालेकी कार्यसिद्धि सकल्प-भरसे हो जाती है, अर्थात् बाहरी कर्म करनेकी उसे जरूरत नही रहती। जब जनकपुरी जल रही थी तब दूसरोका धर्म था कि जाकर आग बुझायें। जनकके सकल्पसे ही उनका आग बुझानेका कर्त्तव्य पूरा हो रहा था, क्योकि उनके सेवक उनके अधीन थे। यदि वे घडा-भर पानी लेकर दौडते तो सब चौपट कर देते। दूसरे लोग उनकी ओर ताकते रहते और अपना कर्त्तव्य भूल जाते। और विशेष भलमनसी दिखाते तो हक्का-बक्का होकर जनककी रक्षा करने दौड पडते। पर सब एकदम जनक नही बन सकते। जनककी स्थिति पाना बडा दुर्लभ है। करोडोमे से किसीको अनेक जन्मोकी सेवासे वह प्राप्त हो सकती है। यह भी नही है कि यह कोई सुखकी सेज हो। उत्तरोत्तर निष्काम कर्म करते हुए मनुष्यका सकल्प-बल बढता जाता है और बाहरी कर्म कम होते जाते है। कहा जा सकता है कि वास्तवमें देखनेपर उसे इसका पता भी नही चलता। इसके लिए उसका प्रयत्न भी नही होता। वह तो सेवा-कार्यमे ही डूबा रहता है। उससे उसकी सेवा-शक्ति इतनी अधिक बढ जाती है कि उसे सेवासे कोई थकान आती नही जान पडती। इससे अन्तमें उसके सकल्पमे ही सेवा आ जाती है, वैसे ही, जैसे बहुत जोरसे गति करती हुई वस्तु स्थिर-सी लगती है। ऐसा मनुष्य कुछ करता नही है, यह कहना प्रत्यक्ष रूपसे अयुक्त है। पर ऐसी स्थिति साधारणत' कल्पनाकी ही वस्तु है, अनुभवमे नही आती। इसलिए मैंने कर्मयोगको विशेष कहा है। करोडो निष्काम कर्मसे ही सन्यासका फल प्राप्त करते है। वे सन्यासी होने जाये तो इधर या उधर कहींके न रहेगे। सन्यासी होने गये तो मिथ्याचारी हो जानेकी पूरी सम्भावना है, और कर्मसे तो गये ही, मतलब, सब खोया। पर जो मनुष्य अनासक्तिसहित कर्म करता हुआ शुद्धता प्राप्त करता है, जिसने अपने मनको जीता है, जिसने अपनी इन्द्रियोको वशमे रखा है, जिसने सब जीवोके साथ अपनी एकता साधी है और सबको अपने समान ही मानता है, वह कर्म करते हुए भी उससे अलग रहता है अर्थात् बन्धनमे नही पडता। ऐसे मनुष्यके बोलने-चालने आदिकी क्रियाएँ करते हुए भी ऐसा लगता है कि इन क्रियाओको इन्द्रियाँ अपने धर्मानुसार कर रही है। स्वय वह कुछ नही करता। शरीरसे आरोग्यवान मनुष्यकी क्रियाएँ स्वाभाविक होती है। उसके जठर आदि अपने-आप काम करते है, उनकी ओर उसे खयाल नही दौडाना पडता। वैसे ही जिसकी आत्मा आरोग्यवान है, उसके लिए कहा जा सकता है कि वह शरीरमे रहते हुए भी स्वय अलिप्त है, कुछ नही करता। इसलिए मनुष्यको चाहिए कि सब कर्म ब्रह्मार्पण करे, ब्रह्मके ही निमित्त करे। तब वह करते हुए भी पाप-पुण्यका पुज नही रचेगा। पानीमे कमल की भाँति कोरा-का-कोरा ही रहेगा।

मंगलप्रभात

इसलिए जिसने अनासक्तिका अभ्यास कर लिया है, वह योगी कायासे, मनसे, बुद्धिसे कार्य करते हुए भी, सगरहित होकर, अहकार तजकर बरतता है, जिससे शुद्ध हो जाता है और शान्ति पाता है। दूसरा अयोगी जो परिणाममे फँसा हुआ है, कैदीकी भाँति अपनी कामनाओमें बंधा रहता है। इस नौ दरवाजेवाले देहरूपी नगरमें सब कर्मोका मनसे त्याग करके स्वय कुछ न करता-कराता हुआ योगी सुखपूर्वक रहता है। संस्कारवान संशुद्ध आत्मा न पाप करता है, न पुण्य। जिसने कर्ममे आसक्ति नही रखी, अहंभाव नष्ट कर दिया, फलका त्याग किया, वह जडकी भाँति बरतता है, निमित्तमात्र बना रहता है। भला उसे पाप-पुण्य कैसे छू सकते है? इसके विपरीत, जो अज्ञानमे फँसा है वह हिसाब लगाता है, इतना पुण्य किया, इतना पाप किया और इससे वह नित्य नीचेको गिरता जाता है और अन्तमे उसके पल्ले पाप ही रह जाता है। ज्ञानसे अपने अज्ञानका नित्य नाश करते जानेवालेके कर्ममे नित्य निर्मलता बढती जाती है, संसारकी दृष्टिमे उसके कर्मोमे पूर्णता और पुण्यता होती है। उसके सब कर्म स्वाभाविक जान पड़ते है। वह समदर्शी होता है। उसकी नजरोमे विद्या और विनयवाला ब्रह्मज्ञाता ब्राह्मण, गाय, हाथी, कुत्ता, विवेकहीन—पशुसे भी गया बीता—मनुष्य सब समान हैं। मतलब यह है कि सबकी वह समानभावसे सेवा करेगा—यह नही कि किसीको बडा मानकर उसका मान करेगा और दूसरेको तुच्छ समझकर उसका तिरस्कार करेगा। अनासक्त मनुष्य अपनेको सबका देनदार मानेगा, सबको उनका लेना चुकायेगा और पूरा न्याय करेगा। उसने जीते-जी जगतको जीत लिया है, वह ब्रह्ममय है। अपना प्रिय करनेवालेपर वह रीझता नही, गाली देनेवालेपर खीझता नही। आसक्तिवान सुखको बाहर ढूंढता है, अनासक्त निरन्तर भीतरसे शान्ति पाता है, क्योकि उसने बाहरसे जीवको समेट लिया है। इन्द्रियजन्य सारे भोग दुःखके कारण है। मनुष्यको काम-क्रोध आदिके वेग सहन करने चाहिए। अनासक्त योगी सब प्राणियोके हितमे ही लगा रहता है। वह शकाओसे पीडित नही होता। ऐसा योगी बाहरी जगतसे अलग रहता है, प्राणायामादिके प्रयोगोसे अन्तर्मुखताका यत्न करता रहता है और इच्छा, भय, क्रोध, आदिसे पृथक् रहता है। वह मुझे ही सबका महेश्वर, मित्र, यज्ञादिका भोक्ता जानता है और शान्ति प्राप्त करता है।

छठा अध्याय[1]

मंगलप्रभात, १६ दिसम्बर, १९३०

श्री भगवानने कहा: कर्मफल त्यागकर कर्त्तव्य-कर्म करनेवाला मनुष्य सन्यासी कहलाता है और योगी भी कहलाता है। जो क्रियामात्रका त्याग कर बैठता है,

१. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", १३/१६-१२-१९३० के साथ भेजा गया था; देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ३४७-९।

वह आलसी है। असली बात तो है मनके घोडे दौडाना छोडनेकी। योग अर्थात् समत्वको जो साधना चाहता है, उसकी कर्म किये बिना गुजर ही नही है। देखा गया है कि समत्व प्राप्त व्यक्ति शान्त हो जाता है। तात्पर्य, उसके विचारको ही कर्मका बल प्राप्त हो चुकता है। जब मनुष्य इन्द्रियोके विषयोमें या कर्ममे आसक्त न हो और मनकी सारी तरगोको छोड़ दे, तब कहना चाहिए कि उसने योग साध लिया है, वह योगारूढ हो चुका है।

आत्माका उद्धार आत्मासे ही होता है। तब कह सकते है कि आत्मा स्वय ही अपना शत्रु बनता है और मित्र बनता है। जिसने मनको जीत लिया है उसकी आत्मा [उसके लिए] मित्र है, जिसने नही जीता है उसकी आत्मा [उसके लिए] शत्रु है। जीतनेवालेकी पहचान यह है कि उसके लिए सरदी-गरमी, सुख-दु ख, मान-अपमान, सब एक समान होते हैं। योगी उसका नाम है जिसे ज्ञान है, अनुभव है, जो अविचल है, जिसने इन्द्रियोपर विजय पाई है और जिसके लिए सोना, मिट्टी या पत्थर समान है। वह शत्रु-मित्र, साधु-असाधु, इत्यादिके प्रति समभाव रखता है। ऐसी स्थितिको पहुँचनेके लिए मनको स्थिर करना, वासनाएँ त्यागना और एकान्तमें बैठ कर परमात्माका ध्यान करना चाहिए। केवल आसन आदि ही बस नही है। समत्व-प्राप्तिके इच्छुकोको ब्रह्मचर्यादि महाव्रतोका भली प्रकार पालन करना चाहिए। जो इस प्रकार आसनबद्ध हो चुका है, यम-नियमोका पालन करनेवाले ऐसे मनुष्यको अपना मन परमात्मामे स्थिर करनेसे परम शान्ति प्राप्त होती है।

यह समत्व ठूंस-ठूंसकर खानेवाला तो पा नही सकता, यह एकदम उपवास करते रहनेवालेको भी नही मिलता, यह बहुत सोनेवालेको भी नही मिलता और इसी प्रकार बहुत जागनेसे भी हाथ नही आता। समत्व प्राप्तिके इच्छुकको तो सबमें — खानेमे, पीनेमे, सोने-जागनेमें भी मर्यादाकी रक्षा करनी चाहिए। एक दिन खूब खाया और दूसरे दिन उपवास किया, एक दिन खूब सोये और दूसरे दिन जागरण कर बैठे, एक दिन खूब काम किया और दूसरा दिन आलस्यमे बिता दिया, यह योगकी निशानी नही है। योगी तो सदैव स्थिरचित्त होता है और वह कामना-मात्रका अनायास त्याग किये रहता है। ऐसे योगीकी स्थिति निर्वात स्थानमें दीपककी भाँति स्थिर रहती है। उसे जगके खेल अथवा अपने मनमे उठनेवाले विचारोकी लहरे डाँवाडोल नही कर सकती। धीरे-धीरे किन्तु दृढतापूर्वक प्रयत्न करनेसे यह योग सध सकता है। मन चचल है, इससे इधर-उधर दौड़ता है, उसे धीरे-धीरे स्थिर करना चाहिए। उसके स्थिर होनेसे ही शान्ति मिलती है। इस तरह मनकी स्थिरताके लिए निरन्तर आत्मचिन्तन आवश्यक है। ऐसा मनुष्य सब जीवोको अपनेमे और अपनेको सबमे देखता है, क्योंकि वह मुझे सबमे और सबको मुझमे देखता है। जो मुझमें लीन है, मुझे सर्वत्र देखता है, वह स्वय नही रह गया है, इसलिए सब-कुछ करता हुआ भी मुझमे पिरोया हुआ रहता है। उसके हाथसे कभी कुछ अकरणीय नही हो सकता।

अर्जुनको यह योग कठिन लगा। वह बोला, "यह आत्मस्थिरता कैसे प्राप्त हो? मन तो बन्दरके समान है। मनको रोकना हवाको रोकनेके समान है। ऐसा मन कब और कैसे वशमें आता है?"

भगवानने उत्तर दिया, "तेरा कहना सच है; पर राग-द्वेषको जीतने और प्रयत्न करनेसे कठिनको आसान किया जा सकता है। निस्सन्देह मनको जीते विना योग नही साधा जा सकता।"

तब फिर अर्जुन पूछता है, "मान लीजिए कि मनुष्यमे श्रद्धा है, पर उसका प्रयत्न मन्द होनेसे वह सफल नही होता। ऐसे मनुष्यकी क्या गति होती है? वह बिखरे बादलकी तरह नष्ट तो नही हो जाता?"

भगवान बोले, "ऐसे श्रद्धालुका नाश तो होता ही नही। कल्याणमार्गीकी अवनति नही होती। ऐसा मनुष्य मरनेपर कर्मानुसार पुण्यलोकमे बसनेके बाद पृथ्वी पर लौट आता है और पवित्र घरमे जन्म लेता है। ऐसा जन्म लोकोमे दुर्लभ है। ऐसे घरमे जन्म लेनेपर पहलेके उसके शुभ सस्कारोका उदय होता है। अब प्रयत्नमे तेजी आती है और अन्तमे उसे सिद्धि मिलती है। यो प्रयत्न करते-करते कोई जल्दी और कोई अनेक जन्मोके बाद अपनी श्रद्धा और प्रयत्नके बलके अनुसार समत्वको पाता है। तप, ज्ञान, कर्मकाण्ड-सम्बन्धी कर्म — इन सबसे समत्व विशेष है, क्योकि तपादिका अन्तिम परिणाम भी समता ही होना चाहिए। इसलिए तू समत्व लाभ कर और योगी हो। जो अपना सर्वस्व मुझे अर्पण कर श्रद्धापूर्वक मेरी ही आराधना करते है, उन्हे श्रेष्ठ समझ।"[1]

सातवाँ अध्याय[2]

मगलप्रभात, [२३ दिसम्बर, १९३०]

भगवान बोले, हे पार्थ! अब मै तुम्हे बतलाऊँगा कि मुझमे चित्त लगाकर और मेरा आश्रय लेकर कर्मयोगका आचरण करता हुआ मनुष्य निश्चयपूर्वक मुझे सम्पूर्ण रीतिसे कैसे पहचान सकता है। इस अनुभवयुक्त ज्ञानके बाद फिर और-कुछ जाननेको बाकी नही रहेगा। हजारोमें कोई विरला ही इसकी प्राप्तिका प्रयत्न करता है और प्रयत्न करनेवालोमे कोई ही सफल होता है।

पृथ्वी, जल, आकाश, तेज और वायु तथा मन, बुद्धि और अहकारयुक्त आठ प्रकारकी मेरी प्रकृति है। इसे 'अपरा' प्रकृति और दूसरीको 'परा' प्रकृति कहते है, जो जीवरूप है। इन दो प्रकृतियोसे अर्थात् देह और जीवके सम्बन्धसे सारा जगत् है। इसलिए समस्त सृष्टि और नाशका कारण मै ही हूँ। जैसे मालाके आधारपर उसके मनके रहते है, वैसे जगत मेरे आधारपर विद्यमान है। तात्पर्य: जलमे रस मै हूँ, सूर्य-चन्द्रका तेज मै हूँ, वेदोका ओकार मै हूँ, आकाशका शब्द मै हूँ, पुरुषोका पराक्रम मै हूँ, मिट्टीमे सुगन्ध मै हूँ, अग्निका तेज मै हूँ, प्राणीमात्रका जीवन मै हूँ, तपस्वीका तप मै हूँ, बुद्धिमानकी बुद्धि मै हूँ, बलवानका शुद्ध बल मै हूँ, जीवमात्रमे विद्यमान धर्मकी अविरोधी कामना मै हूँ, सक्षेपमे सत्व, रजस् और

१. इसके बाद गाधीजी-द्वारा लिखित एक टिप्पणी है जो १६-१२-१९३० के अन्तर्गत पहले ही प्रकाशित हो चुकी है; देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ २।

२. यह "पत्र: नारणदास गाधीको", १८/२३-१२-१९३० के साथ भेजा गया था; देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ २०-५।

तमस्से उत्पन्न होनेवाले सब भावोको मुझसे उत्पन्न हुआ जान; उनकी स्थिति मेरे आधारपर ही है। मेरी त्रिगुणी मायाके कारण इन तीन भावो या गुणोमे रचे-पचे लोग मुझ अविनाशीको पहचान नही सकते। उसे तर जाना कठिन है। पर मेरी शरण लेनेवाले इस मायाको अर्थात् तीन गुणोको लाँघ सकते है।

पर ऐसे मूढ लोग मेरी शरण कैसे ले सकते है जिनके आचार-विचारका कोई ठिकाना नही है? वे तो मायामे पडे अधकारमे ही चक्कर काटा करते है और ज्ञानसे वंचित रहते है, पर श्रेष्ठ आचारवाले मुझे भजते है। इनमे कोई अपना दुख दूर करनेको मुझे भजता है, कोई मुझे पहचाननेकी इच्छासे भजता है और कोई कर्त्तव्य समझकर ज्ञानपूर्वक मुझे भजता है। मुझे भजनेका अर्थ है, मेरे जगत्की सेवा करना। उसमे कोई दुखके मारे, कोई कुछ लाभ-प्राप्तिकी इच्छासे, कोई इस खयालसे कि चलो देखा जाये, क्या होता है और कोई समझ-बूझकर इसलिए कि उसके बिना उनसे रहा ही नही जाता, सेवापरायण रहते है। ये अन्तिम मेरे ज्ञानी भक्त है, और मै कहूँगा कि मुझे ये सबसे अधिक प्यारे है, या यह समझो कि ये मुझे अधिकसे-अधिक पहचानते है और मेरे निकट-से-निकट है। अनेक जन्मोके बाद ही मनुष्य ऐसा ज्ञान पाता है और उसे पानेपर इस जगत्में मुझ वासुदेवके सिवा और कुछ नही देखता। पर कामनावाले मनुष्य भिन्न-भिन्न देवताओको भजते है और जिसकी जैसी भक्ति, उसका वैसा फल देनेवाला मै ही हूँ। उन ओछी समझवालोको मिलनेवाला फल भी वैसा ही ओछा होता है और उतनेसे ही उनको सन्तोष भी रहता है। वे अपनी कमअक्लीसे मानते है कि मुझे वे इन्द्रियो-द्वारा पहचान सकते है। वे नही समझते कि मेरा अविनाशी और अनुपम स्वरुप इन्द्रियोसे परे है तथा हाथ, कान, नाक, आँख, इत्यादि द्वारा पहचाना नही जा सकता। इसे मेरी योगमाया समझ कि इस प्रकार सारी चीजोका विधाता होनेपर भी अज्ञानी लोग मुझे पहचान नही सकते। राग-द्वेषके द्वारा सुख-दुख आते ही रहते है और उसके कारण जगत् मोहग्रस्त रहता है, पर जो उससे छूट गये है और जिनके आचार-विचार निर्मल हो गये है, वे तो अपने व्रतमे निश्चल रहकर निरन्तर मुझे ही भजते है। वे मेरे पूर्ण ब्रह्मरूपको, सब प्राणियोमे भिन्न-भिन्न प्रतीत होनेवाले जीवरूपको और मेरे कर्मको जानते है। यो जो मुझे अधिभूत, अधिदेव और अधियज्ञ रूपसे पहचानते है और इससे जिन्होने समत्व प्राप्त किया है, वे मृत्युके अनन्तर जन्म-मरणके बन्धनसे मुक्त हो जाते है, क्योकि इतना जान लेनेपर उनका मन अन्यत्र नही भटकता और सारे जगत्को ईश्वरमय देखते हुए वे ईश्वरमे ही समा जाते है।

आठवाँ अध्याय[१]

सोमप्रभात २९, दिसम्बर, १९३०

अर्जुन पूछता है, "आपने पूर्णब्रह्म, अध्यात्म, कर्म, अधिभूत, अधिदेव, अधियज्ञका नाम लिया, पर इन सबका अर्थ मैने समझा नही। फिर आप कहते है कि आपको

१. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", २७/३०-१२-१९३० के साथ भेजा गया था, देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ ३७-९।

अधिभूत रूपसे जानकर समत्वको प्राप्त हुए लोग मृत्युके समय पहचानते हैं; यह सब मुझे समझाइए।"

भगवानने उत्तर दिया, "जो सर्वोत्तम नाशरहित स्वरूप है, वह पूर्णब्रह्म है और जो प्राणीमात्रमे कर्त्ता-भोक्तारूपसे देह धारण किये हुए है, वह अध्यात्म है। प्राणीमात्रकी उत्पत्ति जिस क्रियासे होती है, उसका नाम कर्म है। अतः यह भी कह सकते है कि जिस क्रियासे उत्पत्तिमात्र होती है, वह कर्म है। मेरा नाशवान देहस्वरूप अधिभूत है और यज्ञ द्वारा शुद्ध हुआ अध्यात्मस्वरूप अधियज्ञ है। यो देहरूपमें, मूर्छित जीवरूपमे, शुद्ध जीवरूपमे और पूर्ण ब्रह्मरूपमे सर्वत्र मै ही हूँ और ऐसा जो मै हूँ, उसका मृत्युके समय जो ध्यान करता है, अपनेको बिसार देता है, किसी प्रकारकी चिन्ता नही करता, इच्छा नही करता, वह निस्सन्देह मेरे स्वरूपको प्राप्त करता है। मनुष्य जिस स्वरूपका नित्य ध्यान करता है, अन्त कालमें भी उसीका ध्यान रहे तो उस स्वरूपको वह पाता है। और इसीलिए तू नित्य मेरा ही स्मरण कर। मुझमे ही मन-बुद्धि लगाये रख। तब मुझे ही पावेगा। तू इस प्रकार चित्त स्थिर न होनेकी बात कहेगा, परन्तु मेरा कहना है कि नित्यके अभ्याससे, नित्यके प्रयत्नसे इस प्रकार मनुष्य एकाग्रचित्त अवश्य हो जाता है; क्योकि मै तुझसे कह चुका हूँ कि मूलकी दृष्टिसे विचारनेपर तो देहधारी भी मेरा ही स्वरूप है। इसलिए मनुष्यको पहलेसे ही तैयारी करनी चाहिए कि मृत्युके समय मन चलायमान न हो, भक्तिमे लीन रहे, प्राणको स्थिर रखे और सर्वज्ञ, पुरातन, नियन्ता, सूक्ष्म होते हुए भी सबके पालनकी शक्ति रखनेवाले, चिन्तन द्वारा तत्काल न पहचाने जा सकनेवाले, सूर्यके समान अन्धकार-अज्ञान मिटानेवाले परमात्माका ही स्मरण करे।

इस परम पदको वेद अक्षर-ब्रह्म नामसे पहचानते है, राग-द्वेषादिसे परे, त्यागी मुनि ही इसे पाते है और इस पदकी प्राप्तिके सब इच्छुक ब्रह्मचर्यका पालन करते है। तात्पर्य: काया, वाणी और मनको अकुशमे रखते है, विषयमात्रका तीनो प्रकारसे त्याग करते है। इन्द्रियोको समेटकर ॐ का उच्चारण करते हुए तथा मेरा ही चिन्तन करते हुए देह छोडनेवाले स्त्री-पुरुष परम-पद पाते है। ऐसोका चित्त कही अन्यत्र नही भटकता और यो मुझे पाकर दुःखोका घर—यह जन्म फिर नही लेना पडता। इस जन्म-मरणके चक्करसे छूटनेका उपाय मेरी प्राप्ति ही है।

अपने सौ वर्षके जीवन-कालसे मनुष्य कालका अनुमान लगाता है और उतने समयमे हजारो जाल फैलाता है; पर काल तो अनन्त है। हजारो युगोको ब्रह्माके एक दिनके बराबर समझ। इसमे मनुष्यके एक दिनकी या सौ वर्षकी क्या बिसात है? इस तनिकसे समयको लेकर इतनी व्यर्थकी दौड़-धूप क्यो? जिस अनन्त कालके चक्रमे मनुष्यका जीवन क्षणमात्रके समान है, उसमे तो ईश्वरका ध्यान ही शोभा देता है, क्षणिक भोगोके पीछे दौडना नही। ब्रह्माके रात-दिनमे उत्पत्ति और नाश चलता ही रहता है और चलता रहेगा।

उत्पत्ति-नाश करनेवाला ब्रह्मा भी मेरा ही भाव है। वह अव्यक्त है, इन्द्रियोसे नही जाना जा सकता। उससे भी परे मेरा अन्य अव्यक्त स्वरूप है जिसका कुछ

वर्णन मैंने तुझसे किया है। उसे पानेवाला जन्म-मरणसे छूट जाता है; क्योंकि उस स्वरूपके लिए रात-दिनवाला द्वन्द्व नही है, वह केवल शान्त अचल स्वरूप है। उसके दर्शन अनन्य भक्तिसे ही प्राप्त होते हैं। उसीके आधारपर सारा जगत है और वह स्वरूप सर्वत्र व्याप्त है।

कहते हैं कि उत्तरायणके शुक्लपक्षके दिनोमे मरनेवाला उपर्युक्त प्रकारसे स्मरण करता हुआ मुझे पाता है और दक्षिणायनमे, कृष्णपक्षकी रात्रिमे मृत्यु पानेवालेके पुनर्जन्मके चक्कर बाकी रह जाते हैं। इसका अर्थ यो किया जा सकता है कि उत्तरायण और शुक्लपक्ष, यह निष्काम सेवा मार्ग है और दक्षिणायन और कृष्णपक्ष स्वार्थमार्ग है। सेवामार्ग अर्थात् ज्ञानमार्ग, स्वार्थमार्ग अर्थात् अज्ञानमार्ग। ज्ञानमार्गसे चलनेवालेको मोक्ष है और अज्ञानमार्गसे चलनेवालेको बन्धन। इन दोनो मार्गोको जान लेनेपर कौन मोहमे रहकर अज्ञानमार्गको पसन्द करेगा? इतना जाननेपर मनुष्यमात्रको सब पुण्य-फल छोडकर, अनासक्त रहकर, कर्त्तव्यपरायण रहकर, मैंने जो कहा है, वही उत्तम स्थान पानेका प्रयत्न करना चाहिए।

नवाँ अध्याय[१]

सोमप्रभात [५ जनवरी, १९३१]

गत अध्यायके अन्तिम श्लोकमे योगीका उच्च स्थान बतला देनेपर भगवानके लिए अब भक्तिकी महिमा बतलाना ही बाकी रह जाता है, क्योकि 'गीता'का योगी शुष्क ज्ञानी नही है, न विह्वल भक्त ही है। 'गीता'का योगी ज्ञान और भक्तिमय अनासक्त कर्म करनेवाला है। अत: भगवान कहते हैं — तुझमे द्वेष नही है, इससे तुझे मै वह गुह्य ज्ञान बताता हूँ जिसे पाकर तेरा कल्याण होगा। यह ज्ञान सर्वोपरि है, पवित्र है और अनायास आचारमे लाया जा सकता है। जिसे इसमे श्रद्धा नही है, वह मुझे नही पा सकता। मेरे स्वरूपको मनुष्यप्राणी इन्द्रियो-द्वारा नही पहचान सकते, तथापि वह इस जगतमें व्याप्त है। जगत उसके आधार पर स्थित है। वह जगतके आधारपर स्थित नही है। फिर यो भी कहा जाता है कि वे प्राणी मुझमें नही हैं और मै उनमे नही हूँ, यद्यपि मै उनकी उत्पत्तिका कारण हूँ और उनका पोषणकर्त्ता हूँ। वे मुझमे नही हैं और मै उनमे नही हूँ, क्योकि वे अज्ञानमे रहनेके कारण मुझे जानते नही, उनमे भक्ति नही हैं। तू समझ कि यह मेरा चमत्कार है।

यद्यपि मैं प्राणियोमे नही हूँ ऐसा जान पडता है, तथापि वायुकी भाँति मैं सर्वत्र फैला हुआ हूँ।—सारे जीव युगका अन्त होनेपर लय हो जाते हैं और आरम्भ होनेपर फिर जन्मते हैं। इन कर्मोका कर्त्ता होनेपर भी ये मेरे लिए बन्धनकारक नही हैं, क्योकि उनमे मुझे आसक्ति नही है, उनके बारेमे मैं उदासीन हूँ। वे कर्म होते रहते है, क्योकि यह मेरी प्रकृति है, मेरा स्वभाव है। पर लोग मुझे इस रूपमे न

१. यह "पत्र: नारणदास गाधीको", १/६-१-१९३१ के साथ भेजा गया था, देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ ६३-६।

पहचाननेके कारण नास्तिक बने रहते हैं। वे मेरे अस्तित्वसे ही इनकार करते हैं। ऐसे लोग भ्रमके हवाई महल बनाते रहते हैं। उनके कर्म भी व्यर्थ होते है और वे अज्ञानसे भरपूर होनेके कारण आसुरी वृत्तिवाले होते हैं। दैवी वृत्तिवाले मुझे अविनाशी और सरजनहार जानकर भजते हैं। वे दृढ़निश्चयी होते हैं, नित्य प्रयत्नशील रहते हैं, मेरा भजन-कीर्तन करते और मेरा ध्यान धरते हैं। इसके सिवा कितने ही मुझे एक ही माननेवाले हैं। कितने ही मुझे बहुरूप मानते हैं। मेरे अनन्त गुण होनेके कारण बहुरूप माननेवाले भिन्न गुणोको भिन्न रूपसे देखते हैं। पर इन सबको तू भक्त जान।

यज्ञका संकल्प मैं, यज्ञ मैं, पितरोका आधार मैं, यज्ञकी वनस्पति मैं, मन्त्र मैं, आहुति मैं, हविष्य मैं, अग्नि मैं और जगतका पिता मैं, माता मैं, जगतको धारण करनेवाला मैं, पितामह मैं, जानने योग्य भी मैं, ओंकार-मन्त्र मैं, ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद मैं, गति मैं, पोषण मैं, प्रभु मैं, साक्षी मैं, आश्रय मैं, कल्याण चाहनेवाला भी मैं, उत्पत्ति और नाश मैं, सर्दी-गर्मी मैं, सत् और असत् भी मैं हूँ।

वेदमे वर्णित क्रियाएँ फल-प्राप्तिके लिए होती है। अत. उन्हे करनेवाले चाहे स्वर्ग क्यो न पाये, पर वे जन्म-मरणके चक्करसे नही छूटते। जो अनन्य भावसे मेरा चिन्तन करते रहते है और मुझे ही भजते है, उनका सारा भार मैं उठाता हूँ। उनकी आवश्यकताएँ मैं पूरी करता हूँ और उनकी मैं ही सँभाल करता हूँ।

अन्य कुछ, दूसरे देवताओमे श्रद्धा रखकर उन्हे भजते है, इसमे अज्ञान है तथापि अन्तमे तो वे मुझे ही भजनेवाले माने जायेंगे; क्योकि यज्ञमात्रका मैं ही स्वामी हूँ। वे मेरी इस व्यापकताको न जानकर अन्तिम स्थितिको पहुँच नही सकते। देवताओको पूजनेवाले देवलोक, पितरोको पूजनेवाले पितृलोक, भूत-प्रेतोको पूजनेवाले भूत-प्रेतोके लोकको और ज्ञानपूर्वक मुझे भजनेवाले मुझको प्राप्त होते है, जो मुझे एक पत्ता भी भक्तिपूर्वक अर्पण करते है, उन प्रयत्नशील मनुष्योकी भक्तिको मैं स्वीकार करता हूँ। इसलिए जो-कुछ तू करे, वह सब मुझे अर्पण करके ही करना। तब शुभ-अशुभ फलका उत्तरदायित्व तेरा नही रहेगा। जब तूने फलमात्रका त्याग कर दिया तब तेरे लिए जन्म-मरणके चक्कर नही रह गये। मेरे लिए सब प्राणी समान है। एक प्रिय और दूसरा अप्रिय हो, यह नही है। पर जो मुझे भक्तिपूर्वक भजते है, वे तो मुझमे है और मैं उनमे हूँ। इसमे पक्षपात नही है; बल्कि यह उन्होने अपनी भक्तिका फल पाया है। इस भक्तिका चमत्कार ऐसा है कि जो अन्यय भावसे मुझे भजते है, वे दुराचारी हो तो भी साधु बन जाते हैं। सूर्यके सामने जैसे अंधेरा नही ठहरता, वैसे मेरे पास आते ही मनुष्यके दुराचारोका नाश हो जाता है। इसलिए तू निश्चय समझ ले कि मेरी भक्ति करनेवाले कभी नाशको प्राप्त नही होते। वे तो धर्मात्मा होते है और शान्ति भोगते है। इस भक्तिकी महिमा ऐसी है कि जो पापयोनिमे जन्मे माने जाते है, वे तक मुझे पाते हैं, फिर पुण्यकर्म करनेवाले ब्राह्मण-क्षत्रियोका तो कहना ही क्या? जो भक्ति करता है, उसे उसका फल मिलता है। इसलिए तू जब असार ससारमे आ गया है तो मुझे भजकर उसे तर जा। अपना मन मुझमे पिरो दे, मेरा ही भक्त रह, अपने यज्ञ भी मेरे लिए कर, अपने नमस्कार भी मुझे ही पहुँचा।

इस भाँति यदि तू मत्परायण होगा और अपनी आत्माको मुझमें होमकर शून्यवत् हो जायेगा तो तू मुझे ही पायेगा।

मंगलप्रभात [६ जनवरी १९३१]

टिप्पणी: इसमें से हम पाते हैं कि भक्तिका तात्पर्य है, ईश्वरमें आसक्ति। अनासक्तिके अभ्यासका भी यह सरल-से-सरल उपाय है। इसीलिए अध्यायके आरम्भमें प्रतिज्ञा की है कि भक्ति राजयोग है और सरल मार्ग है। हृदयमें जो बैठ जाये वह सरल है, जो न बैठे वह विकट है। इसीसे इसे 'सिरका सौदा' भी माना गया है; पर यह ऐसा है कि दूरसे देखनेवाले तापका अनुभव करते हैं। इसमें डूबे हुए महासुख मानते हैं। कवि लिखता है कि सुधन्वा[1] उबलते तेलकी कड़ाहीमें हँसता था और जो लोग बाहर खड़े थे, वे काँपते थे। कथा है कि नन्द[2] अन्त्यजकी जब अग्नि-परीक्षा हुई तब वह अग्निमें नाचता था। इन सबकी सचाईकी ऐतिहासिकताकी खोजकी जरूरत नहीं है। जो किसी भी चीजमें लीन हो जाता है उसकी ऐसी ही स्थिति बन जाती है। वह अपनेपनको भूल जाता है; पर प्रभुको छोड़कर दूसरेमें लीन कौन होगा? 'शक्कर गन्नेके स्वादको छोड़कर कड़वे नीमको मत घोल रे' 'सूरज चाँदके प्रकाशको तजकर, जुगनूसे मन मत जोड़ रे।'

अत: नवाँ अध्याय बतलाता है कि प्रभुमें आसक्ति अर्थात्, भक्तिके बिना फलमें अनासक्ति असम्भव है। अन्तिम श्लोक सारे अध्यायका निचोड़ है और हमारी भाषामें उसका अर्थ है—"तू मुझमें समा जा"।

दसवाँ अध्याय[3]

सोमप्रभात, १२ जनवरी, १९३१

भगवान कहते हैं: दोबारा भक्तोंके हितके लिए जो कहता हूँ, सो सुन। देव और महर्षिगणतक मेरी उत्पत्ति नहीं जानते हैं, क्योंकि मैं उत्पन्न ही नहीं होता। मैं उनकी और अन्य सबकी उत्पत्तिका कारण हूँ। जो ज्ञानी मुझे अजन्मा और अनादि रूपमें पहचानते हैं, वे सब पापोंसे मुक्त हो जाते हैं; क्योंकि परमेश्वरको इस रूपमें जानने और अपनेको उसकी प्रजा अथवा उसके अंशकी भाँति पहचाननेपर मनुष्यमें पापवृत्ति नहीं रह सकती। निज सम्बन्धी अज्ञान पापवृत्तिका मूल है ही।

१. यह कहानी महाभारतमें आती है। उसको उसके नास्तिक पिताकी अपनी आज्ञा न माननेपर खौलते तेलकी कड़ाहीमें डाल दिया था, किन्तु वह उसमें से हँसता हुआ निकल आया था।

२. ये तमिलनाडुके एक उच्चकोटिके हरिजन भक्त थे। मन्दिरमें प्रवेश करनेपर इनके शरीरसे स्वयं अग्निकी ज्वालाएँ उठीं और ये अन्तर्ध्यान हो गये।

३. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", १२-१-१९३१ के साथ भेजा गया था; देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ ८५-६।

जैसे प्राणी मुझसे पैदा हुए हैं, वैसे उनके भिन्न-भिन्न भाव, जैसे क्षमा, सत्य, सुख-दु ख, जन्म-मृत्यु, भय-अभय, आदि भी मुझसे उत्पन्न हुए हैं। ये सब मेरी विभूतियाँ हैं। जो यह जान लेते हैं उनमे सहज ही समता उत्पन्न हो जाती है, क्योंकि वे अहताको छोड देते हैं। उनका चित्त मुझमे ही रमा रहता है, वे मुझे अपना सब-कुछ अर्पण करते हैं, परस्पर मेरे विषयमे ही वार्तालाप करते हैं, मेरा ही कीर्तन करते हैं और सन्तोष तथा आनन्दसे रहते हैं। इस प्रकार जो मुझे प्रेमपूर्वक भजते हैं और मुझमे ही जिनका मन रहता है, उन्हे मैं ज्ञान देता हूँ और उसके द्वारा वे मुझे पाते हैं।

तब अर्जुनने स्तुति की: आप ही परब्रह्म हैं, परमधाम हैं, पवित्र हैं, ऋषि आदि आपको आदिदेव, अजन्मा, ईश्वररूपसे भजते हैं, ऐसा आप ही कहते हैं। हे स्वामी, हे पिता, आपका स्वरूप कोई नही जानता, आप ही अपनेको जानते हैं। अब मुझसे अपनी विभूतियाँ कहिये और साथ ही यह बताइये कि आपका चिन्तन करते हुए मैं आपको कैसे पहचान सकता हूँ।

भगवानने जवाब दिया: मेरी विभूतियाँ अनन्त हैं, उनमे से कुछ खास-खास तुझे बता देता हूँ। सब प्राणियोके हृदयमे रहनेवाला आत्मा मैं हूँ। मैं ही उनकी उत्पत्ति, उनका मध्य और उनका अन्त हूँ। आदित्य मैं, विष्णु मैं, प्रकाशित वस्तुओमे प्रकाश देनेवाला सूर्य मैं, वायुओमे मरीचि मैं, नक्षत्रोमे चन्द्र मैं, वेदोमें सामवेद मैं, इन्द्रियोमें मन मैं, प्राणियोमे चेतन-शक्ति मैं, रुद्रोमे शकर मैं, यक्ष-राक्षसोमे कुबेर मैं, दैत्योमें प्रह्लाद मैं, पशुओमे सिंह मैं, पक्षियोमे गरुड मैं और छल करनेवालोमे द्यूत (जुआ) भी मुझे ही जान। इस जगतमे जो-कुछ होता है, वह मेरी मर्जीके बिना हो ही नही सकता। अच्छा और बुरा भी मैं ही होने देता हूँ, तभी होता है। यह जानकर मनुष्यको अभिमान छोडना चाहिए और बुराईसे बचना चाहिए, क्योकि भले-बुरेका फल देनेवाला भी मैं हूँ। तू इतना जान कि यह सारा जगत मेरी विभूतिके एक अश-मात्रसे स्थित है।

ग्यारहवाँ अध्याय[1]

सोमप्रभात और अपराह्न, १९ जनवरी, १९३१

अर्जुनने विनय की, "भगवन्! आपने मुझे आत्माके विषयमे जो वचन कहे, उनसे मेरा मोह दूर हो गया है। आप ही सब हैं, आप ही कर्त्ता हैं, आप ही संहर्ता हैं, आप अविनाशी हैं। यदि सम्भव हो तो अपने ईश्वरीय रूपका दर्शन मुझे कराइये।"

भगवान बोले, "मेरे रूप हजारो हैं और अनेक रगवाले हैं। मुझमें आदित्य, वसु, रुद्र, इत्यादि समाये हुए हैं। मुझमे सारा जगत — चर और अचर — समाया

१. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", १४/१९-१-१९३१ के साथ भेजा गया था; देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ १०२-५।

हुआ है। यह रूप तू अपने चर्म-चक्षुओसे नही देख सकता। अत. मैं तुझे दिव्य चक्षु देता हूँ, उनके द्वारा तू देख।"

सजयने धृतराष्ट्रसे कहा, हे राजन्! भगवानने अर्जुनको यह कहकर अपना जो अद्भुत रूप दिखाया, उसका वर्णन नही किया जा सकता। हम लोग नित्य एक सूर्य देखते है, पर खयाल कीजिए कि ऐसे हजारो सूर्य नित्य उगे तो उनका तेज जैसा होगा, उससे भी अधिक वह तेज चकाचौध पैदा करनेवाला था। उसके आभूषण और वस्त्र भी ऐसे ही दिव्य थे। उसके दर्शन करके अर्जुनके रोएँ खडे हो गये, उसका सिर चकराने लगा और काँपते-काँपते वह स्तुति करने लगा:

हे देव! आपकी इस विशाल देहमे मै तो सब-कुछ और सब किसीको देख रहा हूँ। ब्रह्मा इसमे है, महादेव इसमे है, इसमे ऋषि है, सर्प है, आपके हाथ-मुँहका गिनना कठिन है। आपका आदि नही है, अन्त नही है, मध्य नही है। आपका रूप मानो तेजका सुमेरु है। देखते ही आँखे चौंधिया जाती है, सुलगते हुए अगारोकी भाँति आप जगमगा रहे है और तप रहे है। आप ही जगतके आधार है, आप ही पुराण पुरुष है, आप ही धर्मके रक्षक है। जहाँ देखता हूँ वहाँ आपके अवयव दिखाई दे रहे है। सूर्य-चन्द्र तो आपकी आँखो-सरीखे जान पडते है। आप ही इस पृथ्वी और आकाशमें व्याप्त हो रहे है। आपका तेज सारे जगतको तपा रहा है। यह जगत थरथरा रहा है। देव, ऋषि, सिद्ध, इत्यादि सब हाथ जोडकर काँपते हुए आपकी स्तुति कर रहे है। यह विराट रूप और यह तेज देखकर मै तो व्याकुल हो गया हूँ, शान्ति और धैर्य छूटा जा रहा है। हे देव! प्रसन्न होइये। आपकी दाढ़े विकराल है, जैसे दीपकपर पतगे गिरते है, वैसे इन लोगोको आपके मुँहमे गिरते देख रहा हूँ और आप इनको चूर-चूर कर रहे है। उग्ररूप यह आप कौन है?' आपकी प्रवृत्तिको मै समझ नही पा रहा हूँ।

भगवान बोले. लोगोका नाश करनेवाला मै काल हूँ। तू चाहे लड या न लड़, इन सबका नाश समझ, तू तो निमित्तमात्र है।

अर्जुन बोला. हे देव! हे जगन्निवास! आप अक्षर है, सत् है, असत् है और उससे जो परे है, वह भी आप ही है। आप आदि देव है, आप पुराण पुरुष है, आप इस जगतके आश्रय है। आप ही जानने योग्य है। वायु, यम, अग्नि, प्रजापति आप ही है। आपको हजारो नमस्कार पहुँचे। अब अपना मूल रूप धारण कीजिए।

इसपर भगवानने कहा: तेरे ऊपर प्रसन्न होकर मैंने तुझे अपना विराट रूप दिखाया है। वेदाभ्याससे, यज्ञसे, अन्य शास्त्रोके अभ्याससे, दानसे, तपसे भी यह रूप नही देखा जा सकता, जो तूने आज देखा है। इसे देखकर तू परेशान मत हो। भय त्यागकर शान्त हो और मेरा परिचित रूप देख। मेरे यह दर्शन देवोको भी दुर्लभ है। यह दर्शन केवल शुद्ध भक्तिसे ही हो सकते है। जो अपने सब कर्म मुझे समर्पण करता है, मत्परायण रहता है, मेरा भक्त बनता है, आसक्तिमात्रको छोडता है और प्राणीमात्रके विषयमे प्रेममय रहता है, वही मुझे पाता है।

टिप्पणी : दसवेकी भाँति इस अध्यायको भी मैंने जान-बूझकर सक्षिप्त किया है। यह अध्याय काव्यमय है। इसलिए या तो मूलमे अथवा अनुवाद-रूपमे जैसा है, वैसा ही बारम्बार पढने योग्य है। इसमे भक्तिका रस उत्पन्न होनेकी सम्भावना है। वह रस पैदा हुआ है या नही, यह जाननेकी कसौटी अन्तिम श्लोक है। सर्वार्पणके विना और सर्वव्यापक प्रेमके विना भक्ति नही है। ईश्वरके कालरूपका मनन करनेसे, उसके मुखमे सृष्टिमात्रको समा जाना है, प्रति क्षण कालका यह काम चलता ही रहता है — इस सत्यका भान हो जानेसे सर्वार्पण और जीवमात्रके साथ ऐक्य अनायास हो जाता है। चाहे या न चाहे, पर इस मुखमे हम अकल्पित क्षणमे पडनेवाले ही है। वहाँ छोटे-बड़ेका, नीच-ऊँचका, स्त्री-पुरुषका, मनुष्य-मनुष्येतरका भेद नही रहता है। सब कालेश्वरके एक कौर है, यह जानकर हम क्यो दीन, शून्यवत् न बने, क्यो सबके साथ मैत्री न करें? ऐसा करनेवालेको वह काल-स्वरूप भयकर नही, बल्कि शान्ति-स्थल लगेगा।

बारहवाँ अध्याय[१]

मंगलप्रभात, ४ नवम्बर, १९३०

अर्जुनने भगवानसे पूछा : साकार और निराकारको पूजनेवाले भक्तोमे अधिक श्रेष्ठ कौन है?

भगवानने उत्तर दिया : जो मेरे साकार रूपका श्रद्धापूर्वक मनन करते है, उसमे लीन होते है, वे श्रद्धालु मेरे भक्त है। पर जो निराकार तत्त्वको भजते है और उसे भजनेके लिए समस्त इन्द्रियोका सयम करते है, सब जीवोके प्रति समभाव रखते है, उनकी सेवा करते है, किसीको ऊँच-नीच नही गिनते, वे भी मुझे पाते है। इसलिए यह नही कह सकते कि दोनोमे अमुक श्रेष्ठ है; पर निराकारकी भक्ति शरीरधारी-द्वारा सम्पूर्ण रूपसे होना अशक्य माना जाता है, निराकार निर्गुण है, अत: मनुष्यकी कल्पनासे परे है। अत सब देहधारी जाने-अनजाने साकारके ही भक्त है। इसलिए तू तो मेरे साकार विश्वरूपमे ही अपना मन लगा। सब उसे सौप दे। यह न कर सकता हो तो चित्तके विकारोको रोकनेका अभ्यास कर, यानी यम-नियम आदिका पालन करके प्राणायाम, आसन, आदिकी मदद लेकर मनको वशमे कर। ऐसा भी न कर सकता हो, तो जो-कुछ करता है सो मेरे ही लिए करता है, इस धारणासे अपने सब काम करेगा, तो तेरा मोह, तेरी ममता क्षीण होती जायेगी और त्यो-त्यो तू निर्मल — शुद्ध होता जायेगा और तुझमे भक्तिरस आ जायेगा। यह भी न हो सकता हो तो कर्म मात्रके फलका त्याग कर दे, यानी फलकी इच्छा छोड दे। तेरे हिस्से जो काम आ पडे, उसे करता रह। फलका मालिक मनुष्य हो ही नही सकता। बहुतेरी बातोके एकत्र होनेपर फल निकलता है, अत: तू तो केवल

१. यह सबसे पहले लिखा गया था और "पत्र : नारणदास गाधीको", ३०-१०/४-११-१९३० के साथ भेजा गया था; देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ २६२-४।

निमित्तमात्र हो जा। जो चार रीतियाँ मैंने बताई हैं, उनमें किसीको कम-ज्यादा मत मानना। इनमें जो तुझे अनुकूल हो, उससे तू भक्तिका रस ले ले। ऐसा लगता है कि ऊपर जो यम-नियम, प्राणायाम, आसन, आदिका मार्ग बता आये हैं, उसकी अपेक्षा श्रवण-मनन आदिका ज्ञान-मार्ग सरल है। उसकी अपेक्षा उपासनारूप ध्यान सरल है और ध्यानकी अपेक्षा कर्मफल-त्याग सरल है। सबके लिए एक ही वस्तु समान भावसे सरल नही होती और किसी-किसीको सभी मार्ग लेने पडते हैं। वे एक-दूसरेके साथ मिले-जुले तो हैं ही। चाहे जिस मार्गसे हो, तुझे तो भक्त होना है। जिस मार्गसे भक्ति सधे, उसी मार्गसे उसे साध।

मैं तुझे भक्तके लक्षण बताता हूँ: भक्त किसीसे द्वेष न करे, किसीके प्रति वैर-भाव न रखे, जीवमात्रसे मैत्री रखे, जीवमात्रके प्रति करुणाका अभ्यास करे, ऐसा करनेके लिए ममता छोडे, अपनेको मिटाकर शून्यवत् हो जाये, दु ख-सुखको समान माने। कोई द्वेष करे, तो उसे क्षमा करे, (यह जानकर कि स्वय अपने दोषोके लिए वह ससारसे क्षमाका भूखा है) सन्तोषी रहे, अपने शुभ निश्चयोसे कभी विचलित न हो। मन-बुद्धिसहित सर्वस्व मेरे अर्पण करे। लोगोको उससे उद्वेग नही होना चाहिए, न उससे लोग डरे, वह स्वयं लोगोसे न दु ख माने, न डरे। मेरा भक्त हर्ष, शोक, भय, आदिसे मुक्त होता है। उसे किसी प्रकारकी इच्छा नही होती, वह पवित्र होता है, कुशल होता है, वह बड़े-बडे आरम्भको[1] त्यागे हुए होता है। निश्चयमे दृढ होते हुए भी शुभ और अशुभ परिणाम, दोनोका वह त्याग करता है, अर्थात् उसके बारेमें निश्चिन्त रहता है। उसके लिए शत्रु कौन और मित्र कौन? उसे मान क्या, अपमान क्या? वह तो मौन धारण करके जो मिल जाये, उससे सन्तोष रखकर एकाकीकी भाँति विचरता हुआ सब स्थितियोमे स्थिर होकर रहता है। इस भाँति श्रद्धालु होकर चलनेवाला मेरा प्रिय भक्त है।[2]

तेरहवाँ अध्याय

सोमप्रभात, [२५ जनवरी, १९३२]

श्री भगवान बोले: इस शरीरका दूसरा नाम क्षेत्र है और उसके जाननेवालोको क्षेत्रज्ञ कहते हैं। सब शरीरोमें मौजूद जो मैं (भगवान) हूँ, उसे क्षेत्रज्ञ समझ, और वास्तविक ज्ञान वह है जिससे क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का भेद जाना जाये। पंच महाभूत—पृथ्वी, जल, आकाश, तेज और वायु, अहभाव, बुद्धि, प्रकृति, दस इन्द्रियाँ—पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्मेन्द्रियाँ—एक मन, पाँच विषय, इच्छा, द्वेष, सुख-दु ख, सघात (शरीर जिनसे बना हुआ है उनकी एक होकर रहनेकी शक्ति), चेतन शक्ति, शरीरके परमाणुओमे सयुक्त बने रहनेका गुण,

१. इसकी व्याख्या "पत्र: नारणदास गांधीको", १३/१७-११-१९३० में की है। देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ३१३-४।

२. इसके बादके अध्याय एम० एम० यू०/२ से लिये गये हैं।

यह सब मिलकर विकारोवाला क्षेत्र बना। इस शरीरको और इसके विकारोको जानना चाहिए, क्योकि इनको त्यागना है। इस त्यागके लिए ज्ञान चाहिए। यह ज्ञान अर्थात् अभिमानका त्याग, दम्भका त्याग, अहिंसा, क्षमा, सरलता, गुरुसेवा, शुद्धता, स्थिरता, विषयोपर अकुश, विषयोमे वैराग्य, अहकारका त्याग, जन्म, मृत्यु, बुढापा और उसके सिलसिलेमे रहनेवाले रोगसमूह, दु खसमूह और नित्य होनेवाले दोषोका पूरा भान, स्त्री, पुत्र, घर, द्वार, सगे-सम्बन्धी, इत्यादिकी ओरसे मनको खीच लेना और ममता छोडना, कोई बात मनोनुकूल हो या मनके प्रतिकूल—उसमे समता रखना, ईश्वरकी अनन्य भक्ति, एकान्तसेवन, लोगोमे मिलकर भोग भोगनेकी ओर अरुचि, आत्माके विषयमे ज्ञानकी प्यास और अन्तमे आत्मदर्शन। इससे विपरीतका नाम अज्ञान है। इस ज्ञानके साधनसे जो जाननेकी चीज है—ज्ञेय है और जिसे जाननेसे मोक्ष मिलता है, उसके विषयमे थोडा सुन। यह ज्ञेय अनादि परब्रह्म है। अनादि है—अर्थात् उसका जन्म नही होता—जब कुछ नही था, तब भी वह परब्रह्म तो था। वह सत् नही है और असत् भी नही है। उससे भी परे है। अन्य दृष्टिसे उसे सत् कह सकते है, क्योकि वह नित्य है। तथापि उसकी नित्यताको भी मनुष्य नही पहचान सकता, इससे उसे सत्से भी परे कहा, कुछ भी उसके बिना नही है। उसे हजारो हाथ-पाँवोवाला कह सकते है और इस प्रकार उसके हाथ-पैर आदि है, यह जान पडते हुए भी वह इन्द्रियरहित है। उसे इन्द्रियोकी आवश्यकता नही है। इसलिए वह अलिप्त है। इन्द्रियाँ तो आज है और कल नही है। परब्रह्म तो नित्य है ही। और यद्यपि वह सबमे व्याप्त है और सबको धारण किये हुए है, इसलिए गुणोका भोक्ता कहा जा सकता है, तथापि जो उसे नही पहचानते, उनके हिसावसे तो वह बाहर ही है। प्राणियोके अन्दर तो वह है ही, क्योकि सर्वव्यापक है। वैसे ही वह गति करता है और स्थिर भी है। सूक्ष्म है, इसलिए वह ऐसा भी है कि न जान पडे। दूर भी है और नजदीक भी है। नाम-रूपका नाश होता है, तथापि वह तो सदा है ही, इस प्रकार अविभक्त है। पर वह असख्य प्राणियोमे है—यह भी कहते है, इससे वह विभक्त रूपसे भी भासित होता है। वह उत्पन्न करता है, पालता है और वही मारता है। वह तेजोका तेज है, अन्धकारसे परे है, ज्ञानकी सीमा है। सबमे मौजूद परब्रह्म ही जानने योग्य अर्थात् ज्ञेय है। ज्ञानमात्रकी प्राप्ति केवल उसकी प्राप्तिके लिए ही है।

प्रभु और उसकी माया, दोनो अनादिकालसे चलते आये है। मायामे से विकार पैदा होते है, और उनसे अनेक प्रकारके कर्म पैदा होते है, मायाके कारण जीव सुख-दु ख, पाप-पुण्यका भोगनेवाला बनता है। यह जानकर जो अलिप्त रहकर कर्त्तव्य-कर्म करता है, वह कर्म करता हुआ भी फिर जन्म नही लेता, क्योकि वह सर्वत्र ईश्वरको ही देखता है, और उसकी प्रेरणाके बिना एक पत्तातक नही हिल सकता, यह जानकर वह अपने बारेमे अहताको नही मानता और अपनेको शरीरसे अलग देखता है, और समझता है कि जैसे आकाश सर्वत्र होते हुए भी निर्लिप्त ही रहता है, वैसे जीव शरीरमे रहते हुए भी ज्ञान-द्वारा निर्लिप्त रह सकता है।

दो बजे रातको समाप्त किया।

दुबारा नही पढा है।

चौदहवाँ अध्याय[1]

मौनवार, २५ जनवरी, १९३२

श्री भगवान बोले · जिस उत्तम ज्ञानको पाकर ऋषि-मुनियोने परम सिद्धि पाई है वह मै तुझसे फिर कहता हूँ। उस ज्ञानके पाने और उसके अनुसार धर्मका आचरण करनेसे लोग जन्म-मरणके चक्करसे बच जाते है। हे अर्जुन, यह समझ कि मै जीव-मात्रका माता-पिता हूँ। प्रकृति-जन्य तीन गुण — सत्व, रजस् और तमस् — देहीको बाँधनेवाले है। इन गुणोको उत्तम, मध्यम और कनिष्ठ भी कह सकते है। इनमे सत्वगुण निर्मल और निर्दोष है, प्रकाश देनेवाला है और इस कारण उसका सग सुखद होता है। रजस् राग और तृष्णासे पैदा होता है और वह मनुष्यको झझटोमे डालता है। तमस्का मूल अज्ञान है, मोह है और उससे मनुष्य प्रमादी और आलसी बनता है। अत सक्षेपमे कहा जाये तो सत्वमे से सुख, रजस्मे से तृष्णादि और तमस्मे से आलस्य पैदा होता है। रजस् और तमस्को दबाकर सत्व जय प्राप्त करता है, सत्व और तमस्को दबाकर रजस् जय प्राप्त करता है, और सत्व और रजस्को दबाकर तमस् जय पाता है। देहके सब कामोमे जब ज्ञानका अनुभव देखनेमे आये तब यह जानना कि अब सत्वगुण प्रधान रूपसे काम कर रहा है। जब लोभ, दौडधूप, अशान्ति, प्रतिद्वद्विता दिखाई दे तब रजस्की वृद्धि जानो और जब अज्ञान, आलस्य, मोहका अनुभव हो तब समझो कि तमस्का राज्य है। जिसके जीवनमे सत्वगुण प्रधान होता है, वह मृत्युके अन्तमे ज्ञानमय निर्दोष लोकमे जन्म पाता है, जो रजस्-प्रधान होता है, वह कर्मकी आसक्तिवाले लोकमे जाता है और तमस्-प्रधान व्यक्ति मूढ योनिमे जन्मता है। सात्त्विक कर्मका फल निर्मल, राजसका दु खमय और तामसका अज्ञानमय होता है। सात्त्विक लोककी उच्च गति, राजसकी मध्यम और तामसकी अधोगति होती है। मनुष्य जब गुणोके सिवा दूसरेको कर्त्ता नही समझता और गुणोसे परे जो मै हूँ, उसे जानता है तब वह मेरे भावको पाता है। देहमे विद्यमान इन तीन गुणोको जो देही पार कर जाता है, वह जन्म, जरा और मृत्युके दु खोसे छूटकर अमृतमय मोक्षको प्राप्त होता है।

अर्जुन पूछता है · गुणातीतकी ऐसी सुन्दर गति होती है तो बतलाइये कि उसके लक्षण कैसे है, उसका आचरण कैसा है और तीनो गुणोको किस प्रकार पार किया जाये?

भगवान् उत्तर देते है . जो मनुष्य अपनेपर जो आ पडे, फिर भले ही प्रकाश हो या प्रवृत्ति हो, या मोह हो, ज्ञान हो, झझट हो या अज्ञान, उसका अतिशय दु ख या सुख न माने या कोई इच्छा न करे, जो गुणोके बारेमे तटस्थ रहकर विचलित

१. यह "पत्र: नारणदास गाधीको", २३/२५-१-१९३२ के साथ भेजा गया था।

नही होता, गुण अपने गुणानुसार बरतते हैं, यह समझ कर जो स्थिर रहता है, जो सुख-दु खको सम मानता है, जिसे लोहा, पत्थर या सोना समान है, जिसके मनमे प्रिय-अप्रियकी बात नही है, जिसपर स्तुति या निन्दा कोई प्रभाव नही डाल सकती, जिसके लिए मान-अपमान समान है, जो शत्रु-मित्रके प्रति समभाव रखता है, जिसने सब आरम्भोका त्याग किया है, वह गुणातीत कहलाता है। मेरे बताये इन लक्षणोसे परेशान होनेकी जरूरत नही है, न आलसी होकर सिरपर हाथ रखकर बैठ जानेकी। मैंने तो सिद्ध की दशा बतलाई है। उसतक पहुँचनेका मार्ग यह है—व्यभिचार-रहित [अविचलित भावसे] भक्तियोग द्वारा मेरी सेवा कर। (तीसरे अध्यायसे लगाकर) तुझे बताया है कि कर्मके बिना, प्रवृत्तिके बिना कोई साँसतक नही ले सकता, अतः कर्म तो देहीमात्रके साथ लगे हुए हैं ही। जो गुणोको पार कर जाना चाहता है, वह साधक सब कर्म मुझे अर्पण करे और फलकी इच्छातक भी न करे। ऐसा करनेमे उसके कर्म उसे विघ्नरूप नही होगे; क्योकि ब्रह्म मैं हूँ, मोक्ष मैं हूँ, सनातन धर्म मैं हूँ, अनन्त सुख मैं हूँ, जो कहो वह मैं हूँ। मनुष्य शून्यवत् हो जाए तो मुझे ही सर्वत्र देखे। इसे गुणातीत कहेगे।

पन्द्रहवाँ अध्याय[१]

रात, ३१ जनवरी, १९३२[२]

श्रीभगवान बोले. इस संसारको दो तरहसे देखा जा सकता है—एक इस तरह जिसकी जड ऊपर है, जिसकी शाखा नीचे है और जिसके वेदरूपी पत्ते हैं, जो ससारको ऐसे पीपलके रूपमे देखता है वह वेदको जाननेवाला ज्ञानी है। दूसरी रीति यह है कि ससाररूपी वृक्षकी शाखाएँ ऊपर-नीचे फैली हुई है। उसके तीन गुणोसे फूटे हुए विषयरूपी अंकुर है और वे विषय जीवको मनुष्यलोकमे कर्मके बन्धनमे डालते हैं। उस वृक्षका स्वरूप नही जाना जा सकता, उसका आरम्भ नही है, न अन्त है, न कोई ठिकाना।

वह दूसरे प्रकारका ससार-वृक्ष है। उसने यद्यपि जड़ गहरी पकडी है, तथापि उसे असहकाररूपी शस्त्रसे काटना चाहिए जिससे कि आत्माको वह लोक प्राप्त हो सके जहाँसे उसे वापस चक्कर न लगाना पडे। ऐसा करनेके लिए वह निरन्तर उस आदि पुरुषको भजे जिसकी मायासे यह पुरानी प्रवृत्ति फैली हुई है। जिन्होने मान-मोहको छोड दिया है, जिन्होने सग-दोषको जीत लिया है, जो आत्मामे लीन है, जो विषयोसे अलग हो गये हैं, जिन्हे सुख-दु ख समान है, वे ज्ञानी उस अव्यय पदको पाते हैं।

उस जगह सूर्यको या चन्द्रको या अग्निको तेज पहुँचानेकी जरूरत नही पडती। जहाँ जानेके बाद लौटना नही रह जाता, वह मेरा परम धाम है।

१. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", २८-१/१-२-१९३२ के साथ भेजा गया था।
२. साधन-सूत्रमें '१९३१' है।

जीवलोकमें मेरा सनातन अंश जीवरूपमें प्रकृतिमें विद्यमान मनसहित छ: इन्द्रियोंको आकर्षित करता है। जब जीव देह धारण करता है, और तजता है तब, जैसे वायु अपने स्थलसे गंधको साथ लिये चलता है, वैसे ही यह जीव भी इन्द्रियोंको साथ लिये हुए विचरता है। कान, आँख, त्वचा, जीभ और नाक तथा मन, इतनोंका सहारा लेकर जीव विषयोंका सेवन करता है। गति करते हुए, स्थिर रहते हुए या भोग भोगते हुए गुणोंसे युक्त इस जीवको मोहमें पड़े हुए अज्ञानी पहचानते नहीं, ज्ञानी पहचानते हैं। यत्न करनेवाले योगी अपनेमें विद्यमान इस जीवको पहचानते हैं; पर जिसने समभावरूपी योगको नहीं साधा है, वह यत्न करता हुआ भी इसे पहचानता नहीं है।

सूर्यका जो तेज जगतको प्रकाशित करता है, जो चन्द्रमामें है, जो अग्निमें हैं, उन सारे तेजोंको मेरा तेज जान। अपनी शक्ति-द्वारा शरीरमें प्रवेश करके मैं जीवोंको धारण करता हूँ। रस उत्पन्न करनेवाला सोम बनकर औषधमात्रका पोषण करता हूँ। प्राणियोंकी देहमें रहकर, जठराग्नि बनकर प्राण और अपान वायुको समान करके, चार प्रकारका अन्न पचाता हूँ। मैं सबके हृदयके भीतर विद्यमान हूँ। मेरे द्वारा ही स्मृति है, ज्ञान है, उसका अभाव है, सब वेदोंके द्वारा जानने योग्य जो है, वह मैं हूँ। वेदान्त भी मैं हूँ, वेदको जाननेवाला भी मैं हूँ।

कहा जाता है कि इस लोकमें दो प्रकारके पुरुष हैं — क्षर और अक्षर अथवा नाशवान और नाशरहित। इनमें जीव क्षर कहलाते हैं, उनमें स्थिर हुआ मैं अक्षर हूँ और उससे भी परे जो उत्तम पुरुष है वह परमात्मा कहलाता है। वह अव्यय ईश्वर तीनों लोकमें प्रवेश करके उसका पालन करता है, वह भी मैं हूँ। इस तरह मैं क्षर और अक्षरसे भी उत्तम हूँ, और लोकमें, वेदमें पुरुषोत्तमरूपसे प्रसिद्ध हूँ। इस प्रकार जो ज्ञानी मुझे पुरुषोत्तमरूपसे पहचानता है वह सब जानता है और मुझे सब भावों द्वारा भजता है।

हे निष्पाप अर्जुन, यह अति गुह्य शास्त्र मैंने तुझे कहा है। इसे जानकर मनुष्य बुद्धिमान बनता है और अपने ध्येयको पहुँचता है।

सोलहवाँ अध्याय[1]

७ फरवरी, १९३२

श्रीभगवान कहते हैं: अब मैं तुझे धर्मवृत्ति और अधर्मवृत्तिका भेद बतलाता हूँ। धर्मवृत्तिके बारेमें तो मैं पहले बहुत कह गया हूँ, तो भी उसके लक्षण कहता हूँ। जिसमें धर्मवृत्ति होती है, उसमें निर्भयता, अन्तःकरणकी शुद्धि, ज्ञान, समता, इन्द्रिय-दमन, दान, यज्ञ शास्त्रोंका अभ्यास, तप, सरलता, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शान्ति, किसीकी चुगली न खाना अर्थात्, अपिशुनता, भूतमात्रके प्रति दया, अलोलुपता,

१. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", ३/८-२-१९३२ के साथ भेजा गया था।

कोमलता, मर्यादा, अचचलता, तेज, क्षमा, धीरज, अन्तर और वाहरकी स्वच्छता, अद्रोह और निरभिमानता होती है।

अधर्मवृत्तिवालेमे दम्भ, दर्प, अभिमान, क्रोध, कठोरता और अज्ञान देखनेमे आता है।

धर्मवृत्ति मनुष्यको मोक्षकी ओर ले जाती है। अधर्मवृत्ति बन्धनमे डालती है। हे अर्जुन, तू तो धर्मवृत्ति लेकर ही जन्मा है।

अधर्मवृत्तिका थोड़ा विस्तार कह देता हूँ जिससे लोग उसका त्याग सहजमे कर सके।

अधर्मवृत्तिवाला प्रवृत्ति और निवृत्तिका भेद नही जानता, उसे शुद्ध-अशुद्धका या सत्यासत्यका भान नही होता, तो फिर उसके बर्तावका तो ठिकाना ही कैसे होगा? उसके लेखे जगत झूठा और निराधार है, जगतका कोई नियता नही है, स्त्री-पुरुषका सम्बन्ध ही उसका जगत है, अत. उसे इसमे विषय-भोगके सिवा दूसरा विचार नही मिलता।

ऐसी वृत्तिवालोके कार्य भयानक होते है, उनकी मति मन्द होती है, ऐसे लोग अपने दुष्ट विचारोको पकडे रहते है और जगतके नाशके लिए ही उनकी सब प्रवृत्तियाँ होती है। उनकी कामनाओका अन्त ही नही होता। वे दम्भ, मान, मदमे फूले रहते है। उनकी चिन्ताका भी पार नही होता। उन्हे नित्य नये भोग चाहिए। सैकडो आशाओंके महल वनाते रहते है और अपनी कामनाके पोषणके लिए द्रव्य एकत्र करनेमे न्याय-अन्यायका भेद बिलकुल छोड देते है।

'आज यह पाया और कल वह और प्राप्त करूँगा, इस शत्रुको आज मारा फिर दूसरेको मारूँगा, मै वलवान हूँ, मेरे पास ऋद्धि-सिद्धि है, मेरे समान दूसरा कौन है, कीर्ति-प्राप्तिके लिए यज्ञ करूँगा, दान दूंगा और चैनकी बशी बजाऊँगा', यो मन-ही-मन मानता हुआ वह खुश होता रहता है और अन्तमे मोह-जालमे फँस कर नरकवास पाता है।

आसुरीवृत्तिवाले प्राणी अपने घमण्डमे भूले रहकर परनिन्दा करते हुए सर्वव्यापक ईश्वरका द्वेष करते है ओर इससे वे बारम्बार आसुरी योनिमे जन्मते है।

नरकके, आत्माको नाश करनेवाले, ये तीन दरवाजे है—काम, क्रोध और लोभ। सबको इन तीनोका त्याग करना चाहिए, इनका त्याग करनेवाले कल्याणमार्गके पथिक होते है और वे परम गतिको पाते है।

जो अनादि सिद्धान्तरूपी शास्त्रोका त्याग करके स्वेच्छासे भोगमे पडे रहते है, वे न सुख पाते है और न कल्याणमार्गमे रहकर शान्ति पाते है। इसलिए कार्य-अकार्यका निर्णय करनेमे अनुभवियोसे अटल सिद्धान्त जान लेने चाहिए और उनका अनुसरण करके आचार-विचारका निश्चय करना चाहिए।

सत्रहवाँ अध्याय[1]

१४ फरवरी, १९३२

अर्जुन पूछता है: जो शिष्टाचार छोडकर भी श्रद्धापूर्वक सेवा करते है, उनकी गति कैसी होती है?

१. यह "पत्र: नारणदास गाधीको", ११/१५-२-१९३२ के साथ भेजा गया था।

भगवान उत्तर देते हैं: श्रद्धा तीन प्रकारकी होती है—सात्त्विकी, राजसी और तामसी। मनुष्य अपनी श्रद्धाके अनुसार होता है।

सात्त्विक मनुष्य ईश्वरको, राजस यक्ष-राक्षसोको और तामस भूत-प्रेतोको भजता है।

पर किसीकी श्रद्धा कैसी है, यह एकाएक नही जाना जा सकता। उसका आहार कैसा है, उसका तप कैसा है, यज्ञ कैसा है, दान कैसा है, यह जानना चाहिए और इन सबके भी तीन-तीन प्रकार हैं, मैं तुझे इन्हें बतलाता हूँ।

जिस आहारसे आयु, निर्मलता, बल, आरोग्य, सुख और रुचि बढती है, वह आहार सात्त्विक कहलाता है। जो तीखा, खट्टा, चरपरा और गरम होता है वह राजस है। उससे दुःख और रोग उत्पन्न होते हैं। जो राँधा हुआ आहार बासी हो, बदबू करता हो, जूठा हो और अन्य प्रकारसे अपवित्र हो, उसे तामस जानना।

जिस यज्ञके करनेमें फलकी इच्छा नही है, जो कर्त्तव्यरूपसे तन्मयतासे होता है, वह सात्त्विक माना जाता है। जिसमे फलकी आशा है और दम्भ भी है, उसे राजस यज्ञ जानना। जिसमें कोई विधि नही है, न अन्न अथवा कोई दूसरा दान है, न कोई मन्त्र है, न कोई त्याग है, वह यज्ञ तामस है।

जिसमे सन्तोकी पूजा है, पवित्रता है, ब्रह्मचर्य है, अहिंसा है, वह शारीरिक तप है। सत्य, प्रिय, हितकर वचन और धर्मग्रन्थका अभ्यास वाचिक तप है। मनकी प्रसन्नता, सौम्यता, मौन, सयम, शुद्ध भावना, यह मानसिक तप कहलाता है। ऐसा शारीरिक, वाचिक और मानसिक तप जो समभावसे फलेच्छाका त्याग करके किया जाता है वह सात्त्विक तप कहलाता है। जो तप मानकी आशासे, दम्भपूर्वक किया जाता है उसे राजस जानना और जो तप पीडित होकर और दुराग्रहसे या दूसरेके नाशके लिए किया जाये, जिसमे शरीरस्थ आत्माको क्लेश हो, वह तप तामस है।

कर्त्तव्य-बुद्धिसे दिया गया, बिना फलेच्छाके देश, काल, पात्र देखकर दिया गया दान सात्त्विक है। जिसमें बदलेकी आशा है और जिसे देते हुए सकोच है, वह दान राजस है और देश-कालादिका विचार किये बिना तिरस्कृत भावसे या सम्मानके बिना दिया हुआ दान तामस है।

वेदोने ब्रह्मका वर्णन ॐ तत्सत् रूपसे किया है, अत श्रद्धालुको चाहिए कि यज्ञ, दान, तप, आदि क्रिया इसका उच्चारण करके करे। ॐ अर्थात् एकाक्षरी ब्रह्म। तत् अर्थात् वह। सत् अर्थात् सत्य, कल्याणरूप। मतलब कि ईश्वर एक है, वही है, वही सत्य है, वही कल्याण करनेवाला है, ऐसी भावना रखकर और ईश्वरार्पण बुद्धिसे जो यज्ञादि करते हैं, उनकी श्रद्धा सात्त्विक है और वे शिष्टाचारको न जाननेके कारण अथवा जानते हुए भी, ईश्वरार्पण बुद्धिसे उससे कुछ भिन्न करते हैं, तथापि वह दोषरहित है।

पर जो क्रिया ईश्वरार्पण बुद्धिके बिना होती है, वह बिना श्रद्धाकी मानी जाती है। वह असत् है।

अठारहवाँ अध्याय[1]

२१ फरवरी, १९३२

पिछले अध्यायोके मननके बाद भी अर्जुनके मनमे शका बनी रह जाती है, क्योकि 'गीता' का संन्यास उसे प्रचलित सन्याससे भिन्न लगता है। उसे लगता है, कही त्याग और सन्यास दो अलग-अलग चीजे तो नही है।

इस शंकाका निवारण करते हुए भगवान इस अन्तिम अध्यायमे गीता-शिक्षणका सार दे देते हैं।

कितने ही कर्मोमे कामना भरी होती है, अनेक प्रकारकी इच्छाओकी पूर्तिके लिए मनुष्य अनेक उद्यम रचता है। यह काम्य कर्म है। अन्य आवश्यक और स्वाभाविक कर्म हैं, जैसे साँस लेना, देहकी रक्षा-भरको खाना, पीना, पहनना, ओढना, सोना, इत्यादि। और तीसरा कर्म पारमार्थिक है। इनमे से काम्य कर्मका त्याग 'गीता' का सन्यास है; और कर्ममात्रके फलका त्याग गीता-मान्य त्याग है।

कह सकते हैं कि कर्ममात्रमे कुछ दोष तो अवश्य है ही, तथापि यज्ञार्थ अर्थात् परोपकारार्थ कर्मका त्याग विहित नही है। यज्ञमे दान और तप आ जाते हैं; पर परमार्थमे भी आसक्ति, मोह नही होना चाहिए, अन्यथा उसमे बुराईके प्रवेश कर जानेकी सम्भावना है।

मोहवश नियत कर्मका त्याग तामस त्याग है। देहके कष्टके विचारसे किया हुआ त्याग राजस है, पर सेवाकार्य करनेकी भावनासे, बिना फलकी इच्छाका त्याग सच्चा सात्विक त्याग है। अत. यहाँ कर्ममात्रका त्याग नही है, बल्कि कर्त्तव्य कर्मके फलका त्याग है और दूसरे अर्थात् काम्य कर्मका त्याग तो है ही। ऐसे त्यागीको शकाएँ नही उठती। उसकी भावना शुद्ध होती है और वह सुविधा-असुविधाका विचार नही करता।

जो कर्म-फलका त्याग नही करते है, उन्हे तो अच्छे-बुरेके फल भोगने ही पडते हैं। इससे वे बन्धनमे पडे रहते हैं। फल-त्यागी बन्धनमुक्त हो जाता है।

और कर्मके विषयमे मोह क्या? अपने कर्त्तापनका अभिमान मिथ्या है। कर्म-मात्रकी सिद्धिमे पाँच कारण होते हैं—स्थान, कर्त्ता, साधन, क्रियाएँ और यह सब होनेपर भी अन्तिम दैव है।

यह समझकर मनुष्यको अभिमानका त्याग करना चाहिए। अहभावको छोडकर कुछ भी करनेवालेके बारेमे कहा जा सकता है कि वह करते हुए भी नही करता. क्योकि उसके लिए वह कर्म बन्धनकारक नही होता। ऐसे निरभिमान, शून्यवत् बने हुए मनुष्यके विषयमे कह सकते हैं कि वह मारते हुए भी नही मारता। इसका यह अर्थ नही होता कि कोई मनुष्य शून्यवत् होते हुए भी हिंसा करता है और अलिप्त रहता है। निरभिमानीको हिंसा करनेका प्रयोजन ही क्या है।

कर्मकी प्रेरणामे तीन वस्तुएँ होती हैं—ज्ञान, ज्ञेय और परिज्ञाता। और उसके तीन अंग होते हैं—इन्द्रियाँ क्रिया और कर्त्ता। जो करना है, वह ज्ञेय है। जो उसकी

१. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", १९/२१-२-१९३२ के साथ भेजा गया था। देखिए पृष्ठ १४२-३।

रीति है वह ज्ञान है और जाननेवाला परिज्ञाता है। इस प्रकार प्रेरणा होनेके बाद कर्म होता है। उसमे इन्द्रियाँ कारण होती है, जो करनेको है वह क्रिया और उसका करनेवाला कर्त्ता। इस प्रकार विचारमे से आचार होता है। जिसके द्वारा हम प्राणीमात्रमे एक ही भाव देखे अर्थात् सब-कुछ भिन्न-भिन्न लगते हुए भी गहराईमे उतरनेपर एक ही भासित हो तो वह सात्विक ज्ञान है।

इससे उलटा जो भिन्न दिखाई देता है, वह भिन्न ही भासित हो तो वह राजस ज्ञान है।

और जहाँ कुछ पता ही नही लगता और सब बिना कारणके गडबड लगता है वह तामस ज्ञान है।

ज्ञानके विभागकी भाँति कर्मके भी विभाग है। जहाँ फलेच्छा नही है, राग-द्वेष नही है, वह कर्म सात्विक है। जहाँ भोगकी इच्छा है, जहाँ 'मै करता हूँ'–यह अभिमान है और इससे जहाँ भाग-दौड है, वह राजस कर्म है। जहाँ परिणामकी, हानिकी या हिंसाकी, शक्तिकी परवाह नही है और जो मोहके वश होकर होता है, वह तामस कर्म है।

कर्मकी भाँति कर्त्ता भी तीन तरहके समझने चाहिए। सात्विक कर्त्ता वह है जिसे राग नही है, अहकार नही है तथापि जिसमें दृढता है, साहस है, और जिसे अच्छे-बुरे फलसे हर्ष-शोक नही है। राजस कर्त्तामे राग होता है, लोभ होता है, हिंसा होती है, हर्ष-शोक तो जरूर होता ही है, तो फिर कर्म-फलकी इच्छाका तो कहना ही क्या? और तामस कर्त्ता अव्यवस्थित, दीर्घसूत्री, हठी, शठ, आलसी, सक्षेपमें कहा जाये तो सस्काररहित होता है।

बुद्धि, धृति और सुखके भी भिन्न-भिन्न प्रकार जानने योग्य है।

सात्विक बुद्धि प्रवृत्ति-निवृत्ति, कार्य-अकार्य, भय-अभय और बधन-मोक्ष, आदिका सही भेद करती और जानती है। राजसी बुद्धि यह भेद करने तो चलती है, पर गलत या विपरीत कर लेती है और तामसी बुद्धि तो धर्मको अधर्म मानती है। सब उलटा ही निहारती है।

धृति अर्थात् धारणा, कुछ भी ग्रहण करके उससे लगे रहनेकी शक्ति, यह शक्ति अल्पाधिक प्रमाणमे सबमे है। यदि यह न हो तो जगत एक क्षण भी न टिक सके। अब जिसमे मन, प्राण और इन्द्रियोकी क्रियाकी समता है, समानता है और एकनिष्ठा है, वहाँ धृति सात्विकी है और जिसके द्वारा मनुष्य धर्म, काम और अर्थको आसक्तिपूर्वक धारण करता है, वह धृति राजसी है। जो धृति मनुष्यको निन्दा, भय, शोक, निराशा, मद वगैरह नही छोडने देती, वह तामसी है।

सात्विक सुख वह है जिसमे दुःखका अनुभव नही है, जिसमे आत्मा प्रसन्न रहती है, जो शुरूमे जहर-सा लगनेपर भी परिणाममे अमृतके समान है। विषय-भोगमे, जो शुरूमे मधुर लगता है, पर बादको जहरके समान हो जाता है, वह राजस सुख है, और जिसमे केवल मूर्च्छा, आलस्य, निद्रा ही है वह तामस सुख है।

इस प्रकार सब वस्तुओके तीन हिस्से किये जा सकते है। ब्राह्मणादि चार वर्ण भी इन तीन गुणोके अल्पाधिक्यके कारण हुए है। ब्राह्मणके कर्ममे शम, दम, तप,

शौच, क्षमा, सरलता, ज्ञान, अनुभव, आस्तिकता होनी चाहिए। क्षत्रियोमे शौर्य, तेज, धृति, क्षमा, युद्धमे पीछे न हटना, दान, राज्य चलानेकी शक्ति होनी चाहिए। खेती, गोरक्षा और व्यापार वैश्यका कर्म है और शूद्रका सेवा। इसका यह मतलव नही कि एकके गुण दूसरेमे नही होते अथवा इन गुणोको हासिल करनेका उसे हक नही है; पर उपर्युक्त भाँतिके गुण या कर्मसे विशिष्ट वर्णकी पहचान हो सकती है। यदि हरएक वर्णके गुण-कर्म पहचाने जाये तो परस्पर द्वेषभाव न हो, स्पर्धा न हो। ऊँच-नीचकी भावनाकी यहाँ कोई गुजाइश नही है, बल्कि सब अपने स्वभावके अनुसार निष्काम भावसे अपने कर्म करते रहे तो उन कर्मोको करते हुए वे मोक्षके अधिकारी हो जाते है। इसलिए कहा है कि परधर्म चाहे सरल लगता हो, स्वधर्म चाहे खोखला लगता हो तो भी स्वधर्म अच्छा है। स्वभाव-जन्य कर्ममे पाप न होनेकी सम्भावना है, क्योकि उसीमे निष्कामताकी पाबन्दी हो सकती है, दूसरा-कुछ करनेकी इच्छामे ही कामना आ जाती है। बाकी तो जैसे अग्निमात्रमे धुँआ है वैसे कर्ममात्रमे दोष अवश्य है; पर सहजप्राप्त कर्म फलकी इच्छाके बिना होते है, इसलिए कर्मका दोष नही लगता।

जो इस प्रकार स्वधर्मका पालन करता हुआ शुद्ध हो गया है, जिसने मनको वशमे कर रखा है, जिसने पाँच विषयोको छोड दिया है, जिसने राग-द्वेषको जीत लिया है, जो एकान्तसेवी अर्थात् अन्तरध्यानी रह सकता है, जो अल्पाहार करके मन, वचन, कायाको अकुशमे रखता है, ईश्वरका ध्यान जिसे बराबर बना रहता है, जिसने अहकार, काम, क्रोध, परिग्रह, इत्यादि तज दिये है, वह शान्त योगी ब्रह्मभावको पाने योग्य है। ऐसा मनुष्य सबके प्रति समभाव रखता है और हर्ष-शोक नही करता, ऐसा भक्त ईश्वर-तत्त्वको यथार्थ जानता है और ईश्वरमे लीन हो जाता है। इस प्रकार जो भगवानका आश्रय लेता है वह अमृतपद पाता है। इसलिए भगवान कहते है, "सब मुझे अर्पण कर, मत्परायण हो और विवेक बुद्धिका आश्रय लेकर मुझमे चित्त रमा दे। ऐसा करेगा तो सारी विडम्बनाओसे छूट जायेगा, पर जो अहकार रखकर मेरी नही सुनेगा तो विनाशको प्राप्त होगा। सौ बातकी एक बात तो यह है कि सभी प्रपचोको त्यागकर मेरी ही शरण ले तो तू पापमुक्त हो जायेगा। जो तपस्वी नही है, भक्त नही है, जिसे सुननेकी इच्छा नही है और जो मुझसे द्वेष करता है उससे यह ज्ञान मत कहना, पर यह परम गुह्यज्ञान जो मेरे भक्तोको देगा, वह मेरी भक्ति करनेके कारण अवश्य मुझे पायेगा।"

अन्तमे सजय धृतराष्ट्रसे कहता है: जहाँ योगेश्वर कृष्ण है, जहाँ धनुर्धारी पार्थ है, वहाँ श्री है, विजय है, वैभव है और अविचल नीति है।

[टिप्पणी] यहाँ कृष्णको 'योगेश्वर' विशेषण दिया गया है, इससे उसका शाश्वत अर्थ, शुद्ध अनुभव ज्ञान किया गया है, और धनुर्धारी पार्थ कहकर यह बतलाया गया है कि जहाँ ऐसे अनुभवसिद्ध ज्ञानको अनुसरण करनेवाली क्रिया है, वहाँ परम नीतिकी अविरोधिनी मनोकामना सिद्ध होती है।

गुजरातीकी माईक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१ व २) से।

१६२. पत्र : नारणदास गांधीको

अपराह्न, १९/२१ फरवरी, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारी डाक यथासमय मिली। भाई वालजीसे कहना कि आज उनका अनुवाद[1] देखना शुरू कर दिया है।

जो जेल गये है और वही [साबरमती-जेलमे] है, उनकी खोज-खबर तो तुम रखोगे ही; इसके सिवा दूसरे लोग कहाँ-कहाँ है, यह भी देखते रहना। लीलावती आकर मिल गई। यह ठीक हुआ।

चम्पाके नाम मेरा पत्र पढ लेना। वह इस परिस्थितिको बर्दाश्त करके रतिलालके साथ रह सके तो ठीक ही है। लेकिन रहनेको तैयार न हो तो जबर्दस्ती नही रख सकते, ऐसा मुझे लगता है। रतिलालको फिरसे पागलखानेमे रख सकते है। यह पूरा सवाल कठिन ही है। जो ठीक लगे सो करना। डॉक्टरको[2] तो खबर देते ही रहना।

चिमनलालके लिए आराम किए बिना चारा नही है। उसका शरीर काम दे ही नही पाता और कोई रोगका निदान भी नही कर पा रहा है।

कृष्णमय्यादेवी कलकत्ता रुक गईं, यह अच्छा नही हुआ। तुमने उन्हे लिखकर ठीक किया। लक्ष्मीकी[3] सूजन किसीको दिखलाई थी? क्या उसका मासिक धर्म रुक गया है? यह सूजनका कारण हो सकता है। तुम उससे या लक्ष्मीबहनसे पूछकर मालूम कर लेना।

यज्ञका अर्थ परोपकारके लिए किया जानेवाला कर्म ही नही है। यज्ञका अर्थ शरीर-श्रम भी है। अगर लोग शरीर-श्रम न करे, अर्थात् खेती न करे तो बरसात न हो। मेरी अपनी ऐसी मान्यता है कि प्राकृतिक घटनाओका नैतिक आचारसे सम्बन्ध है। इसे सिद्ध करनेके साधन मेरे पास नही है। श्रद्धा है। ऐसी श्रद्धासे हानि तो कदापि नही होती। ऐसी बातोकी शोध आजकल तो क्वचित् ही होती है और प्राचीन पुस्तकोमें ऐसा लिखा मिले तो उसे अन्धश्रद्धा मानते है। यह ठीक है कि उनमें बहुत-सी भ्रमपूर्ण बाते लिखी है। उनमे से सचको कौन छानकर निकाले? इसलिए चोरोके समुदायमें साहूकार भी चोर ही गिन लिया जाता है। ऐसी स्थितिमे यज्ञके अर्थको संकुचित न रखकर उसके जो भी सम्भाव्य और सात्विक अर्थ निकले, वे सब हम कायम रखें और फिर यज्ञके साथ वर्षाका सम्बन्ध जोड़े। क्या 'गीता' मे और क्या

१. देखिए पृष्ठ ४२ पाद-टिप्पणी १।

२. प्राणजीवनदास मेहता, रतिलालके पिता।

३. लक्ष्मीदास आसरकी पुत्री।

अन्य ऐसी पुस्तकोमे, एक ही शब्दका अनेक अर्थोमे उपयोग देखा जाता है। कोई भी यज्ञकार्य क्यो न हो, उसके मूलमे परोपकारकी वृत्ति तो होनी ही चाहिए। इतना भाई जीवरामको भेज देना।

शाम, २१ फरवरी, १९३२

अभी-अभी १८वाँ अध्याय पूरा किया। तुम देखोगे कि मैंने इसमे अधिक-से-अधिक छूट ली है। आजतक ज्यादातर सरल अनुवाद ही देता रहा हूँ; पर उससे मुझे सन्तोष नही होता था। इस बार बात अधिक समझमे आ सके इसलिए थोडी टीकाके साथ भावार्थ दिया है। कुछ श्लोकोको देना जरूरी नही था; उन्हे छोड भी दिया है। फिर भी कोई उपयोगी बात छोड देनेका आभास नही हुआ। ईश्वरकी इच्छा हुई तो फिर ऐसी दूसरी रीतिसे भावार्थ देनेका प्रयत्न करूँगा कि बच्चे उसे समझ जाये।

मुलाकातोके बारेमे फिर परिस्थिति अनिश्चित हो गई लगती है। जो हो सो ठीक।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इस पत्र और 'गीता'के साराशके अलावा ३२ पत्र है। सूची भी साथ है। देवदासका मुकदमा शुरू हुआ? क्या उसके पत्र आते है? मेरे पास तो नही आते।[1]

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२१० से भी; सौजन्य: नारणदास गाधी।

१६३. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

२१ फरवरी, १९३२

बालको और बालिकाओ,

मणिके पत्रसे यह मालूम होता है कि तुम सबकी ओरसे कोई भी मुझे पत्र नही लिखता। यह कैसा अन्धेर है? और जो पत्र मै सभी बच्चोको लिखता हूँ, उसकी जिम्मेदारी कोई न उठाये, कोई उसकी पहुँच भी न लिखे तो मेरे पत्र लिखनेसे फायदा क्या है? इसलिए अब मुझे लिखो कि तुम मुझसे ऐसा पत्र चाहते हो या नही? चाहते हो, तो क्या हर सप्ताह उसका जवाब दोगे? क्या डोरिसबहनकी कक्षा[2] की बात याद है? वहाँ बच्चे आठ वर्षसे कम आयुके है किन्तु वे सब अपनी जिम्मेदारीपर कितना काम करते है। उनमे से कुछ तो सोलह वर्षतकके है, इतने बडे होनेपर

१. साधन-सूत्रमें इसके बाद भगवद्गीताके १८ वें अध्यायका सारांश है। देखिए पृष्ठ १३९
२. देखिए पृष्ठ ३५ और ६२-३।

भी वे बच्चोमे गिने जाते है। ऐसे बच्चोको तो बहुत-सी जिम्मेदारियाँ उठा लेनी चाहिए। फीनिक्समे देवदास और प्रभुदास बारह वर्षके थे। वहाँ वे दूसरे बालकोको साथ लेकर बहुत-सा काम सँभालते थे। वे ही डाक ले आते थे; डाक देने भी वे ही जाते थे। उन्हे जगलसे होकर तीन मील दूर जाना पडता था, पर वे साहसपूर्वक जाते थे। छापाखानेके काममे भी वे कई तरहकी मदद पहुँचाते थे। झरनेसे पानी भरकर लाते थे।

सक्षेपमे, एक बार मगनलालके पास मददके लिए लगभग ये ही बालक रह गये थे। किन्तु ये सभी कामोको निपटा सके, क्योकि सब बालक एक होकर तनमनसे काम करते थे। तब तुमसे मुझे कितनी ज्यादा आशा होगी? इसका जवाब देना और अपना तन्त्र चलाते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से।

१६४. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

[२१ फरवरी, १९३२][1]

बहनो,

तुम जीत गई और मै पूरी तरह हार गया। तुम जीतो और मै हारूँ, यह तो मुझे सदा अच्छा लगेगा। लेकिन इस बारकी हार बडी दुस्सह मालूम होती है क्योकि इससे आश्रमकी नींव कमजोर हुई। तथापि, मेरी हारमे सत्यकी विजय हुई है। ओर सत्यके लिए हजारो आश्रम बलि हो जाये तो भी क्या?

तुम्हारी जीत इस तरह हुई कि बहुत-सी बहने ऐसा मानती थी कि . . .[2] ओर [3] का सग निर्मल नही है। मैंने बहनोकी बातकी उपेक्षा की, इसके विपरीत माना और उन दोनोका बचाव किया। बहनोकी धारणा सच्ची और मेरी झूठी सिद्ध हुई। तुम लोगोकी बातपर कान देता तो मामला जल्दी निपट जाता। किन्तु आदमियोको परखनेकी मेरी शक्तिकी परीक्षा भी तो होनी थी। उसमे मेरा, तुम्हारा और आश्रमका हित था। मेरा अभिमान टूटे, यह भी जरूरी था। हम आशा करे कि वह चूर-चूर हो गया है। तुम्हारी उदारताको जानते हुए मुझे तुम्हारी चेतावनीपर ध्यान देना था, किन्तु मैंने ध्यान नही दिया और तुमने वह भी सह लिया। तुमने मेरे-जैसे मूर्खका साथ नही छोडा। मै मानता हूँ कि इससे तुम कुछ नही खोती। मेरी मूर्खताके पीछे सत्य, निर्मल प्रेम और विश्वास था। इसलिए ईश्वर मेरी भूल

१. कदाचित् पत्र पिछले शीर्षककी तिथिमें ही लिखा गया था।

२. और ३. नाम छोड़ दिये गये हैं।

सुधार लेगा। किन्तु आजसे तुम्हारी चेतावनीकी अवगणना नही करूँगा। दूधका जला छाछ फूंकेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१६५. पत्र : मैथिलीशरण गुप्तको

२०/२२ फरवरी, १९३२

भाई मैथिलीशरणजी,

आपने जो प्रसादी भेजी[1] मिल गई है। उसे मै रसपूर्वक पढुगा। पुस्तकका विषय भी मुझे प्रिय है इस लिए पढ़नेमें आनद होगा।

आपका
मोहनदास गांधी

२२ फरवरी, १९३२

[पुनश्च :]

पंचवटी[2] पढ लिया, अच्छा लगा। साकेत[3] शुरू किया है।

मोहनदास

हिन्दी (सी० डब्ल्यू० ९४५४) से; सौजन्य: भारत कला भवन।

१६६. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

२२ फरवरी, १९३२

भाई घनश्यामदास,

तुमारे पत्रकी मै प्रतीक्षा कर रहा था। हा मेरा स्वास्थ्य अच्छा है और सरदार का भी। प्रात.काल मै ४-३० बजे मध,[4] गरम पानी और आधा लीबु पीता हुं, ७ वजे १॥ तोला भुजी हुई बादाम पीसकर, ३० खजूर टमाटेके रसमें। १२ वजे फिर मध लीवु गरम पानी, ४ वजे कुछ भाजी टमाटर १५ खजूर, और १ तोला वादाम। भाजी दो दिनसे हि शुरू की है। उससे पहले ३० खजूर लेता था। कोई

१. हिन्दी कवि मैथिलीशरण गुप्तने गाधीजी को अध्ययनके लिए दूसरी तीन पुस्तकोंके साथ साकेत भेजा था।

२. मैथिलीशरण गुप्त-द्वारा रचित एक खण्ड-काव्य।

३. मैथिलिशरण गुप्त-द्वारा रचित महाकाव्य।

४. अर्थात् शहद।

रोज ४ बजे पपीता लेता रहा। अब नहि ले सकता हुँ क्योंकि भाजी पांचवी चीज होती है। पपीतेकी कोई आवश्यकता भी नहि है। इस तरह करीब १५ रोजसे चल रहा है। इसके पहले आधा रतल दूध फजरमे और आधा रतल दही शामको लेता रहा। परतु दूध कुछ भारी सा लगा। और कुछ भी वहानेसे छूट जाय तो मुझे आनद होता है इसलिए अब तो दूध छुट गया है। कहां तक छुट रहेगा मै नहि जानता। मेरा वजन कायम रहा है। १०६ रतल है। खजुर भेजा। मेरे पास तो अच्छी खजुर है। जेराजाणीने भेजी है नई है अच्छी है।

मुझको मिलनेके लिये तो दिल्ही या मुबई लिखना होगा। केवल मित्रभावसे हि मिलनेका प्रयोजन बतानेसे इजाजत मिले तो भले। यहाँसे कुछ नहि हो सकता।

करसीके बारेमे थोडे पुस्तक तो इकट्ठे किये हैं। हा अवश्य जो चाहे सो भेजो। मै इस शास्त्रका यथासभव यथाशक्ति अभ्यास तो कर लेना चाहता हु। कुछ लिखकर भी भेजोगे तो मै पढ लुगा।

अमेरिकाका अनुभव लिखो। शरीर कैसे रहा, कहा २ घूमे, बटलक्री[1] मे क्या देखा? होम्स[2] से मिले थे?

बापुके आशीर्वाद

हिन्दी (सी० डब्ल्यू० ७८९५)से, सौजन्य: घनश्यामदास बिडला।

१६७. पत्र : मीराबहनको[3]

२५ फरवरी, १९३२

चि० मीरा,

आज सुबह तुम्हारा सुखद पत्र मिला। मै उसकी बाट देख रहा था। हम दोनोको हर्ष हुआ कि तुम वहाँ सुखी हो। जब अधिक परिश्रमसे तुम्हारा स्वास्थ्य

१. मिचिगनमें, 'दी हेल्थ सिटी' नामसे विख्यात कस्बा।

२. डॉ० जॉन हेन्स होम्स।

३. "चूँकि मैं सविनय अवज्ञा आन्दोलनके सम्बन्धमें अधिकृत समाचारोंका साप्ताहिक बुलेटिन विदेशोंको भेजती थी, इसलिए मुझे बम्बई छोड देनेका नोटिस दिया गया था। और चूँकि मैंने उसे माननेसे इनकार कर दिया, इसलिए मुझे बाकायदा गिरफ्तार करके मुकदमा चलाया गया और तीन महीनेकी 'ए' श्रेणीमें सादी कैदकी सजा दे दी गई तथा बम्बईके आर्थर रोडके जनाने जेलमें भेज दिया गया। दीवानी जेलमें, जिसे अस्थायी रूपमें स्त्री राजनैतिक कैदियोंकी जेल बना दिया गया था, 'ए' श्रेणीकी जगह न होनेके कारण मुझे पहली दो रातोंके लिए 'सी' श्रेणीके कैदियोंके साथ रखा गया। इसके बाद जेलके चौकमें बने एक छोटे-से रसोईघरको पर्दे लगाकर मेरी कोठरीका रूप दे दिया गया। लेकिन चूँकि वहांकी सारी जगह चूल्होंकी कतारने घेर रखी थी, इसलिए भीतर मेरे सोनेके लिए कोई जगह नहीं बचती थी। यह सौभाग्य ही था क्योंकि इस कारण मुझे दिनमें चौकमें दूसरे कैदियोंके बीच घूमने-फिरनेकी और रातको

टूटने ही वाला था, ठीक उसी समय तुम वहाँ पहुँच गईं। मेरे खयालसे डेढ़ पाव[1] दूध तुम्हारे लिए काफी नही होगा। तुम्हे तीन पाव लेना चाहिए। लेकिन यह सम्भव है कि शक्ति पहलेसे कम खर्च होनेके कारण तुम्हारे लिए डेढ पाव ही पर्याप्त हो। मै तुम्हे सिर्फ सावधान कर देता हूँ कि झूठी किफायत न करना। अगर तुम इधर-उधर और भी घूम नही लेती हो तो मुझे तुम्हारा व्यायाम काफी प्रतीत नही होता।

मुझे खुशी है कि तुम्हारे साथ इतने लोग है। अगर साथवालोके बारेमे लिखने की इजाजत हो तो लिख भेजना।

जिन पुस्तकोकी सिफारिश करनेका विचार होता है, वे सिस्टर निवेदिताकी है। मै चाहूँगा कि तुम महाभारत और रामायणके दत्त[2] कृत सक्षिप्त पद्यानुवाद पढ लो और आर्नाल्ड की 'इडियन आइडिल्स' और 'पर्ल्स ऑफ द फेथ' भी।

अगर तुम्हारे साथियोको इस तरहके कामके लिए वक्त दिया गया है तो उन्हे कताई और पिंजाई करनेके लिए प्रेरित करो।

वहाँ तुम्हे काफी हिन्दी सीख लेनी चाहिए। लेकिन किसी भी कारणसे हदसे ज्यादा परिश्रम न करना। तुम्हे यह बहुमूल्य और अयाचित अवकाश मिल गया है। इस अवकाशका तुम ऐसा उपयोग करना जिससे तुम्हारे खयालमे तुम्हारा उत्थान हो।

बादामके मेरे प्रयोगसे अभीतक सन्तोष मिल रहा है। और वजन अब भी १०६ पौड है, जो बहुत अच्छा है। इसलिए इस बारेमे तुम्हे कोई चिन्ता नही होनी चाहिए।

हम दोनोकी तरफसे प्यार।

बापू

श्रीमती मीराबाई
द्वारा सुपरिन्टेडेट
आर्थर रोड जेल
बम्बई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५०५)से, सौजन्य मीराबहन।

जब और लोग बैरकोंमें बन्द कर दिये जाते थे, खुलेमें सोनेकी इजाजत देनी पड़ी। 'सी' श्रेणीकी राजनैतिक कैदिनें ज्यादातर सुशिक्षित महिलाएँ थीं; उनका रहन-सहन ऊँचे दर्जेका और आश्रमसे तो अवश्य ही ऊँचे दर्जेका था। लेकिन बम्बई सरकार अपने वर्गीकरणमें खास तौरपर सख्त थी। जहाँतक मुझे याद है, प्रान्त-भरमें बा, श्रीमती नायडू और मुझे ही स्त्रियोंमें 'ए' श्रेणी दी गई थी। कुछको 'बी' श्रेणी और बाकी सबको 'सी' श्रेणी दी गई थी। इस वर्गीकरणमें सबसे महत्त्वपूर्ण भेद भोजनका था।" — मीराबहन

१. "डेढ पाव दूध 'ए' श्रेणीवालोंको मिलता था।" — मीराबहन

२. रमेशचन्द्र दत्त।

१६८. पत्र : मंगला शं० पटेलको

२५ फरवरी, १९३२

चि० मगला,

तेरा सुन्दर अक्षरोमे लिखा हुआ पत्र मिला।

'गीता'के अध्याय अच्छी तरह याद कर लेना। अर्थ भी समझ ले तो और अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०७७) से। सी० डब्ल्यू० ४१ से भी; सौजन्य. मगलाबहन बी० देसाई।

१६९. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२५ फरवरी, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

तू मुझसे हृदयको हिलानेवाले सूत्ररूप वचन माँगती है। अगर मेरे पास तिजौरी होती तो उसे खोलकर उसमे से हर हफ्ते तुझे भेजता जाता। लेकिन मेरे पास ऐसा कुछ नही है। जो वचन निकलते है, वे अपने-आप निकलते है। और जो इस तरह निकले, वे ही वचन सच्चे है क्योकि वे जीवित वचन कहे जायेगे। दूसरे तो कृत्रिम होगे। अच्छे लगनेपर भी उनका असर स्थायी नही होता, ऐसा मुझे लगता है। मुझसे कृत्रिम कुछ हो ही नही सकता। विलायतमे पढते समय मेने दो बार ऐसा प्रयत्न किया और दोनो बार असफल रहा।[1] उसके बाद ऐसा प्रयत्न किया ही नही।

और जैसा मेरे वचनोके बारेमे है, वैसा ही जो अनुभव तूने मेरे बारेमें उद्धृत किये है, उनके बारेमे भी समझना। मीराबहनके[2] बारेमें हमारी जो बात हुई थी, यह मुझे याद है। उस समय मुझे जैसा सूझा, वैसा उत्तर मैंने दिया होगा। तेरे ऊपर उसकी अच्छी छाप नही पडी, यह मै समझ सकता हूँ। मेरी अहिंसामे उतनी

१. लिखित भाषण पढनेका; देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ ३५ और ५२-४।

२. मीराबहनने रास्ता रोक लिया है, इस बातकी शिकायत करनेपर गाधीजी ने प्रेमाबहन कटकको झिडक दिया था। बादमें प्रेमाबहनने इस घटनाको इस बातके प्रमाणके रूपमें प्रस्तुत किया कि गाधीजी जिनपर विश्वास करते है, उनके खिलाफ शिकायत सुनना पसंद नहीं करते।

कमी है। मैंने वही कहा होगा जो मुझे उस समय ठीक लगा होगा, लेकिन उसमें डंक तूने देखा होगा। 'सत्य ब्रूयात् प्रिय ब्रूयात्' यह व्यावहारिक वचन नही, सिद्धान्त है। 'प्रियम्'का अर्थ है अहिंसक। मैंने तुझे जो बात आवेशमें कही होगी, वही अगर मैं नम्रतासे कहता, तो जो कडवा असर रह गया वह न रहता। अहिंसक सत्यके बारेमे ऐसा-हो सकता है कि बोलते समय वह कठोर लगे, परन्तु परिणाममे वह अमृतमय लगना ही चाहिए। यह अहिंसाकी अनिवार्य कसौटी है। यह जो मै लिखता हूँ, वह अपने विषयमे अपने कडवे अनुभवोके आधारपर ही लिख रहा हूँ। मीराबहनके बारेमे मैंने उसके पक्षमे तो तुझसे बहुत जोर देकर कहा होगा। लेकिन उसे मैंने जितना रुलाया है, उतना किसी और भाई या बहनको नही रुलाया। और इसमे कारण मेरी कठोरता, अधीरता और मोह थे। मीराबहनका त्याग मै अवर्णनीय मानता हूँ और इसलिए उसे मै पूर्ण देखना चाहता हूँ। उसमे जरा भी कमी दिखाई देती है, तो मोहके कारण मै अधीर हो जाता हूँ, और इसलिए मैं उससे कुछ खीझकर बोलता हूँ। परिणाम अश्रुधाराके रूपमे आता है। मै इन अनुभवोसे अपने अन्दर भरी हुई हिंसाको पहचान सका और अपने पिछले सस्मरणोको याद करके खुदको सुधारनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। इसलिए तेरे पत्र मुझे अच्छे लगते है। उत्तरमें तुझे कुछ दे सकूँगा या नही, यह मै नही जानता। लेकिन मैं स्वय तो ले ही रहा हूँ। इस बातका — अपनी कठोरताका — विशेष भान मुझे इग्लैंडमे हुआ। मेरी सेवाके लिए मुख्यतः तो मीरा ही थी। वहाँ भी उसे रुलानेमे मैंने कोई कसर नही छोडी। लेकिन उससे मैं सीख गया। किसी भी मामलेमे ईश्वरने मेरी जडताको लम्बे समयतक टिकने ही नही दिया। राजनीतिमे भी मैंने जब-जब भूल की, तब-तब ईश्वरने मुझे तुरन्त सुधारा है। तेरे पत्र इस जागृतिमे सहायक ही है।

लेकिन अब तू मेरे पिछले पत्रको ज्यादा समझ सकेगी। अपूर्णमे से पूर्णकी आशा कैसे रखी जा सकती है? अन्धेने अन्धोका संघ एकत्रित किया है। लेकिन अन्धा अपने अन्धेपनको जानता है। उसका इलाज भी जानता है। इसलिए अन्धोको साथ रखते हुए भी वह विश्वास रखता है कि उन्हे कुएँमे नही गिरायेगा, न स्वय गिरेगा। वह साथमे लकडी लेकर चलता है। लकडीके सहारे आगेका रास्ता वह मालूम करता जाता है और कदम उठाता है। इससे कुल मिलाकर आजतक तो सब कुशल ही रही है। लकडीके उपयोगके बावजूद कभी वह रास्तेसे थोडा-बहुत भटक भी गया है तो उसे तुरन्त मालूम हो गया है और वह वापस लौट आया है। साथियोको भी उसने लौटाया है। जबतक मेरा अन्धापन बना रहेगा, तबतक तेरे-जैसी मधुर स्वभाववालीको आलोचना करनेके कारण मिलते ही रहेगे। अन्धापन चला जायेगा, तब आलोचनाके कारण सर्वथा असम्भव हो जायेगे। इस बीच हम सब अन्धे सत्यार्थी होनेके कारण हाथीको जैसा देखे वैसा उसका वर्णन करे। हम सबके वर्णन भिन्न होगे, फिर भी उतने अशमे बिलकुल सच्चे ही होगे। और आखिरकार स्पर्श तो हम सबने हाथीका ही किया होगा। जब हमारी आँख खुलेगी, तब सब साथ-साथ नाचेगे और पुकार उठेगे: 'हम कैसे अन्धे है! यह तो वह हाथी है जिसके बारेमे हमने 'गीता'मे पढ़ा था। हमारी

आँख पहले खुली होती तो कितना अच्छा होता!' लेकिन देरसे खुले तो भी उसकी चिन्ता क्या है? ईश्वरके यहाँ समयका नाप ही नहीं है, या भिन्न प्रकारका नाप है। इसलिए ज्ञानमें अज्ञान लुप्त हो जायेगा।

अब तो तू जो-जो दोष तूने मुझमें देखे होंगे, उन सबका उत्तर इसमें पा लेगी न? इसका यह अर्थ नहीं है कि अब तू अपनी समस्याएँ मेरे सामने रखे ही नहीं। तू रखती रहना और मैं उत्तर देता रहूँगा।

सुशीला और किसनको मेरे आशीर्वाद भेजना। और धुरन्धरको लिख सकती हो तो उसे भी। जमनादासकी तबीयत कैसी थी? उसकी शालाका क्या हुआ?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२७४) से। सी० डब्ल्यू० ६७२२ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक।

१७०. पत्र: रणछोड़जी दयालजीको

२५ फरवरी, १९३२

भाई रणछोड़भाई,

तुम्हारा पत्र पाकर अच्छा लगा। मैं तुम्हारे कुटुम्बको भाग्यवान मानता हूँ। धन तो आने-जानेवाली क्षणिक वस्तु है। क्या कुँवरजीका स्वास्थ्य ठीक रहता है? कल्याणजीको तो स्वास्थ्यके बारेमें कोई शिकायत है ही नहीं। तीनों भाई साथ हैं?

गंगाबहनको हिम्मत बाँधे रहनेके लिए हम दोनोंका आदर दीजिए। नेपोलियन[1] का क्या हाल है? उसे पत्र लिखनेके लिए कहना।

हम दोनों मजेमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २६९५) से।

१. कुँवरजी मेहताका बेटा।

१७१. पत्र : शिवाभाई गो० पटेलको

२५ फरवरी, १९३२

चि० शिवाभाई,

तुम्हारा पत्र मिला।

हर प्राणीसे भूल हो सकती है। किन्तु भूलका भान हो जानेपर जो उसे सुधारनेका प्रयत्न करता है, उसका कल्याण ही होता है। क्योकि अन्तत. वह भूल करनेसे बच जाता है। इसके मूलमे सत्यकी पूजा है। यदि ऐसा हो जाये, तो फिर भूल करनेवाला अपने-आपको या ससारको धोखा नही देता।

यदि टॉल्स्टॉयने वैसा मत व्यक्त किया हो, जैसा तुमने लिखा है तो मै उसे भ्रान्तिपूर्ण मानता हूँ। ऐसे भूल-भरे विचार उन्होने कई बार व्यक्त किये हैं। लेकिन उनकी यह विशेषता थी कि भूल होनेपर जैसे ही उन्हे उसका भान हो जाता था वैसे ही वे उसे तुरन्त सुधारते और कबूल कर लेते थे। इसके सिवा उनकी जिन्दगीमे इतने ज्यादा फेरफार हुए थे कि ये विचार उन्होने कब व्यक्त किये, इसका भी ध्यान रखना चाहिए। चाहे जो हो, पति-पत्नीके बारेमे मेरा यही दृढ मत है कि साथ रहनेके विषयमे दोनोकी सम्मतिकी जरूरत है, अलग रहनेके लिए नही। ऐसा न हो तो सामान्य तौरपर दोनो ही गिरे रहे। दोनो एक-साथ जाग्रत हो और जाग्रत बने रहे, ऐसा तो कम ही होता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५०९) से। सी० डब्ल्यू० ४२५ से भी, सौजन्य · शिवाभाई गो० पटेल।

१७२. पत्र : शकरीबहन चि० शाहको

२५ फरवरी, १९३२

चि० शकरीबहन,

आखिरकार तुम्हारा पत्र मिला तो सही। मेरे लिए ही है ऐसा कह दोगी तो वहाँसे बिना पढे भेज देगे। यहाँ जेलवाले उसे पढ भी ले तो क्या हानि है? इसलिए मेरी तो यही सलाह है कि मुझे निस्सकोच पत्र लिखा करो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० जी० ३०) से।

१७३. पत्र : वनमाला न० परीखको

२५ फरवरी, १९३२

चि० वनमाला,

मनुष्य बढता-घटता है न? जो चीज बढती है उसका मूल तो होता ही है न? अन्यथा वह बढेगी कैसे? यदि हम पेटको मनुष्यका मूल कहे तो ठीक होगा न? वृक्षको खुराक कहाँसे मिलती है? क्या मूलसे ही नही मिलती? हमे खुराक पेटसे मिलती है, वहाँ तैयार हुए रसको हम हजम करते है, और उससे शरीरका पोषण होता है। इसलिए यदि मनुष्यका मूल उसके पेटको कहे तो क्या ठीक नही होगा?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७६६) से। सी० डब्ल्यू० २९८९ से भी; सौजन्य: वनमाला म० देसाई।

१७४. पत्र : विद्या रा० पटेलको

२५ फरवरी, १९३२

चि० विद्या,

तेरा पत्र मिला। अक्षर सुन्दर है। तेरा कार्यक्रम भी अच्छा जान पडता है। इसी तरह आगे बढती रह।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४२२) से, सौजन्य: रवीन्द्र रा० पटेल।

१७५. पत्र : शारदाबहन चि० शाहको

२५ फरवरी, १९३२

चि० शारदा,

तेरा पत्र मिला। आश्रममें कोई किसीको गाली नहीं दे सकता। लेकिन कभी-कभी गाली न होनेपर भी बात गाली-जैसी लगती है। इसलिए तू गाली किसे कहते हैं, सो लिखना और यह भी लिखना कि वह व्यक्ति कौन है। आश्रममें रहनेवाले व्यक्तिको भयको तो भूल ही जाना चाहिए। हमें भला किसका भय है? बडोंके आगे भी कहना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९४६) से, सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला।

१७६. एक पत्र

२६ फरवरी, १९३२

चि०,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने दूध छोड दिया है, उसका मुख्य कारण तो स्वास्थ्य ही है। इसलिए स्वास्थ्य बना रहा तो ही उसे छोडे रखूँगा। अभीतक तो वजन और शक्ति कायम ही है।

खादीपर भी मुसीबत तो आनी ही थी। इस समय बच भी जाये तो भी क्या? ठीकसे समझें तो हर आपत्ति एक तरहकी कसौटी ही है और कसौटीका अर्थ है तपस्या। उससे तप करनेवालेकी शुद्धि तो होती ही है, साथ ही जिस उद्देश्यके लिए तप किया जाये, उसकी भी शुद्धि होती है। इस नियमका अपवाद नहीं है। इसलिए मैं तो आनन्दमें ही डूबा रहता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८९५०) से, सौजन्य : नारणदास गांधी।

१७७. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

२६ फरवरी, १९३२

चि० भगवानजी,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने जवाब तो दिया ही है .. [1]ज्ञानेन्द्रियोपर अवश्य ही काबू पाया जा सकता है। यह कठिन है, शास्त्र ऐसा उच्च स्वरसे कहते हैं, किन्तु शास्त्र लिखे इसी उद्देश्यसे गये हैं कि मनुष्य यह काबू प्राप्त कर सके। अभ्यास और वैराग्यसे इनपर काबू पाया जाता है। अन्तर-विकास और आत्मदर्शन साथ-साथ चलनेवाली वस्तुएँ हैं। तुम्हारी अशान्तिका उपाय तुम्हारे भीतर ही है। विश्रान्ति भी भीतर ही है। जेलमें बहुतोको कोई काम नही है, किन्तु वे सब बेचैन लगते हैं। शारीरिक विश्रान्ति विश्रान्ति नही है। सूर्य एक क्षण भी विश्रान्ति नही लेता फिर भी नित्य ताजा रहता है। भगवान कहते हैं कि मैं बिना विश्रान्ति लिये निरन्तर काम करता हूँ, आलस्यहीन होकर काम करता हूँ, फिर भी विश्रान्तिका धाम हूँ। इसलिए सभी कुछ अपने भीतरसे ही खोजकर निकालना। आज तुम्हे आश्रममें 'खरा खेल' खेलनेका[2] मौका मिला है, और तुम्हे वह नीरस लग रहा है। आश्रममें असख्य दोष होते हुए भी वहाँ 'खरा खेल' इसलिए है कि वह व्यापारकी नही, परमार्थ साधनेकी जगह है और उस दिशामें वहाँ यथाशक्ति प्रयत्न हो रहा है। इसलिए आश्रमकी प्रवृत्तियाँ जो समझे, उसके लिए निवृत्तिरूप हैं।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३४५) से; सौजन्य भगवानजी पु० पण्ड्या।

१७८. पत्र : कुसुम देसाईको

२६ फरवरी, १९३२

चि० कुसुम (बडी),

तेरा पत्र बहुत प्रतीक्षा करानेके बाद आया। छोटूभाईसे[1] कहना कि हम दोनो उन्हे अक्सर याद करते हैं। प्यारेलालका कोई समाचार मिलता है? चन्दूभाईकी तबीयत कैसी रहती है? डॉ० सुमन्त कहाँ हैं? कैसे हैं? मैं ठीक हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८२८) से।

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

२. अर्थात्, सच्चाई और वीरताका जीवन जीनेका।

१. छोटूभाई पुराणी।

१७९. पत्र : लक्ष्मीबहन ना० खरेको

२६ फरवरी, १९३२

चि० लक्ष्मीबहन,

आखिर तुम्हारा पत्र आया तो सही। मुझे पत्र लिखनेमें शर्म किस बातकी? मेरे पिछले पत्रका[1] उत्तर दोगी, यह आशा किये बैठा हूँ। आशा है, मुझे निराश नहीं करोगी।

बुनाईका काम सीख रही हो, यह मुझे बहुत अच्छा लगा है। रामभाऊका अल्मोडा जाना सफल हुआ है, ऐसा कह सकते हैं न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २८०)से, सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे।

१८०. पत्र : पुष्पा शं० पटेलको

२६ फरवरी, १९३२

चि० पुष्पा,

इतनी ज्यादा बडी चोच हो गई है इसलिए तुझे कैसे पहचानूँ, भले ही तू मेरी 'लाकडी' ही हो। इतनी सुन्दर हिन्दीके लिए धन्यवाद तुझे दूँ कि परशुरामजी[2] को? उनके साथ सलाह करके मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९८१)से। सी० डब्ल्यू० २७ से भी; सौजन्य : पुष्पाबहन ना० नायक।

१. १९ फरवरीका।

२. परशुराम मेहरोत्रा।

१८१. पत्र : महावीर गिरिको

२७ फरवरी, १९३२

चि० महावीर,

तेरा पत्र मिला। वहाँ तेरा स्वास्थ्य ठीक रहता है, यह सन्तोषकी बात है। तू दार्जिलिंग जानेके लिए आश्रमसे गया था, इसलिए अच्छा तो यही होता कि वही चला जाता। भले ही वहाँ ठड पडती है फिर भी यह मौसम उत्तम माना जाता है। इस मौसममें बीमार भी वहाँ जाते है। क्या वहाँ रहनेवाले गुजरातियोसे मिलते हो?

खूब सोच-विचारकर खर्च करना और हिसाब रखना। मुझे पत्र लिखते रहना। तू और अन्य बहने अपना अध्ययन न छोड देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२३४) से।

१८२. पत्र : एस्थर मेननको

२८ फरवरी, १९३२

रानी बिटिया,

फिर तुम्हारा पत्र पाकर और टेढे-मेढे अक्षरोमे लिखी नैनीकी[1] अप्रत्याशित पक्तियाँ देखकर बडी खुशी हुई।

देखता हूँ कि तुम्हारे साथियोमे सब देशोके लोग है।[2] मैं तो इतना ही चाहता हूँ कि इससे तुमपर जितना तुम्हारा स्वास्थ्य गवारा कर सकता है, उससे कही ज्यादा भार न पडे।

नही, 'गीता' कुछ अलग शिक्षा नही देती। वह जो शिक्षा देती है सो यह है कि हमारे सब कार्य स्वाभाविक और स्वत स्फूर्त होने चाहिए, अनजानेमे हो, तब भी। उनके इस प्रकारका होनेपर पुरस्कार या परिणामका कोई विचार नही आता। इसलिए शुद्ध प्रेममें न देना है, न लेना है। दूसरे ढगसे कहे तो धरतीपर बिना लिये कुछ देना नही होता। प्रेम देता है, क्योकि उसे देना ही है, देना उसका स्वभाव है। इसलिए प्रेममे यह विचार नही होता कि जितना दे रहे है, उतना मिल भी रहा है या नही। उसे देनेका भान नही होता और लेनेका तो और भी नही। प्रेम स्वय अपना

१. एस्थर मेननकी बेटी।

२. "सेली ओकमें मेननका घर हमेशा एक अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र बना रहता था।" (माई डियर चाइल्ड, पृष्ठ ८८)

पुरस्कार है। जब ऐसा विशुद्ध प्रेम होता है तो जो आनन्द प्राप्त होता है, वह उन सभी कथित आनन्दोसे बढकर होता है जिन्हे हमे बाहरी परिस्थितियोमे पानेका आभास होता है। मै चाहता हूँ कि तुम यही आनन्द प्राप्त करो। एक समय था जब मै समझता था कि तुम्हे लगता है, वह आनन्द तुम्हारे पास है। लेकिन उस समय तुम आगमे से नही गुजरी थी। आनन्द तो तुम्हे एक दिन प्राप्त होगा ही; किन्तु वह होगा उस आगके विशुद्ध करनेवाले गुणके द्वारा। जब वह आनन्द आयेगा, तुमपर चुपचाप छा जायेगा। ईश्वर करे, वह शीघ्र प्राप्त हो।

हम दोनो ठीक है।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (स० १०८)से; सौजन्य : भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार। **माई डियर चाइल्ड**, पृष्ठ ८८–९ से भी।

१८३. पत्र : नैनी मेननको

२८ फरवरी, १९३२

प्यारी नैनी,

मुझे पत्र लिखनेकी तुम्हारी कोशिश बहुत अच्छी थी। और तुमने कैसा अच्छा बारहसिंगा भेजा है। कितने प्यारे सीग है। मुझे खेद है कि मै बकरियोके साथ खेल नही रहा हूँ, हालाँकि वे रोज मेरे सामने दो बार दूध दुहनेके लिए लाई जाती है। मै उनके साथ खेलता इसलिए नही हूँ कि जब वे आती है, मै हमेशा कुछ ऐसा काम कर रहा होता हूँ जिसे मै छोड नही सकता। हाँ, कुछ फूल है, लेकिन खास कहने लायक नही। जमीन पथरीली है; और जेलोमे फूलोकी क्यारियाँ लगाना उन्हे पुसा नही सकता। तुम फिरसे पत्र जरूर लिखना।

तुम दोनोको चुम्बन,

बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड, पृष्ठ ११७

१८४. पत्र : अब्बासको

२८ फरवरी, १९३२

चि० अब्बास,

मनुष्य प्रयत्न करनेपर भी विकारवश हो जाता है, क्योकि विकारोको नष्ट करने के लिए घोर प्रयत्नकी आवश्यकता होती है। किसी कामके लिए कम प्रयत्न और किसी काममे सफलताके लिए ज्यादा प्रयत्न करना पडता है। हम कम प्रयत्न करके दस-बीस नम्बरका सूत कात लेते है। किन्तु [हममे से] २०० नम्बरका सूत तो कोई कात ही नही पाता है। उसके लिए बहुत ही अच्छी सामग्री और बहुत ही अधिक प्रयत्न करना जरूरी है। हम यह भी जानते है कि सौ वर्ष पहले बगालमे २०० नम्बरका सूत काता जाता था। यदि इस तरह सूत-जैसी मामूली चीजके लिए प्रयत्नमे मात्राका ऐसा अन्तर हो सकता है तो निर्विकार बननेके लिए तो होगा ही। यह जानकर हमे चाहिए कि हम जितने असफल हो, उतना ही अधिक प्रयत्न करे। कितने ही यात्री हिमालयकी चोटीपर पहुँचनेका प्रयत्न कर रहे है। अभीतक तो कोई सफल नही हुआ। यह प्रयत्न तो उसके मुकाबलेमे बहुत श्रेयस्कर है और इसमे असफलता तो है ही नही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६३१५) से। सी० डब्ल्यू० ८९५१ से भी, सौजन्य: नारणदास गाधी।

१८५. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

२८ फरवरी, १९३२

बालको और बालिकाओ,

मै अपने पत्रके[1] जवाबकी राह देख रहा हूँ। इस बीच तुममे से जिन्होने रसोईमे मदद करनेका काम अपने जिम्मे लिया है, उन्हे मै बधाई देता हूँ। तुममे से कुछ अब इस उम्रके है कि यदि चाहे तो पूरी जिम्मेदारी उठा सकते है। खासकर रसोईमे हमारे सामने कठिनाइयाँ आती है, इसका कारण केवल हमारी त्रुटियाँ ही है। इस सम्बन्धमे जो नियम रहे है, उन्हे तुम्हारी जानकारीके लिए नीचे दे रहा हूँ। इनपर अमल करो तो देखोगे कि रसोईका काम तनिक भी कठिन नही है।

१. २१ फरवरीका।

१. चाहे जो हो, कुछ बिगड जाये या टूट जाये तो भी अपना सन्तुलन न खोये, अधीर न हो और चिन्तित न हो, बल्कि कारण मालूम करके उसे दूर करे।

२ साथी अपना पूरा काम न करे या आलस्य करे तो उसपर खीझे नही, बल्कि उतना और बोझ खुद उठा ले।

३. जो-कुछ करे, अच्छी तरह करे और जहाँतक हो सके, पूर्ण रूपसे करे।

४ रसोईघरमे कभी खेले-कूदे नही। वहाँ मजाकमे भी एक-दूसरेको मारे नही।

५ बिना काम किसीसे न बोलना तो सबसे अच्छी बात है। किन्तु यदि बात-चीत किये बिना न रहा जाये तो बहुत ही धीमे स्वरमे सीधी-सादी विनोदपूर्ण बात-चीत करे। किन्तु क्रमशः न बोलनेकी ही आदत डाले।

६ बात करनी ही हो तो उसमे एक-दूसरेकी चुगली अथवा किसीकी निन्दा कदापि न करे।

७ लडके रसोईमे लाँग पीछे खोसकर सिर्फ धोती ही पहने, तो काफी है। लडकियाँ भी कछौटा मारकर बैठे और कुरती-मात्र पहने। रसोईमे ओढनीकी आवश्यकता नही है। इससे कपडोकी बचत होती है और जलनेका भय भी कम हो जाता है। कोई कुरता पहने ही, तो उसकी बाहे कोहनीतक चढा ले।

८ किसीको छीक आये तो रुमाल मुँहपर रखकर छीके ताकि थूकके छीटे उसीमे रहे, उडे नही। नाक साफ करनी हो तब भी रुमाल इस्तेमाल करे। पसीना आये तो पोछ डाले। उसकी बूँदे किसी चीजमे न पडने दे। इसका अर्थ यह हुआ कि सबके पास रुमाल होना ही चाहिए।

९. बरतन आदि पोछनेका कपडा तो रसोईघरमे अलग होना ही चाहिए और वह रोज साबुनसे धोया जाना चाहिए।

१०. रसोईमे काम करनेवाले अपने नाखून साफ रखनेका विशेष ध्यान रखे। समय-समयपर काटते रहनेपर भी उसमे मैल भर जाये तो सलाईकी नोकसे उसे निकाल दे।

११ स्वादकी खातिर रसोईघरसे कोई चीज न खानेके लिए लेनी चाहिए और न चखनेके लिए।

१२. सब्जी आदिमे नमक कम है या ज्यादा, यह देखनेकी खातिर वहाँ जो प्रधान हो, वह चम्मचसे थोडा-सा लेकर चखे और चखनेके बाद फौरन चम्मचको धोकर रख दे।

१३. बीमारोंके लिए या जो व्रतके कारण विशेष भोजन लेते हैं, उनके लिए खास रसोई करना आवश्यक हो तो उसे बोझ न माने और खुशी-खुशी बनाये। अनुभवसे मालूम होगा कि सभी कामोमे समयका ध्यान रखा जाये तो बोझका अनुभव ही नही होगा।

१४ कामके लिए हाजिर होनेके समय ही हाजिर हो जाना चाहिए। हर क्षण कीमती है, ऐसा माने। इसलिए चाहे दो मिनट जल्दी आ जायें, देरसे कभी न आये।

१५. जिन्हे रसोईघरमे कोई काम नही है, वे बाते करने या अकारण काम देखनेके लिए भी न खडे हो।

१६. रसोईघर हर समय साफ रहना चाहिए। हर चीज अपने सही ठिकाने पर होनी चाहिए। जिसका काम समाप्त हो, वह सब-कुछ साफ-सुथरा करके रख दे और चला जाये।

इसके अलावा तुम्हें कुछ दूसरी बातें भी सूझेंगी, उन्हें भी इनमें जोड़ लेना। मैंने जो बातें लिखी हैं उनमें से कुछ छोड़ देने लायक लगें, तो गुरुजनोंसे सलाह करके छोड़ देना। किन्तु जो भी नियम बनाओ, उनका ठीक तरहसे पालन करना। सब लोग निश्चित किये हुए नियमोंकी प्रति बनाकर अपने-अपने पास रखें।

मुझे अक्सर ऐसा लगा है कि रसोई इस बातको मापनेका यन्त्र है कि हम 'गीता' की शिक्षापर किस हदतक अमल करते हैं।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

आज बहनोंको अलग पत्र नहीं लिख रहा हूँ, क्योंकि यह पत्र जितना सोचा था, उससे ज्यादा लम्बा हो गया है। फिर यह पत्र उनके लिए भी तो हो सकता है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८९५५ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१८६. पत्र : महेन्द्र वा० देसाईको

२८ फरवरी, १९३२

चि० मनु,

कह सकते हैं कि तूने पत्र अच्छा लिखा है। अक्षरोंमें अब भी काफी सुधार की गुंजाइश है। नानु[1] विमल शाह बन गया है तो अब उसके लिए हाथी कहाँसे लायें? या वह लकड़ीका हाथी बनाकर उसपर सवारी करेगा? अथवा पहले विमल शाह[2]-जैसा पराक्रम करके हाथीपर चढ़नेके लायक बनेगा?

आबूके बारेमें तो तूने लिखा था। अब अल्मोड़ाके बारेमें लिखना।

दूधीबहनसे कहना, पत्र लिखें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४२०) से, सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई।

१. महेन्द्रका छोटा भाई विमलचन्द्र।

२. आबूके प्रसिद्ध जैन मन्दिरोंमें से एकके निर्माता।

१८७. मृत्युमित्र[1]

२९ फरवरी, १९३२

साक्रेटिस एथेसका एक बुद्धिमान पुरुष हो गया है। उसके नये, पर नीतिपूर्ण विचार सत्ताधारियोको नही रुचे इसलिए उसे मौतकी सजा मिली। उस समय उस देशमे विषपान करके मर जानेकी सजा भी दी जाती थी। साक्रेटिसको मीराबाईकी तरह जहरका प्याला पीना था। उसपर मुकदमा चलाया गया था। उस वक्त साक्रेटिसने जो अन्तिम वचन कहे उनके सारपर यहाँ विचार करना है। उसके वे शब्द हम सबके लिए शिक्षा लेने लायक है। साक्रेटिसको हम सुकृत कहेगे। अरब उसे सुकरात कहते थे।

सुकृतने कहा . "मेरा दृढ विश्वास है कि भले आदमीका इस लोक या पर-लोकमे अहित होता ही नही। भले आदमियो और उनके साथियोका ईश्वर कभी त्याग नही करता। फिर, मै तो यह भी मानता हूँ कि मेरी या किसीकी भी मौत अचानक नही आती। मृत्युदण्ड मेरे लिए सजा नही है। मेरे मरने और सासारिक प्रपचसे मुक्त होनेका समय आ गया है। इसीलिए आपने मुझे जहरका प्याला दिया है। इसीमे मेरा कल्याण होगा, अत. मुझपर अभियोग लगानेवालो या मुझे सजा देनेवालोके प्रति मेरे मनमे क्रोध नही है। उन्होने भले ही मेरा भला न चाहा हो, पर वे मेरा अहित नही कर सकते।

"पचोसे मेरी एक विनती है। मेरे बेटे अगर भलाईका रास्ता छोड़कर कुमार्गमे जाये और धनके लोभी हो जाये तो जिस तरह आप मुझे सजा दे रहे है; उसी तरह उन्हे भी दे। वे दभी हो जाये, जैसे न हो वैसे दिखनेकी कोशिश करे, तो भी उनको दण्ड दे। आप ऐसा करेगे तो मै और मेरे बेटे मानेगे कि आपने शुद्ध न्याय किया।"

अपनी सन्तानके विषयमे सुकृतकी यह माँग अद्भुत है। जो पंच न्याय करनेको बैठे थे, वे अहिंसा धर्मको तो जानते ही न थे। इसलिए सुकृतने अपनी सन्तानके बारेमें उपर्युक्त प्रार्थना की, अपनी सन्तानको चेतावनी दी और यह भी बताया कि उसने उनसे क्या आशा रखी थी। उसने पचोको मीठी फटकार भी सुनाई, क्योकि उन्होने उसे उसकी सज्जनताके लिए सजा दी थी। सुकृतने अपने बेटोको अपने रास्तेपर चलनेकी सलाह देकर यह बताया कि जो रास्ता उसने एथेसके नागरिकोको बताया, वह उसके लड़कोके लिए भी है, और वह यहाँतक कि, अगर वे उस रास्तेपर न चले तो वे दण्डके योग्य समझे जाये।

१. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", २४/२९-२-१९३२के साथ भेजा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

मैंने यह हफ्ता कोरा ही जाने देनेका निश्चय कर लिया था। मगर फिर मुझसे रहा नहीं गया। किताबोंपर दृष्टि डाली तो मुझे सुक्रतका भाषण दिखा। इसीमें से कुछ भेज दूँ, ऐसा सोचकर पुस्तक खोलते ही उसका जगत-प्रसिद्ध यह अंश मिला और मैंने इसका यह सार लिख डाला।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१ और २)से।

१८८. पत्र : नारणदास गांधीको

२४/२९ फरवरी, १९३२
शाम, २४ फरवरी, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा बड़ा लिफाफा मिला। भेंटका मामला फिलहाल तो उलझ गया है। पिछली बारकी सूचनाके अनुसार तुम्हारी तरफसे भी मिलनेकी माँग आयी नहीं लगती।

इस बारकी डाकमें लक्ष्मी बड़ीकी शिकायत है कि उसके पत्र पढ़ लिये जाते हैं। मेरी समझमें प्रार्थनाके समय सबसे पूछ लिया जाये और जिसे अपने पत्र पढ़े जानेपर आपत्ति हो, वह वैसा कह दे। कोई 'ना' कह दे तो उपयोगी होनेपर भी उसका पत्र न पढ़ा जाये अथवा जब वह स्वीकृति दे दे तभी पढ़ा जाये। तुम्हारा पत्र बड़ा होता है, इसमें कोई हर्ज नहीं है। जो समाचार दिया जा सकता हो उसका दिया जाना उचित ही है।

कताई अधिक करनेके विषयमें शंकरलालसे[1] सलाह करना।

पारनेरकरका प्रकरण दुःखद है। जितना प्रेम उंडेल सकते हो, उंडेलो।

गिरि-कुटुम्बके बारेमें समझ गया। जो बने करना।

पद्माका खर्च ६० रु० प्रति माह आयेगा। तीन जन हैं; तिसपर पद्मा बीमार है।

भेंटोंके विषयमें जो परिपाटी चली आ रही थी, वह यदि टूटी नहीं तो पाँच-सात लोग भी मिलने आ सकते हैं। लेकिन जहाँतक बने, हम पाँचसे आगे न जायें।

लॉर्ड इर्विनके पत्रकी नकल भेजना।

अगर मुक्ता[2] और दूसरी बहनोंसे मिलना सम्भव हुआ तो मैं चूकूँगा नहीं।

क्या डॉ० जीवराजको खबर दे दी है कि त्रिवेणी[3] बीमार रहती है?

क्या कुसुम अपनी हठके कारण ही मेरा बताया उपाय काममें नहीं ला रही है? रेवाशंकरभाईके धीरूकी सड़ी हड्डी सूर्यस्नानसे अच्छी हो गई थी। अनगिनत लोगोंने इस उपचारसे लाभ उठाया है।

१. शंकरलाल बैंकर।
२. अमरेलीके जगजीवनदास ना० मेहताकी बेटी।
३. जगजीवनदास ना० मेहताकी पत्नी।

मैथ्यूके साथ ठीक बात हुई। और खुशीकी बात यह है कि वह कातता है और थोडा दूसरा काम भी करता है।

अपराह्न २९ फरवरी, १९३२

'बाल गीता'[1] अभी शुरू नही कर पाया हूँ। दूसरा क्या भेजूँ, यह भी तय नही कर पाया हूँ, इसलिए इस हफ्ते कोई खास चीज नही भेज रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

आखिर शामको कुछ लिखे बिना नही रह सका।[2] भेटकी बात अभी तो घिसट रही है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२११से भी; सौजन्य. नारणदास गांधी।

१८९. पत्र : भगवानजी अ० मेहताको

२९ फरवरी, १९३२

भाईश्री भगवानजी,

आपका पत्र मिला। हमारा कोई कुटुम्बी या स्नेही कुछ दे नही या कुछ ले जाये तो उसके लिए शोक क्यो? हमारा उनपर कुछ भी अधिकार नही है, इतना सोच सके तो सब ठीक हो जाता है, ऐसा मेरा अनुभव है। मैंने देखा है कि और बहुत-से लोगोका भी यही अनुभव है। आपने बहुत कमाया है, कई तरहके मीठे-कडवे अनुभव हुए है। अब जो है, उसीसे सन्तोष करके सिर्फ सेवा-कार्यमे मन-धन अर्पित क्यो नही कर देते?

मोहनदासके वन्देमातरम्

भगवानजी अनूपचन्द वकील
सदर
राजकोट
काठियावाड

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८१४)से। सी० डब्ल्यू० ३०३७ से भी; सौजन्य. नारणदास गांधी।

१. बादमें रामदास-गीता कहलाई।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

१९०. पत्र : कृष्णा मा० कापडियाको

२९ फरवरी, १९३२

चि० कृष्णा,

तुम्हारा पत्र पढकर प्रसन्नता हुई।

हालमे कोई मुझसे मिलने नही आ सका, इसीलिए समाचारपत्रोमे कुछ देखा नही। मेरी तबीयत अच्छी है। सरदार मेरे साथ हैं। आ सको और मिलनेकी अनुमति मिले तो दोनो ही आ जाना। बा तो अब छूट गई होगी।

धनका लोभ न छोडा हो तो छोड देना। धन तो किसीके साथ नही जाता; हमारे पुण्य कर्म हमारे साथ जाते हैं। इसलिए जितनी बने, उतनी सेवा कर डालनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२) से।

१९१. पत्र : आर० वी० मार्टिनको

१ मार्च, १९३२

प्रिय मेजर मार्टिन,

जैसा कि आप जानते है, करीब दो हफ्तोसे मुझसे कोई भेट करने नही आया है। पता लगा है कि इन मुलाकातोपर इसलिए रोक लगा दी गई है कि इस सम्बन्ध मे जो निर्देश अभीतक लागू थे, सरकार उनमे सशोधन कर रही है। अनिश्चित प्रतीक्षा की यह अवस्था मेरे लिए कष्टकर है और उन लोगोके लिए असुविधाजनक है जो मुझसे मुलाकात करना चाहते हैं। इसलिए मै चाहूँगा कि इस विषयमे शीघ्र ही निर्णय कर दिया जाये।

मेरे जो साथी इस जेलमे लाये गये हैं, उनसे मिलनेका सवाल[1] मेरे लिए और भी अधिक महत्वपूर्ण है। इस सवालके बारेमे मैने पन्द्रह दिन पूर्व आपको लिखा भी था। जैसा कि मैने कहा है, यदा-कदा अपने कुछ साथियोसे मिलना मेरे लिए इनसानियतका एक ऐसा तकाजा है जिससे मै अपनेको अपने सम्पूर्ण मानसिक तन्त्रको झिझोडे और तोडे बिना वचित नही कर सकता। मुझे आशा थी कि आप जल्दी

१. देखिए पृष्ठ ९७।

निर्णय करवा सकेंगे क्योकि मैंने दुवारा केवल उसी चीजकी माँग की थी जिसे पिछले वर्ष सरकारने उचित समझा था।[1] मै शीघ्र उत्तरका आग्रह करता हूँ।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, गृह विभाग, आई० जी० पी० फाइल स० ९।

१९२. पत्र : प्रेमलीला ठाकरसीको

१ मार्च, १९३२

प्रिय बहन,

आजकल शहदके लिए तुम्हारे ऊपर मानो डाका ही डाल रहा हूँ। हम दोनोको गर्म पानीके साथ शहद काफी मात्रामे पीना पडता है। इसलिए दो बोतले नौ-दस दिनमें समाप्त हो जाती है। यदि शहद प्राप्त करनेमे कठिनाई होती हो तो लिखना। जो शहद मिल रहा है, वह कई बार गन्दा होता है और कई बार उसमे कार्कके टुकडे दिखते है। इससे मुझे शक होता है कि वह जगली शहद है। यदि ऐसा हो तो मै उसे अपने उपयोगके लिए ठीक नही मानता। क्योकि शहदको इस तरह इकट्ठा करनेमे बहुत-सी मक्खियोकी हत्या होती है। और फिर वह कभी शुद्ध नही होता। इसलिए मै तो वही शहद लेता हूँ जो शास्त्रीय रीतिसे तैयार किया जाता है। ऐसा शहद अब हिन्दुस्तानमे भी तैयार होने लगा है। अपने द्वारा भेजे जानेवाले शहदके बारेमे जाँच करना और मुझे लिखना।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

दायाँ हाथ थक गया है इसलिए बायेंसे लिखा है।

इसके नीचेका अंश[2] भूलसे जवाबी कार्डपर उसी तारीखको लिख दिया था। बादमे इसे सँभालकर रख लिया था। आज काममे ला रहा हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८२१-ए) से; सौजन्य : प्रेमलीला ठाकरसी।

१. देखिए खण्ड ४४।

२. यहाँपर २ फरवरी, १९३२ को लिखे पत्रके इन वाक्योंका उल्लेख है : "तुमने मुसाफरीके लिए जो शहद भेजा था, उसे बहुत दिनतक खाया था। बहुत शुद्ध था।"

१९३. पत्र : बनारसीलाल बजाजको

१ मार्च, १९३२

चि० बनारसी,

अभीतक मुझे पत्र क्यो नही लिखा? आजकल क्या चल रहा है? मन स्थिति कैसी है? तुम्हारे पितासे कई बार भेंट हुई। उन्होने बहुत प्रेमसे मेरी सेवा की थी। लगभग रोज मिलते थे। महादेव, देवदास, आदिके पास तो वे बने ही रहते थे। मैंने उनसे देश आ जानेका बहुत आग्रह किया, किन्तु उन्हे मनानेमे सफल नही हुआ। उनमे त्यागवृत्ति तो बहुत है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४३८)से; सौजन्य: बनारसीलाल बजाज।

१९४. पत्र : रुक्मिणी बजाजको

१ मार्च, १९३२

चि० रुक्मिणी,

तेरा पत्र मिला। बालकोमे हम जैसा गुण चाहते हैं, उनका वैसा ही नाम रखनेकी मेरी इच्छा रहती है। इसलिए मेरी सलाह है कि बच्चेका नाम गोपाल (लाल या दास) अथवा माधव (लाल या दास) रखो। दोनो भगवानके नाम हैं। उनका लाल या दास बनना या किसीको बनाना मुझे अच्छा लगता है। फिर गोपालके दो सुन्दर अर्थ हैं। गो का अर्थ गाय या इन्द्रिय है, इसलिए उसका अर्थ गायका पालन करनेवाला, या इन्द्रियका पालन अर्थात् उन्हे वशमे करनेवाला भी हुआ। माधवका भी बहुत-कुछ ऐसा ही अर्थ है। हमारे शरीरमे मधुरूपी जो राक्षस, जो शैतान रहता है, उसका हनन करनेवाला माधव। इन दोनोमे से कोई नाम चुनना कठिन लगे, तो चिट्ठी डालना। दोनोमे मुझसे ही पसन्द करवाना चाहो, तो मैं गोपाल पसन्द करूँगा। किन्तु रमेश ज्यादा अच्छा लगता हो, तो वह रखनेमे भी कोई हानि नही। सन्तोक मुझे पत्र लिखे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०६०)से।

१९५. पत्र : चिमनलाल एन० शाहको

३ मार्च, १९३२

चि० चिमनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा स्वास्थ्य सुधरता जा रहा है, यह जानकर बहुत खुशी हुई।

फादर एलविनको लिखना कि मुझे पत्र अवश्य लिखे। शामराव भी लिखे।

चम्पाका दुःख जितना दूर कर सको, करना।

पत्नीको पतिके समान ही अधिकार है, ऐसा मानकर सब निर्णय करना।

चम्पा समझकर प्रसन्नतापूर्वक जितना करे उतना ही काफी है।

अब्बासने चरखेका जो वर्णन भेजा है, उसके बारेमें मुझे जो-कुछ कहना है सो सब लिख चुका हूँ। वह पत्र न मिला हो, तो लिखना। फिरसे लिख भेजूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० जी० ३६) से।

१९६. पत्र : कुसुम देसाईको

३ मार्च, १९३२

चि० कुसुम (बडी),

तेरा कार्ड और पत्र मिले। तू बच्चोंकी तरह यह लिखती है कि लिखनेके लिए कुछ नही है। यह ठीक नही है। तू अपने अनुभव लिखे तो भी पन्ने भर जाये। सोचकर लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८२९) से।

१९७. पत्र : मंगला शं० पटेलको

३ मार्च, १९३२

चि० मगला,

कह सकते है कि इस वार तूने अच्छा लिखा है।

मजाकमे भी झूठ न वोले और वोल ही दिया हो, तो उसे फौरन सुधार ले।

क्या प्रश्न पूछनेमें भी कुछ सीखनेकी जरूरत है? जो खुद न आये और लगता हो कि दूसरे व्यक्तिको आता है, वह उससे पूछ ले।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

परीक्षामे पहला नम्बर लिया, उसके लिए वहुत-वहुत शावाशी।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०७८) से। सी० डब्ल्यू० ४२ से भी; सौजन्य · मंगलावहन व० देसाई।

१९८. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

४ मार्च, १९३२

चि० परसराम,

तुमारा खत मिला। जो लडकिया हिंदीमें लिखती है वहोत अच्छे खत लिखती है। हरेक प्रार्थनापर भगवानको रीझना हि क्यो चाहिये और वह कव रीझता है और कव रूठता है इसका हमें कया पता। प्रार्थना हि प्रार्थनाका फल या बदला है।

सत्यमे सत्य ही सवसे वडी युक्ति पोलिसि[1] है। वही टेकट[2] है वही डेलिकसि[3] है। टेकटका[4] तर्जुमा मृदुता कहा जाय। इस जगतमे शुद्ध सत्यसे वडके न कोई पोलिसी है, न टेकट है न हि डेलिकसि है।

बापूके आशीर्वाद

हिन्दी (सी० डब्ल्यू० ४९६८) से; सौजन्य . परशुराम मेहरोत्रा। जी० एन० ७४९१ से भी।

१. २. ३. तथा ४. अंग्रजीके शब्द हैं।

१९९. पत्र : शारदाबहन चि० शाहको

५ मार्च, १९३२

चि० शारदा,

चूँकि तूने लम्बे पत्रकी फरमाइश की है इसलिए मैंने दोगुना बडा कागज लिया है। तुझे १६वाँ वर्ष लग गया, इसलिए अब तू जिम्मेदार हो गई है। अपने शरीरको सुधारकर अखण्ड सेविका बन। और ऐसा बननेके लिए मनसे आश्रमके नियमोका पालन कर।

अब तेरे प्रश्नोके उत्तर :

आश्रममें हम मूर्ति नही रखते क्योकि हमारे सम्मुख [ईश्वरकी] जगतरूपी मूर्ति पडी ही है। हम ईश्वरको उसीके द्वारा जाने-पहचाने। आकाशकी ओर देखे तो वहाँ भी अगणित मूर्तियाँ है। उनमे से जिसका मनन करना हो, उसका मनन करे और वहाँ ईश्वर है, ऐसा मनमे विचार करे। इमाम साहब अथवा अमीनाको हम जिसे मूर्ति कहते है, वैसी मूर्तिकी जरूरत नही पडती, यह भी विचारणीय है।

मुझे अभी नदियो और घाटियोको पार करना है। तात्पर्य यह, कि मुझे अभी ईश्वरतक पहुँचनेके लिए बहुत लम्बा रास्ता तय करना है।

जो जान-बूझकर असत्य भाषण करता है, वह चाहे कितना भी प्रायश्चित्त क्यो न करे लेकिन उसे माफी नही मिलती। जो भूलसे झूठ बोलता है, केवल उसे ही प्रायश्चित्त करनेपर माफी मिलती है। समझमे आया? न समझमे आया हो तो फिर पूछना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९४८)से, सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला।

२००. पत्र : ईश्वरभाई पटेलको

५ मार्च, १९३२

चि० ईश्वर,

तेरा पत्र मिला। हम दोनोको प्रसन्नता हुई। कभी नेपोलियनसे भी पत्र लिखवाना। तू तो लिखते ही रहना। सब कुशल होगे।

हम दोनोका आशीर्वाद।

चि० ईश्वरभाई पटेल
द्वारा गगाबहन कुँवरजी
बाज
वरास्ता सचीन

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २६९६)से।

२०१. पत्र : कुसुम देसाईको

५ मार्च, १९३२

चि० कुसुम,

तू भी खूब है। एक कार्ड और एक पत्र भेजा, पर उनमे कुछ भी लिख नही सकी। इन सब महीनोमे तूने क्या पढा, क्या विचार किया, कितना काता, शरीर कैसा रहा, कहाँ-कहाँ घूमी, वगैरह चाहे तो बहुत-कुछ लिख सकती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८३०)से।

२०२. पत्र : नानाभाई आई० मशरूवालाको

५ मार्च, १९३२

भाई नानाभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। तारा[1] के जानेकी बात मैंने समाचारपत्रोमें पढी थी। विजयलक्ष्मीके मनपर इसका खासा बोझ पडेगा। किन्तु इसीमें तो हमारी परीक्षा है।

मुझे भी मणिलाल और सुशीलाका पत्र मिला था। मैंने लिख दिया था कि वहाँ पूरी व्यवस्था किये बिना न आये। शायद अगले सप्ताह आ जायेगा। तुमने अपने स्वास्थ्यके बारेमें कुछ नही लिखा। अब लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५१९) से। सी० डब्ल्यू० ४९९५ से भी, सौजन्य : कनुभाई मशरूवाला।

२०३. पत्र : नारणदास गांधीको

५ मार्च, १९३२

चि० नारणदास,

खुशालभाईको आश्वासन देनेके लिए मैंने परसो राजकोट तार किया था। इनके जैसे भाग्यशाली थोडे ही देखे है। जितने दिन उनकी हमपर छाया रहे, उतने दिन हमें तो सुखका अनुभव होगा। लेकिन आज भी देह छूट जाये तो इसमें लौकिक दृष्टिसे भी दुःख माननेकी बात नही है। लेकिन तुम्हारी ओरसे फिर कोई खबर नही आई, इसलिए मानता हूँ कि बादल बिखर गये है।

मुलाकातोकी समस्या आधी सुलझ गई है। आश्रमवासियोमें से जो आना चाहे, आ सकते है। उनमें भी जो 'पॉलिटिकल' माने जा सकते है, वे नही आ सकते। लेकिन ऐसा तो फिलहाल कोई है नही। खीच-तानकर वालजीको वैसोमें गिनना चाहे तो वे ही एक वैसे है। इसलिए अगर अगले हफ्ते कोई आना चाहे तो आ सकता है। सुपरिन्टेन्डेन्टको पहलेसे खबर दे रखे। मुझे भी खबर दे रखना ठीक होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से, सी० डब्ल्यू० ८२१२ से भी। सौजन्य : नारणदास गाधी।

१. तारा मशरूवाला, सुशीला गांधीकी छोटी बहन।

२०४. पत्र : पुष्पा शं० पटेलको

५ मार्च, १९३२

चि० पुष्पा,

तेरा हिन्दीका पत्र आया था, तब तो मैंने सोचा था कि कोई दूसरी पुष्पा[1] होगी। तेरा वह पत्र इतना बढिया था। इस बार अक्षर अच्छे नही माने जा सकते। तीन नम्बर मिलेंगे। अक्षर तो चित्रकी तरह सुन्दर बनाने चाहिए। देख, मगला कितने सुन्दर अक्षर लिखती है। लेकिन इस बार लिखाई पहलेसे तो अच्छी ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९८२) से। सी० डब्ल्यू० २८ से भी; सौजन्य: पुष्पाबहन ना० नायक।

२०५. पत्र : वनमाला न० परीखको

५ मार्च, १९३२

चि० वनमाला,

तुझे अपने अक्षर सुधारने चाहिए। तू लिखते वक्त ध्यान तो रखती है, फिर भी अक्षर जैसे होने चाहिए, वैसे नही होते।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

नरहरिकी कुछ खबर है?

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७६७) से। सी० डब्ल्यू० २९९० से भी, सौजन्य: वनमाला म० देसाई।

१. देखिए "पत्र: पुष्पा शं० पटेलको", ११-२-१९३२।

२०६. 'यरवदा मन्दिरसे' की प्रस्तावना

६ मार्च, १९३२

१९३० मे अपने कारावासके दौरान यरवदा सेन्ट्रल जेलसे मैं सत्याग्रह आश्रमको 'साप्ताहिक चिट्ठी' लिखता रहा। उनमे प्रमुख आश्रम-नियमोका सरसरी तौरपर निरीक्षण किया गया था[1]। चूंकि आश्रमका प्रभाव अपनी भौगोलिक सीमाओको पहले ही पार कर गया था, इसलिए बाँटनेके लिए पत्रोकी प्रतियोमे वृद्धि कर दी गई थी। पत्र गुजरातीमे लिखे गये थे। हिन्दी और दूसरी भाषाओ तथा अंग्रेजीमे भी उनका अनुवाद करनेकी माँग थी। श्री वालजी देसाईने अंग्रेजीमे काफी अच्छा अनुवाद[2] किया। परन्तु उन्होने देखा कि अपने लगातार कारावासके दौरान मेरे पास काफी फुर्सत है तो उन्होने अपना अनुवाद सशोधनके लिए मेरे पास भेज दिया। मैंने इसे ध्यानसे पढा है, कई-एक स्थलोपर मैंने थोडा परिवर्तन किया है जिससे मेरी रुचिके अनुरूप अर्थ प्रकट हो जाये। यह कहनेकी आवश्यकता नही है कि यदि अंग्रेजी पाठकके लिए फिरसे लिखना होता तो मैं बिलकुल नई चीज लिखता। परन्तु ऐसा करना अपने अधिकार-क्षेत्रका ही उल्लघन हो जाता। सम्भवत. यह भी ठीक ही है कि अंग्रेजी पाठक भी मेरे विचार-प्रवाहको उसी रूपमे देखे जैसा कि वह आश्रमवासियोके प्रति १९३० मे प्रकट किया गया है। इसलिए मैंने मूल तर्कमें फेरफार करनेमे रत्ती-भर भी स्वतन्त्रता नही बरती है।

मो० क० गाधी

[अंग्रेजीसे]
फ्रॉम यरवदा मन्दिर

२०७. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

६ मार्च, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

आपने मुझे कृपा करके साप्ताहिक मुलाकातोके बारेमें सरकार-द्वारा जारी किये गये ताजा निर्देशोकी एक नकल दी है।

आश्रमके अन्तेवासियोमे से 'राजनीतिक' किसे माना जायेगा, इस बातके निर्णयके सम्बन्धमे मुझपर जो विश्वास रखा गया है, उसकी मै कद्र करता हूँ। मै हृदयसे उस विश्वासके प्रति सच्चा रहना चाहता हूँ। लेकिन मै ऐसा कर सकूं, इसके लिए पहले सरकार और मेरे बीच 'राजनीतिक' विशेषणकी दोनो पक्षोको स्वीकार्य

१. देखिए पृष्ठ ४२, पाद टिप्पणी क्रमांक १।
२. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", ७-३-१९३२

एक परिभाषा तय हो जानी चाहिए। मैं 'राजनीतिक' का अर्थ मानता हूँ — वे लोग जिनका झुकाव राजनीतिकी ओर है और जो वास्तवमें सविनय प्रतिरोधके अलावा भी राजनीतिमें हिस्सा ले रहे हैं। क्योंकि यदि 'राजनीतिक' से अभिप्राय उन लोगोंका है जो इसके पहले सत्याग्रहीके रूपमें बन्दी रह चुके हैं या जो सत्याग्रहके सिद्धान्तमें विश्वास रखते हैं तब तो फिर आश्रमका कोई भी अन्तेवासी गैर-राजनीतिक नहीं है। किन्तु यदि 'राजनीतिक' का अर्थ वही है जो मैंने माना है, तो केवल तीन अन्तेवासी राजनीतिक हैं। मेरा मतलब है — श्रीयुत महादेव देसाई, प्यारेलाल और देवदास गांधी। लेकिन यदि मैं पहले दोसे न मिल सकूँ, तो मैं देवदास गांधीसे भी न मिल सकूँगा; क्योंकि वे दोनों मेरे लिए देवदासके समान हैं। आज परिस्थिति यह है कि वे सब ही बन्दी हैं। मैं यह भी स्पष्ट कर दूँ कि इस समय वहाँ केवल लड़के-लड़कियाँ और कुछ वयस्क लोग हैं जो खासकर अल्पवयस्क लोगों तथा आश्रमके विविध औद्योगिक कार्योंकी देखभालके लिए छोड़ दिये हैं।

मेरे लिए आश्रमवासी मित्रोंके सिवा अन्य मित्रोंकी सूची देना भी तबतक कठिन है जबतक मुझे यह न मालूम हो जाये कि सरकारके विचारमें 'राजनीतिक' शब्दकी क्या परिभाषा है। आपकी स्वीकृतिके लिए एक पूरी-सी सूची भेजनेके पहले मैं इस बातके उत्तरकी प्रतीक्षा करूँगा। परन्तु तबतक नीचे उदाहरणके रूपमें मैं उन मित्रोंके नाम दे रहा हूँ जिन्हें मैं गैर-राजनीतिक मानता हूँ और जिन्हें मैं अपने रिश्तेदारोंकी-जैसी श्रेणीमें रखूँगा।

लेडी ठाकरसी, निवास — यरवदा हिल। वे एक समाज-सेविका हैं। १९३२ में जब मैं ससून अस्पतालमें बीमार था, उन्होंने गम्भीर बीमारीके दौरान मेरी मदद की थी।

कृषि कालेज, पूनाके प्रोफेसर त्रिवेदी। उनका मेरे साथ वैसा ही घनिष्ठ सम्पर्क है जैसा कि लेडी ठाकरसीका।

यशवन्तप्रसाद देसाई, मिल-मालिक, जो माटुंगामें रहते हैं; उन्होंने उसी बीमारीके दौरान मेरी परिचर्या की थी और मेरी मदद करनेके लिए पूनामें रहे थे।

प्यारे अली और उनकी पत्नी जो निवृत्त होकर थानाके पास एक विश्रामावासमें रहते हैं। उन्होंने कुछ मुसलमान अनाथोंको वहाँ रखा है। वे लगभग एक साल आश्रममें रहे हैं। वे बहुत ही धार्मिक दम्पती हैं।

ये मित्र किसी भी प्रकारसे राजनीतिक नहीं हैं।

इस पत्रका उत्तर आये, उस बीच मैंने आश्रमके प्रबन्धकको उन अन्तेवासियोंको भेज देनेको लिखा है,[1] जो मुझसे मिलना चाहें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५५४) से। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रेक्ट्स, गृह विभाग, विशेष शाखा, फाइल सं० ८०० (४०), भाग-१, पृष्ठ १३१-३ से भी।

१. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", ५-३-१९३२।

२०८. इमाम साहब–१[1]

७ मार्च, १९३२

मै अभीतक 'बाल गीता'के अध्याय लिख भेजनेके लिए तैयार नही हो पाया हूँ। यह विचार करते हुए कि इस समय क्या भेजूँ, मुझे लगा कि मै इमाम साहबके सस्मरण आश्रमवासियोके सामने रखूँ, और मुझे इस पुण्य-कार्य मे ढील नही करनी चाहिए। इसलिए मै जितने सस्मरण लिख सकूँ, लिख डालना चाहता हूँ।

मै जिस वर्ष (१८९३मे) दक्षिण आफ्रिका गया, लगभग उसी वर्ष इमाम साहब भी वहाँ गये। उनका नाम तो अब्दुल कादिर बावाजीर था। लेकिन उन्होने दक्षिण आफ्रिकामे इमामत की, इसलिए उन्हे अधिकाश लोग इमाम साहबके नामसे ही जानते थे। मैने तो उन्हे किसी दूसरे नामसे कभी पुकारा ही नही।

इमाम साहबके वालिद बम्बईकी प्रसिद्ध जुमा मस्जिदके मुअज्जिन थे और जीवनपर्यन्त रहे। उनकादे हान्त इमाम साहबके यहाँ आ जानेके बाद हुआ। वे जब अजान देनेके लिए वजू कर रहे थे तभी उनकी साँस रुक गई। इस प्रकारकी मृत्यु बहुत शुभ मानी जाती है। इमाम साहबके पूर्वज अरब थे। वे बहुत वर्षो पहले कोकणमे आ बसे थे और इसलिए इमाम साहब कोकणी बोली भी जानते थे। उनकी मातृभाषा तो गुजराती ही थी, किन्तु वे पाठशालामे थोडा ही पढे थे। कुरान शरीफ का अच्छी तरह उच्चारण कर सकने योग्य अरबी भी उन्हे आती थी। ऐसा नही कह सकते कि उन्हे कुरान शरीफका सम्पूर्ण अर्थ लगा सकने योग्य अरबीका ज्ञान था। इमाम साहबने अनुभवसे अग्रेजी, डच और क्रियोल फ्रेंच जान ली थी, उर्दू तो वे जानते ही थे। अपना काम चलाने लायक जुलू भी उन्हे आती थी। उनकी बुद्धि इतनी तीव्र थी कि यदि उन्होने नियमपूर्वक शालाओमे जाकर पढा होता तो वे बडे विद्वान बनते और माने जाते। वकील न होते हुए भी वे कानूनकी बारीकियोको अनुभवके आधारपर जानने लगे थे।

इमाम साहब दक्षिण आफ्रिका व्यापारके लिए गये थे। उन्होने खासी कमाई भी की। जब उन्होने व्यापार करना बन्द किया तो वे भाडेपर दी जानेवाली घोडा-गाडियाँ रखने लगे और उनसे उन्हे पर्याप्त आमदनी हो जाती थी। वे स्वतन्त्र विचारके व्यक्ति थे, इसलिए बडे व्यापारमे कभी नही पडे। उनकी आवाज मीठी थी। उनके वालिद मुअज्जिन थे इसलिए वे जोहानिसबर्गकी मस्जिदमे बीच-बीचमे इमामत करते थे किन्तु इस कामके बदलेमे उन्होने कभी कुछ लिया नही।

इमाम साहबने दो विवाह किये। दोनो पत्नियाँ मलायी थी। पहली पत्नीके साथ ठीक नही निभी इसलिए उन्होने, जिन्हे हम उनकी पत्नीकी तरह जानते थे उनसे, दूसरा विवाह किया। इस विवाहसे इमाम साहबको बहुत सुख मिला। वे और

१. यह "पत्र . नारणदास गांधीको" ७-३-१९३२के साथ भेजा गया था। देखिए अगला शीर्षक।

हाजी साहिवा एक-दूसरेका वहुत ध्यान रखते थे। वे सच्चे मित्र थे। जहाँतक मैं समझा हूँ, इमाम साहवके विवाह-विषयक विचार वादमें वहुत वदल गये थे और वे एकपत्नीव्रतके हिमायती हो गये थे।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से।

२०९. पत्र : नारणदास गांधीको

७ मार्च, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारे दूसरे कार्डपर से मानता हूँ कि तुम आश्रममें लौट आये होगे। मेरा कल भेजा हुआ कार्ड[1] मिला होगा।

किसी आने-जानेवालेके हाथ तल्लेका चमडा भेजना। देखता हूँ, हर महीने तला दुरुस्त कराना पड़ता है। जल्दी विलकुल नहीं है। दो चप्पलोंमें अभी-अभी तला लगवाया है अर्थात्, दो महीनेतक तो वेफिक्री है ही। तल्लेका चमड़ा पासमें पड़ा हो तो वक्त पड़नेपर काममें आ सकता है, इसीलिए इतनी जल्दी भेजनेकी वात लिख दी।

ऐसे सब आश्रमवासियोंको जो अराजनीतिक कहे जा सकें, [मुझसे] मुलाकात की अनुमति मिल गई है। राजनीतिक किसे कहना है, यह निर्णय मुझपर छोड़ दिया गया है। लेकिन सरकार किसे राजनीतिक व्यक्ति कहेगी, इसका पता तो वह इसकी परिभाषा करे, तव लगे। इसलिए मैंने व्याख्या करनेको कहा है[2]। इस बीच चूँकि मेरी दृष्टिमें वहाँ कोई राजनीतिक व्यक्ति नहीं है, इसलिए जिसे आना हो और तुम जिसे अनुमति देना चाहो, वह आये। कोई न आना चाहे तो मेरे सन्तोषके विचारसे किसीका आना जरूरी नहीं है। हाँ, जो आना चाहे उसे 'ना' नहीं है। आश्रमके वाहरके अराजनीतिक लोगोंकी मुझसे सूची मांगी है। वह सूची परिभाषा मिलनेपर वनाऊँगा।

क्या प्रभावतीकी कोई खवर आती है?

वापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

भाई वालजीसे कहना कि उनका आश्रम-व्रतो-सम्वन्धी अनुवाद[3] मैंने सुधार दिया है। प्रस्तावना[4] भी लिख डाली है। अव उसे सँभालकर रखूँगा।

१. देखिए पृष्ठ १७१।
२. देखिए "पत्र: एम० जी० भण्डारीको", ६-३-१९३२।
३. १९३० में यरवदा जेलमें लिखित; देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ११-३।
४. देखिए पृष्ठ १७३।

मणिलालको इस हफ्ते आना चाहिए। सम्भव हो तो दोनो[1] मिल जाये।

३७ पत्र हैं। इनके सिवा तुम्हे लिखा यह पत्र और इमामसाहबके सस्मरण[2] हैं।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८२१३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२१०. पत्र : काका कालेलकरको[3]

[७ मार्च, १९३२][4]

प्रिय काका,

कैसे हो? भोजनमे क्या मिलता है? तुम्हारे साथ कितने लोग हैं और कौन-कौन? प्रभुदास कैसा है? उसे भोजनमे क्या मिलता है? अपना और प्रभुदासका वजन लिखना। इस आशकासे कि शायद यह पत्र तुम्हे न मिले, इसी तरहके प्रश्न मैंने श्री क्विनसे पूछे हैं। तुम क्या पढ़ रहे हो? हम दोनो यहाँ बिलकुल ठीक हैं। फिलहाल मैं छुहारे, नीबूका रस, हरी सब्जियाँ, और बादामकी रोटी लेता हूँ। मुझे कब्ज नही रहता। यदि मेरा वजन गिरा तो मैं फिरसे दूध लेने लगूँगा। मैं 'बाल-गीता' लिखनेकी सोच रहा हूँ; 'इमामसाहबकी सीरत'[5] लिखना शुरू कर दिया है। मैं नक्षत्रोकी स्थितिका अध्ययन कर रहा हूँ और उसके लिए मैं उस गुजराती पुस्तकसे सहायता लेता हूँ जो मराठीसे अनूदित है, और 'वीकली टाइम्स' मे दिये नक्शोको भी देखता हूँ। मैं रातमे उठता हूँ और नक्षत्रोकी स्थितियाँ देखता हूँ। इस दफा मैं पुस्तके बहुत कम मँगा रहा हूँ। लेकिन मुझे अमेरिकासे कुछ पुस्तके मिलती रहती हैं। लगता है, मैं इस बार मराठी नही सीख पाऊँगा। मै कमजोरी महसूस करता हूँ और ज्यादा सोना जरूरी है। शायद लम्बे अरसेतक आरामके बाद मैं फिर सशक्त हो जाऊँ। नरहरि कैसा है? मेरा तुम सबको आशीर्वाद।

तुम्हारा,

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेन्ट, स्पेशल ब्रांच, फाइल स० ८०० (४०), भाग-१, पृष्ठ ८८।

१. सम्भवतः मणिलाल गांधी और उनकी पत्नी सुशीला गांधी।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. साधन-सूत्रमें टिप्पणी है कि इसकी मूल गुजराती उपलब्ध नहीं है। यह अनुवाद जेल-अधिकारियों द्वारा किया गया प्रतीत होता है। काकासाहब विसापुर जेलमें थे।

४. तिथिका निश्चय इमामसाहबकी जीवनी लिखना प्रारम्भ करनेके उल्लेखसे किया गया है। देखिए पिछला शीर्षक और "दैनन्दिनी, १९३२" भी।

५. जीवनी।

२११. पत्र: प्रेमाबहन कंटकको

७ मार्च, १९३२

चि० प्रेमा,

तू यज्ञ पूरा करना भूल गई।[1] तेरी इस चूकके द्वारा मैं तो ऐसा मानता हूँ कि रामने तेरा घमंड चूर किया है। इस भूलको जितनी बड़ी तू समझती है उतनी बड़ी मैं नहीं समझता। तू बड़ी मानती है यह बिलकुल ठीक है। रामने घमंड चूर किया है, ऐसा इसलिए कहता हूँ कि भूलके पुतले हम अगर किसी काममें एक भी भूल न करें, तो हमारे भीतर गर्वका (वह कितना ही सूक्ष्म हो) आ जाना सम्भव है। जैसा नारदजी के प्रति रामचन्द्र या शिव (?)ने किया कुछ वैसा ही रामने तेरे प्रति किया मालूम होता है। इससे दो लाभ हैं: गर्व दूर हुआ और आगे भूल नहीं होगी।

तेरे पत्रमें जो शब्द-चित्र हैं, उनपर आज लिखनेकी कोई बात नहीं रह जाती। तू कठोर है, ऐसा मैंने बिलकुल नहीं माना है। तेरी आलोचनाएँ मेरे लिए तो कामकी ही हैं। सबमें गुण-दोष भरे हैं। तू अगर गुण कम देखती हो तो अधिक देखनेकी आदत डालना।

मेरे पत्रसे नारणदासको सोचमें बिलकुल नहीं पड़ना चाहिए था। नारणदास यज्ञ तो करता ही है। दूसरे शारीरिक कामके लिए मैंने उनके पास समय ही नहीं रहने दिया। इसमें वह क्या करे? इसमें भी मेरी रचना-शक्तिका अधूरापन है। आश्रम शुरू किया तभी सुव्यवस्था कर सका होता, तो आज जो कुछ लोगोंको केवल देखरेख वगैरहमें ही लगे रहना पड़ता है, वह न होता। जो चल पड़ा सो चल पड़ा। मैं मानता हूँ कि अब भी परिवर्तन हो सकता है। लेकिन वह मुझे सूझता नहीं है और मेरे सिवा ऐसी कोई स्त्री या पुरुष अभीतक हमें मिला नहीं है, जो ऐसे मामलोंमें आश्रमके नियमोंका अनुसरण करते हुए अधिक विचार करके उनपर अमल करा सके। न मिले, तबतक जो-कुछ चलता है, उसे सहन करें। हाँ, यह ध्यानमें रखें कि वह बहुत अपूर्ण है। क्योंकि मैं तो मानता ही हूँ कि आश्रममें सबके लिए अपने-अपने हिस्सेका शारीरिक काम और सुव्यवस्थाकी रक्षा कर सकना शक्य है। यह विश्वास रखकर हम चलेंगे तो किसी दिन इसकी कुंजी हाथ लग जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२७५)से। सी० डब्ल्यू० ६७२३ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक।

१. प्रेमाबहन कंटकको घमंड था कि वह आश्रमके नियमोंका पालन बहुत सावधानीसे करती हैं। परन्तु एक बार उनकी कताईमें आठ या दस तार कम रह गए और उन्होंने इसका पश्चात्ताप करनेके लिए तीन दिनका उपवास रखा था।

२१२. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

७ मार्च, १९३२

भाई घनश्यामदास,

कितना परिश्रम? मेरे खुराकके फेरफारसे घभराहटका कोई कारण नहिं है केलौरि पर मेरा विश्वास नहिं है या कम है। उन लोगोका[1] प्रमाण सब उन्ही लोगोके लिये है। हम उनका मुकाबला कैसे कर सकते है? प्रत्येक धदाको भी केलौरीका प्रमाण नीकालनेमे देखना चाहिये। अब मै चार आउस रोटीका टोस्ट भी लेता हु। खजुर मिल गई है। मेरी दृष्टिमें अरबस्तानसे जो अच्छी खजुर आती है वह इससे अच्छी है। मेरे पास जो खजुर आती है वह अच्छी हि है। दूधकी आवश्यकता सिद्ध होनेसे शीघ्र लुगा। चिंता न करे।

अमेरिकाके हाल पढकर मुझे कुछ आश्चर्य नहिं हुआ। परतु वहा सज्जन भी काफी पड़े है।

वहाका जलवायु तुमारे लिये अनुकूल था क्या? तुमको खुराकका प्रमाण मिल गया है जानकर आनंद हुआ। मालवीजी महाराज कैसे है? सरदार कहते है रामेश्वरदास बीमार थे। मुझे पता नहिं था। अब कैसे है?

बापूके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७८९६ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला।

२१३. पत्र : अगाथा हैरीसनको

८ मार्च, १९३२

प्रिय अगाथा,

मुझे तुम्हारे दो पत्र मिले; पोस्टमैनका प्रयत्न[2] भी।

तुमने बिलकुल ठीक किया जो मित्रोकी[3] प्रवृत्तियोका ब्यौरा मुझे नही लिखा, और मैं वह सब जाननेको उत्सुक भी नही हूँ। मुझे पूरा विश्वास है कि तुम सब यथाशक्ति और जो उचित है, वही कर रहे हो।

१. अनुमानतः अमेरिकियोंका।

२. अर्थ स्पष्ट नही है।

३. अनुमानतः आशय इंडिया कन्सिलियेशन ग्रुप, लन्दनके सदस्योंसे है। अगाथा दिसम्बर, १९३१ में इस संस्थाकी अवैतनिक मंत्री बनी थी।

क्या तुम्हे मॉडके पत्र मिलते है या उससे तुम्हारी भेट होती है? उससे कहो कि मुझे लिखे और अपने स्वास्थ्य तथा अन्य बातोमे प्रगतिके बारेमे लिखे।

सब मित्रोको मेरा यथायोग्य।

मुझे अभीतक रस्किनकी पुस्तकके खण्ड[1] नही मिले है।

सस्नेह,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४५१) से।

२१४. पत्र : मनमोहनदास पी० गांधीको

८ मार्च, १९३२

भाई मनमोहन,[2]

तुम्हारा पत्र मिल गया है। थोडे ही दिनो पहले तुम्हारी बात सोच रहा था। इतनेमे तुम्हारा पत्र मिल गया। मुझे पुस्तके अभी नही मिली है।

ऊन और रेशम उद्योग-सम्बन्धी कोई विशेप पुस्तक मुझे याद नही आती। पुणताम्बेकरके निबन्धके[3] अन्तमे बहुत-सी पुस्तकोकी सूची है, उसे देख लेना। सूची ग्रेगकी पुस्तकमे भी है।

आजकल तो मेरे पास पुस्तकोका खासा ढेर है। फिर घनश्यामदास भी कुछ भेजनेवाला है, इसलिए अभी तुम्हे तकलीफ नही दूंगा।

मेरा हमनाम होनेमे नुकसान तो है ही। आखिरकार तुम्हे जवाब तो देना ही होगा। यह कबूल तो करना ही पडेगा कि तुम महात्मा नही हो[4]। हम दोनो मजेमे है। मेरा दाहिना हाथ अब कम काम करता है, इसलिए बायेसे लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत मनमोहनदास गाधी
१३५, केनिंग स्ट्रीट
कलकत्ता

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५) से।

१. फॉर्स क्लेविजेर; देखिए "दैनन्दिनी, १९३२", २५ मार्च और ६ अप्रैल की प्रविष्टियाँ। महादेव देसाईकी डायरी, भाग-१ की २८ मार्च, १९३२ की प्रविष्टिमें महादेव देसाईने भी कहा है, "बापू रस्किनकी फॉर्स क्लेविजेर बड़ी दिलचस्पीसे पढ़ रहे हैं. . ."।

२. इंडियन चेम्बर ऑफ कामर्स, कलकत्ताके मत्री।

३. एस० वी० पुणताम्बेकर और एन० एस० वरदाचारी-द्वारा लिखित हाथ-कताई और हाथ-बुनाई—एक निबन्ध; इसे एस० गणेशन, मद्रासने प्रकाशित किया था।

४. विदेशसे आनेवाले पत्र भूलसे इनके पास पहुँच जाते थे।

२१५. पत्र : सर सैम्युअल होरको

११ मार्च, १९३२[1]

प्रिय सर सैम्युअल,

शायद आपको याद होगा कि गोलमेज परिषदमे अल्पसख्यकोका दावा पेश किये जानेपर अपने भाषणके[2] अन्तमे मैंने कहा था कि अगर अन्त्यजोको अलग निर्वाचक मण्डल दिया गया, तो मै जानकी बाजी लगाकर उसका विरोध करूँगा। यह मैंने क्षणिक आवेशमे या भाषाकी छटा दिखानेके लिए नही कहा था। वह पूरी गम्भीरतासे दिया हुआ वक्तव्य था।

उस वक्तव्यके अनुसार मैंने यह आशा की थी कि हिन्दुस्तान लौटकर पृथक् निर्वाचक मण्डलके विरुद्ध — कम-से-कम अन्त्यजोके पृथक् निर्वाचक मण्डलके विरुद्ध तो अवश्य ही — लोकमत सगठित करूँगा। मगर मै वैसा करूँ, यह शायद विधाताको मजूर न था।

मुझे जिन अखबारोको पढनेकी इजाजत है, उनपर से मै देखता हूँ कि इस मामलेमे ब्रिटिश सरकार किसी भी क्षण अपना निर्णय घोषित कर सकती है। पहले मैंने यह सोचा था कि इस निर्णयके घोषित होनेपर यदि यह दिखा कि अन्त्यजोके लिए अलग निर्वाचक मण्डलका निर्माण किया जा रहा है, तो मै उस समय अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनेके लिए जो कदम जरूरी मालूम होगा, उठाऊँगा। परन्तु मुझे लगता है कि यदि मै पहलेसे सूचना दिये बिना कुछ करूँ, तो वह ब्रिटिश सरकारके साथ अन्याय होगा। अपने वक्तव्यको जो महत्त्व मै देता हूँ, सरकार उसे वैसा महत्त्व न दे सकी हो, यह स्वाभाविक ही है।

अन्त्यजोके लिए पृथक् निर्वाचक मण्डल बनानेके विरुद्ध मेरी सारी आपत्तियोको दोहराना शायद ही जरूरी हो। मै तो ऐसा महसूस करता हूँ कि मै अन्त्यजोमें से ही एक हूँ। उनका मामला दूसरोसे बिलकुल ही अलग तरहका है। मै विधान-सभाओमें उन्हे प्रतिनिधित्व मिलनेके विरुद्ध नही हूँ। मै तो चाहूँगा कि औरोके लिए मताधिकारका पैमाना ज्यादा कडा हो तो हो, मगर हरिजनोमे शिक्षा या जायदादकी योग्यताके किसी भी प्रतिबन्धके बिना सभी बालिग स्त्री-पुरुषोको मताधिकार दिया जाय। मगर अलग निर्वाचक मण्डल, महज राजनैतिक दृष्टिसे वे चाहे जैसे माने जाये, अन्त्यजो और हिन्दू समाज दोनोके लिए हानिकारक है। पृथक् निर्वाचक मण्डलोसे उन्हे कैसा और कितना नुकसान हो सकता है, इसे समझनेके लिए यह जानना जरूरी है कि वे कथित सवर्ण हिन्दुओके बीचमें किस तरह फैले हुए है और उन

१. यह पत्र ९ मार्चको लिखा गया था और १० मार्चको संशोधित करके ११ मार्चको भेजा गया था; देखिए "दैनन्दिनी, १९३२"।

२. देखिए खण्ड ४८, पृष्ठ ३२६-३१।

पर कितने अधिक अवलम्बित है। जहाँतक हिन्दू समाजका सम्बन्ध है, पृथक् निर्वाचक मण्डलोका अर्थ उसे चीरकर उसके टुकडे कर देने-जैसा होगा। मेरे लिए तो इन वर्गोका प्रश्न मुख्यत. नैतिक और धार्मिक है। उसका राजनैतिक पहलू महत्त्वपूर्ण अवश्य है, फिर भी नैतिक और धार्मिक प्रश्नकी तुलनामे वह नगण्य ही है। इस मामलेमे मेरी भावनाएँ समझनेके लिए आपको यह याद रखना चाहिए कि इन लोगोमे मै बिलकुल बचपनसे दिलचस्पी लेता रहा हूँ और इनकी खातिर मैने कई बार सर्वस्वकी बाजी लगा दी है। मै यह बात किसी अभिमानकी भावनासे कदापि नही कह रहा हूँ, क्योकि मुझे लगता है कि सवर्ण हिन्दू कितना ही प्रायश्चित्त क्यो न करे, सदियोसे उन्होने हरिजनोको जान-बूझकर जैसा अध पतित जीवन जीनेके लिए बाध्य किया है, उसका परिशोधन वे नही कर सकते। मगर मै जानता हूँ कि उनके पृथक् निर्वाचक मण्डल बनाना उन्हे कुचलकर उनकी जो अधम स्थिति बना दी गई है, न तो उसका प्रायश्चित्त है और न ही यह उसके निराकरणका उपाय है।

इसलिए महामहिमकी सरकारको मै नम्रतापूर्वक जता देता हूँ कि अन्त्यजोके लिए अगर वह पृथक् निर्वाचक मण्डल बनानेका निर्णय देगी, तो मुझे आमरण उपवास करना पडेगा।

कैदी होकर मै ऐसा कदम उठाऊँ, तो उससे ब्रिटिश सरकारको सख्त परेशानी होगी और मेरी-जैसी हैसियतवाले आदमीका राजनैतिक क्षेत्रमें ऐसी पद्धति, जिसे अधिक कुछ नही तो पागलपनसे भरी हुई तो कहा ही जायेगा, दाखिल करना बहुत अनुचित माना जा सकता है। मुझे इस सबका खयाल है और दु ख भी है। इसकी सफाईमे मै इतना ही कह सकता हूँ कि मैने जो कदम उठाना सोच रखा है, वह कोई पद्धति नही है, वह मेरे जीवनका एक अग है। वह अन्तरात्माका आदेश है, जिसकी मै अवज्ञा नही कर सकता। फिर चाहे इसका नतीजा यही क्यो न हो कि समझदार आदमी होनेकी जो भी थोडी-बहुत प्रतिष्ठा मेरी है, वह मुझे खो देनी पडे।

अभी तो जहाँतक मै देख सकता हूँ, यदि मै जेलसे छोड दिया जाऊँ तो उससे भी उपवास करनेका मेरा कर्त्तव्य तनिक भी कम न होगा।

तथापि, मै आशा कर रहा हूँ कि मेरी ये सब आशकाएँ बिलकुल बेबुनियाद है और ब्रिटिश सरकार अन्त्यजोके लिए पृथक् निर्वाचक मण्डल बनानेका कोई इरादा नही रखती।

यहाँ एक और मामलेका उल्लेख कर देना भी शायद अनुचित न होगा, जो मेरे मनको अशान्त किये हुए है और जो मुझे ऐसे ही उपवासके लिए बाध्य कर सकता है। यह मामला है आजकल चल रहा दमन। इससे मुझे कब ऐसा आघात पहुँच जाये जो मुझे कोई बहुत बडा बलिदान देनेको मजबूर कर दे, सो मै कह नही सकता।

मुझे लगता है कि आजकल जो दमन चल रहा है वह, जिसे औचित्यकी सीमा कहा जा सकता है, उससे बाहर हो गया है। सारे देशमे सरकारका आतक फैला हुआ है। अग्रेज अधिकारी और हिन्दुस्तानी अधिकारी दोनो ही अपनी मानवतासे भ्रष्ट

होकर पशुओं-जैसा व्यवहार कर रहे हैं। बड़े और छोटे हिन्दुस्तानी अधिकारियोका अध.पतन तो इस कारण हो रहा है कि जनताके प्रति बेवफा होने और अपने देश-भाइयोके साथ अमानुषिक बरताव करनेको सरकार अच्छा काम कहकर पुरस्कृत कर रही है। जनताको बुरी तरह दबाया जा रहा है। वाणीकी स्वतन्त्रता कुचल दी गई है। कानून और व्यवस्थाके नामपर गुण्डागिरीका बोलबाला हो रहा है। लोकसेवाके लिए बाहर निकली हुई स्त्रियोको बेइज्जत होनेका खतरा बना रहता है।

मुझे ऐसा लगता है कि यह सब स्वतन्त्रताकी उस भावनाको दबा देनेके लिए किया जा रहा है जिसका कि काग्रेस प्रतिनिधित्व करती है। दमन प्रचलित कानूनके सविनय-भंगकी सजा देनेतक ही सीमित नही है। निरकुश शासनतन्त्रकी ओरसे ऐसे नये-नये आदेश निकाले जाते रहे है जिनका उद्देश्य अधिकाशत लोगोको अपमानित करना होता है। इस तरह जनताको मानो इन आदेशोकी अवज्ञा करके उसका फल भोगनेपर मजबूर किया जा रहा है।

इन सब कृत्योको जिस रूपमे मै समझ रहा हूँ, उसके अनुसार मुझे तो इनमें कही भी प्रजातन्त्रकी भावना दृष्टिगोचर नही होती। इग्लैडकी मेरी हालकी यात्राके दौरान मेरी इस रायकी पुष्टि हुई है कि आपका प्रजातन्त्र एक सतही और बन्धनो तथा प्रतिबन्धोसे जकडी हुई चीज है। सर्वाधिक महत्त्वके मामलोमे तो कोई व्यक्ति या दो-चार व्यक्तियोकी कोई मण्डली ही पार्लियामेटसे कुछ भी पूछे बिना निर्णय कर लेती है और पार्लियामेटके सदस्योको वे क्या कर रहे है, इसे साफ-साफ समझे बिना मंजूरी दे देनी पडती है। मिस्रके मामलेमे और १९१४ मे युद्धकी घोषणा करते समय ऐसा ही हुआ था। हिन्दुस्तानके मामलेमे भी आजकल यही हो रहा है। प्रजातान्त्रिक कही जानेवाली शासन-व्यवस्थामे एक व्यक्तिके हाथोमे तीस करोडसे अधिक आबादीवाली प्राचीन जातिके भाग्यके निबटारेकी निरकुश सत्ता हो और उसके निर्णय परम भयकर विनाशकारी शक्तिके बलपर कार्यान्वित कराये जा सकते हो, यह सोचकर मेरा सम्पूर्ण अस्तित्व विद्रोहकी भावनासे भर उठता है। मै इसे प्रजातन्त्रकी हत्या मानता हूँ।

इस दमनको जारी रखनेका परिणाम हमारे दो देशोके लोगोके पहले ही कडवे सम्बन्धोको और भी कडवे बनानेके अलावा और कुछ नही हो सकता। मेरे सामने सवाल यह है कि जहाँतक मेरी जिम्मेदारी है और जहाँतक मै कुछ सहायता कर सकता हूँ, इस दमन-चक्रको रोकनेके लिए मै क्या करूँ। सविनय अवज्ञा बन्द कर देना इसका उपाय नही है। मेरे लिए यह एक धार्मिक सिद्धान्तकी तरह पवित्र है। मै अपनेको स्वभावसे लोकतन्त्रवादी मानता हूँ। अपनी इच्छापर अमल करानेके लिए शरीर-बलका उपयोग करना मेरी कल्पनाके लोकतन्त्रके साथ सर्वथा असंगत है। इसलिए जहाँ-जहाँ शरीर-बलका उपयोग आवश्यक और उचित माना जाता है, आम तौरपर वहाँ-वहाँ उसके उचित विकल्पके रूपमे मैंने सविनय प्रतिरोधके प्रयोगका तरीका निकाला है। उसमे खुदको कष्ट सहन करना पडता है। सविनय अवज्ञा करनेवालेके लिए ऐसी हालतोमे अन्ततक उपवास करके अपने प्राण त्याग देना, मेरी योजनाका एक हिस्सा है। मेरे लिए अभी वह वक्त नही आया है। ऐसा

कदम उठानेके लिए अनिवार्य भीतरी आदेश मुझे अभी नही मिला है। मगर बाहर जो-कुछ हो रहा है, वह इतना भयानक है कि उसने मेरी आत्माको झकझोर दिया है। इसलिए अन्त्यजोके मामलेमें उपवासकी सम्भावनाके बारेमे लिखते हुए मुझे लगा कि यदि मै आपको यह न बताऊँ कि एक और कारणसे भी ऐसे उपवासकी सम्भावना है और वह अधिक दूर नही है, तो यह आपके साथ ईमानदारीका व्यवहार नही होगा।

कहनेकी जरूरत नही, कि आपके साथ होनेवाले तमाम पत्र-व्यवहारमें मेरी तरफसे पूरी तरह गोपनीयता रखी गई है। अलबत्ता, सरदार वल्लभभाई पटेल इस बारेमे सब-कुछ जानते है और इसी तरह महादेव देसाई भी, जिन्हे हालमे ही मेरे साथ रखा गया है। मगर वैसे आप इस पत्रका, आपकी जैसी इच्छा हो, वैसा उपयोग कर सकते है।[1]

हृदयसे आपका,

सर सैम्युअल होर
व्हाइट हाल
लन्दन

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेन्ट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (४), भाग-१, पृष्ठ ५; तथा बॉम्बे क्रॉनिकल, १३-९-१९३२ भी।

२१६. पत्र: दुर्गा म० देसाईको

११ मार्च, १९३२

चि० दुर्गा,

कल महादेव अचानक आ पहुँचा।[2] लगता है कि उन लोगोने सोचा होगा कि सरदारके अलावा एक और साथी भी मेरे पास होना चाहिए। पैरकी चिन्ता करनेकी जरूरत नही है। एक जगह जरा-सी सोजिश है। दवा चल रही है। चिन्ता करनेका तनिक भी [कारण][3] नही है। जो भी लिखना हो, मुझे तो जब चाहे तब लिख सकती हो। जब आनेको मन करे, तब आ जाना।

बापूके आशीर्वाद

१. सर सैम्युअल होरके जवाबके लिए देखिए परिशिष्ट ३। पृथक् निर्वाचक मण्डल और दमनपर वल्लभभाई तथा महादेव देसाईसे गांधीजी की बातचीतके ब्यौरेके लिए देखिए दि डायरी ऑफ महादेव देसाई, भाग १, पृष्ठ ४-५, ७ और ८।

२. नासिक-जेलसे।

३. यहाँ पत्र फटा हुआ है।

[पुनश्चः]

अगले सप्ताह बापूसे मिलनेके लिए आनेवाली मण्डलीके साथ आना अच्छा रहेगा।[1]

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४८४) से।

२१७. पत्र : लक्ष्मीबहन ना० खरेको

११ मार्च, १९३२

चि० लक्ष्मीबहन,

तुम अपना पत्र [किसी औरसे] लिखवाओ, इसकी बजाय मराठीमे स्वय ही क्यो नही लिखती? इतनी मराठी मै आसानीसे सीख लूँगा। बहनोके बारेमे समझ गया। मण्डल हो या न हो, तुम सभी बहने समय-समयपर मिल लिया करो और ऐसी कुछ बातचीत कर लिया करो जो तुम्हारे कल्याणमे सहायक हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८१) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे।

२१८. पत्र : निर्मला ह० देसाईको

११ मार्च, १९३२

चि० निर्मला,

बडे सभी मन्दिर[2] गये है तो तुम सब उनकी जिम्मेदारी उठा लो। ऐसा करो तो यह भी मन्दिर जाने-जैसा ही होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४६६) से।

१. यह वाक्य महादेव देसाईका लिखा हुआ है।
२. अभिप्राय जेलसे है।

२१९. पत्र : नारायण देसाईको

११ मार्च, १९३२

चि० नारायणराव,

'ववलो' से 'नारायण' वना है, इसलिए अव तुझे 'राव'[1] वना डालूं तो गलत नही होगा। फिर महादेवका कहना है कि तूने पिंजाई हालमें ही सीखी लगती है। यह सच हो तो तेरा रावसाहव वनना ठीक ही हुआ। आजकल महादेव यही है। तुझे सन्देश भेजना हो तो भेज देना। कितने तार कातता है?

वापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

तू पीजता है, इसलिए महादेव तेरी पूनियाँ कातनेके लिए उत्सुक हो रहा है। दो-चार गड्डी भेज देना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४७५) से।

२२०. पत्र : एक लड़कीको

१२ मार्च, १९३२

चि०,

'गीता' कण्ठस्थ करनेका काम स्मरण-शक्तिका है और यह आसान है। 'गीता'का अर्थ समझनेका काम वुद्धिका है, यह कठिन है, इसलिए इसमें मजा नही आता। किन्तु जैसे ही वुद्धिको मजा आने लगेगा, वैसे ही अर्थ समझनेकी इच्छा उत्पन्न होगी। इसलिए वुद्धिके विषयोमें आनन्द लेने लगो।

वापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९६३) से; सौजन्य: नारणदास गाधी।

१. मराठीमें प्राय: नामोंके साथ जोड़ा जानेवाला आदरसूचक शब्दांश।

२२१. एक पत्र

१२ मार्च, १९३२

चि०,

बोलनेके कई अवसर आते हैं। कक्षामे सवाल पूछनेकी जरूरत होती है, खेलते समय या छुट्टीके समय भी बोलना पडता है। [कताई-] यज्ञ करना फर्ज है। उसे न करे तो फर्जसे पीछे हटते है और कर्जदार बनते हैं।

जिस तरह मैलमे हाथ डाले तो हाथ मैले होते हैं, उसी तरह झूठ बोले तो मन मैला होता है और हाथ मैले होनेकी अपेक्षा मन मैला होना ज्यादा खराब है। मैला हाथ तो धोकर साफ कर सकते हैं। मन इतनी आसानीसे साफ नही हो सकता।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९६५) से; सौजन्य: नारणदास गाधी।

२२२. पत्र: नारायण मोरेश्वर खरेको

१२ मार्च, १९३२

चि० पण्डितजी,

बहुत-सी पुस्तके पढ़नेके बजाय एक ही का मनन करनेसे और उसपर अमल करनेसे मनोवाछित परिणाम मिलता है। सन्यासका अर्थ सब कर्मोका त्याग कदापि नही है। उसका अर्थ है काम्य कर्मका त्याग और नियत कर्मके फलका त्याग। यही नैष्कर्म्य है। इसीलिए कर्ममे अकर्म और अकर्ममे कर्म देखना आवश्यक है। नैष्कर्म्यका वही अर्थ है जो मैंने लिखा है। तो भी उसकी साधना तो करनी ही है। इसी उलझनसे कर्मफलके त्यागकी उत्पत्ति हुई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २२३)से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

२२३. एक पत्र

१३ मार्च, १९३२

चि०,

केवल सस्कारके कारण कोई उन्नति नही कर सकता। पुरुषार्थके बिना उन्नति असम्भव है। पुरुषार्थ करते हुए भी उन्नति होती न दिखे तो उससे घबराना नही चाहिए। यन्त्रविज्ञानकी तरह आध्यात्मिक विज्ञानमे भी यही नियम काम करता है कि कोई शक्ति निष्फल नही जाती। पाँच मन शक्ति उत्तरकी ओर ढकेले और पाँच मन दक्षिणकी ओर तो जिसके ऊपर ये शक्तियाँ अपना जोर चला रही है, वह वस्तु भले ही स्थिर बनी रहे, फिर भी दोनो शक्तियोने अपना काम पूरा किया और उस वस्तुकी स्थिरता ही उसकी गति है। इसीमे से अनासक्ति-मार्ग निकला है। हम तो पुरुषार्थ करते ही रहे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९६२) से, सौजन्य: नारणदास गाधी।

२२४. पत्र: डाहीबहन पटेलको

१३ मार्च, १९३२

चि० डाहीबहन,

तुम्हारा पत्र पाकर बहुत प्रसन्नता हुई। क्या तुम्हारा भाई अब बिलकुल स्वस्थ हो गया है? मुझे पत्र लिखती रहना। जिसने सेवा-धर्म अपनाया है, उसे कोई काम खोजना नही पड़ता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२०५) से।

२२५. पत्र : महेन्द्र वा० देसाईको

१३ मार्च, १९३२

चि० मनु,

तूने अजमेरका तो बहुत अच्छा वर्णन लिखा है। किन्तु अक्षर खराब हैं; अब अच्छे अक्षर लिखना। जयपुर आदिके वर्णनकी राह देखूँगा। दूधीबहनसे कहना, मुझे पत्र लिखे। तेरा वजन कितना है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४२२) से; सौजन्य: वालजी गोविन्दजी देसाई।

२२६. पत्र : मथुरी ना० खरेको

१३ मार्च, १९३२

चि० मथुरी,

इस बार तूने, जैसे अक्षर तू लिखती रही है, उससे ज्यादा सुन्दर लिखे हैं। इसी तरह मेहनत करेगी तो मोतियोंके दानोंकी तरह सुन्दर अक्षर लिख पायेगी। यदि तू पूनी बहुत अच्छी बनाती हो तो पीजनेकी यह गति तेरे लिए ठीक गिनी जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २६३–ए) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

२२७. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१३ मार्च, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। अभी मुझे बायें हाथसे ही लिखना पड़ेगा। इसलिए बहुत लम्बे पत्र नहीं लिखे जा सकते। बायाँ हाथ दायेंकी गतिसे नहीं चल सकता। महादेवकी मदद अब जरूर मिल सकती है, लेकिन जेलके लिए यह नया प्रयोग होगा। देखता हूँ कि मैं उसे कितना लिखा सकूँगा। शुद्ध प्रेम-पत्र लिखवाना ठीक लगेगा या नहीं, यह देखना है। कामके पत्र तो लिखाऊँगा ही।

तेरे पत्रोंसे मैं जरा भी तंग नहीं हुआ।

हम सबको या तो नित्य बढना होगा या पीछे हटना होगा। स्थिर तो कुछ है ही नही।[1]

मै अपने ऊपर दोष ले लेता हूँ, इसमे झूठी नम्रता या अतिशयता बिलकुल ही नही है। इसका अर्थ यह नही है कि बाकी लोग दोषमुक्त हो जाते है। लेकिन जो मुख्य व्यक्ति है, वह जैसे अच्छेका यश ले लेता है वैसे ही उसे बुरेके अपयशका स्वामी भी बनना ही चाहिए।

अन्तर्जातीय विवाहकी आवश्यकताको एक हदतक मै स्वीकार करता हूँ।

अगर पुरुषको विवाह-विच्छेदका अधिकार हो तो स्त्रीको भी होना चाहिए। लेकिन सामान्यतया मै इस प्रथाका विरोधी हूँ। प्रेमकी गाँठ अविभाज्य होनी चाहिए।

स्त्री-पुरुषकी शिक्षा अलग भी हो सकती है और साथ भी हो सकती है। यह विषयपर निर्भर करता है। वकालत दोनो साथ सीख सकते है। इस बारेमे सारे देशके लिए या सब परिस्थितियोके लिए मै एक नियम नही बता सकता। यह बात सरल नही है। कोई भी देश किसी निश्चित परिणामपर नही पहुँच सका है। सारा प्रश्न ही अभी प्रयोगाधीन है।

सौन्दर्यकी स्तुति होनी ही चाहिए। लेकिन वह मूक ही अच्छी है। और 'तेन त्यक्तेन भुजीथाः'[2] का सिद्धान्त यहाँ भी सत्य है। आकाशका सौन्दर्य देखकर जिसे हर्ष न हो, उसे कुछ भी अच्छा नही लगेगा, ऐसा कहा जा सकता है। लेकिन जो हर्षसे विह्वल होकर नक्षत्र-मण्डलतक पहुँचनेकी सीढी तैयार करने लगे, उन्हे मोहमे पडा हुआ समझो।

पाठ्यक्रम[3] अच्छा लगा है। उसमे कोई परिवर्तन या परिवर्धन मुझे अभी नही सूझ रहा है।

जापान-चीनके मामलेमे हमारी सहानुभूति चीनकी तरफ होगी ही। लेकिन सच्ची स्थिति तो जैसी एक बालकको पत्रमे मैने बताई है, वही लगती है।

जमनादासके बारेमे तूने लिखा, वही ठीक है। वह मन-ही-मन घुटता रहता है। सुशीला[4] उसका दर्द ताड सके, तब काम चले।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२७६) से। सी० डब्ल्यू० ६७२४ से भी; सौजन्य प्रेमाबहन कटक।

१. गांधीजी के २५ फरवरीके पत्र (देखिए पृष्ठ १४८-५०) के उत्तरमें प्रेमाबहन कटकने कहा था कि यदि जेलमें या बाहर रहते हुए गाधीजी की प्रतिष्ठा नहीं बढ़ती है तो इससे उनके प्रति उसका प्रशस्य भाव कम हो जायेगा।

२. ईशोपनिषद्-१।

३. आश्रम-शालाके लिए।

४. प्रेमाबहन कटककी एक सहेली।

२२८. पत्र: पुष्पा शं० पटेलको

१३ मार्च, १९३२

चि० पुष्पा,

बोलनेके विषयमें किसी दूसरे पत्रमें[1] लिखा है, सो देख लेना। ईश्वरने हमें जो शक्तियाँ दी हैं, वे सब नियममें रखने और कुछ तो बिलकुल दबा देनेके लिए हैं। मुँह दिया है, सो बोलते ही रहनेके लिए नहीं दिया, ईश्वरके कामकी हदतक बोलनेके लिए दिया गया है। ईश्वरने अच्छा और बुरा दोनों करनेकी शक्ति दी है, किन्तु बुरा करनेकी इच्छाको तो नाबूद कर देना है। अब बात समझमें आई?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९८३)से। सी० डब्ल्यू० २९ से भी; सौजन्य: पुष्पाबहन ना० नायक।

२२९. पत्र: वनमाला न० परीखको

१३ मार्च, १९३२

चि० वनमाला,

जिस लड़कीकी चिट्ठीमें जवाब देने लायक कुछ न हो, उसे लौटती डाकसे मेरा पत्र पानेकी आशा नहीं रखनी चाहिए। तेरा इस बारका पत्र ऐसा ही है। लेकिन तूने हर हफ्ते मेरा पत्र पानेकी इच्छा प्रकट की है, इसलिए इस बार लिख दिया। अब चेतना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

नरहरिके क्या समाचार हैं?

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७६८) से। सी० डब्ल्यू० २९९१ से भी, सौजन्य. वनमाला देसाई।

१. देखिए "एक पत्र", १२-३-१९३२।

२३०. पत्र : तिलकनको

१४ मार्च, १९३२

प्रिय,

आत्मसयमकी योजनाओपर अमल करते समय एक क्षणके लिए भी इस तथ्यसे ध्यान नही हटाना चाहिए कि हम सब परम तत्त्वके अश है और इसलिए उसका स्वभाव भी हममे है, और चूँकि परमतत्त्वमे भोगेच्छाओकी तृप्ति-जैसी कोई चीज नही हो सकती इसलिए अवश्य वह मानव स्वभावसे भी बाहरकी चीज होनी चाहिए। यदि इस प्राथमिक तथ्यको हम भली-भाँति समझ ले तो आत्मसयम प्राप्त कर लेनेमे हमे कोई कठिनाई नही होनी चाहिए। ठीक यही विचार 'गीता' मे भी व्यक्त हुआ है और उसे प्रतिदिन सन्ध्या-समय प्रार्थनामे हम गाते है। आपको याद होगा कि एक श्लोकमे कहा है कि विषयेच्छा केवल तभी समाप्त होती है जब व्यक्ति ईश्वरका साक्षात्कार कर लेता है।

सस्नेह,

बापू

अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ८९६१) से, सौजन्य: नारणदास गाधी। महादेवभाईनी डायरी, भाग १, पृष्ठ १४–५ से भी।

२३१. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

१४ मार्च, १९३२

बालको और बालिकाओ,

तुम्हारी चिट्ठी मिली। बहुत-से काम एक साथ हाथमे लेना ब्रह्मचारीका काम नही है। वह एक बारमे एक ही काम हाथमे लेता है, अर्थात् अपना तन, मन उसमे लगा देता है। इसलिए जब हम किसी काममे लगे हो और उस कामके बारेमे बात करना जरूरी न हो तो चुप रहना ही ठीक बात होगी। लेकिन अगर हम खेल रहे हो या घूमने निकले हो तब बोलना उसका एक अश ही है अतः उस समय हम बोल सकते है। जो अपने जीवनको इस तरह गढता है, वह उसे सरस बना सकता है। जिस सस्थामे लोग चुपचाप काम करते रहते है और बोलनेके समय ही बोलते है, वह बहुत शान्तिपूर्ण लगती है। व्यायाम या उसी जैसे अन्य अवसरोपर लडकियाँ चड्डी और कुरता पहने, इसमे मै कोई दोष नही देखता बल्कि इसे पसन्द करता हूँ। आश्रमवासियोका ध्येय निश्चित हो ही गया है। वह यह कि उन्हे सत्यके अन्वेषणमे लीन हो जाना है। 'सोल्जर' का अर्थ तुम सब क्या मानते हो, मुझे लिखना। तब फिर 'सोल्जर'-जैसा बनना चाहिए या नही, इसका उत्तर दूंगा।

वहुत यात्राएँ करनेके वाद मुझे सुन्दरतम देश भारत लगा है। यो, मैं मानता हूँ कि मेरे मनमे झूठा पक्षपात नही है इसलिए सभी देशोकी वहुत-सी अच्छाई मैं अवश्य देख सका और उस तरह वे सव भी मुझे अच्छे लगे है तथा मैं उन सवकी विशेषता समझ सका हूँ। लेकिन कुल मिलाकर ऐसा लगा कि भारत किसी देशसे कम नही है; जो चाहिए, वह भारतमे मिलता है और जो भारतमे नही मिलता, उसकी खास जरूरत नही पड़ती।

आश्रमके पास पैसा हो और खर्च ज्यादा न आता तो आजकी हालतमे भी झूले और फिसलनेकी पट्टियाँ लगवानेमे मुझे कोई दोष नही दिखता। याद केवल यह रखना चाहिए कि आश्रम सदाके लिए एक गरीव सस्था है। आश्रमके पास पैसेकी जितनी सुविधा हो, उस हदतक वह जो चाहे सो कर सकता है, ऐसा मानना उचित नही है। और जो गरीवको शोभा दे, वह भी आश्रम तभी कर सकता है जव उसे सुविधा हो। इसलिए प्रश्न सुविधा और अपने उद्देश्यके अनुसार क्या योग्य है, इसका है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८९६८ से भी; सौजन्य : नारणदास गाधी।

२३२. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

१४ मार्च, १९३२

वा,

कई दिनोसे लिखूँ कि न लिखूँ, सोचता रहता था। आज पढा कि अभीतक तू वाहर है, इसलिए लिखनेका मन हुआ। अब तो महादेव भी मेरे साथ है। अर्थात् साथी, वढ़ गये। हम तीनो[1] मजेमे है। रामदास मिलकर गया। अच्छा था। तू पत्र दिया करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१. गाधीजी, वल्लभभाई पटेल और महादेव देसाई।

२३३. इमाम साहब – २[1]

१४ मार्च, १९३२

जैसा कि हम जानते हैं, इमाम साहबने अपनी दोनों बेटियोंका विवाह करनेमें देशका बहुत खयाल रखा था। उनका प्रयत्न ऐसा दामाद खोजनेका रहा जो देश-सेवक हो, हिन्दू-मुसलमानोंको एक-सा गिनता हो और जो आश्रम-जीवनके योग्य सिद्ध हो। इसलिए उन्होंने गुजराती गरीब मुसलमान लड़के खोज निकाले।

कह सकता हूँ कि इमाम साहबसे मेरी पहली मुलाकात १९०३ में उस समय हुई जब मैं दोबारा दक्षिण आफ्रिका गया। इमाम साहब कहते थे कि हम उससे पहले भी मिल चुके थे, किन्तु मुझे उसका स्मरण नहीं है। जब मैंने जोहानिसबर्गमें वकालत शुरू की, तब वे मुवक्किलोंके साथ मेरे पास आते थे। उन दिनों उनका तौर-तरीका कुछ अलग ही था। अंग्रेजी ढंगकी पोशाक पहनते थे और सिरपर तुर्की टोपी लगाते थे। इमाम साहब कुशाग्रबुद्धि हैं, यह मैं जल्दी ही जान गया था, किन्तु तब किसी दूसरे प्रकारसे उनकी कोई खास अनुकूल छाप मेरे मनपर नहीं पड़ी थी। मुझे वे बहुत जिद्दी लगे, किन्तु जैसे-जैसे मैंने उन्हें अधिक जाना, वे मुझे पसन्द आते गये।

जैसे-जैसे मुझे अनुभव हुआ, मैंने देखा कि जिसे मैं उनकी जिद समझता था, वह जिद नहीं थी बल्कि किसी भी बातको सम्पूर्ण रूपसे समझ लेनेका उनका आग्रह था। किसी बातके विषयमें उन्होंने जो विचार स्थिर किया हो, उसे वे तबतक नहीं छोड़ते थे जबतक उनकी बुद्धि स्वीकार न कर ले। वे स्वयं वकील नहीं थे, इसलिए कानूनी सवालोंके विषयमें वकील जो-कुछ कहे, उसे वे वेद-वाक्य मानकर चलनेको तैयार नहीं थे; बल्कि वकीलके साथ कानूनके मामलेमें भी वाद-विवाद करते थे। यद्यपि वे पढ़े-लिखे नहीं थे, किन्तु उन्हें अपनी बुद्धिपर विश्वास था। इसके सिवा उन्हें स्वाभिमानका बड़ा खयाल था और इसीलिए वे किसीके प्रभावमें न आकर अपने पक्षको दृढ़तासे पकड़ लेनेकी जबरदस्त शक्ति रखते थे। यह मैं जल्दी ही समझ गया।

प्रारम्भमें इमाम साहब मेरे पास मुवक्किलोंके मामले समझानेके लिए ही आते थे; किन्तु उन्हें दुनियाकी रोजकी हलचलमें दिलचस्पी थी; इसलिए वे मुझसे उस विषयमें भी चर्चा करते थे। दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंको होनेवाले कष्टोंसे सम्बन्धित सभाओं आदिमें वे भाग लेते। वे अनेक बातोंमें मेरा साथ देते, किन्तु जहाँ उन्हें मेरी बात पसन्द न आती, वहाँ वे खुले आम मेरा विरोध करनेमें तनिक भी नहीं हिचकते थे। एसा करते-करते इमाम साहब क्रमशः मेरी ओर खिंचते चले गये

१. यह "पत्र : नारणदास गांधीको", १४-३-१९३२ के साथ भेजा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

और जब सत्याग्रह शुरू हुआ, तब वे पहाडकी तरह अविचल सिद्ध हुए। कुछ लोगोने साथ छोड दिया, कुछ कमजोर सिद्ध हुए, कुछ लोगोने सख्त विरोधतक किया, किन्तु मुझे इमाम साहबके कभी डिगनेकी बात याद नही आती। जब इमाम साहबको पहली बार जेलकी सजा मिली, किसीने नही सोचा था कि वे टिके रहेगे। पहला कारावास तो कुछ ही दिनोका था। फिर भी ऐसे अनेक लोगोने, जो उनकी इज्जत करते थे, मुझसे कहा, "इमाम साहब दोबारा जेल नही जा सकेगे। वे बहुत सुकुमार है, शौकीन है, और उनकी जरूरते बहुत-सी है।" यह बात बहुत बडे अशमे ठीक भी थी। इसके बावजूद इमाम साहब तनिक भी कमजोर नही पडे और मैने देखा कि वे, जिनका रहन-सहन सादा माना जाता था, उन्होने हार मान ली। इमाम साहबमे त्याग-शक्ति प्रचुर मात्रामे थी और यद्यपि किसी बातका निश्चय करनेके पहले वे बहुत सोचते थे, किन्तु एक बार निश्चय कर लेनेके बाद उसपर दृढ रहनेकी उनमे अद्भुत शक्ति थी।

जब इमाम साहब सत्याग्रहमे कूदे, तब उन्होने स्वप्नमे भी नही सोचा था कि उन्हे अपना घर खत्म करके फकीरी लेनी पडेगी। किन्तु जब उन्होने देखा कि अगर उन्हे पक्के तौरपर सत्याग्रहमे रहना है तो घर-बारका मोह छोडना पडेगा, तब कह सकते है कि उन्होने वह मोह क्षण-भरमे छोड़ दिया। इमाम साहबके लिए यह कोई छोटा त्याग नही था।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

२३४. पत्र : नारणदास गांधीको

सोमवार, १४ मार्च, १९३२

चि० नारणदास,

लगभग ऐसा कहा जा सकता है कि मेरा दाहिना हाथ बेकाम हुआ और महादेव आया। बेकाम होनेका यह अर्थ नही है कि हाथ लगातार दर्द करता रहता है, फिर भी इसका इतना अर्थ तो है ही कि यदि मै दाहिने हाथका उपयोग लिखने आदिमे करता रहूँ तो वह दर्द करेगा। सम्भव है कि अब इस हाथसे ज्यादा काम न लिया जा सके, क्योकि विलायतसे लौटते हुए यात्रामे तो मैने इसे पूरा आराम दिया था तथापि, मै देख सका हूँ कि उससे यह पुन काम करने लायक नही बन पाया है। यह हाथ बेकाम ही हो जाये तो भी दुख माननेका कोई कारण नही होगा। किसी-न-किसी दिन तो सारे अवयव शिथिल हो ही जायेगे, और वे क्रमश. शिथिल होते ही चले जाये तो इसमे आश्चर्य कुछ नही है। यह ईश्वरकी कम कृपा नही है कि मै दाहिने हाथसे खूब काम ले चुका हूँ। और अन्तमे तो हमारे [आध्यात्मिक] कोशके[1] अनुसार काम लेने-देनेवाला तो वही है। जबतक उसकी इच्छा होगी

१. भगवद्गीता।

तबतक और जिन शर्तोपर वह चाहेगा, उन शर्तोपर वह हमसे काम लेगा। हाथ-पाँव सब उसके यन्त्र है। हम उनको बिगाडनेके कारण न बने, इतना बस है। आजतक जिस हदतक उन्हे बिगाडा हो, उस हदतक हम नादानीके दोषी है। हम उन्हे इस तरह बिगाडते है इसीलिए, जिसे हम बुढापा कहते है, जब वह आता है तब हमारे अवयव शिथिल होने लगते है। जिसने अपने अगोका कभी दुरुपयोग नही किया, बुढापा उसके लिए कष्टकारक तो होना ही नही चाहिए। बल्कि वह सुखद ही होता है। यदि वृक्षादिमे बुद्धि हो तो हम समझ सकते है कि फलके पूरी तरह पककर नीचे गिर पडनेपर उसको दु खी नही होना चाहिए। बल्कि यह जानकर कि उसका उपयोग दूसरेके लिए हो सकेगा, उसे सुखी ही होना चाहिए। इसी तरह, जिसका जीवन कृतार्थ हुआ हो उसे पूरी तरह यह विश्वास होना चाहिए कि इस देहके जीर्ण होनेपर जो नई स्थिति पैदा होगी, वह और अधिक उपयोगी होगी। लेकिन अभी तो हमे यह सब दर्शन बघारने-जैसा लगता है, क्योकि सम्पूर्ण रूपसे सुखदायक बुढापा जगतमें कही देखनेमे नही आता, अथवा क्वचित् ही देखनेमे आता है। और मृत्युको मित्रकी तरह बढकर स्वीकार करनेवाला तो दुर्लभ ही है।

हम तीनोकी तबीयत ठीक ही कही जायेगी। महादेवके पाँवकी हड्डीमे दर्द अवश्य है, लेकिन आराम लेने और सूर्य-स्नानसे उसके अच्छे हो जानेकी सम्भावना है। चिन्ताका कोई कारण नही है।

खुशालभाईकी पिछले हफ्तेमे तुमने कोई खबर नही दी। इससे अनुमान लगाता हूँ कि फिलहाल तो बादल बिखर गये है।

मुलाकातोके बारेमे अभीतक साफ नही हुआ है। शायद रुक भी जायें। जयसुखलाल, काशी, लक्ष्मी, मोतीको तो एक-दो दिनोमे आकर मिल जाना चाहिए।

हरिदास गाधी[1] यहाँ आ गया है। अस्पतालमे है। उसकी खबरे मिलती रहती है। पर अभीतक हममे से कोई उससे मिल नही पाया है। रामदास मिलकर गया है। दूसरोसे भी शायद मिल सकूँगा। मीराबहनका पत्र आना चाहिए था। अभीतक तो नही आया।

गगाबहन झवेरीके जेलसे छूटनेकी खबर अखबारमे है। किसीने उनका जुर्माना भर दिया; यह कौन रहा होगा? प्रभावतीके क्या कोई समाचार मिलते है?

राधाका खर्च उठाने योग्य है। पूंजाभाई अबतक फिर स्वस्थ हो गये होगे।

न्यूयॉर्कके लोग जो अनुमति माँगते है, उसके बारेमें होम्सको लिखना अथवा तार करना ज्यादा अच्छा होगा। पच्चीस रुपयोमे होम्सको निश्चित उत्तर नही दिया जा सकता, इसलिए उन लोगोको यह तार करो.

"कम्युनिटी चर्च न्यूयॉर्कके रेव० होम्सको [इस सम्बन्धमे] जो भी जरूरी हो करनेका अधिकार दे रहे है।"[2]

और होम्सको तारकी नकल भेजकर लिखो कि ठीक लगे तो अनुमति दे दें।

१. अमरेलीके।

२. तारका मसविदा अंग्रेजीमें है।

लीलावती बादामकी जो चीज लाई थी, उसके बारेमे उसने बताया था कि वह पिसी बादाम और खजूरको मिलाकर बनाई गई थी। यह किस तरह बनती है और इसमे दोनोका प्रमाण क्या होता है, यह जाना जा सके तो यहाँ बनाई जा सकेगी। वहाँसे भेजती रहे, यह ठीक नही लगता और वहाँसे आने देते रहे तो भी परिमाण तो जानना चाहिए। इसके बिना यह अन्दाज नही लगेगा कि इसे किस मात्रामे लिया जा सकता है।

व्रजकृष्णके बारेमे अखबारमे पढ़ा था।[1]

बापूके आशीर्वाद[2]

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२१४ से भी, सौजन्य . नारणदास गाधी।

२३५. पत्र : रुक्मिणी बजाजको

१४ मार्च, १९३२

चि० रुक्मिणी,

तुम्हारा पत्र मिला।

मुझे तो 'माधवलाल' से 'माधवदास' ज्यादा पसन्द है। लेकिन आजकल बहुतोको 'दास' प्रत्यय नही भाता। क्या सन्तोकको मेरा सुझाव[3] पसन्द है? बनारसीसे भी सलाह लेना और तब निश्चय करना। ऐसा मत सोचना कि मेरी पसन्दगी माननी ही चाहिए। काशी पहुँचकर लिखनेमे आलस्य मत करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०६१) से।

२३६. पत्र : शान्तिलाल मेहताको

१४ मार्च, १९३२

चि० शान्ति,

तेरा पत्र मिला। मुझे खुशी हुई। शादी कहाँ की, यह क्यो नही लिखा? विवाह सादगीसे हुआ, यह जानकर अच्छा लगा। तू अकेला ही गया था या बुजुर्गोंमें से भी कोई साथ थे? लगता है, मणिलाल पिछले हफ्ते नही आया। मगर एक-दो

१. आशय व्रजकृष्ण चाँदीवालाकी २२ फरवरी, १९३२ की गिरफ्तारी और छः महीनेकी सजा तथा जुर्मानेसे है।

२. साधन-सूत्रमें इसके बाद 'इमाम साहब-२' है; देखिए पिछला शीर्षक।

३. देखिए "पत्र: रुक्मिणी बजाजको", १-३-१९३२।

पखवाडोमे आनेकी बात पक्की है, ऐसा उसने लिखा था। अगर तू शान्तिपूर्वक देशमे रह सके तो यही रह जाना अधिक अच्छा है, ऐसा मुझे लगता है। तेरी बहूकी क्या इच्छा है? वह पढी-लिखी है या नही? यह सब जाननेकी भी जरूरत तो है ही। इसके बिना एकाएक सलाह नही दी जा सकती।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२) से।

२३७. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

सोमवार, १४ मार्च [१९३२][1]

प्रिय बहनो,

तुम पत्रकी इच्छा करती हो, यह मुझे अच्छा लगता है। आज तो सक्षेपमे ही लिखूंगा। तुम्हारा मडल छिन्न-भिन्न हो गया, यह ठीक नही है। इन दिनो तुम्हारी सख्या कम हो गई है फिर भी यदि मडल चलाती रह सको तो अच्छा। सम्भव है, इसकी कोई उपयोगिता अभी न दिखे। यह भी सम्भव है कि शुरूमे अनेक प्रकार की बाधाएँ आये। तथापि, यदि तुम उसमें लगी रहो तो वह उपयोगी तो है ही। लगे रहनेके लिए तुम्हे चाहे जितनी छोटी किन्तु सामुदायिक प्रवृत्तियाँ खोज निकाल लेनी चाहिए। अर्थात्, ऐसी प्रवृत्तियाँ जो मण्डलकी प्रवृत्तियाँ मानी जाये और जिन्हे चलाना सब अपनी जिम्मेदारी समझे। इसका यह अर्थ नही है कि अभी जो अनेक कार्य हो रहे है, उनमे एक नया कार्य और जोड लो। इसका अर्थ इतना ही है कि आज चल रहे कार्योमे से ही एक या अधिककी जिम्मेदारी मण्डल अपने ऊपर ले ले। बहने साथ मिलकर काम नही कर सकती, इस मिथ्या धारणामे तो पडना ही नही। वे दूसरे देशोमे कितने बडे-बडे काम कर पाती है, सो तो मै तुम्हे पहले लिख ही चुका हूँ। यहाँ भी अनेक उदाहरण मिल जाते है। न मिलते हो तो हमे पेश करने है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१. देखिए "पत्र: आश्रमकी बहनोंको", १८-२-१९३२, गांधीजी ने उसमें यूरोपकी महिलाओंके सार्वजनिक कार्योंके विषयमें लिखा था। प्रस्तुत पत्र उसके बादका ही होगा।

२३८. पत्र : एक नवविवाहित दम्पतीको

१४ मार्च, १९३२

चि०,

तुम दोनोने नया रास्ता[1] निकाला है। मेरे आशीर्वाद तुम दोनोको है। उसमे सरदार स्वेच्छासे शरीक हो रहे है। हम चाहते है, तुम दोनो शुद्ध सेवा करो। तुमने आशीर्वादकी माँग छपे हुए कार्डमे की है, इससे वह सिर्फ एक शिष्टाचार-भर बनकर रह जाती है और उस हदतक उसकी कीमत कम हो जाती है। अगर आशीर्वाद माँगने लायक हो तो वे हाथसे लिखकर मँगाने चाहिए और उसमे दम्पतीके कुछ शुभ सकल्पोका भी उल्लेख होना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी – भाग १, पृष्ठ १५

२३९. पत्र : बच्चोंको

१४ मार्च, १९३२

आजका [संघर्षका] समय लम्बे अरसेतक चलता रहे, तो हमे उससे थकावट मालूम नही होनी चाहिए और यदि इसे शोकका कारण मान ले तो थकावटका अनुभव हुए बिना रह ही नही सकता।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी – भाग १, पृष्ठ १५

२४०. एक पत्र[2]

१४ मार्च, १९३२

मेरा यह भी विश्वास है कि शादी जातिके बाहर होनी चाहिए। मर्यादा वैश्य तक ही बढाई जाये तो भले, परन्तु योग्य पति वैश्यके बाहर ही मिले और लडकी उसे पसन्द करे, तो उसे रोकना नही चाहिए।

महादेवभाईनी डायरी, भाग १, पृष्ठ १५

१. इस नवविवाहित दम्पतीने अपना विवाह हो चुकनेका उल्लेख करते हुए आशीर्वाद माँगा था।

२. यह पत्र एक सज्जन-द्वारा अपनी कन्याके विवाहके बारेमें पूछताछ किये जानेके उत्तरमें लिखा गया था।

२४१. पत्र : आर० वी० मार्टिनको

१५ मार्च, १९३२

प्रिय मेजर मार्टिन,

पहली तारीखके अपने पत्रमे[1] मैने जो विषय उठाया था, उसकी चर्चा मै पुनः कर रहा हूँ। मेरी पूरी मॉंगके विचाराधीन होते हुए भी मुझे अपने पुत्र रामदास गाधी को देखनेकी जो इजाजत दे दी गई, उसके लिए मै आभारी हूँ। तथापि, समय आ गया है जब मेरी उक्त मॉंगपर निर्णय शीघ्र ही हो जाना चाहिए। मेरे लिए यह मामला गैर-मामूली ढगसे फौरी हो गया है, क्योकि एक साथी कैदी, हरिदास गाधी गम्भीर रूपसे बीमार है और उनका वजन बहुत घट गया है। वे बहुत समयतक आश्रममे रहे है। मै समझता हूँ कि मेरा उनपर उनके पितासे भी ज्यादा असर है और मैं जानता हूँ कि केवल मेरा उन्हे देख आना उनमे जान डाल देगा। मै चाहूँगा कि सरकार यह समझ ले कि हरिदास-जैसे नवयुवक, जो मुझसे प्रभावित हुए है, मेरे लिए रामदास गाधीसे कम नही है। इसलिए मेरे मनको तबतक चैन नही मिल सकता जबतक कि साथी कैदियोसे मिलनेका यह मामला तय नही हो जाता, खासकर यह देखते हुए कि श्री हरिदास गाधी गम्भीर रूपसे बीमार है। मै शुक्रवारकी सुबह तक जवाबकी प्रार्थना करता हूँ।[2]

हृदयसे आपका,

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेन्ट स्पेशल ब्रांच, फाइल स० ८०० (४०) (१४)

२४२. एक पत्रका अंश

१६ मार्च, १९३२

मनुष्य-मात्रके साथ समान भावसे बरतना सम्भव और आवश्यक है। किन्तु विभिन्न व्यक्तियोकी चारित्रिक योग्यताके अकनमे इस नियमका प्रयोग नही हो सकता। बदमाश और सन्त, दोनोके प्रति प्रेम और उनकी सुख-सुविधाका खयाल रखा जा सकता है। मगर बदमाशी और सन्तपनको कभी एक श्रेणीमे नही रखा जा सकता और न रखना ही चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग १, पृष्ठ २१

१. देखिए पृष्ठ १६४।

२. बम्बई सरकारके गृह विभागको मार्टिनके पत्र तथा जेल-निरीक्षकको उसके पत्रके लिए देखिए परिशिष्ट ४।

२४३. पत्र : रैहाना तैयबजीको

१६ मार्च, १९३२

चि० रैहाना,

तुम्हारा खत मिला। जो खत गुम हुआ है उसमे मैंने यह पूछा था, 'जोय' और 'जे', 'से' और 'सीन'; 'तोय' और 'ते' के बारेमें कोई कानून है क्या? जैसे 'खास'मे 'स्वाद' क्यों, 'से' या 'सीन' क्यो नही? सलाममें 'सीन' क्यो, 'स्वाद' क्यो नही या 'से' क्यों नही? गलतमे 'तोय' क्यो, 'ते' क्यो नही? फिर यह गजल लिखी थी:

है बहारे बाग़े दुनिया चन्द रोज।
देख लो इसका तमाशा चन्द रोज।।
पूछा लुकमाँसे जिया तू कितने रोज।
दस्ते हसरत मलके बोला चन्द रोज।।
बादे मदफ़न क़ब्रमें बोली कजा।
जाहिलो है ये जमाना चन्द रोज।।[1]

आज इतना बहुत मानना क्योकि बाये हाथसे लिखनेमे वक्त बहुत लगता है न? उर्दू हरफ तो बहुत खराब बने है; पर तुझे मेरे उर्दू अक्षर समझ लेनेमे अडचन नही होनी चाहिए। महादेवको मेरे पास ले आये है। उसे तेरा 'उठ जाग मुसाफिर' भजन याद है। एक बार प्रार्थनामें गा भी लिया गया है। अगली बार उसे उर्दू लिपिमे लिखकर भेजूंगा।

तू अच्छी तरह है न? पशाभाई कहाँ है? डाह्याभाईको आशीर्वाद। अम्मा जानको हमारे वन्देमातरम् और बहुत-बहुत सलाम। बाबाजानसे कहना कि 'लीडर'मे अलीगढ़के विद्यार्थियोके साथ उनकी तस्वीर देखी। चेहरा दाढीमे छुप गया है, यह देखकर हम खूब हँसे। हमीदा और रोहिणीके समाचार लिखना। इन सब बहनोको आशीर्वाद। सुहैलाको भी। बेबीको चुम्मा।

आशा है, यह पत्र ठीक मिल जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६३८) से।

१. यहाँतक उर्दू लिपिमें है।

२४४. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

१८ मार्च, [१९३२][1]

प्रिय मेजर भण्डारी,

जब मैंने आपको तीन[2] नाम दिये थे, तब महिला वार्डकी बात कतई ध्यानमें नही थी। लेकिन उस वार्डमें कई आश्रमवासी बहनें हैं। इसलिए मैं फिलहाल श्री छगनलाल जोशीको छोड दूँगा और उसके बजाय श्रीमती गगाबहन वैद्यका नाम रखूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५१२९) से।

२४५. पत्र : नारणदास गांधीको

१८ मार्च, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा बडा लिफाफा कल यानी गुरुवारको मिला। हरजीवन और शारदा[3] मुझसे मिलने यहाँ आना चाहते हैं। अब आना असम्भव है। इस समयके नियमके अनुसार तो जो राजनीतिमें भाग नही लेते, ऐसे आश्रमवासी आ सकते हैं। दूसरोंके बारेमें अभी लिखा-पढी चल रही है। राजनीतिमें भाग लेनेवाले तो वे ही गिने जायेंगे जो कांग्रेसके काममें लगे रहते हैं। इस दृष्टिसे महादेव, देवदास और प्यारेलाल इनमें आयेंगे। कुछ हदतक वालजी भी ऐसे कहे जा सकते हैं; अन्य दूसरे नही। लेकिन जो इन दिनो धरना दे रहे हैं, उन्हें भी इनमें गिनना चाहिए। चूँकि [कौन आये और कौन न आये] यह नैया विश्वासके आधारपर चलनी है, इसलिए अन्तिम उत्तरदायित्व मुझपर ही आता है। इसलिए बाल और अन्य जो बालक-बालिकाएँ इस समय यह काम कर रहे हो, उन्हें छोडकर शेष आश्रमवासी आ सकते हैं। एक बारमें पाँचसे ज्यादा न आयें। मैं जैसा पहले लिख चुका हूँ, पाँच या किसी एकको हर हफ्ते आना ही चाहिए, ऐसी कोई बात नही है। फिर भी जिनका मन हो उन्हें ऊपरकी मर्यादामें मेरी तरफसे आनेकी छूट है।

१. दी डायरी ऑफ महादेव देसाई, भाग-१, पृष्ठ १७-८ से।

२. हरिदास गांधी, नरसिंहभाई ईश्वरभाई पटेल और छगनलाल जोशी।

३. हरजीवन कोटक; शारदा उनकी पत्नी थी।

नाम पहले सुपरिंटेंडेंटको भेजे और फिर उसमे वृद्धि न करे, यह जरूरी है। रविवार और छुट्टीके दूसरे दिनोके सिवा किसी भी दिन ११ से १ के भीतर मिलना सुविधाजनक होगा। सोचता हूँ, बात समक्षमे आने योग्य ढगसे सामने रख दी गई है। इतना और जोड़ दूँ कि जो आनेकी इच्छा करते हो, यदि उनके नाम अपने पास दर्ज करके मेरे पास भेजते रहोगे तो मुझे सुविधा होगी . . .।[1]

[गुजरातीसे]

बापूना पत्रो–९ : श्री नारणदास गांधीने, भाग–१, पृष्ठ ३२२–३ ।

२४६. पत्र : निर्मला ह० देसाईको

२० मार्च, १९३२

चि० निर्मला,

हम अगर अपनी जरूरतके लायक काते तो भी देशको लाभ है, क्योकि इतनी दौलत बढी। इसके सिवा श्रम और स्वावलम्बनका दूसरेके सामने उदाहरण पेश हुआ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४६७) से। सी० डब्ल्यू० ८९७२ से भी, सौजन्य : नारणदास गांधी।

२४७. एक पत्र

२० मार्च, १९३२

चि०,

खाद जब खेतमे डाली जाती है, तब वह सुन्दर मिट्टी बन जाती है। उसके मिट्टीमे बदलते समय उससे जो हवा निकलती है, वह वृक्षोको खुराक देती है। इसी तरह थूक जबतक मुँहमे रहता है तबतक, यदि मुँह निरोग हो तो, पाचन-क्रियामे मदद पहुँचाता है। बाहर वह गन्दगी पैदा करता है और धूलमे मिलकर वह किटाणुओका पोषण करता है। मतलब यह हुआ कि अपने योग्य स्थानपर कोई भी वस्तु गन्दगी नहीं है और दूसरा यह कि गन्दगी आदमी पैदा करता है। यह समझकर हमे शौचके नियमोको समझना और उनका पालन करना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९७५) से; सौजन्य : नारणदास गाधी।

१. पत्र साधन-सूत्रमें अधूरा है।

२४८. पत्र : शारदा चि० शाहको

२० मार्च, १९३२

चि० शारदा,

आकाशमें जो तारागण और नक्षत्र दिखाई देते हैं, ये सब ईश्वरकी मूर्तियाँ हैं।

अपने देशकी स्त्रियोंकी पोशाक मुझे सबसे अच्छी लगी। महावीर, बुद्ध, ईसा, मुहम्मद, आदिने एक ही ईश्वरका गुणगान किया है।

स्त्रियोंके लिए ज्यादातर शिक्षण तो पुरुषों-जैसा ही होना चाहिए; हाँ, स्त्री-धर्मकी विशेषता बतानेकी हदतक अलग होना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९०७)से, सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला।

२४९. एक पत्र

२० मार्च, १९३२

चि०,

यह सच है कि इन दिनों कई जगह लोग, जितनी चाहिए, उससे अधिक छूट लेते हैं। जब भी लोक-जागृति होती है, ऐसा होता ही है। संयम तो जो पाले, उसका है। हम अपने प्रति कठोर रहें और दूसरोंके प्रति उदार। हम जिसे स्वच्छन्दता मानते हैं, वह दूसरोंके लिए संयम हो सकता है। एक व्यक्ति दूधको औषधि-रूपमें लेता है, दूसरा भोग-रूपमें। ऐसा हम रोज देखते हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९७९)से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२५०. पत्र : गंगाबहन झवेरीको

२० मार्च, १९३२

चि० गगाबहन (झवेरी),

मुझसे मिलनेके लिए आनेके बारेमे नारणदासने तुम्हे सब बता दिया होगा। जिन्होंने सघर्षमें भाग लिया है, वे नही आ सकते, सरकारी हुक्मका ऐसा अर्थ निकलता है। अलबत्ता यह निषेध उनके लिए लागू नही होता जो लौकिक दृष्टिसे मेरे कुटुम्बी कहे जायेंगे। इसे लडने योग्य बात नही मानता, इसलिए जितनी सुविधा वे दे रहे हैं उतनीसे सन्तोष मान लेना ठीक लगता है। तुम्हे जो कहना हो, वह लिख भेजो, या जो आनेवाले हो उनके मारफत कहलवा दो। सघर्षके बारेमें तो मुझसे पूछा नही जा सकता। कैदीको उसके विषयमें अपना मत देनेका अधिकार नही और उसकी योग्यता भी नही। जेलमे तुम्हारी तबीयत कैसी रही? अपने अनुभव लिखना। जुर्माना किसने भर दिया?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९४९) से। सी० डब्ल्यू० ७० से भी; सौजन्य: गगाबहन झवेरी।

२५१. पत्र : मंगला शं० पटेलको

२० मार्च, १९३२

चि० मगला (लाडकी[1]),

स्वराज्य मिलेगा, तब बहुत-कुछ करेंगे। गुफा देखोगी और-और भी बहुत देखोगी। हमारे आसपास ही देखनेके लिए बहुत चीजे हैं, वह तो आज भी देख सकते हैं। और यदि उसे सही तरह देखना आ जाये तो बाकीका देखें-बराबर मानो। तुमने आकाश देखना सीखा? मैं बुढापेमें सीख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०७९) से। सी० डब्ल्यू० ४३ से भी; सौजन्य: मंगलाबहन ब० देसाई।

१. अर्थात् लाडली।

२५२. पत्र : मथुरी ना० खरेको

२० मार्च, १९३२

चि० मथुरी,

हमारे यज्ञार्थ कातनेसे गरीबोको सूत मिलता है। हमारे उदाहरणसे दूसरे कातते है और हम गरीबोके साथ तन्मय होते है, जिससे हमारी शुद्धि होती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २६४) से, सौजन्य . लक्ष्मीबहन ना० खरे।

२५३. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

२० मार्च, १९३२

चि० परसराम,

दातुनको अँगुलीकी मदद देनेका अर्थ यह है कि दातुनसे दाँतोको घिसने और जीभ साफ करनेके बाद कुल्ला करते समय मसूडोको अगुलीसे खूब घिसते रहना चाहिए। पायरियावालेको दो बार दातुन करनी चाहिए, वह एक बारमे आधा घटा भी लगाये तो मै उसे बहुत नही मानता। मैने हब्शियोको चाहे जब दातुन करते देखा है। दातुनसे दाँत साफ होते है, यही नही, उसकी कूँची बनाते समय मुँहसे जो लस छूटता है, उसके साथ बहुत-सी गन्दगी भी निकल जाती है। इस लसको तो थूक ही दिया जाता है। मै खुद तो नमकके सिवा दातुन करते समय और किसी चीजका इस्तेमाल नही करता। दातुनका मेरे लिए बहुत अर्थ तो हो भी नही सकता, क्योकि मेरे ऊपरका तो एक भी दाँत नही है और अब नीचेके भी थोडे ही रह गये है। (दातुनके लिए) बबूल और नीम, दोनो ही अच्छे है, लेकिन पायरियावालेको नीमके अधिक अच्छे होनेकी सम्भावना है। उसकी कडवाहट बहुत उपयोगी वस्तु है।

लडकियोको फाउटेनपैन काममे लानेकी बिलकुल जरूरत नही है। सच कहे तो आश्रममे किसीको फाउटेनपैनकी जरूरत नही होनी चाहिए। इतनी क्या जल्दी है? विद्यार्थियोके लिए तो यह चीज हानिकारक ही है। गुजराती, हिन्दी, उर्दू — हिन्दुस्तानकी सभी लिपियोके लिए बरू ही सही कलम है। बच्चोको इसका अभ्यास कराया जाना चाहिए। आश्रमकी प्रार्थनाके समय जबतक प्रधान व्यक्तिने शुरू न किया हो तबतक किसीको नही बोलना चाहिए। जब वह शुरू करे तब जो स्वरमे पढ सकते हो, वे ही उसका साथ दे, यह नियम है। सारा समुदाय जब एकतान होकर सुरमे

गाता है तब उसका असर होता ही है। यही बात मौनके बारेमे है। दोनो अपनी-अपनी जगह उपयोगी हैं। हवन आदिमे ऊँचे स्वरसे मन्त्रोच्चारण किया जाता है, इसके पीछे मान्यता यह है कि हजारो लोग भावनापूर्वक प्रेक्षकोके रूपमे बैठे हैं। जब यह चीज रूढ़ हो गयी, तो दस-पाँच प्रेक्षकोके होनेपर भी हवन ऊँचे स्वरमें ही किया जाता रहा।

एक महाव्रतके पालनमे अधिकाश रूपमे दूसरोका भी समावेश हो जाता है।

जैसे नीमसे नीम होता है, ऐसे आदमीसे आदमी होता है और जैसे नीममे उत्तरोत्तर उसके सामान्य गुणोका सक्रमण होता रहता है, वैसा ही आदमीके विषयमे भी है। किन्तु साथ ही अनेक कारणोसे सब गुणोके सक्रमणकी यह परम्परा टिक नही पाती और टिकनी भी नही चाहिए। इसके सिवा, मनुष्य और दूसरे जीवोमे जो भेद है, उसके कारण भी मनुष्यमे हम विविधता देखते हैं।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४९२) से। सी० डब्ल्यू० ४९६९ से भी, सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा।

२५४. पत्र : पुष्पा शं० पटेलको

२० मार्च, १९३२

चि० पुष्पा,

जो सरदार हो, वह क्या चिट्ठी लिखता है? वह तो सरदारी करता है और दूसरोसे लिखवाता है।

इस बार तेरे अक्षर ठीक है। ध्यान रखनेसे ठीक होते ही हैं। कमलाका कोई पत्र आया?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९८४) से। सी० डब्ल्यू० ३० से भी; सौजन्य : पुष्पाबहन ना० नायक।

२५५. पत्र : वालजी गोविन्दजी देसाईको

२० मार्च, १९३२

भाई वालजी,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी या मेरी दलील काम नही आयेगी। कायदेके आगे दलीलका क्या अर्थ? 'विल' के आगे हो सकता है। प्रस्तावनाके विना चला सको तो शायद हो सकता है।

वच्चे अपने खेल-कूदके समयमे ताश खेले तो मना न करे। वडे खेले तो भी मना नही किया जा सकता। हाँ, ऐसा कह सकते है कि न खेलना वाछनीय है। ताशके खिलाफ तुम्हारा क्या कहना है?

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४२३) से, सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई।

२५६. इमाम साहब – ३[1]

२१ मार्च, १९३२

हमे याद रखना चाहिए कि इमाम साहवने अपना रहन-सहन अग्रेजी ढगका रखा था। हाजी साहिवा तो जन्मसे ही अग्रेजोकी तरह रहनेकी आदी थी। फातिमा और अमीनाका पालन-पोषण भी अग्रेज वच्चोकी तरह किया गया था। ऐसे आदमीके लिए अपना वहुत-सा खर्च कम करके एकदम सादगी ग्रहण कर लेना वहुत मुश्किल काम था। किन्तु इमाम साहव जव एक वार कोई काम करना तय कर लेते थे तो फिर वह उनके लिए सरल हो जाता था। इसलिए जव मैंने जोहानिसवर्ग छोडा और फीनिक्समे जा वसनेका निश्चय किया तव इमाम साहवने स्वय फीनिक्समे रहनेकी वात सामने रखी। यद्यपि मुझे उनकी दृढताका अनुमान था, तो भी मै उनकी यह वात सुनकर दग रह गया। मैंने उनके सामने फीनिक्समे रहनेकी कठिनाइयाँ रखी। जिसने आजतक कभी हाथ-पाँव नही हिलाये और एक प्रकारकी साहवीसे जीवन व्यतीत किया, वह एकदम मजदूर कैसे वन सकेगा? सम्भव है, इमाम साहब खुद फीनिक्सका जीवन वर्दाश्त कर ले, किन्तु हाजी साहिवाका क्या होगा? फातिमा और अमीनाका क्या होगा? इमाम साहवने सक्षिप्त और दृढ उत्तर

१. यह "पत्र : नारणदास गाधीको", १९/२१-३-१९३२ के साथ भेजा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

दिया, "मैने तो खुदापर भरोसा किया है। हाजी साहिबाको आप नही जानते। वह तो मै जहाँ रहूँ, वहाँ और जिस तरह रहूँ, उसी तरह रहेगी। इसलिए यदि आपको कोई दूसरी दिक्कत न हो तो मेरा फीनिक्स आनेका निश्चय है। सघर्ष कब समाप्त होगा, इसकी कोई खबर नही है। मुझे नही दिखता कि मै अब घोड़ागाड़ीका अथवा कोई दूसरा धन्धा कर सकता हूँ। मै भी आपकी तरह यह समझ गया हूँ कि सत्याग्रहीको धन-दौलत वगैरहका मोह छोड़ देना चाहिए।" मुझे तो इमाम साहबकी यह बात पसन्द थी ही, मैंने फीनिक्सके साथियोको लिखा। उन्होने भी इस प्रस्तावका स्वागत किया और इमाम साहब सकुटुम्ब फीनिक्स आ गये।

आश्रमके बहुत-से व्यक्तियोको शायद यह मालूम नही होगा कि इमाम साहब फीनिक्सकी सभी हलचलोमे भाग लेते थे। सभी नीचेके एक झरनेसे अपने-अपने लिए पानी भरकर लाते थे। झरना आश्रमसे काफी निचाईपर था। फीनिक्स आश्रमके मकान एक टेकड़ीपर बने हुए थे। झरनेसे वहाँतक पहुँचनेके लिए लगभग पचास फुट चढ़ना पडता था। इमाम साहबका शरीर तब भी नाजुक ही था। किन्तु सुबह कन्धेपर काँवर रखकर वे नीचे उतरते और पानी भरकर धीरे-धीरे ऊपर आते। साबरमती आश्रममे चरखेका जो स्थान है, फीनिक्समे वही स्थान छापाखानेका था। बालक-बालिकाएँ, पढे-लिखे जवान और बूढे, सभीको छापाखानेके किसी-न-किसी विभागमे काम करना पडता था। अक्षर जोडना, छपे हुए अखबारोकी गड्डी तैयार करना, उनपर कागज लपेटना, टिकट चिपकाना, मशीन रुक जाये तो उसे हाथसे चक्कर देकर ठीक करना, आदि अनेक छोटे-बडे काम करने पड़ते थे। इसमें सभी लोगोको थोड़ा-थोड़ा समय देना होता था, खास तौरपर अखबार प्रकाशित होनेके दिन। इस काममे इमाम साहब, हाजी साहिबा, फातिमा और अमीना — चारो हाथ बँटाते थे। इमाम साहबने अक्षर जोडना सीख लिया था। उनकी उम्र और स्वभावको देखते हुए यह एक अद्भुत बात ही थी। इस तरह इमाम साहब फीनिक्सके जीवनमे ओतप्रोत हो गये थे। इमाम साहब और उनके कुटुम्बके लोगोको मांस खानेकी आदत थी। किन्तु मुझे याद नही आता कि फीनिक्समे इमाम साहबके घर कभी माँस पका हो।

किन्तु इसका यह अर्थ नही है कि इमाम साहब किसी भी दृष्टिसे कच्चे या लापरवाह मुसलमान थे। इमाम साहब अथवा उनके कुटुम्बके लोग नमाज, रोजा, आदिमे कभी चूक नही होने देते थे। इमाम साहबने फीनिक्सवासियोके साथ एक होकर और उनके लिए त्याग करके इस्लामकी सस्कृतिका सुन्दर स्वरूप सामने रखा था।

किन्तु अभी तो इमाम साहबकी त्याग-शक्तिकी और भी कठिन परीक्षा होनी थी। इमाम साहब पुनः कई बार जेल गये और वहाँ एक आदर्श कैदीके ढगसे रहे। जब १९१४में यह निश्चय हुआ कि फीनिक्समे अमुक-अमुक व्यक्तियोको छोड़कर बाकीके सब लोगोंको हिन्दुस्तान चले जाना है, तब इमाम साहबकी सच्ची कसौटी हुई। दक्षिण आफ्रिका इमाम साहबके लिए घर ही हो गया था। हाजी साहिबा, फातिमा, अमीना तो हिन्दुस्तानको बिल्कुल नही जानती थी। वे हिन्दुस्तानकी

भाषा भी नही जानती थी; थोड़ी-बहुत अंग्रेजी या डच भाषा ही जानती थी। किन्तु इमाम साहबने निर्णय करनेमें तनिक भी ढील नही दिखाई। इमाम साहब और उनके कुटुम्बका यही निश्चय था कि जहाँ मैं रहूँगा, वही वे रहेंगे। ऐसा था इमाम साहबका सत्याग्रहके लिए किया गया त्याग और हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए उनका योगदान।

उनके हिन्दुस्तान आनेके बादके जीवनसे तो सभी आश्रमवासी परिचित हैं। यह मेरा दृढ़ मत है कि इमाम साहब दिन-प्रतिदिन ऊँचे उठते जा रहे थे, उनकी वृत्तियाँ शुद्ध होती जा रही थी, उनकी ईश्वर-भक्ति बढ़ती जा रही थी, और आश्रम-नियमोके प्रति उनकी श्रद्धा भी बढती जा रही थी। किन्तु उनके हिन्दुस्तान आनेके बादकेके जीवनके सस्मरण देना हमारा हेतु नही है। अच्छा तो यह होगा कि जो-जो उनके प्रगाढ सम्पर्कमें आये हो, वे सभी अपने-अपने अनुभव भी लिख डाले और मेरे इन सस्मरणोके साथ उन्हे सगृहीत कर लिया जाये।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

२५७. पत्र : नारणदास गांधीको

१९/२१ मार्च, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हे कल पत्र[1] लिखकर आज डाकमें छोडनेको दिया। वह यथासमय मिले तो ठीक। उसमे मुलाकातो और चम्पाके बारेमे तफसीलके साथ लिखा है। इसलिए इन बातोके बारेमें इस पत्रमे नही लिखूंगा। उस पत्रमे कुछ और बातें भी है।

हरिदास गांधी, छगनलाल और नरसिंहभाईसे[2] आज मिला। इस तरह हर पन्द्रह दिनमे तीन व्यक्तियोसे मिल सकूंगा। अर्थात्, जो साथी यहाँ है उनके बारेमें खबर लगती रहेगी और अगर उनको कोई मदद दी जा सकी, तो वह भी हो सकेगा। हरिदास बहुत कमजोर हो गया है; मगर उसका रोग शारीरिकसे अधिक मानसिक है। उसकी देखरेख हो रही है। कमलाको लिखे पत्रसे ज्यादा समाचार मिलेगें। कमला हरिदाससे मिलना चाहे तो मिलने आ जाये। यदि वह मेरी मुलाकातके दिन आये और पाँचकी जो सख्या निश्चित है उसीमें हो, तो वह हम दोनोसे मिल सकेगी।

हेमप्रभा देवीका पत्र बीच-बीचमे मेरे पास सीधा आता रहता है और मैं उन्हे उत्तर भी सीधा ही भेज देता हूँ। इस बहनका साध्वीपन, इसका साहस, श्रम और

१. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", १८-३-१९३२।
२. नरसिंहभाई ईश्वरभाई पटेल।

कुशलता आश्चर्यजनक है। जानकीबहन और जमनालालजी की खबरे मिले तो मुझे देते रहना। यो मै मानता हूँ कि मदनमोहन[1] तो पत्र लिखेगा ही। चिमनलालका ऑपरेशन हो गया होगा। किसने किया? त्रिवेणी और दूधीबहनका इलाज कौन वैद्य कर रहा है? अपनी खुजलीका तत्काल उपाय करके उसे समाप्त करो। पूरे शरीरपर गीली पट्टीवाले उपायसे उसे खत्म होना ही चाहिए। बीडजकी जमीनके बारेमे मै क्या लिखूं? जो ठीक लगे सो करना। रावजीभाईसे मुलाकात नही हो सकती। रणछोडभाईका पत्र दिखा नही। तुम्हारी सूचीमे भी उसका उल्लेख नही है।

२१ मार्च, १९३२

तिलक[म]के नाम मेरा पत्र पढ लेना। यदि वह मांस न खानेके कारण बीमार पडता हो और उसकी इच्छा हो तो जहाँ वह मांस खा सके, ऐसा कोई स्थान हमें देख लेना चाहिए। यदि यह बात ठीक न लगे, तो मुझे लिखना। मैंने तो दो-तीन साथियोके साथ यह किया था। इसलिए यह बात मेरे लिए नई नही है।

हरियोमलको कामसे मुक्त करके भी अपना शरीर सुधारनेके लिए प्रेरित करना चाहिए।

दयाको उसके पिता बुला रहे हैं, इस विषयमे क्या सोचा? उसके नाम मेरा पत्र तो देखा होगा।

अपनी खुजलीके बारेमे विस्तारसे लिखो।

बापूके आशीर्वाद[2]

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२१५ से भी; सौजन्य: नारणदास गाधी।

२५८. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

२१ मार्च, १९३२

प्रिय बालको और बालिकाओ,

काम छोडकर शौचादिके लिए जाना पडे, इसमें पाप तो नही है, किन्तु यह कुटेव तो मानी ही जायेगी। जिसे काममें दिलचस्पी है, वह शौचादिसे निवृत्त होकर ही काममे लगेगा। और जो इन क्रियाओको किसी निश्चित समयपर करनेके नियमका पालन करता है, वह उसी समय जाता है। अगर काम लगातार करना पड रहा हो तो शौचादिके लिए जाना ही पडेगा; इसलिए कामकी अवधि एक बारमे लगातार चार घटोसे अधिक नही रखनी चाहिए।

१. जमनालाल बजाजके सचिव।

२. इसके बाद लेख 'इमाम साहब–३' था; देखिए पिछला शीर्षक।

चरखेमें मुख्य स्थान तो उससे मिलनेवाली शिक्षाका है, क्योंकि उससे सेवा-धर्मका भान होता है, एक बहुत उपयोगी धन्धा आ जाता है और वह सुन्दर कला भी है।

अनिच्छा हो तो किसी कामपर नहीं जाना चाहिए। किन्तु अनगढ़ बालकोंके मनमें अच्छी इच्छा ही नहीं होती; इसलिए इस सम्बन्धमें सही नियम यह है कि अच्छे कामके प्रति इच्छा हो या न हो, उसे करनेके लिए अवश्य जायें। करते-करते वह भाने लगता है अर्थात् इच्छा होने लगती है। इच्छाका ही अनुसरण करें तो स्वेच्छाचारी बन जायें। इस परिस्थितिसे तो बचना ही चाहिए। मेरे विषयमें कह सकते हैं कि भाषा और भूमिति मेरे प्रिय विषय थे।

जब नारणदास तुम्हें अनुमति दें तब आ सकते हो। पर मिलनेके लिए आनेके विषयमें संयम रखना अच्छी बात है। याद रखो कि हम गरीब लोग हैं, गरीब रहना चाहते हैं और अपने देशके भूखे मरकर जीनेवालोंसे होड़ लेना चाहते हैं।

अब एक घटना लिख रहा हूँ।

यह मैंने सुना तो था पर यहाँ अपनी आँखों देख रहा हूँ। यहाँ एक बिल्ली है। जब उसे हाजत होती है तब वह एकान्तमें जाती है और मिट्टीवाली जगह खोजती है। शौचके बाद वह पंजोंसे आसपासकी मिट्टी खोदकर उसे ढँक देती है। ढाँककर सूँघती है। थोड़ी भी गन्ध आनेपर और मिट्टी डालती है। यह देखकर मुझे अपनी बात याद आई। क्या हम सब गन्दगीको इतनी सावधानीसे ढाँकते हैं? हम रोज धरती-माताका वन्दन करते हैं, पादस्पर्शके लिए क्षमा माँगते हैं, पर उसपर थूककर, नाक साफ करके या पेशाब आदि करके क्या हम ढाँकते हैं? जो इस नियमका पालन न करते हों, अब करने लगें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८९८२ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

२५९. एक पत्र

२१ मार्च, १९३२

चि०,

कैदी होनेका सच्चा आनन्द तो किसीसे मुलाकात न लेनेमे है . . .[1]

जिस तरह उतावले होकर खाना नही चाहिए, उसी तरह उतावले होकर लिखना भी नही चाहिए। आदर्श तो यही है कि किसी भी बातमे उतावली न करें। जल्दी-जल्दी करना पड़े तो अर्थ हुआ कि कभी सुस्तीकी है। अनासक्ति और उतावलीका मेल बैठता ही नही।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९६९) से; सौजन्य: नारणदास गाधी।

२६०. पत्र: जुगतराम दवेको

२१ मार्च, १९३२

भाई,

तुम्हारे पत्रकी हमने आशा रखी ही थी। जन्म लेनेवाले सभी जीते नही रहते।[2] और जब हवा बिगडती है, तब मृत्यु-सख्या बढ जाती है। इसलिए तुम जो लिखते हो उसपर मुझे आश्चर्य नही है। आश्चर्य और आनन्द यह है कि मृत्यु-संख्या बढी नही। और मौतका अफसोस किसलिए? मरने लायककी मौत स्वागतके योग्य है। और जो मरते है, वे तो फिर जन्म लेनेके लिए ही न? इसलिए खेदका कोई कारण नही है। अकेले रहनेकी कला जिसने नही सीखी, वह बाहर होनेवाले परिवर्तनोसे विचलित हो जाता है। मगर सत्यनारायणको तो वही पाते है जो अकेले खडे रहने लायक होते है।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९७०)से; सौजन्य: नारणदास गाधी। महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ २७ से भी।

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

२. जुगतराम दवेने उन साथियोंकी शिकायत की थी जिन्होंने संघर्षमें साथ छोड़ दिया था।

२६१. एक पत्र

२१ मार्च, १९३२

चि०,

जैसे अन्न शरीरकी खुराक है, उसी तरह उपासना आत्माकी। जिसे यह विश्वास है कि आत्मा है, वह उपासनाके बिना जी ही नही सकता। प्रार्थना अर्थात् आत्माका परमात्माके साथ नियोजन।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९७३) से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

२६२. पत्र: बच्चोंको

२१ मार्च, १९३२

चि०,

ईश्वरकी मेरी व्याख्या याद है? ईश्वर सत्य है, यह कहनेके बजाय मैं यह कहता हूँ कि सत्य ईश्वर है। मैं हमेशा ऐसा नही सोचता था। यह तो चार-एक वर्ष पहले ही सूझा। मगर अनजानमें ही मेरा आचरण इसी किस्मका रहा है। ईश्वरको मैंने सत्यके ही रूपमें जाना है। एक समय ऐसा था जब ईश्वरकी हस्तीके विषयमें शंका थी। मगर सत्यकी हस्तीके बारेमें कभी नहीं थी। यह सत्य केवल जड़ नही बल्कि शुद्ध चैतन्यमय है। [दुनियापर] यही राज्य करता है, इसलिए ईश्वर है। यह विचार दिलमें पैठ गया हो, तो तुम्हारे दूसरे सवालोंका जवाब इसीमें आ जाता है। मगर परेशानी हो तो पूछ लेना। मेरे लिए तो यह अनुभवगम्य-जैसा है। 'जैसा' इसलिए कहता हूँ कि मैंने सत्यदेवका साक्षात्कार नही किया है। सिर्फ झाँकी देखी है। श्रद्धा अटल है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९७४) से; सौजन्य: नारणदास गांधी। महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ २७ से भी।

२६३. पत्र: पुरातन बुचको

२१ मार्च, १९३२

चि० पुरातन,

क्या पिछला ऑपरेशन पूरी तरह सफल नही हुआ है? तबीयतमे अब क्या खराबी है? मुझसे प्रश्न पूछा सो ठीक ही किया। विशिष्ट अथवा जैसी भी कहो, मेरी साधना सार्वजनिक सेवाके रूपमे रही है। सत्यकी खोजका यह अविभाज्य अग है।

रह कहाँ रहे हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१६४) से। सी० डब्ल्यू० ८९७१ से भी; सौजन्य . नारणदास गाधी।

२६४. पत्र: कुसुम देसाईको

२१ मार्च, १९३२

चि० कुसुम (बडी),

तेरा पत्र मिला। प्यारेलाल और गुलजारीलालकी[1] तबीयत अच्छी रहती है। मिलनेकी इजाजत मिले तो दोनोसे और दूसरोसे भी मिल आना।[2] क्या ऐसा कहा जा सकता है कि तेरा स्वास्थ्य अच्छा रहता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८३१) से।

१. गुलजारीलाल नन्दा।
२. धुलिया-जेलमें।

२६५. पत्र : वनमाला न० परीखको

२१ मार्च, १९३२

चि० वनमाला,

नाटकके बारेमें मैं पिछले पत्रमें[1] लिख चुका हूँ। क्या वेलगाँवसे नरहरिका पत्र आया? आया हो तो, क्या समाचार है? क्या सब साथ रहते है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७६९) से। सी० डब्ल्यू० २९९२ से भी; सौजन्य: वनमाला म० देसाई।

२६६. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२१ मार्च, १९३२

चि० प्रेमा,

बायें हाथसे लिखनेका आग्रह रखता हूँ, इसलिए लिखनेका काम अपने-आप कम हो जाता है। दाहिने हाथसे लिखनेकी आदत अभी गई नही है। विलायतसे जो कागज वगैरह लाया हूँ, उनका हमें उपयोग करना है। यदि उसके कारण तुम्हारी बुद्धि भ्रममे [स्वदेशीकी प्रतिज्ञाके कारण] पडती हो तो सँभालकर रख देना। बादमें काम आयेगें। लाकेटवाली चीजका किस्सा मैं भूल गया हूँ। जिनकी ऐतिहासिक कीमत नही थी, ऐसी चीजे साथ नही आईं। इसलिए अभी तो सब चीजे बहुत यत्न से सँभालकर रख देना। जिसका उपयोग करना चाहो, उसे उपयोगमे लाना।

यज्ञके बारेमे ऐसा अभिमान जो आग्रहका समानार्थी है, आवश्यक है, किन्तु गर्वका समानार्थी ऐसा अभिमान जिसकी प्रेरणाके वश होकर तुम यह कहने लगो कि 'मेरा क्या कहना, मेरा यज्ञ कभी टूट ही नही सकता', त्याज्य है।

अगर मैं ऐसा दावा करूँ कि माया मुझे बाँध ही नही सकती, तभी तो मुझे मेघजीके[2] बारेमे तुम्हारे प्रश्नका जवाब देनेकी जरूरत होगी न? मायाके पाशसे

१. पिछले १३ मार्चके पत्रमें 'नाटक' के बारेमें कुछ नहीं मिलता किन्तु बादके पत्रोंमें मिलता है; देखिए "पत्र. इन्दु पारेखको", २४-३-१९३२ तथा "पत्र: नारणदास गांधीको", २४/२९-३-१९३२।

२. उन तीन बच्चोंमें से एक जिन्हें गांधीजी की सलाहके अनुसार उनके माता-पिताने चेचकका टीका नहीं लगवाया था और जो चेचक निकल आनेपर बचाये नहीं जा सके थे। गांधीजी इस घटनासे बड़े दुखी हुए थे

छूटनेका प्रयत्न करते हुए भी हम कोमलता और सेवाभाव न छोड़े। कोई मर जायेगा तो क्या होगा, यह विचार मूर्खताका है, मायाका नही। मरना सबको है, यह एक बार जान लेनेके बाद उसका विचार क्या करना? और फिर हम तो नटवरके हाथमे स्वेच्छासे कठपुतली बने है, इसलिए कुछ और कहने-सुननेका सवाल नही रहता। उसे जैसे नचाना होगा वैसे नचायेगा। मूल बात तो नाचनेकी ही है न? जिसे सदा ही नाचनेको मिले, उसे दूसरा क्या चाहिए?

तेरा सगीत[1] आगे बढ रहा है, यह बहुत अच्छा है। टॉन्सिल कटवाना जरूरी हो तो कटवा डालना।

आश्रमसे बाहरवालोके बारेमे अभी फैसला नही हुआ है।[2] सुशीलाका नाम शामिल किया है।

अपने दोषोकी चर्चा करवाकर तू प्रशसा करवाना चाहती है क्या? मुझे तेरे दोष बताने ही नही है। क्या कई बार मै बता नही चुका हूँ? उनमे कितना सुधार किया, यह बता। फिर इस प्रश्नपर अधिक विचार करेगे।

ईश्वरके भक्तो वगैरहमे एक हदतक ही समता होती है। पूर्ण समता जिसमे प्रकट हो वह परमेश्वर है। लेकिन परमेश्वर तो एक ही है। इसलिए पूर्णतम मनुष्यमें भी अधूरी समता ही होती है। इसीलिए मतोकी भिन्नता और विरोध होते है। इसमे दुःख माननेकी जरूरत नही है। जगत विषमताओका परिणाम है। हमारा धर्म समताकी मात्राको प्रतिदिन बढ़ाते रहना है। ऐसा करते-करते विषमता बुरी लगनेके बजाय सह्य और कुछ अशमे सुन्दर भी लगेगी।

हिन्दुस्तानमे सब-कुछ अन्य देशोकी अपेक्षा अच्छा ही है, ऐसा मान लेनेका कोई कारण नही। फिर उत्थान-पतन तो विश्वका नियम है। कुल मिलाकर हिन्दुस्तानमे बहुत-कुछ अच्छा है। इसीलिए हिन्दुस्तान विजित देश हुआ, विजेता नही। इसके गर्भमें यह मान्यता है कि गुलामकी अपेक्षा अत्याचारीकी स्थिति ज्यादा बुरी है।

हमारे यहाँ खगोलशास्त्रकी और अप्टन सिंक्लेयरकी[3] कौन-सी पुस्तके है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२७७) से। सी० डब्ल्यू० ६७२५ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कटक।

१. प्रेमाबहन कंटक नारायण मोरेश्वर खरे से संगीत सीख रही थी।
२. मुलाकातके बारेमें।
३. अमेरिकी उपन्यासकार।

२६७. पत्र : मदालसा बजाजको

२१ मार्च, १९३२

चि० मदालसा,

वत्सलाको लिखे पत्रमे तुझे भी अपने कुछ प्रश्नोके जवाब मिल जायेगे। दूध यहाँ मुझे सधता नही लग रहा था, इसलिए मैने वैसा लिखा। शान्त जीवनमे दूधकी आवश्यकता न होनेकी सम्भावना है।

सब अनाज कच्चे नही खाये जा सकते। हरे पत्ते, गाजर, वगैरह कच्चे खाये जा सकते है। उन्हे पकानेसे उनमे जो एक प्रकारका सत्त्व होता है, वह नष्ट हो जाता है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृष्ठ ३१२।

२६८. पत्र : एक लड़कीको[1]

२१ मार्च, १९३२

ब्रह्मचर्य-पालनमे सबसे बडी चीज भ्रातृ-भावनाका साक्षात्कार करना है। हम सब एक पिताके लडके-लडकियाँ है। उनमे विवाह कैसे? खाना केवल औषधरूप, स्वादके लिए नही। मन और शरीरको सेवाकार्यमे लगाये रखना। सत्यनारायणका मनन करना। बाल कटानेका धर्म स्पष्ट हो जाये तो लोक-लज्जा छोडकर कटवाना। ईश्वर-भक्तिके लिए नित्य सेवामे लीन रहना।

मनोविकार हमारे सच्चे शत्रु है, समझकर [उनसे] नित्य युद्ध करना। इसी युद्धका महाभारतमे वर्णन है।

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ–२७।

१. जो ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहती थी।

२६९. पत्र : अगाथा हैरीसनको

२२ मार्च, १९३२

प्रिय अगाथा,

तुम इस लिखावट[1] को पहचान लोगी। मेरे दाहिने हाथने काम करनेसे इनकार करना शुरू ही किया था, महादेव ठीक उसी समय यहाँ आ पहुँचे। उसमें कोई लगातार दर्द रहता हो, सो बात नहीं है, लेकिन उससे लिख पाना कठिन है। मैं बायें हाथसे काफी लिख लेता हूँ और जब कभी सम्भव होता है, महादेवके हाथसे काम ले लेता हूँ।

तुमने डॉ० रामचन्द्र रावकी [बात][2] की है। मैं उन्हें पहचान नहीं पा रहा हूँ। उन्हें मुझसे भेंट करनेकी इजाजत मिलनेकी सम्भावना नहीं है। हम अब तीन हैं और हम सबका स्वास्थ्य काफी ठीक है और पर्याप्त पुस्तकों, समाचारपत्रों और चरखोंके होनेसे हमारे पास समय बितानेके काफी साधन हैं।

सस्नेह[3],

हृदयसे तुम्हारा,
बापू[4]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४५२) से।

२७०. पत्र : डॉ० सी० मुथुको

२२ मार्च, १९३२

आपका पत्र तथा आपकी सुन्दर पुस्तक[5] के नये संस्करणकी एक प्रति पाकर बड़ी खुशी हुई। मैं उसे दुबारा पढ़ूँगा। मेरे भोजनके बारेमें चिन्तित न हों। मुझे अभीतक फिरसे दूध शुरू करनेकी जरूरत नहीं पड़ी है। मेरा खयाल है कि जिन दिनों कोई भाग-दौड़ न हो और आदमीको सिर्फ सोचने-विचारनेका ही काम हो, उन दिनों उसे दूध तथा उसके विटामिनोंसे मिलनेवाली स्फूर्तिकी जरूरत नहीं होती

१. महादेव देसाईकी लिखावट।
२. साधन-सूत्रमें यहाँ एक शब्द अस्पष्ट है।
३. ४. ये शब्द गांधीजी के स्वाक्षरोंमें हैं।
५. द ऐंटीक्विटी ऑफ हिन्दू मेडिसिन।

है। मै खुराकमे रोटी, पिसा हुआ बादाम, हरी सब्जियाँ, टमाटर और नीबू ले रहा हूँ और जितनी शक्ति और वजन चाहिए, इनके बलपर कायम रखे हुए हूँ। मै गर्म पानी तथा थोडेसे सोडा बाइकार्बोनेटके साथ रोज लगभग दो औंस शहद भी लेता हूँ। शौच बराबर ठीक होता है। मै यह तफसील आपको इसलिए दे रहा हूँ कि आप हमेशा मेरे स्वास्थ्यमे दिलचस्पी लेते रहे है। 'भारतमे आयु कैसे बढ़ाये' और 'बाल्यावस्थामे स्वास्थ्य-रक्षा और रोगोसे बचनेके उपाय'-सम्बन्धी आपके भाषणकी प्रति मुझे नही मिली है।[1]

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ५-४-१९३२

२७१. पत्र : पद्माको

२२ मार्च, १९३२

चि० पद्मा,

तेरा पत्र मिला। कविता पढ गया। देखता हूँ, तुझमें काव्य-प्रतिभा है। किन्तु धीरजसे काम लो। उस प्रतिभाका विकास शरीर सुधरनेपर ही होगा। वहाँ किसी डॉक्टरकी मदद मिल पाती है? तू तो भुवाली गई थी? वहाँकी हवामे ही दवा है, फिर तबीयत क्यो नही सुधरी? सरोजिनी देवीकी एक ही चिट्ठी मिली थी। 'मगनचक्र' को आजमानेका विचार किया है; मंगाया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१३०)से। सी० डब्ल्यू० ३४८२ से भी, सौजन्य : प्रभुदास गाधी।

१. यह वाक्य हिन्दू, २९-४-१९३२ से लिया गया है।

२७२. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

२२ मार्च, १९३२

भाई विट्ठलदास,

शायद तुम बम्बई पहुँच गये हो, ऐसा मानकर वहींके पतेपर लिख रहा हूँ। तुमने दूसरी बार जो खजूर भेजे वे मिल गये हैं। उनमें बहुत घुन और इल्लियाँ हैं। शायद यहाँ आनेपर हो गये हो। कुछ भी हो, अब जबतक मैं न मगाऊँ तबतक खजूर न भेजना। यहाँ जो खजूर मिलते हैं, वे खराब नहीं हैं। फिलहाल तो बिना खजूरके काम चलाकर देखना चाहता हूँ। यहाँ कोई भी चीज ज्यादा तादादमें सँभालना कठिन है। इसके सिवा, जो बाहर हैं उन्हें मन्दिरवासियोंपर बिना जरूरत पैसा या समय नहीं लगाना चाहिए। आवश्यकता पड़नेपर मैं जरूर लिखूँगा। तुम्हारी तबीयत दिन-प्रतिदिन सुधर रही होगी। सरदार और महादेव मजेमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

श्री विट्ठलदास जेराजाणी
खादी भण्डार
कालबादेवी रोड
बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७८०) से।

२७३. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

२२ मार्च, १९३२

मनुष्य-देहमें ईश्वर-दर्शन होगा या नही, यह प्रश्न गीता-भक्तके मनमें पैदा ही नही होता, क्योकि उसे कर्मका ही अधिकार है, फलका कभी नही। और जिस बातका अधिकार नही है, उसका विचार क्यो किया जाये? तथापि, मेरी राय है कि देह रहते पूर्ण साक्षात्कार असम्भव है। हम ठेठ उसके पासतक जरूर पहुँच सकते हैं, मगर शरीरकी सत्ताके कारण द्वार-प्रवेश असम्भव मालूम होता है। ईश्वरके विरहका दु:ख तो हमें सदा ही रहना चाहिए। वह न रहेगा तो प्रयत्न बन्द हो जायेगा या शिथिल पड़ जायेगा। विरह-दु:खका परिणाम निराशा नही, आशा होना चाहिए; शिथिलता नही, अधिकाधिक उद्यम होना चाहिए। कोशिश थोड़ी भले ही हो, परन्तु वह बेकार कभी नही जाती, यह भगवानकी प्रतिज्ञा है। इसलिए हमारा विरह-दु:ख भी आनन्ददायक हो जाना चाहिए। क्योकि हमें विश्वास होना चाहिए कि किसी-न-किसी दिन साक्षात्कार जरूर होगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग १, पृष्ठ ३०-१।

२७४. पत्र : एक अवकाशप्राप्त सज्जनको[1]

२२ मार्च, १९३२

आपको डॉ० मुथुको लिखना चाहिए। परन्तु मेरा ज्ञान, जो वैज्ञानिक तो नही है किन्तु अनुभवजन्य है, यह बताता है कि आपको तीन उपवास करने चाहिए और फिर दूध और नारंगीके रसके साथ उपवास छोड़ना चाहिए। इतना करके देखिए तो फर्क पड़ेगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग १, पृष्ठ ३०।

१. इन्होंने अपने श्वासरोगके लिए प्राकृतिक उपचारके विषयमें पूछा था।

२७५. पत्र : मु० रा० जयकरको

२३ मार्च, १९३२

प्रिय श्री जयकर,

श्री स्टॉक्सकी पुस्तक[1] के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। कृपया श्री स्टॉक्सको बताइए कि मैंने उनकी पुस्तक पढ जानेतक दूसरी चीजे पढना बन्द कर रखा है। मै उसे पढ चुकनेके बाद उन्हे सीधा ही लिख पानेकी आशा करता हूँ।

आशा है, बुखारने आपको फिर परेशान नही किया होगा और आप अन्यथा भी ठीक और चुस्त ही होगे।

चूँकि दाहिने हाथमे फिर दर्द होने लगा है, मै लिखनेमे बाये हाथका उपयोग कर रहा हूँ। अब मुझे महादेवकी सहायता भी मिल गई है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

जयकरके निजी कागजात, पत्र-व्यवहार फाइल स० ४०७-६, सौजन्य : भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली।

२७६. पत्र : अब्बासको

२४ मार्च, १९३२

चि० अब्बास,

प्रश्न अच्छा है। 'अनुद्वेगकरम्'[2] का अर्थ हुआ कि बोलनेवालेको बिलकुल शुद्ध हृदयसे यह देखना चाहिए कि उसकी दृष्टि और इच्छा उद्वेग उत्पन्न करनेकी न हो। दूसरेपर क्या असर होगा इसे हम निश्चयपूर्वक कदापि नही जान सकते, इसलिए विचार यह करना चाहिए कि कोई हमसे यह कहे तो हमे कैसा लगेगा। 'प्रिय' और 'हितकर' पर भी यही बात लागू होती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६३०७)से। सी० डब्ल्यू० ८९८८ से भी; सौजन्य : नारणदास गाधी।

१. पुस्तकका नाम था – सत्यकाम ऑर ट्रू डिजायर्स।
२. भगवद्गीता, अध्याय १७, श्लोक १५।

२७७. पत्र : जुगतराम दवेको

२४ मार्च, १९३२

भाई,

तुमने पत्र अच्छा लिखा है। हमारी गाडीको चलानेवाला मनुष्य नही, ईश्वर है। उसमे बैठे हुए हम लोग जबतक उसपर श्रद्धा रखेंगे, तबतक गाडी जरूर चलती रहेगी। श्रद्धा छोडी कि गाडी अटकी ही समझो।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९८३) से, सौजन्य नारणदास गांधी। **महादेवभाईनी डायरी**, भाग–१, पृष्ठ ३४ से भी।

२७८. पत्र : इन्दु न० पारेखको

२४ मार्च, १९३२

चि०,

तूने बढिया सवाल[1] पूछा है।

'महाभारत' काव्य है, इतिहास नही। कविका उद्देश्य यह बताना है कि मनुष्य अगर हिंसाका रास्ता पकडेगा, तो उसमे झूठ आयेगा ही। फिर तो उससे कृष्ण-जैसे भी नही बच सकते। लेकिन बुरा तो बुरा ही है। और शिखडीको आगे करने और सूर्यको ढँकनेमे दोष तो था ही। मेरी यादके अनुसार व्यासजीने भी इन प्रसगोका दोषके रूपमे ही वर्णन किया है।

ऐसे उदाहरणोवाले नाटकोमे यह बता दिया जाये कि ये उदाहरण नकल करने लायक नही है, तो उनके खेलनेमे शायद दोष नही होगा। फिर भी तूने जो पूछा है, वह बहुत विचार करने योग्य तो है ही। . . .[2]

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९८५) से; सौजन्य : नारणदास गांधी। **महादेवभाईनी डायरी**, भाग–१, पृष्ठ ३४ से भी।

१. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", २४/२९-३-१९३२।

२. साधन-सूत्रके अनुसार।

२७९. पत्र : कुसुम देसाईको

२४ मार्च, १९३२

चि० कुसुम (बडी),

तूने अपना पत्र स्पष्टीकरणसे ही काफी भर दिया, परन्तु यह तो एक ही बार हो सकता है। तू जब चाहे आ सकती है।

हम तीनो मजेमें हैं।

जानकीबहन अब ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८३२) से।

२८० पत्र : रैहाना तैयबजीको

२४ मार्च, १९३२

नटखट रैहाना,

मेरी उर्दूकी तारीफ करके मुझे धोखा देती है। खुदाकी मेहरबानी है, मैं इस तरह धोखेमें नही गिरूँगा। मेरे हरफ बहुत खराब है, और हिज्जे भी ऐसी [ही] तारीफके लायक। मेरी उर्दू [ठीक] होगी उसके पहले रैहाना बुढ़िया बन जायेगी, या मुझको ज्यादा वक्त देना होगा। अब भजन लिखूं। रैहाना गाती है:

उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहाँ जो सोवत है;
जो जागत है सो पावत है जो सोवत है सो खोवत है।
टुक नींद से अंखियाँ खोल जरा, ऐ गाफिल रबसे ध्यान लगा;
यह प्रीत करनकी रीत नहीं, रब जागत है तू सोवन है।
यह जान भुगत करनी अपनी, अय पापी पापमें चैन कहाँ,
जब पापकी गठरी सीस धरी, फिर सीस पकड़ क्यों रोवत है।
जो कल करे वो आज तू कर, जो आज करे सो अब कर ले
जब चिड़िया खेती चुग डाली, फिर पछताये क्या होवत है?[1]

देखता हूँ, अक्षर बहुत खराब है। पर बायें हाथसे ठीक बनते नही हैं। धीमे-धीमे सुधारूँगा। तबतक सहन करना। ऐसे जड शिष्यसे शर्माना नही। धीरज रखेगी तो तूने जो झूठी तारीफ की है, सम्भव है, वह सही भी हो जाये। ऐसा

१. यहाँतक पत्र उर्दू लिपिमें है; यहाँ नागरी लिपिमें प्राय: ज्यों-का-त्यों दिया गया है।

नही हुआ तो मैं दोष तुझे दूंगा। उर्दूके हिज्जोके बारेमे क्या कोई किताब नही है? पता लगाना। हमीद अली और शरीफाबहन अभी हो तो उन्हे मेरे बहुत-बहुत सलाम कहना और कहना कि गोधरामे उनसे जो भेंट हुई थी और दोनोने ससार[1] सुधार परिषदमे जो मदद की थी, मै उसे भूला नही हूँ।

बाबाजानको बताना कि उनका कार्ड मिल गया है। लेकिन उनके-जैसे बडे आदमीको मेरे-जैसे कैदीका अधिक पत्र लिखना ठीक नही गिना जायेगा। तेरे-जैसी बच्चियोको मै चाहे जितने पत्र लिख सकता हूँ। फिर भी बाबाजान जितना चाहे लिख सकते हैं। इस नियममे दम तो है ही। कैदीको पत्र मिले तो उसमे हानि नही है, मगर कैदी लिखे तो उसमे हो सकती है। वह निर्दोष बालकोको लिखे तो हर्ज नही है। बाबाजानकी स्मृति खराब हो रही है, इसमे अजब कुछ नही है। हमारे लिए तो अगर ईश्वर उनके नाचनेकी शक्ति बहुत अरसेतक बनाये रखे, तो बस है। बाबाजान और अम्माजानको हम सबके बहुत-बहुत सलाम और वन्देमातरम्। कमाल मियाँको[2] चुम्बन। हमीदा, रोहिणी, वगैरहको आशीर्वाद। बा फिर उनके पास पहुँच गई, यह बहुत अच्छा हुआ। भजनोके अपने खजानेमे से तुझे जो पसन्द आये, ऐसे कुछ भजन भेजना। उर्दूमे लिखेगी तो एक सबक हो जायेगा। पशाभाईसे लिखनेको कहना। तुझे सरदारके और मेरे आशीर्वाद। तेरे लिए तो सरदार सदा वल्लभकाका ही बने रहे।

रैहाना उमर दराज। खुदा हाफिज।[3]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६३९) से।

२८१. पत्र: सोमाभाई पटेलको

२४ मार्च, १९३२

चि० सोमाभाई,

नारणदासने तुम्हे कैद कर रखा है, इसकी चिन्ता मत करो। शरीर सुधार लेना। मुझे अनुभव लिखना। समय किस तरह बिताया? भणसालीका कोई समाचार है? वजन कितना खोया?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२२०) से।

१. अर्थात् समाज।
२. सुहैलाका पुत्र।
३. यह पंक्ति उर्दू लिपिमें है।

२८२. पत्र : विद्या रा० पटेलको

२४ मार्च, १९३२

चि० विद्या,

इस बार तेरे अक्षर विगड गये है। अच्छे ही लिखने चाहिए। साधारणतया स्त्री और पुरुषके कामोमें भेद करनेकी जरूरत नही है। उनमें कुछ अन्तर अपने-आप हो जाता है।

नाम माधवभाई नही अपितु महादेवभाई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४२३)से; सौजन्य : रवीन्द्र रावजीभाई पटेल।

२८३. पत्र : होरेस जी० एलेक्जेंडरको

२५ मार्च, १९३२

प्रिय होरेस,

आपको यह लिखावट पहचाननेमें कोई कठिनाई नही होगी। मुझे फिर बायें हाथका सहारा लेना जरूरी हो गया था; महादेव ठीक उसी समय मेरे पास भेज दिया गया। मुझे आपका नोट पाकर खुशी हुई। अगाथा अपनी शक्तिके अनुसार मुझे आपकी गतिविधियोके बारेमें सूचित करती रही है और जिन समाचारपत्रोको पढनेकी मुझे इजाजत है, वे भी यदा-कदा उन सब और अनेको मित्रोकी गति-विधियोका कुछ उल्लेख कर देते है जिन्होने इस सघर्षमें अपनी रुचि दिखाई थी, और हॉयलैंड मुझे [सघर्षकी सफलताके लिए की गई] मौन प्रार्थनाओके बारेमें लिखती रही है। मैं जानता हूँ कि ये सब प्रार्थनाएँ अमूल्य है और हृदयसे निकली हुई एक भी प्रार्थनाका समुचित उत्तर मिले बिना नही रहता। व्यक्तिको सभी हार्दिक प्रार्थनाओके स्पष्ट परिणाम दिखाई नही देते, यह सही है, किन्तु इससे क्या?

मेरे बारेमें इस बातपर आपका खुश होना ठीक ही है कि मुझे यह आराम जबरन लेना पड रहा है। यदि यह आराम न मिला होता तो मेरे बीमार पड जानेकी पूरी सम्भावना थी। यहाँ समय काटना भारी नही होता। चरखा है और मौन-साथी — पुस्तके है, और मुझे कुछ समय थोडा-बहुत लिखनेके लिए भी जरूरी होता है। फिर, मेरे साथ सरदार वल्लभभाई पटेल है। वे पिछली बार मेरे साथ नही रखे गये थे, तब मेरे और उनके बीचमें एक दीवार थी। और अब महादेव भी मेरे पास आ गया है।

हाँ, ऑलिवसे वह विशेष सन्देश मैं अवश्य पाना चाहता था। मुझे इस बातका खेद था कि सैली ओकमें उन बहुमूल्य दिनोंके दौरान मैं उसके निकट सम्पर्कमें न आ सका। लेकिन मुझमें इतनी कल्पनाशक्ति है कि मैं, वहाँ उसका जीवन कैसा सुन्दर होगा, इसे समझ सकूं। आपको, ऑलिवको तथा सभी मित्रोंको हम लोगोंका स्नेह।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४१२)से।

२८४. पत्र : आनन्दी आसरको[2]

२५ मार्च, १९३२

चि०,

तुमने मेहमानोंको रूखा जवाब देकर बड़ी गलती की। कोई भी आये, वह चाहे जैसे कपड़े पहने हो, किन्तु उससे नम्रताके साथ बरताव करना चाहिए। मेहमान जो पूछे, उसका जवाब देना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९८४)से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

२८५. पत्र : महेन्द्र वा० देसाईको

२५ मार्च, १९३२

चि० मनु,

तेरा वर्णन तो अच्छा है, मगर अक्षर बहुत खराब हैं; उनके विषयमें क्या कहता है? अब तू कितने वर्षका हो गया? अक्षर तो अच्छे होने ही चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४२४)से; सौजन्य: वालजी गोविन्दजी देसाई।

१. होरेस जी० एलेक्जेंडर की पत्नी।

२. नारणदास गांधीके नाम २४/२९-३-१९३२ के पत्रके आधारपर इस नामका अनुमान किया गया है।

२८६. पत्र : रावजीभाई मणिभाई पटेलको

२५ मार्च, १९३२

चि० रावजीभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। इस समय ठीक परीक्षा हो रही है। होने दो। मुझे भी लिखते रहना।

महादेवको यही भेज दिया है, सो तो मालूम होगा। कहा जा सकता है कि हम तीनो तो आनन्द कर रहे हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८९९४) से।

२८७. पत्र : मीराबहनको

२६ मार्च, १९३२

चि० मीरा,

वचनानुसार तुम्हारा पत्र आना चाहिये था, पर आया नही। लेकिन मुझे आश्चर्य नही है। ऐसा पत्र-व्यवहार रोक लिया गया था। लेकिन जहाँतक मेरा सम्बन्ध है और इसलिए जहाँतक मुझसे पत्र-व्यवहार करनेवालोका सम्बन्ध है, अब यह रुकावट दूर हो गई है। इसलिए मैं तुमसे लगभग लौटती डाकसे जवाबकी उम्मीद रखता हूँ। तुम्हारा और तुम्हारे साथियोका क्या हाल है, तुम क्या खाती हो, और दिन किस तरह बिता रही हो, लिखना।

अब महादेव भी हममे शामिल हो गये हैं और हमारी एक मजेकी मण्डली बन गई है। हममे सबसे परिश्रमी कतैया वही है। अपने कमजोर हाथोके कारण मैं उससे बाजी नही मार पाता। मेरा दूधरहित भोजन चल रहा है, खानेकी चीजोकी सूचीमें लगभग कोई भी परिवर्तन नही हुआ है। मेरा खयाल है कि मैंने तुम्हे उसमें रोटी शामिल कर लेनेकी बात लिख दी थी। अभी तक उससे कोई नुकसान मालूम नही होता। मेरा वजन १०५½ और १०६½ के बीच घटता-बढ़ता रहता है। यह बुरा नही है। और लोग भी बिलकुल अच्छी तरह हैं।

हम सबकी तरफसे प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२१६) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९६८२ से भी।

२८८. पत्र : मीराबहनको

२६ मार्च, १९३२

चि० मीरा,

मै साथवाला पत्र[1] भेज ही रहा था कि तुम्हारे दो उत्कृष्ट पत्र मिले। इसलिए मै उसे भेजना मुल्तवी करके यह पत्र लिख रहा हूँ। अबतक तुम्हे मालूम हो गया होगा कि मै क्यो नही लिख पाया था। हम आखिर कैदी है। जैसी नियमितता स्वतन्त्र लोग अपने लिए निश्चित कर सकते है, हम वैसी नियमितता की आशा नही रख सकते। परन्तु इस तरहकी देर-सवेरमे कुढनेकी कोई बात नही है। इन्हे अनिवार्य मान लेना चाहिए। आशा है, आइन्दा सब बातें अबाधित रूपमें होती रहेगी। परन्तु जब-कभी किसी किस्मकी अनपेक्षित रुकावट पैदा हो जाये, तो चिन्ता न करके यह सोच लेना कि 'हम कैदी है।'

मुझे खुशी है कि तुम वजन बढानेमे सफल हुई। तुम्हारी लम्बाई-चौडाईको देखते हुए, १३२ पौड वजन मे तुम्हे कोई कठिनाई नही होनी चाहिए। लेकिन गर्मी महसूस होना ठीक नही है। नमक छोडकर तुमने अच्छा किया। तुम २-३ दिनके लिए दूध और मक्खन भी छोड दो तो ठडक मालूम होगी।

तुम्हारा पढनेका शौक देखकर मुझे प्रसन्नता होती है। किसीसे ग्रिफिथ्स-कृत 'रामायण' का पूरा अनुवाद और ११ मुख्य उपनिषदोका अनुवाद जुटा लो। इस बारके लिए इतना काफी होगा।

हिन्दीके लिए तुम्हे 'बाल रामायण' प्राप्त कर लेनी चाहिए। चूंकि अब कथा मालूम हो गई है, इसलिए तुम्हें उसे हिन्दीमे समझनेमे दिक्कत नही होगी।

मुझे लॉर्ड इर्विनके पत्र[2] की नकल पहले ही मिल गई थी।

मुझे भी रोमाँ रोलाँके कोई समाचार नही मिले है। लेकिन मै चिन्ता नही करता। इस काममे इस प्रकारकी बाधाएँ आती ही रहती है।

आज तो यही खत्म करना पड़ेगा, क्योकि मै चाहता हूँ कि यह पत्र यहाँसे आज रवाना हो जाये।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२१७)से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९६८३ से भी।

१. देखिए पिछला पत्र।

२. "मेरे खयालसे बापूका मतलब लॉर्ड इर्विन (अब लॉर्ड हैलीफैक्स) के उस पत्रसे है जो उन्होंने मुझे लिखा था।" —मीराबहन।

२८९. पत्र : चिमनलाल एन० शाहको

२६ मार्च, १९३२

चि० चिमनलाल,

तुम बाँसके चरखेके बारेमे क्या चाहते हो? मुझे तो उसको देखनेकी जरूरत नही है। उसे देखना चाहिए जो ज्यादा सूत दे सके। यह चरखा मजबूत और दूसरे प्रकारसे अच्छा होगा तो सस्ता पड़नेके कारण चल निकलेगा। हम भी उसे काममे लाये, क्या इसकी जरूरत समझते हो? मैं यहाँसे उसमे चोच नही गडा सकता।

अब नाक कैसी है?

शारदा मालिश या सूर्यस्नान क्यो नही करती? उसे वह पसन्द नही इसलिए या आलसके कारण?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० जी० १२) से।

२९०. पत्र : देवदास गांधीको

२६ मार्च, १९३२

चि० देवदास,

साथी कैदियोको लिखनेकी अनुमति आज मिली है, इसलिए यह पत्र। तेरा ध्यान तो रोज आता रहता है। महादेव यही आ गया है। हम तीनो मजेमे है। और बाते तेरा उत्तर पानेके बाद। तबीयत, पढाई-लिखाई और सगी-साथियोके समाचार देना। लक्ष्मीको मेरे पत्र नियमसे जाते है और सुन्दर हिन्दीमे उसके पत्र आते है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०२२) से।

२९१. पत्र : जमनालाल बजाजको

२६ मार्च, १९३२

चि० जमनालाल,

तुम्हे और अन्य साथी-कैदियोंको लिखनेकी आज छूट मिल गई है। इसलिए मुझे जवाब देनेकी अब तुम्हे भी छूट मिल जानी चाहिए।

अपनी तबीयत और खुराकका विस्तृत समाचार तुरन्त देना। हम सब चिन्ता अनुभव करते है। दूसरे साथी कौन है, कैसे है? डॉ० सुमन्त[1] कैसे है? सरदार कहते है कि मेरी ही तरह दीवान मास्टरके दाँत नही है। उसके क्या हालचाल है? कौन-कौन हो, इसकी खबर नही है। पन्नालाल[2] है, यह खबर गगाबहन[3] से मिली।

सभी साथियोको हमारे वन्देमातरम्। महादेव यहाँ पहुँच गये है, यह तो तुम्हे मालूम हो गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २८९६) से।

२९२. पत्र : मणिबहन पटेलको

२६ मार्च, १९३२

चि० मणि,

आज मुझे साथी कैदियोको लिखनेकी छूट मिली है, इसलिए लिख रहा हूँ। मुझे यदि लिखनेकी छूट है तो जिसे मै लिखूं, उसे उत्तर देनेकी छूट मिलनी ही चाहिए। मुझे तुरन्त उत्तर लिखना। लीलावती,[4] नन्दूबहन,[5] मृदु[6], आदि दूसरी बहनोको आज नही लिखता। उनके समाचार भी देना। और कौन है?

१. डॉ० सुमन्त मेहता।

२. पन्नालाल झवेरी; गंगाबहनका सौतेला लड़का।

३. गगाबहन झवेरी।

४. हरिलाल देसाईकी पत्नी।

५. नन्दूबहन कानूगा।

६. मृदुला साराभाई।

महादेव यहाँ आ गये हैं। हम तीनो मजेमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती मणिबहन पटेल,
कैदी
जेल, बेलगाँव

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ ८०।

२९३. पत्र : निर्मला ह० देसाईको

२६ मार्च, १९३२

चि० निर्मला,

तेरे बड़े भैयाका वजन बढ़ा है और पाँव इतना ठीक हो गया है कि अब चल-फिर लेता है। चिन्ता बिलकुल नही करनी है। भाई-बहन समान होते हैं। उससे पूछकर जान लेना। बहनका काम भाईका भला करना है, इसमे उम्रका कोई सवाल नही होता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४६८) से।

२९४. पत्र : शारदाबहन चि० शाहको

२७ मार्च, १९३२

चि० शारदा,

उस भजनका स्मरण कर जिसमे कहा गया है कि "मेरे लिए एक डग ही बस है"। नई स्थितिमे क्या करेंगे, उसका विचार अभीसे क्यो किया जाये? उस वक्तका उपाय उसी वक्त सूझेगा। सामान्य तौरपर कहा जा सकता है कि स्वराज्य पा जानेपर भी बहुत-सी बातें सीखनेके लिए बची रहेगी। किन्तु इतना तो तू जानती ही है न कि १६ वर्षसे ऊपरके सारे लोग तब अपनी स्वेच्छासे कार्य कर सकेंगे। मेरे-जैसे लोग तो केवल सलाह देनेका काम करेंगे।

तू मुझे इस बातका जवाब तो दे कि मालिश क्यो नही करती और सूर्यस्नान क्यो नही करती?

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९०८)से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला।

२९५. शिक्षाके विषयमें कुछ विचार[1]

२८ मार्च, १९३२

जॉन रस्किन एक उत्तम प्रकारका लेखक, अध्यापक और धर्मज्ञ था। उसका देहान्त १८८० के आसपास[2] हुआ। उसकी एक पुस्तकका[3] मुझपर बहुत ही गहरा असर पडा और उसीके सुझाये हुए रास्तेके अनुसार मैंने एक क्षणमे जिन्दगीमें महत्त्व-पूर्ण परिवर्तन कर डाला। यह बात ज्यादातर आश्रमवासी तो जानते ही होंगे। उसने सन् १८७१ मे सिर्फ मजदूर-वर्गको ध्यानमे रखकर एक मासिक-पत्र लिखना शुरू किया था। उन पत्रोकी तारीफ मैंने टॉल्स्टॉयकी किसी रचनामे पढी थी। मगर वे पत्र मैं आजतक जुटा नही सका। उसकी प्रवृत्ति और रचनात्मक कार्यके विषयमें एक पुस्तक मेरे साथ आई थी, उसे यहाँ पढा। उसमें भी उन पत्रोका उल्लेख था। इससे मैंने रस्किनकी एक शिष्याको विलायतमे लिखा। वही इस पुस्तककी लेखिका है। वह बेचारी गरीब है, इसलिए ये पुस्तके कहाँसे भेज सकती थी? मूर्खतासे या झूठी विनयमे आकर मैंने उसे आश्रममे रुपया मँगा लेनेको नही लिखा। इस भली स्त्रीने अपनी अपेक्षा अधिक समर्थ मित्रको मेरा खत भेज दिया, वे 'स्पेक्टेटर' के मालिक है। उनमे मैं विलायतमे मिला भी था। उन्होने ये पत्र पुस्तकाकार चार भागोमे छपाये है, सो भेज दिये। इनमे से पहला भाग मैं पढ रहा हूँ। इनमें विचार उत्तम है और हमारे बहुत-से विचारोसे मिलते-जुलते है — यहाँतक कि अनजान आदमी तो यही मान लेगा कि मैंने जो-कुछ लिखा है और आश्रममे हम जो भी आचरण करते है, वह रस्किनकी इन रचनाओंसे चुराया हुआ है। 'चुराया हुआ' शब्दका अर्थ तो समझमे आ ही गया होगा। जिससे कोई विचार या आचार लिया हो, उसका नाम छिपाकर जब यह बताया जाये कि यह हमारी अपनी कृति है, तो वह चुराया हुआ माना जाता है।

रस्किनने बहुत लिखा है। उसमे से इस बार तो थोडा ही देना चाहता हूँ। वह कहता है कि इस कथनमे गम्भीर भूल है कि बिलकुल अक्षरज्ञान न होनेसे कुछ होना अच्छा ही है। रस्किनकी साफ राय यह है कि जो सच्ची है, आत्माका ज्ञान करानेवाली है, वही शिक्षा है और वही लेनी चाहिए। और बादमें वह कहता है कि इस दुनियामे मनुष्यमात्रको तीन चीजो और तीन गुणोकी आवश्यकता है। जो इन्हे हासिल करना नही जानता, वह जीनेका मन्त्र ही नही जानता। और इसलिए ये छः चीजे शिक्षाका आधार होनी चाहिए। इस तरह मनुष्यमात्रको बचपनसे — फिर भले वह लडका हो या लडकी — जानना ही चाहिए कि साफ हवा, साफ

१. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", २४/२९-३-१९३२ के साथ भेजा गया था।

२. उसका देहान्त १९०० में हुआ था।

३. अनटू दिस लास्ट।

पानी और साफ मिट्टी किसे कहते है, इन्हे किस तरह रखा जाये और इनका उपयोग क्या है। इसी तरह तीन गुणोमे उसने गुणज्ञता, आशा और प्रेमको गिना है। जिनमे सत्यादिकी कद्र नही, जो अच्छी चीजको पहचान नही सकते, वे अपने घमण्डमे फिरते है और आत्मानन्द नही पा सकते। इसी तरह जिनमे आशावाद नही यानी, जो ईश्वरके न्यायके बारेमे शका रखते है, उनका हृदय कभी प्रफुल्लित नही रह सकता। और जिनमे प्रेम नही यानी, अहिंसा नही, जो जीवमात्रको अपने कुटुम्बी नही मान सकते, वे जीनेका मन्त्र कभी नही साध सकते।

इस बातपर रस्किनने अपनी चमत्कारी भाषामे बहुत विस्तारसे लिखा है। यदि यह फिर किसी वक्त समाजके समझने लायक ढगसे दे सकूँ तो ठीक ही होगा। आज तो इतनेसे ही सन्तोष कर लेता हूँ। साथ ही इतना और कह दूँ कि जो कुछ हम अपने देहाती शब्दोमे विचारते रहे है और आचरणमे लानेका प्रयत्न कर रहे है, लगभग वही सब रस्किनने अपनी प्रौढ और विकसित भाषामे और अग्रेज जनता समझ सके, इस ढगसे पेश किया है। यहाँ मैने दो अलग भाषाओकी तुलना नही की है, बल्कि दो भाषा-शास्त्रियोकी की है। रस्किनके भापा-शास्त्रके ज्ञानके साथ मेरे-जैसा आदमी मुकाबला नही कर सकता। मगर ऐसा समय जरूर आयेगा जब अपनी भाषाका हमारा प्रेम व्यापक होगा, जब भाषाके पीछे धूनी रमानेवाले रस्किन-जैसे शास्त्री निकल आयेगे, तब वे उतनी ही प्रभावशाली गुजराती लिखेगे जितनी प्रभावशाली अग्रेजी रस्किनने लिखी है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

२९६. पत्र : अमतुस्सलामको

२८ मार्च, १९३२

प्रिय अमतुल,

मुझे अचरज हो रहा था कि तुम्हारा कोई खत क्यो नही आया। नारणदास मुझे तुम्हारे बारेमे बताते रहे। अब तुम्हारा खत आया, सो अच्छा लगा। कुछ भी लिये बिना डॉ० शर्माने तुम्हारा इलाज किया, यह उनकी भलमनसी है। वे अपनी जिन किताबोकी सिफारिश करे, वे तुम मुझे भेज सकती हो। तुम्हारे लिए कोई जगह तय कर देना थोडा मुश्किल है। तुम्हे या तो किसी पहाडपर या समुद्रके किनारे जाना चाहिए। मुझे लगता है कि तुम पोरबन्दर या सासवड जा सकती हो। अभी तो और कोई स्थान मेरे खयालमे नही आ रहा है। जो तुमने कमाया है, उसे किसी गलत कदमसे खो न देना। अगर तुम्हारे अपने लोगोमे से कोई मसूरी रहता हो, तो वहाँ जानेमे हिचकिचाना नही चाहिए। मै नारणदाससे सहमत हूँ कि गरमीके इन दिनोमे तुम्हे आश्रममे नही रहना चाहिए।

अलबत्ता, तुम जब चाहो, आ सकती हो और मुझसे मिल सकती हो। सरदार वल्लभभाई और महादेव मेरे साथ हैं। दाहिने हाथसे लिखनेमें कुछ दर्द होता है, इसलिए बायाँ हाथ काममें ला रहा हूँ।

प्यार,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २३८) से।

२९७. पत्र : एच० डब्ल्यू० एमर्सनको

२८ मार्च, १९३२

प्रिय श्री एमर्सन,

बम्बईके सूचना निदेशकका इस आशयका एक पुरजा पढकर मुझे दुख हुआ कि बम्बई-सरकार रास तथा ऐसे ही अन्य गाँवोके 'जिद्दी' किसानोकी जमीनें बेच डालनेका इरादा रखती है। मै नही जानता कि पिछले वर्ष लॉर्ड इर्विनने बातचीतके दौरान जो बात कही थी, वह आपको याद है या नही। कहा गया था कि पहलेवाले सत्याग्रह आन्दोलनके दौरान जिन परिस्थितियोके कारण सरकारने रासमे कुछ जमीनें बेच दी, उन परिस्थितियोके दुबारा पैदा होनेपर ऐसा फिर किया तो नही जाना चाहिए। मेरे कहनेका यह आशय नही है कि लॉर्ड इर्विनका यह कथन उस समयकी उनकी निजी इच्छासे ज्यादा कुछ था, लेकिन इस बातपर मुझे दुख होता ही है कि एक सम्माननीय और ऊँचे पदाधिकारीकी ऐसी सभी उदार इच्छाएँ उपेक्षित या नजरअन्दाज कर दी जा सकती है। लॉर्ड इर्विनके अपने इस कथनके अलावा भी मै चाहूँगा कि इस सम्बन्धमे, सरकारी अधिकारियोके व्यवहारके कारण हो या कांग्रेसियोके व्यवहारके कारण, जो भी कटुता शेष रह जाती है, वह यदि एकदम समाप्त नही की जा सकती तो भी उसकी विरासतोको कम-से-कम तो कर ही डालना चाहिए। निश्चय ही ऐसा कोई काम नही किया जाना चाहिए जो फिर मिटाया न जा सके और दोनो पक्ष शायद आगे चलकर जिसे बुरा कहे या जिसके लिए हमारी पीढियाँ हमे बुरा कहे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

गृह विभाग, राजनैतिक, फाइल स० १४/१७, १९३२, पृष्ठ ७; सौजन्य: भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार।

२९८. पत्र : तिलकनको[1]

२८ मार्च, १९३२

घमण्ड थोथा होता है। स्वाभिमान ठोस चीज है। किसीके स्वाभिमानको दूसरेसे ठेस नही पहुँच सकती। स्वाभिमानको धक्का अपनेसे ही लगता है। चूंकि घमण्डको सदा बाहरसे ही आघात लगता है इसलिए दूसरे उसको ठेस पहुँचा सकते है।

ईश्वरको साक्षात् देखा, इस प्रयोगमे 'साक्षात्'का अर्थ अक्षरश. नही लेना चाहिए। यह प्रयोग तो हमारी भावनाकी निश्चितता बतानेके लिए है। ईश्वर तो निराकार है। वह आध्यात्मिक अन्तर्दृष्टिसे ही दिख सकता है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ ५२।

२९९. एक पत्र

२८ मार्च, १९३२

भाई,

मनको मजबूत बनानेके लिए सुबह किये गये निश्चयका दृढतासे पालन करे। कुछ दिनोके बाद हफ्ते-भरके लिए सकल्प करे। इस तरह वह जीवन-भरका हो जाता है। व्यर्थका एक भी विचार मनमे कदापि न आने दे। इसीसे राम-नामकी महिमा है। यह तानपूरा है, अन्य सारे विचार भिन्न-भिन्न वाद्य और सगीत है? तानपूरा तो छिडा ही रहना चाहिए। शरीरके लिए निश्चिन्तताकी आवश्यकता है। लगता है, आपका खयाल है कि मन निरोग हो जाये तो शरीर अच्छा हो ही जायेगा, फिर भी शरीरका उपचार तो करना ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९८७) से; सौजन्य: नारणदास गाधी।

१. आश्रमका एक विद्यार्थी।

३००. पत्र : मंगला शं० पटेलको

२८ मार्च, १९३२

चि० मगला (लाडली),

गणित वुद्धिका विषय तो है ही। उसी प्रकार 'गीता' के श्लोकोका अर्थ, इतिहास, भूगोल, आदि जिन विषयोको समझनेमे मस्तिष्क लगाना पडे, वुद्धिके विषय है। 'गीता' को कण्ठस्थ करना वुद्धिका विषय नही है। कातना वुद्धिका विषय हो सकता है। जो कातते हुए कातनेकी पद्धति या चरखेकी वनावटमें फेरफार सोचते और करते है, कहा जा सकता है कि वे अपनी अक्ल दौडाते है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०८०) से। सी० डब्ल्यू० ४४ से भी, सौजन्य : मंगलाबहन ब० देसाई।

३०१. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२८ मार्च, १९३२

चि० प्रेमा,

तू चाहे जो सवाल पूछना। ऐसा मौका शायद फिर कभी न आये। तू नही जानती कि मैं एक लकीरमे भी जवाव दे सकता हूँ और पन्ने भी भर सकता हूँ। ज्यादा नही लिख सकूंगा तो थोड़ेमे ही पूरा कर दूंगा। फिर भी उत्तर अधूरे नही होंगे।[1]

मेरे दाहिने हाथपर तेरी जीभका असर हुआ, यह तो ऐसा माननेके वरावर हुआ कि कौआ डालीपर वैठा और डाली टूटी, इसलिए कौवेके भारसे ही डाली टूटी।

मुझे स्वप्न आते जरूर है, लेकिन शायद ही कभी उनपर मेरा ध्यान जाता है। जो स्वप्न आते है, उन्हे मैं कोई महत्त्व नही देता।

हमारे पुस्तकालयमे कार्लाइल और रस्किनकी पुस्तकोका पूरा सेट होना चाहिए। अगर हो तो उसकी सूची भेजना।

हमारे पास सव पुस्तकोकी कितनी सूचियाँ है? अगर एकसे ज्यादा हो तो एक मुझे भेज देना।

१. प्रेमाबहनको उस समय गांधीजी बायें हाथसे ही पत्र लिखते थे।

वड़ी वहनोके बारेमे मैंने तुझे कभी लिखा नही। इस वार जी मे आया कि लिखूं। बहनें किसी भी सामाजिक हेतुसे आपसमे मिलती मालूम नही होती। इसका अर्थ यह है कि सघ टूट गया है। इस बारेमे लक्ष्मीबहन और दुर्गाको मैंने लिखा तो है, लेकिन मेरा कुछ असर होता दीखता नही है। साथ मिलकर काम करनेकी जिम्मेदारी लेनेकी शक्ति बहनोमे आनी चाहिए। तुझमे हिम्मत और आत्मविश्वास हो, तो इस कामको हाथमे ले। अगर हाथमे ले, तो कभी हार नही माननी है, इस निश्चयके साथ ही हाथमे लेना। सब बाते हमारे अनुकूल हो तो ही हम काम करें, यह तो न करनेके बराबर होगा। बढई चाहे जैसी लकडीके टुकडेमे से आकार गढ लेता है, शिल्पी चाहे जिस पत्थरमे से मूर्ति गढ लेता है, वैसे ही चाहे जैसे मनुष्योके साथ रहना और उनसे काम लेना हमे आ जाये, तभी हमारी मनुष्यता की कीमत मानी जायेगी। मुझे तो लगता है कि हमे यही इस दुनियामे सीखना है; और इसके लिए हमारे भीतर सागर-जैसी उदारता होनी चाहिए। किसीसे मिलते ही उसके दोष देखकर हम डरने लगे, तब तो काम बिगड़ेगा ही। दोष तो है ही — हमारे भीतर भी है और दूसरोमे भी। इसके बावजूद भी मिलना है, ऐसा निश्चय हो तो ही काम बनता है। मैं जानता हूँ कि यह काम बहुत कठिन है। मेरा तो वर्षोसे यही धन्धा रहा है। लेकिन मैं सफल हुआ हूँ, ऐसा नही कह सकता। थोडी-सी सफलता मिली मालूम होती है, इसलिए दूसरोको रास्ता दिखानेकी हिम्मत या धृष्टता मैं करता हूँ।

अब तुझे जो ठीक लगे, वही करना। यह पत्र बहनोके सामने रखना चाहे तो रख सकती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२७८) से। सी० डब्ल्यू० ६७२६ से भी, सौजन्य : प्रेमाबहन कटक।

३०२. पत्र : विमलाबहन ए० पटेलको

२८ मार्च, १९३२

चि० विमला,

नरसिंहभाईने[1] मुझे तेरे पत्र और पुस्तकोके लिए तैयार कर रखा था। शायद तुझे मालूम हो कि मैं उनसे मिल चुका हूँ। उनकी तबीयत अच्छी थी और वे प्रसन्न थे। अब तो सबके साथ रहते हैं। तूने जो पुस्तके भेजी है, उन्हे समय मिलनेपर पढ़ूंगा। तेरा काम ठीक चल रहा होगा।

माताजी को हम दोनोके वन्देमातरम्। तुझे आशीर्वाद।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२७५) से।

१. विमला ए० पटेलके पिता।

३०३. पत्र : वनमाला न० परीखको

२८ मार्च, १९३२

चि० वनमाला,

तेरे बराबर बडी लडकीमे इतनी बाते चाहिए : अच्छा शरीर, अच्छा मन, शरीर और मनका उद्यम। इन 'उद्यमोमे कपास-सम्बन्धी सभी क्रियाएँ, रसोई करना, विविध खेल, तैरना, सगीत, गुजराती, हिन्दी और सस्कृतका ज्ञान, सामान्य अकगणित, इतिहास, भूगोल, गीता-ज्ञान। नक्षत्रो और वनस्पतियोकी पहचान। इनमें से कुछ न हो तो अधूरापन मानना। लेखन-कलाको तो भूला ही जा रहा था।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मोहनको[1] ज्वर क्यो आ रहा है? क्या डॉक्टरको दिखा दिया है?

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७७०) से। सी० डब्ल्यू० २९९३ से भी, सौजन्य : वनमाला म० देसाई।

३०४. एक पत्र

२८ मार्च, १९३२

जैसे पेडके पत्ते साथ ही रहते है, उसी तरह समान आचार-विचारवालोकी बात है। यह स्वाभाविक आकर्षण है।

साथी-सहयोगी करोडो हो सकते है। मित्र तो एक ईश्वर ही है। दूसरी मित्रता ईश्वरकी मित्रतामे बाधक है, यह मेरा मत और अनुभव है।

मै यह नही जानता या मानता कि कृष्ण भगवान योगबलसे या दूसरे बलसे भौतिक साधनोके बिना आया-जाया करते थे। सच्चे योगी विभूति-मात्रका त्याग करते हैं, क्योकि उनका योग सिर्फ साक्षात्कार साधनेके लिए होता है। उसकी किसी हल्की चीजके साथ कैसे अदला-बदली की जा सकती है?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ ५३।

१. वनमाला न० परीखका भाई।

३०५. पत्र : नारणदास गांधीको

२४/२९ मार्च, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारी डाक कल मिली। गगाबहन मिलकर गई। हमे इन्दुके शरीरके बारेमे विचार करना चाहिए। यह बगलौरसे १०० पौण्ड वजन लेकर आया और अब ८० रह गया है। इसका कारण समझना। वह भोजन कहाँ करता है, भोजनमे क्या लेता है, बगलौरमे क्या खाता था, किस तरह रहता था, आश्रममे उसका शरीर किस तरह ठीक रह सकता है—ये सारी बाते उससे पूछकर समझ लेना। आश्रममे जिन-जिनकी तबीयत ठीक न रहती हो, उन सभीके बारेमे ये बाते हमे जान लेनी चाहिए और जो उपचार और फेरफार हम कर सकते है और जो हमारे लिए उचित है, अगर उनके बाद भी वे अच्छे न हो तो ऐसे लोगोको दूसरी किसी जगह भेज देना चाहिए, जैसे बीजापुर या वर्धा। इन बातोपर विचार कर लेना और अगर किसी एकको इसके लिए जिम्मेदार बनाना चाहो तो वैसा तय कर देना। तुम हरेक आदमीके बारेमे पूछताछ करते रहो, यह तो नही हो सकता। तुमपर तो अन्तिम निर्णय लेनेका बोझ-भर रहना चाहिए।

मैने मुलाकातके बारेमे जो विशेष पत्र[1] पिछले सप्ताह दिया था, वह तुम्हे मिल चुका होगा, ऐसा मानकर मै यहाँ और नही लिखूंगा। चम्पाके विषयमे भी उसी पत्रमे लिखा था। दो-तीन बाते और भी थी।

इन्दुने अपने पत्रमे एक अच्छा सवाल किया है। मैने उसका जो जवाब[2] दिया है, सो देख लेना। साथ ही तुम, पण्डितजी, प्रेमाबहन, चिमनलाल, वालजी और जो दूसरे इस विषयमे विचार कर सकते हो, उनको इसपर सोचना चाहिए। भीष्मको मारनेके लिए शिखण्डीको सामने करवाने और जयद्रथको मारनेके लिए सुदर्शन-चक्रसे सूर्यको बादलोमे ढँकनेका काम करके कृष्णने गलत किया या नही, इस प्रश्नके उपरान्त इन्दुने पूछा है कि आश्रममे इस तरहके नाटक खेले जा सकते है या नही। मुझे यह प्रश्न बहुत पसन्द आया। यदि नाटकका झुकाव ऐसी बातोको दोष-रूपमे प्रस्तुत करना हो तो मै आश्रममे इनके खेले जानेमे कोई बाधा नही मानता। फिर भी ऐसे नाटकोके खेले जानेके औचित्यको लेकर तो मेरे मनमे शका है ही। महापुरुषोने दोषपूर्ण काम किये हो और हमने उन दोषोको दोषके रूपमे ही प्रस्तुत किया हो तो भी अगर उनका वर्णन अनावश्यक है तो बालकोके सामने इस प्रकारकी बाते रखते रहना मुझे श्रेयस्कर नही लगता। वह कार्य दोषपूर्ण था, यह तो वे भूल जाते है; इतना ही याद रखते है कि इसे महापुरुषोने भी किया है इसलिए हम भी कर

१. देखिए पृष्ठ २०२-३।

२. देखिए "पत्र: इन्दु पारेखको", २४-३-१९३२।

सकते है। इस प्रकारके प्रभाव पडनेकी सम्भावना है। इसलिए मुझे ऐसे प्रसग चुनकर नाटक-रूपमे सामने रखना ठीक नही लगता। हमारे नाटक बिलकुल दूसरी तरहके होने चाहिए। मुझे तो ऐसा ही लगता है। जैसे रवीन्द्रनाथका 'मुक्त धारा' और हमने यहाँ मैथिलीशरण गुप्तका 'अनघ' पढा, वह भी बहुत अच्छा है। और यह वहाँ बालकोके आगे रखने योग्य है। इसकी हिन्दी सरस और अत्यन्त मीठी है, भाव उत्तम है।

मै हरिदासके समाचार लेता रहता हूँ।

क्या कहीसे कृष्णदासके[1] समाचार मिलते है? न मिलते हो तो महावीरप्रसाद को लिखकर पता लगाओ।

अमतुलबहन जरूर मुझसे मिलने आ सकती है। तुम्हारी और कनुकी खुजली अब खत्म होनी ही चाहिए।

विद्यापीठके पुस्तकालय आदिके बारेमे यहाँ बैठकर तो हम सबको ऐसा लगता है कि हमे ऐसे द्वैधशासनमे नही पडना चाहिए। तब तो सूत्र दोनो सस्थाओके हाथमे रहेगे। या तो वे पूरा सचालन हमारे हाथमे दे दे या फिर जबतक अपने हाथमे रखना चाहे, खुद ही उसे अच्छी तरह अपने हाथमे रखे। फिर भी तुम्हे जैसा उचित लगे, करना। इस जेलमे जो बहने है, उनसे मै भेट तो नही कर सकूँगा, फिर भी उन्हे पत्र लिखने और उनके पत्र पानेकी सुविधा रहेगी।

आनन्दीने अपने पत्रमे प्रेमाकी बात लिखी थी। उसके नाम पत्रमे मेरा जवाब[2] देख लेना। फिर इस बातपर और विचार जरूरी है। हमने बच्चोको निर्भयता और सिर ऊँचा रखनेकी शिक्षा देकर अनजाने ही उन्हे ढीठ बना दिया है। बडे भी इस दोषसे मुक्त नही है। कई बार उनकी धृष्टता दु खदायक रूप ले लेती है। जान पडता है, आश्रममे कोई मेहमान आये थे, लडकोने उनकी बातोके ठीक उत्तर नही दिये। एकने यह रास्ता बताया तो दूसरेने वह, और उन्होने जो प्रश्न किये, उन्हे अनसुना कर दिया। कोई कार्यालयतक साथ तो खैर गया ही नही। आनन्दीके पत्रसे लगता है कि वह वहाँ कही आसपास ही थी। उसे पश्चात्ताप हुआ और उसने मानो अपनी त्रुटि स्वीकार करने और सुधारनेके खयालसे मुझे लिखा है। उसने पूछा है, ऐसे समय आश्रमवासियोका कर्त्तव्य क्या है? कर्त्तव्यके विषयमे कोई शका नही है, किन्तु जब प्रश्न पूछा ही गया है तो सबका ध्यान तुम इस तरफ खीचना। मैने जो-कुछ आनन्दीको लिखा है, उसका विस्तार करके लोगोको समझाना। मैने अपने पत्रमे सामान्य सिद्धान्तको स्पष्ट करते हुए दो-एक वाक्य ही लिखे है।

वनमालाने लिखा है कि मोहनका शरीर हमेशा गरम बना रहता है, उसे ९९ डिग्री ज्वराश रहता है। इसके बारेमे पूछताछ करना। जरूरी हो तो किसी डॉक्टरकी सलाह लेना। उसकी उमरके बच्चेको हमेशा इतना ज्वराश क्यो रहना

१. कृष्णदास सिंहराय, गांधीजी के एक सचिव।

२. देखिए "पत्र: आनन्दी आसरको", २५-३-१९३२।

चाहिए। या हो सकता है, बच्चा होनेके कारण ही ज्वर मापने या नाड़ी देखनेसे हमें ज्वरका भान होता हो और सचमुचमें ज्वर न रहता हो। चचल बच्चा दिन-भर दौड़ता-फिरता है, उसकी छातीकी धडकन कुछ तेज रहेगी ही और थर्मामीटर लगाने या नाड़ीकी गति देखनेपर कुछ अधिक गर्मीका आभास हो सकता है। ऐसी हालतमे बच्चेकी मल-परीक्षा, जीभ, पाचनक्रिया और वजनको देखना चाहिए। बच्चेका वजन हर हफ्ते बढना चाहिए। उसकी जीभ साफ और गीली होनी चाहिए और टट्टी साफ, बिना जोर लगाये तथा दुर्गन्धरहित होनी चाहिए। अगर ये सब बाते हो तो नाड़ी और थर्मामीटर क्या कहते है, इससे चिन्तित नही होना चाहिए। आश्रमकी हरेक माता और जेठालाल भी यह समझ-सीख ले।

अमतुलका पत्र था। उसमे उसने उसके दिल्लीके पतेपर पत्र लिखे जानेकी इच्छा प्रकट की थी। मैंने उसी पतेपर उसे लिखा है। अगर वह वहाँ आई हो तो उसे इतना बता देना। वह बेशक मुझसे आकर मिल सकती है। तुम्हारी इस रायसे मै सहमत हूँ कि उसे गर्मीके दिनोमे साबरमती नही रहना चाहिए। उसके पोरबन्दर, चोरवाड या सासवडमे रहनेका प्रबन्ध कर सको तो बहुत अच्छा रहे। अगर मसूरीमे उसके कोई रिश्तेदार हो तो वहाँ चली जाये। अगर वह अल्मोडामे पद्माके साथ रह सके तो यह भी उसके लिए अच्छा रहे। मैंने उसे भी पत्रमे यह सलाह दी है। जैसे प्रबन्धकी बात मैंने कही है, उसके लिए वैसे प्रबन्धमे मदद कर देना।

अभी तुम्हारा पत्र हाथमे लिया। उसमे प्यारेलालके नामपर निगाह पडी। वह जहाँ रह रहा है, शायद वहाँकी आबहवा ठडी है। इसलिए अमतुल वहाँ रहे तो उसे शायद उसके साथ अच्छा भी लगेगा और वह प्यारेलालकी कुछ मदद भी कर सकेगी। सुलताना[1] और दूसरे बच्चे भी वहाँ है। इन सब बातोको सुझाव ही मानना और वही करना जो उचित लगे।

मेरे और गगाबहनके बीच पत्र-व्यवहार शुरू हो गया है। वह लिखती है, जेलमे सब बहने अच्छी है।

तुमने चप्पलके तलेके लिए जो चमडा भेजा था, मुझे मिल गया है।

बिना दूधके भोजनका मेरा प्रयोग चल रहा है। अभीतक कोई हानि नही दिखी। इससे निष्कर्ष निकालता हूँ कि जो व्यक्ति शान्तिके साथ रह रहा हो, उसे दूधकी जरूरत नही है। आध्यात्मिक उन्नतिके विचारसे दूध लेना हानिकारक भी हो सकता है। फिर भी अभीतक तो यह एक अनुमान ही है। प्रयोग लम्बे अरसेतक सफलताके साथ चलता रहे तभी निश्चयपूर्वक कुछ कह सकता हूँ। मेरे बारेमे वैसे इतना तो है ही कि १९१८ तक, पेचिश होनेके पहले, मै कितना भी श्रम करूँ, बिना दूधके रह लेता था। फिर भी अभी तो इन सारे अनुमानोका कोई मूल्य नही

१. अमीना कुरैशीकी बेटी।

है। अभी तो इतना ही जरूरी है कि मैं तुम्हे हर हफ्ते प्रयोगके परिणाम लिखता रहूँ। फिलहाल कोई मेरे दृष्टान्तके अनुसार चलनेकी बात भी न सोचे।

बापूके आशीर्वाद[1]

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२१६ से भी; सौजन्य: नारणदास गाधी।

३०६. पत्र: आश्रमके बच्चोंको

२९ मार्च, १९३२

चि० बालको और बालिकाओ,

इस बार तुम्हारी चिट्ठी नही आई इसलिए सच कहे तो मेरा भी लिखना जरूरी नही था। फिर भी इस बार दरगुजर करता हूँ। ज्ञान केवल जिज्ञासुको दिया जाता है। जिज्ञासु वह है जिसे ज्ञानकी भूख है। तुम्हे भूख न हो तो जिस तरह बच्चेको बिना भूखके जबरदस्ती खिलाते-पिलाते रहनेसे वह बीमार हो जाता है, उसी तरह बिना भूखके जबरदस्ती दिया गया ज्ञान तुम्हे पचेगा नही। इसलिए हर बार तुम्हारी चिट्ठी आये इतना ही नही, उस चिट्ठीका सरस होना भी जरूरी है। सरस यानी मीठा अर्थात्, जिसे लिखनेमे तुमने रस लिया हो और मैं भी जिसे पढनेमें रस ले सकूं। तुम्हे लेजिममे रस आये और तुम उसके विषयमे सरस पत्र लिखो तो भी सम्भव है, वह मेरे लिए नीरस ठहरे, क्योकि मुझे उसके बारेमे कुछ भी नही मालूम, और यहाँ शायद उसे जाननेकी कोई सामग्री भी न हो। तब फिर मैं उसका सरस उत्तर कैसे दे सकता हूँ? अब तुम समझ गये होगे कि तुम्हारा पत्र सरस किन दो बातोसे हो सकता है। मेरी ओरसे भी इन दोनो शर्तोका पालन होना चाहिए। इसीलिए मैंने शारदाको एक चिट्ठीमे लिखा था कि अगर तुम्हे 'गीता' सम्बन्धी मेरे पत्रोमे आनन्द नही मिल पाता तो वह मेरी ही कसर है। अस्तु।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८९८९ से भी, सौजन्य. नारणदास गाधी।

१. साधन-सूत्रमें इसके बाद लेख "शिक्षाके विषयमें कुछ विचार", २८-३-१९३२ दिया गया है।

३०७. पत्र : द० बा० कालेलकरको

२९ मार्च, १९३२

चि० काका,

तुम सबको पत्र लिखनेकी अनुमति मुझे मिल गई है, इसलिए यह पत्र लिख रहा हूँ। अपनी तबीयतके समाचार देना। मैंने सुना था कि नरहरि और प्रभुदास भी तुम्हारे ही साथ हैं। इसलिए उनकी भी खबर देना। यह बात तुमपर ही डाली है, इसीलिए उन्हें नहीं लिख रहा हूँ। क्या कुछ पढ-लिख रहे हो?

हम तीनों मजेमें हैं। . . .[1]

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मुझे तुम लोगोंको लिखनेकी अनुमति मिली है, इसलिए विश्वास है, तुम्हें मेरे पत्रका उत्तर देनेकी अनुमति भी मिल जायेगी।

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४८५) से; सौजन्य : द० बा० कालेलकर।

३०८. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

३० मार्च, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

६ तारीख[2] के अपने पत्रके सिलसिलेमें मेरे पास 'गैर-राजनीतिक' शब्दकी परिभाषा पहुँचा दी गई है। देखता हूँ, वह मेरी अपनी परिभाषा-जैसी ही है। आपको उदाहरणके तौरपर आश्रमसे बाहरके ऐसे पाँच लोगोंके नाम भी भेजे गये थे जो शायद मुझसे मिलना चाहें या जिनसे शायद मैं मिलना चाहूँ। उनके बारेमें कोई जवाब नहीं मिला है। यदि जवाब दिया जा सके तो आभार मानूँगा। सरकारने जो सूची माँगी है, उसे तैयार कर सकनेकी दृष्टिसे मैं उस जवाबका इन्तजार कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

बम्बई-सरकार, गृह विभाग, आई० जी० पी० फाइल सं० ९।

१. शेष अंश जेल-अधिकारियों-द्वारा काट दिया गया था।

२. देखिए "पत्र : एम० जी० भण्डारीको", ६-३-१९३२।

३०९. पत्र : डाहीबहन पटेलको

३१ मार्च, १९३२

चि० डाहीबहन,

तुम्हारी चिट्ठी मिली। सेवा जितनी कठिन होगी, सेवक और सेविकाएँ उतनी ही कम मिलेगी। इसीलिए तुम्हारी चिट्ठीसे मुझे कुछ अजब नही लगा। किन्तु कम सेवकोके होते हुए भी, जो समझदार सेवक-सेविकाएँ काम कर रहे होते है, वे अधिक कर्त्तव्य-परायण होते है और अधिक बलिदान कर पाते है। इसलिए बादमे सख्या भी बढ जाती है। यह निरपवाद नियम है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२०६) से।

३१०. पत्र: कुसुम देसाईको

३१ मार्च, १९३२

चि० कुसुम (वडी),

तूने प्रतिज्ञा ली है तो पत्र अवश्य लिखती रहना। तेरा पच्चीसवाँ वर्ष शुरू हो गया है तो क्या हुआ? तेरे सामने अभी बहुत लम्बी जिन्दगी पडी है। उसमें तेरे बारेमे मेरे-जैसोने जो आशाएँ बाँधी हो, उन्हे सफल करना। प्यारेलालसे मिलने अवश्य जाना। अपनी तबीयत मै खुद इस बार अच्छी मानता हूँ। अभीतक दूधके बिना वजन टिका हुआ है और पिचकारीकी जरूरत नही पडती, इससे मुझे सन्तोष है। दाये हाथसे नही लिखा जा सकता, इसका मुझे दुख नही। बाये हाथकी आदत पड जायेगी। हम तीनो मजेमे है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८३३) से।

३११. पत्र : मोहन न० परीखको

३१ मार्च, १९३२

चि० मोहन,

तुम्हारे अक्षर बहुत छोटे-बडे है। लिखावट सुधारो। यह अच्छा है कि तुम जल्दी उठते हो। क्या तुम्हे अक आने लगे। न आते हो तो सीखना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१७६) से।

३१२. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

३१ मार्च, १९३२

तुम्हारी कोई खबर नही मिली थी। इसलिए लाचार होकर तारामतीको पत्र लिखा। कल तुम्हारा पत्र मिला, खुशी हुई। वजन कम होनेका मुझे दुःख नही है। दूसरी दृष्टियोसे स्वास्थ्य अच्छा रहना चाहिए। जलवायुकी दृष्टिसे तो नासिक अच्छा ही माना जाता है। जहाँ भी रहो, वहाँसे मुझे पत्र लिखते रहना। और यदि इससे तुम्हारे लिए दूसरोंको पत्र लिखनेमे विघ्न पड़े तो जिसे लिखनेकी आवश्यकता हो उसे मुझे लिख देनेके लिए कह देना। मेरे साथ यहाँ व्यवस्था यह है कि मैं चाहे जिस किसी कैदी-साथीको लिख सकता हूँ। इसका अर्थ यह मानना चाहिए कि वह मुझे उत्तर दे तो उसकी गिनती उन पत्रोमे नही होगी जिन्हे लिखनेका उसे हक है।

. . कैदमें[1] रहनेवालेके लिए जेलके बाहरकी दुनियाका विचार बिलकुल त्याज्य है। कैद होनेसे जो नया कर्त्तव्य प्राप्त हो जाता है, वहाँ उसका पालन करना ही कर्मयोग कहलायेगा।

"बुद्धौ शरणमन्विच्छ"[2] आदिका अर्थ साख्य अर्थात् ज्ञानमार्ग नही है। "एषा तेऽभिहिता साख्ये बुद्धियोगेत्विमां श्रृणु"मे[3] जिस योगबुद्धिके विषयमे कहनेकी प्रतिज्ञा है, वही अर्थ यहाँ है। इसलिए, यदि तुलना करनी ही हो तो कर्मयोग और भक्तियोग की करनी है। किन्तु 'गीता' तुलना करनेके बदले ज्ञान, कर्म और भक्ति तीनोका मेल साधती है। एककी पूर्ण साधनाके लिए अन्य दोनो आवश्यक ही है। इसलिए ये तीनो अविभाज्य हैं। इन तीनोमे कर्म थोडा विशेष बताया गया है तो वह केवल

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

२. गीता, २-४९।

३. गीता, २-३९।

इसलिए कि उसमे भ्रम होनेकी कम गुजाइश है। "नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।"[१] मै यह मानता हूँ कि पुस्तक पढते हुए पहले उसका सीधा अर्थ समझ लेना चाहिए, बादमे उसपर स्वतन्त्र रूपसे मनन करना चाहिए।

पुनर्जन्मके विषयमे तो शकाकी गुजाइश ही नही है। हमारा शरीर रोज थोडा-सा बदलता है और सात वर्षमे तो सारा बदल जाता है। लेकिन शरीर एक ही लगता है क्योकि आकृति एक है। किन्तु यदि शरीर सात वर्षमे बदल जाता है तो जिसे हम मृत्युके नामसे जानते है, उसके आनेसे [बदलनेके बजाय] सब-कुछ नष्ट हो जाता है, ऐसा माननेका कोई कारण ही नही है। आत्मा शरीरसे भिन्न है ही। शरीरके नष्ट होनेपर वह नष्ट नही होती। तो फिर उसका सिर्फ स्थान-भर ही बदलता है। और यदि स्थान बदलता है तो वह अन्य देहमे क्यो नही जा सकती? किन्तु इस सबके बारेमें मिलनेपर ही चर्चा कर सकता हूँ। इस बीच इतना जरूर चाहता हूँ कि जिन अनेक बातोके बारेमे तुम्हारे मनमे शका हो, उनका पूरी तरह समाधान हो जाये। जो अर्थ पूछनेकी इच्छा हो, वह पूछ लेना।

मुझे लगता है कि मै 'स्मृति' नही लिख सकता। मै जो-कुछ कहता या लिखता हूँ, वह किसी विशेष पद्धतिके अनुसार किया गया विचार नही होता। सत्यकी आराधनाके सिलसिलेमे परिस्थितियोसे पार पाने लायक शक्ति ही मेरे पास है। अर्थात् मै शास्त्री नही हूँ और 'स्मृति' लिखनेका कार्य शास्त्रकारका है। पहले किशोरलालने मुझसे यह प्रश्न पूछा था। मुझसे बन सके तो जरूर लिखूं। ईश्वरने जो योग्यता दी है, उसका सदुपयोग हो सके तो भाग्यशाली हूँगा।

हम तीनो मजेमे है। तीसरा महादेव है।

[पुनश्च]

तू मेरे पास आनेका प्रयत्न उदासीन भावसे करता है, इसमे मुझे कोई बुराई नही लगती। इसमें सफलता मिल जाये तो अच्छा लगेगा।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १०५-७।

१. गीता, २-४०।

३१३. पत्र : वनमाला न० परीखको

३१ मार्च, १९३[२][1]

चि० वनमाला,

तेरी बीमारी समाप्त हो गई होगी। बहनोंके सीखनेके लिए सर्वश्रेष्ठ विषय शुद्ध आचार है। बाकी जो पसन्द आये, वह सीखना है। एक-सी उम्र हो तो स्वभाव भी एक-जैसे होंगे, यह निश्चित नहीं है।

सभी वनस्पतियाँ हमें देखकर नहीं लजा जाती। जो लजाती हैं वे क्यों, सो मैं नहीं जानता। तुममें से कोई शोधक बुद्धिकी हो तो वह कारण खोजे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७६१) से। सी० डब्ल्यू० २९८४ से भी, सौजन्य: वनमाला म० देसाई।

३१४. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

१ अप्रैल, १९३२

चि० पण्डितजी,

सरदारका वजन घट गया है किन्तु तबीयत अच्छी है। यह ठीक है कि उन्होंने खुराकमें फेरफार किया था, लेकिन अब पहले [भोजनकी] जैसी बहार थी, लगभग वैसी ही फिर शुरू हो गई है। इसमें अधिकारियोंकी ओरसे तो कोई रोक थी ही नहीं। खाने-पीनेमें हम खुद जो मर्यादा बाँध लें, वही है।

शास्त्रोंका अर्थ लगानेका स्वर्ण नियम यह है कि जितने अर्थ किये गये हैं, वे टीकाकारोंकी अपनी-अपनी दृष्टिसे ठीक हो सकते हैं। मुमुक्षुके हृदयमें जो अर्थ उतर जाये, वह तो श्रद्धापूर्वक उसीपर दृढ़ रहे और उसे अनुभवमें सिद्ध करे। अर्थोंमें समन्वयादि बैठाना तो शास्त्रियोंका काम है। जिन्हें अपना आचार दृढ़ करना है, उनके लेखे तो स्वीकृत अर्थके अनुसार आचरण करना ही समन्वय है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २२४) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

१. साधन-सूत्रमें '१९३१' है; किन्तु तब गांधीजी जेलमें नहीं थे; देखिए पृष्ठ २४०।

३१५. पत्र : दूधीबहन वा० देसाईको

२ अप्रैल, १९३२

चि० दूधीबहन,

मेरे हाथमें और कुछ नहीं, सावधानीके विचारसे मैं दाहिना हाथ काममें नहीं ला रहा हूँ। तुम्हारा वजन बढ़ना नहीं चाहिए। थोडा उपवास करो या फिर सिर्फ फलोंपर रहो। यह निरर्थक वजन ही है। मक्खन निकाले हुए मट्ठेपर रहो तो भी शायद काफी हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४२५) से, सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई।

३१६. पत्र : निर्मला ह० देसाईको

२ अप्रैल, १९३२

चि० निर्मला,

तुम सब ऐसा-कुछ सोचती जान पडती हो मानो स्वराज्य अर्थात् बापूराज्य। ऐसा हो तो वह स्वराज्य कदापि नहीं होगा। स्वराज्य तो जिनकी बुद्धि परिपक्व मानी जाती हो, उनका राज्य होगा। ऐसे लोग जो निश्चित करेंगे, वह होगा। हम आशा करें कि आज मोटरोंका जितना जोर है, तब इससे कम होगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

महादेव मजेमें है। पाँवका दर्द बहुत कम है। रोटी, दाल, भात, शाक वगैरह जो और जितना घरमें खाता था, यहाँ भी खाता है। चिन्ताका लेशमात्र कारण नहीं है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४६९) से।

३१७. पत्र : पुरातन बुचको

२ अप्रैल, १९३२

चि० पुरातन,

जब कुछ दिनोतक आराम लेना ही है, तो क्या तुम अल्मोडा, देवलाली, माथेरान, बेलगाँव या चोरवाड, माँगरोल, अथवा डुमस-सरीखे किसी समुद्री किनारे नही जा सकते?

बुजुर्ग प्रार्थना करते थे इसलिए मै भी [बाल्यावस्थामे] प्रार्थना करता था। दक्षिण आफ्रिकामे १८९३ मे हृदय-मंथन हुआ और मै ज्ञानपूर्वक आस्तिक हो गया।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१६५) से।

३१८. पत्र : मंगला शं० पटेलको

३ अप्रैल, १९३२

चि० मंगला (लाडली),

अपने आसपासके लोगोको जानना जरूरी है। इसी प्रकार आसपासके वृक्षो, घास, आदिके नाम और गुण जानने चाहिए। चन्द्रभागाका[1] उद्‌गम जान लेना चाहिए। वहाँके जन्तुओ, पक्षियो, पशुओको जानना, उनके नाम न हो तो नाम रखना, वहाँकी भूमिके गुण-दोष जानना, आसपासकी इमारतोका इतिहास जानना। इतना जान लेना काफी होगा न? इस सबमे से कितना जानती है?

निरीक्षण-शक्ति बहुत बारीकीके साथ देखने-जाँचनेसे बढती है।

मै किताबके सहारे आकाश-दर्शन सीखा हूँ।

देर होती हो तो थोडा लिखो, किन्तु लिखो सावधानीसे और धीरे-धीरे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०८१) से। सी० डब्ल्यू० ४५ से भी; सौजन्य : मंगला व० देसाई।

१. आश्रमके निकट बहनेवाली एक छोटी नदी जो अब सूख गई है।

३१९. पत्र : नारणदास गांधीको

३ अप्रैल, १९३२

चि० नारणदास,

अधिकतर तुम्हारा पत्र बुधवारको ही मिल जाता है। इस बार भी इन्दुने सुन्दर प्रश्न लिख भेजा है। क्या आश्रममे तलवार, खुखरी, आदिका अभ्यास कर सकते है?[1] आश्रममे तलवार और खुखरी, आदि कब सिखाने लगे, यह मुझे मालूम नही या याद नही है। मेरे वहाँ रहते उन्हे शुरू किया हो तो मुझसे पूछा था कि नही, यह भी याद नही है। उस समय पूछा हो तो भी इस समय तो मुझे यह काम उपयुक्त नही लगता। तुम सब साथ बैठकर इसपर विचार करना और यदि किसी प्रकार इसके समर्थनमे कुछ कहना कठिन हो तो इसको छोड देना। हमारी मर्यादा लाठीतक ही होनी चाहिए, ऐसा मुझे लगता है। तो भी तुम स्वय और दूसरे जिम्मेदार आश्रमवासी स्वतन्त्र रूपसे इसपर विचार कर लेना। और दूसरी छोटी या बडी बाते हो तो उनपर भी विचार कर लेना चाहिए।

दूसरा प्रश्न बीमारीका है। इन्दुकी तरह कोई यदि वहाँ आकर तुरन्त बीमार पड जाये तो उसके लिए दूसरे स्थानकी ही व्यवस्था करनी चाहिए। जमना[2] ही बारह रतल वजन बढाकर आई है। अब यदि वहाँ आते ही वह इतना वजन खो बैठे तो मुझे यह बात असह्य ही लगेगी। जो लोग [साधारणतया] अपने स्वास्थ्यकी रक्षा कर सकते है लेकिन साबरमतीमे नही कर सकते, उन्हे बाहर रखनेमें उनकी तथा आश्रमकी भलाई है। आश्रममें ऐसा कौन-सा दोष है जिससे वह कई लोगोको माफिक नही आता? हमें इस दोषका पता लगाना चाहिए। एक कारण पानी तो है ही। लेकिन दूसरे कारण भी हो सकते हैं। वे हवा और खुराक हैं। यदि हम किसी प्रकार हवाको दूषित करते है तो यह हमे मालूम करना चाहिए। उसके लिए देखना होगा कि हमारे और पशुओके मल आदिकी ठीक व्यवस्था होती है कि नही। आनन्दी बीमार ही रहती हो तो उसे कही भेज देना चाहिए। शारदा कहती थी कि यदि मैं अनुमति दूँ तो बेलाबहन उसे शारदाके पास रहनेके लिए माथेरान भेज दें। अच्छी तरहसे देखे तो मेरी अनुमतिकी आवश्यकता ही नही होनी चाहिए। अनुमति देना न देना तुम्हारे अधिकारकी बात है। मुझे खुद तो इसमें कोई आपत्ति नही है। फिलहाल तो हम देवलालीमे खर्च उठा ही रहे हैं; इसलिए यदि आनन्दीको वहाँ भेजा जा सकता हो तो यह भी करने लायक है। यह बात तो एकके बारेमे ही हुई। मैंने तुम्हारे सामने सभी बीमारोसे सम्बन्धित प्रश्न विचारके लिए रखा है।

१. देखिए उसके अन्य प्रश्नके लिए "पत्र : इन्दु पारेखको", २४-३-१९३२।

२. नारणदास गांधीकी पत्नी जो बम्बई स्वास्थ्य सुधारनेकी दृष्टिसे जाकर लौटी थीं।

भाई वालजीसे कहना कि 'व्रत विचार'का[1] अनुवाद सावधानीके साथ पास तो रख ही छोडा है। बनेगा तो मैं इसे भेज भी दूँगा। भेज सकनेकी कुछ आशा बँध रही है।

चम्पाके बारेमे तुमने जो कुछ लिखा है, वह मैं समझ गया हूँ। उसकी चिन्ता तुम्हे ही करनी है।

मैंने आनन्दीके विषयमे तुम्हे जो लिखा है, उससे यह तों समझ ही गये होगे कि हरजीवन और शारदा मिलकर गये। यदि लक्ष्मी, लीलावती, वगैरहके बारेमे जान पाओ तो उनके हाल-चाल लिखना।

तलेका चमडा और किताबे मिल गई है। बहनोको मिलानेमे अधिकारियोकी आपत्ति यह है कि उसके लिए स्त्रियोको पुरुषोकी जेलमे लाना पडता है। और मुझे तो वहाँ ले ही नही जायेगे। उनकी यह आपत्ति मुझे ठीक लगी, इसलिए मैंने ही आग्रह छोड दिया और इसलिए पत्र-व्यवहार करनेकी बात तय हुई। मै पत्र लिखने लगा हूँ। गगाबहन लिखती है कि आश्रममे सब [अच्छे है]।

जबतक खुजली पूरी तरह अच्छी नही हो जाती, इलाज करते ही रहना। उससे दूसरे लाभ भी होगे ही।

क्या 'आश्रम पत्रिका' निकल रही है? निकलती है तो क्या मुझे भेजी जाती है? तुम्हारे पत्रोके साथ पिछले कुछ हफ्तोसे वह देखनेमे नही आती।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

प्रभावतीका पत्र आज ही मिला। वह लखनऊ सेन्ट्रल जेलमे है। कान्ता[2] भी वही है। कान्ताको 'अ' वर्गमे चढा दिया है। प्रभावतीको 'ब'मे उतार दिया है। मेरे लेखे प्रभावती चढी है और कान्ता उतरी है। जान पडता है, उसकी तबीयत ठीक रहती है। वह लिखती है, जयप्रकाश बम्बईमें है। सलग्न सुन्दर शब्द-चित्र[3] इस सप्ताहके लिए महादेवने लिखा है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२१७ से भी; सौजन्य : नारणदास गाधी।

१. १९३० के कारावास-कालमें गाधीजी के 'आश्रम-व्रत'-सम्बन्धी प्रवचनोंके अनुवाद। देखिए खण्ड ४४।

२. सुमगल प्रकाशकी चचेरी बहन।

३. "द सेन्टली वुमन ऑफ रशिया" शीर्षकके अन्तर्गत सेम्युअल होरकी पुस्तक फोर्थ सीलके लेखके आधारपर। आश्रम जीवन में प्रकाशित।

३२०. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

३ अप्रैल, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

इन्दुने सुन्दर प्रश्न पूछे है। तलवार, कटार, वगैरहके प्रयोग हम आश्रममे कैसे करे? इस बारेमे नारणदासके[1] पत्रमे लिखा है। इसलिए यहाँ इस सम्बन्धमे नही लिख रहा हूँ। तू स्वय यह सीख रही है, इसलिए तेरे सामने यह सवाल खडा हुआ या नही, यह जाननेके लिए ही यहाँ इसका उल्लेख किया है।

तू आश्रमको जो प्रमाण-पत्र देती है, वह मै नही दूँगा। सच्चा हो तो यह प्रमाण-पत्र मुझे अच्छा जरूर लगेगा। जिस बातको हाथमे लेते है, उसके पीछे पागल हो जाते है, ऐसी छाप तुझपर पडी होगी। वह ठीक नही है। आश्रमके व्रतोतक भी हम कहाँ पहुँच सके है? आश्रममे हम हिन्दी, उर्दू, तमिल, तेलगू और सस्कृत सिखानेवाले थे। इस दिशामे बडा ही शिथिल प्रयत्न हुआ है। चमडा कमानेकी कलामे हम कहाँतक कुशल बने है? बारीक-से-बारीक सूत हम कहाँ कातते है? ऐसी तो दूसरी बहुत-सी बाते बता सकता हूँ। मेरी शकाके समर्थनके लिए इतना काफी है।

लाठी वगैरहके पीछे सब पड सकते है — यह तो मिठाईके पीछे सब पडते है, ऐसा कहनेके बराबर हुआ। ससारमे ऐसी चीजे जरूर है, जिनके पीछे पडनेमे कोई परिश्रम नही होता। हम पशु-परिवारके भी है, इसलिए यह गुण हममे स्वाभाविक है। उसे पैदा नही करना पडता। उसे बढाना उचित है या नही, यह प्रश्न है। पशु-जातिके सभी गुण त्याज्य हो, ऐसी बात तो नही है।

अभी रसोईमे कितने लोग खाते है? डबलरोटी अब भी बनती है क्या? बनती है तो बनाता कौन है? अच्छी बनती हो तो जब कोई आये, उसके साथ एक या दो भेजना।

लक्ष्मीसे कोई मिले तो उससे कहे कि उसके एक भी पत्रका उत्तर न दिया हो, ऐसा मुझे नही लगता। इसलिए वह मुझे पत्र लिखे।

दीक्षितके[2] ज्योतिषशास्त्रका गुजराती अनुवाद हुआ है। वह मेरे पास है। बालकी पुस्तक यहाँ मिल जायेगी, इसलिए नही मँगा रहा हूँ। अप्टन सिक्लेयरकी भेजी हुई पुस्तके आश्रमकी ही है। उन्हे दर्ज कर लेना और उनमे से 'बोस्टन' और 'ब्रास टैक्स' भेजना। बाकी पुस्तकोकी सूची भेजना।

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. खगोल विद्यापर लिखनेवाले मराठी लेखक।

उपनिषद् मुझे अच्छे लगते हैं। उनका अर्थ लिखने जितनी योग्यता मुझमें है, ऐसा मैं नहीं मानता हूँ।

मेरी विनोदी प्रकृतिको तुझे पहचानना चाहिए। प्रशंसा करानेके लिए तू दोषोंके विषयमें पूछती है, ऐसा विनोदमें ही पूछा जा सकता है। इसमें इतना तो सत्य है ही कि अगर प्रेमीजनसे हम अपने दोष पूछें, तो उसके परिणाममें प्रशंसा सुननेको मिलती है। क्योंकि प्रेम दोषपर पर्दा डालता है, या दोषको गुणके रूपमें देखता है। प्रसंगानुसार दोष बताना प्रेमका स्वभाव है और वह भी सम्पूर्णता देखनेके लिए ही। तुझे धुरन्धरके सामने 'हिस्टेरिकल' कहा था, उसमें भी तेरी प्रशंसा थी, यह क्या किसनने कहा? क्योंकि वह प्रसंग ऐसा था कि अगर तुझे 'हिस्टेरिकल' न मानता तो तू ज्यादा दोषी ठहरती। तू 'हिस्टेरिकल' तो है ही। तू पागल-जैसी हो जाती है, इसका क्या अर्थ है? जो भावनाओंसे अभिभूत हो जाता है, वह 'हिस्टेरिकल' है। यह समझमें आता है न?

मुझे हमेशा ही यह लगा है कि जापानकी नीति शोचनीय है। रूसके विरुद्ध उसकी जीत जरूर होनी चाहिए थी, लेकिन उससे यह साबित नहीं होता कि जापानकी नीति अनुकरणीय है। लेकिन अभी तो हम अपनी नीतिको सँभालें, तो काफी होगा। जापानको सँभालनेवाला तो करोड़ों आँखोंवाला सदा जागता सत्पुरुष बैठा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२७९) से। सी० डब्ल्यू० ६७२७ से भी, सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

३२१. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

सोमवार, ४ अप्रैल, [१९३२][1]

बहनो,

मैं दाहिने हाथसे जितनी जल्दी लिख पाता हूँ, बायें हाथसे वैसा नहीं; इसलिए यह पत्र बोलकर लिखवा रहा हूँ।

बहने कुछ भी करें, किन्तु मैं बुजुर्गके नाते उनके विरोधमें सत्याग्रह कैसे कर सकता हूँ? इस विचारमें जबर्दस्त भूल है और सत्याग्रहके बारेमें गलतफहमी भी है। तुम्हारे वाक्यमें तो सत्याग्रहका अर्थ दुराग्रह-जैसा हो गया। सत्याग्रह छोटे और बड़े, राजा और रंकके बीच भेद नहीं करता। ईश्वर भी हमारे विरोधमें सत्याग्रह करता है। उसका सत्याग्रह तो निरन्तर चल रहा है। सत्यका आग्रह—

१. इस पत्रका कुछ अंश ४-४-१९३२ की तारीखमें महादेवभाईनी डायरी, भाग–१ में दिया गया है।

सत्याग्रहका मूल अर्थ इतना ही है और अगर ईश्वर सत्यका आग्रह न रखे तो एक क्षणमे ससार नष्ट हो जाये। सत्याग्रहके अभिप्रायमे जिस प्रकार अधिकार-भावना है उसी प्रकार धर्म-भावना भी है। मैं तुम्हारा ही दृष्टान्त लेता हूँ। यदि तुम मेरे पत्रोपर वातचीत न करो या उनका उत्तर न दो तो मेरे लिए रोज-रोज लिखनेके लिए सचमुच कुछ रहे ही नही। इसलिए लिखनेका फिर कोई मूल्य या प्रभाव भी न वचे। सत्यार्थी लिखनेके लिए कुछ नही लिखता। बोलनेके लिए कुछ नही वोलता। उसके लिखने या वोलनेका विशेष कारण होना ही चाहिए। उसकी सामान्य स्थिति मौनकी स्थिति होनी चाहिए। सच कहे तो मुझे, तुम्हे या किसी औरको कुछ करना ही नही चाहिए और सो भी कैद कर लिये जानेके वाद। कैद हो जानेके वाद भी सरकार वाहरके जगतसे एक निश्चित मर्यादामें सम्वन्ध रखने देती है, उसका उपयोग कर लेता हूँ। किन्तु वह उपयोग कामकी हदतक लिखना ही होना चाहिए। मेरे-जैसे व्यक्तिको तो आचरणके द्वारा ही अपनी वात व्यक्त करनी चाहिए। जो मेरे आचरणसे कुछ नही ग्रहण करता, वह मेरे कहनेसे क्या लेगा? यह हुआ सामान्य नियम। किन्तु आश्रममे और आश्रमके वाहर ऐसे कितने ही लोग है जो मेरे आचारको अच्छा मानते है और इसीलिए मुझसे अधिक वातें समझनेकी इच्छा करते है। निस्सन्देह, उनको लिखना मेरा धर्म हो जाता है। इसमें तुम लोग भी आ जाती हो। लेकिन यह तो तभी जब तुम मुझसे कुछ पूछो। इसीलिए मैंने लिखा कि अगर तुम लोग कुछ जवाव न दो, कुछ न पूछो, विचार-विमर्श न करो तो मैं फिर क्या लिखूं?

तुम्हारा सकोच मै जानता हूँ। स्वभाव भी जानता हूँ। जो सूझे, उतनी सेवा यथाशक्ति करके मुक्त और मूक रहती हो, यह ठीक है। यही शोभनीय है। फिर भी इसी तरह जीवनको रचते हुए एक-दूसरेसे मिलना भी तो है ही। आश्रममे रहनेका अर्थ ही यह है कि हम एक समाज वनकर रहे, इसलिए साथ-साथ रहे, साथ-साथ खायें, बैठें-उठे, काम करे, सोचे। भोजनके समय हम जो मन्त्र पढते है, यह उसका अर्थ है। थोडी-वहुत सघ-शक्ति पशुओमे भी है। मनुष्योमे तो वह अपार है और होनी ही चाहिए, क्योकि मनुष्यका धर्म जीव-मात्रके साथ अद्वैत अर्थात् ऐक्य साधना है। यदि सघमे रहना पसन्द न आये तो वह इसे साध ही नही सकता। इसलिए, जैसे वने, तुम्हे सघ-शक्ति तो हस्तगत करनी ही है। इसलिए, अगर तुम इन दिनो एक सघकी तरह रोज मिल नही पाती तो भी हर हफ्ते मेरे पत्र पाने और उसका जवाव देनेके लिए जव तुम मिला करोगी तो फिर उससे आगे वढना भी हो सकता है। जो वहने व्यक्तिगत रूपमे लिखती है, उन्हे तो मैं लिखता ही रहता हूँ। किन्तु सभी वहनोको सम्वोधित करके लिखनेकी प्रथा पडनेके वाद यह बात समझमें आई कि बहनोके सघको भी मै लिखूं, ये वहनें उसपर चर्चा करे और चर्चासे जो प्रश्न उत्पन्न हो, वे उनके विषयमें मुझे लिखा करे। मुझे लगता है कि मै जो कहना चाहता हूँ और तुम्हारी ओरसे जिस बातकी आशा करता हूँ, वह अव स्पष्ट हो गया।

यह तो मेरे पत्रकी प्रस्तावना हुई। त्रिवेणी बहनने एक प्रश्न उठाया है। वह सब बहनोपर लागू होता है, इसलिए आज उसीके विषयमे लिखता हूँ। वह पूछती है, बहनें (केवल आश्रमकी नही, बल्कि जिनसे भी सम्पर्कका अवसर आया) मुर्दार-सी लगती है? इनमे जान क्यो नही दिखती? भले ही सभी बहनोके बारेमें यह कथन लागू नही होता, तो भी त्रिवेणीबहनकी धारणामे तथ्य है। इसके जो कारण मै देख पाया हूँ, वे ये है : १. बहनोका अव्यवस्थित जीवन, २ चिन्तामय जीवन, ३. बचपनसे दोषयुक्त पालन-पोषण, ४. प्रसूतिके समय आरोग्यशास्त्रके नियमोके विरुद्ध सार-सँभाल, ५. व्यायामका अभाव, ६. आरोग्यको हानि पहुँचानेवाली खुराक, ७ घरमे घुसे रहनेकी आदत, ८. अखाद्य खानेकी आदत, ९. प्रायः विचारोमे विकार और फिर उनपर ज्ञानमय अंकुश रखनेके बजाय उन्हे जबर्दस्ती दबानेका प्रयत्न।

इतने कारण मेरी दृष्टिमे आये है। अनेकोपर इनमे से अनेक कारण लागू होते है, कहनेका यह उद्देश्य नही है। सभी बहनोको चाहिए कि वे अपने ऊपर लागू होनेवाले कारण खोजे। सबसे बडा एक दोष बहनोमे यह देखा गया है कि वे अपने मनकी बात छिपाये रखती है। इससे उनमे दम्भ आ जाता है और दम्भ उसीमे आ सकता है जिसके मनमे असत्य घर कर गया हो। दम्भ-जैसी विषैली वस्तु इस जगतमे मै दूसरी नही जानता। हिन्दुस्तानके मध्यमवर्गकी स्त्रीको वह सदा ही दबाये रहता है। उनमे दम्भ समा जाता है और वह कनखजूरेकी तरह उन्हे कुतरकर खा जाता है। कदम-कदमपर जो नही भाता, वही करती है और उन्हे करना पड रहा है, ऐसा वे मानती है। जरा सोचकर देखे तो वे समझ जाये कि इस जगतमे किसीसे दबकर चलनेका उनके लिए कोई कारण नही है। यदि वे जैसी है, उसी रूपमे ससारके सामने हिम्मतके साथ खडी होनेको तैयार हो जाये और पहला पाठ यही सीख ले तो मैने जो अन्य कारण बताये है, उनका निराकरण हो जाये।

मेरी समझमे यह बहुत महत्त्वका पत्र है। इसपर बार-बार विचार करना; इसमे से जो समझमे न आया हो सो पूछना। चिट्ठीको दो-तीन बार ध्यानसे पढ लोगी तो आसानीसे समझमे आ जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

३२२. पत्र : पुष्पा शं० पटेलको

३ अप्रैल, १९३२

चि० पुष्पा,

इस बार तेरे अक्षर ठीक प्रमाणमें हैं। इसी तरह सुधारती रहना।

कातनेके बारेमें कान्ताके नाम लिखा पत्र देखना।

सरदारी न करे तो सरदार काहेके?

नाटकमें भारतमाता बनी थी तो अब वैसे गुणोका विकास करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९८५) से। सी० डब्ल्यू० ३१ से भी, सौजन्य. पुष्पावहन ना० नायक।

३२३. पत्र : किसनको

३ अप्रैल, १९३२

चि० किसन,

क्या चाहती है कृष्णाकुमारी नामसे सबोधु? तुमारा खत बहोत अच्छा लगा। जमनाबहन ड०को व्यायाम सीखाया वह ठीक हुआ।

अब तुमारा शरीर अच्छा हो गया होगा।

फिर भी खत लिखो।

बापूके आ[शीर्वाद]

जी० एन० ९०६८ से।

३२४. पत्र : एक अमेरिकीको[1]

४ अप्रैल, १९३२

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। आपके पहले सवालके जवाबमे मेरा कहना है कि मुझे यह पसन्द नही है कि कोई मुझे छुडवाये। फिर कोई शर्त मानकर तो मै छूटना ही नही चाहता। जिसे मैने अपने जीवनका एक धर्म-कार्य माना है, मै उसे किसी भी पुरस्कारके लोभसे नही छोड सकता।

[अंग्रेजीसे]

दि डायरी ऑफ महादेव देसाई, भाग – १, पृष्ठ ५४–५।

३२५. पत्र : एक अमेरिकीको[2]

४ अप्रैल, १९३२

'क्रिश्चियन साइस' के अनुयायी अनेक मित्रोसे मै मिला हूँ। उनमे से कुछने श्रीमती ऐडीकी पुस्तके मेरे पढनेके लिए भेजी है। इनमे से किसीको भी मै पूरा तो नही पढ सका, लेकिन ऊपरसे देख गया हूँ। इन मित्रोने जैसी आशा रखी होगी, वह असर तो इन पुस्तकोने मुझपर नही डाला। मै बचपनसे ही यह सीखा हूँ, और अनुभवसे इस शिक्षाकी सचाईका मुझे विश्वास हुआ है, कि आध्यात्मिक शक्तियोका या सिद्धियोका उपयोग शारीरिक रोग मिटानेके लिए नही करना चाहिए। वैसे, मै यह अवश्य मानता हूँ कि दवाओ आदिसे इन्सानको परहेज रखना चाहिए। मगर यह बात सिर्फ आरोग्य-रक्षा-विषयक शारीरिक दृष्टिसे ही है। और फिर, मै भगवानपर पूरी तरह निर्भर रहनेमे विश्वास करता हूँ — इस आशासे नही कि वह मेरा रोग दूर कर दे, बल्कि उसकी इच्छाके अधीन होने और उन गरीबोके दु:खमे भागीदार बननेके लिए जिन्हे चाहनेपर भी शास्त्रीय डॉक्टरी मदद नही मिल सकती। मगर मुझे अफसोसके साथ कहना पडता है कि मै अपने इस विश्वासपर सदा अमल नही कर पाता। बेशक, मेरा प्रयत्न हमेशा इसी तरफ रहता है, मगर अनेक प्रलोभनोके बीच मै पूरी तरह इसपर अमल कर सकना कठिन पाता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ ७१ – २।

१. महादेव देसाईके अनुसार यह पत्र उक्त अमेरिकीके इस प्रस्तावके उत्तरमें लिखा था कि वह "इस शर्तपर गांधीजी की रिहाई करवा सकता है कि वे केवल ईसामसीहकी शिक्षाके प्रचार-कार्यमें अपना सारा समय लगायेंगे।"

२. पहले नास्तिक और तब 'क्रिश्चियन साइस' के अनुयायी इस अमेरिकीने इस विषयपर गांधीजी के विचार पूछे थे।

३२६. पत्र : सुरेन्द्रको

४ अप्रैल, १९३२

ब्रह्मचर्यके बारेमें तुमने लिखा था, सो मुझे मिल गया था। मिलेंगे तब जरूर चर्चा करेंगे। जो विचार मैंने इमामसाहबके यहाँ प्रकट किये थे, वे दृढ हुए हैं और होते जा रहे हैं। यानी, अनुभव उनकी सचाई साबित कर रहा है। तीनों कालमें और सब हालतोंमें टिका रहे, वही ब्रह्मचर्य है। यह स्थिति बहुत मुश्किल है, मगर इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं। हमारा जन्म विषयसे हुआ है। जो विषयसे पैदा हुआ है, वह शरीर हमें बहुत अच्छा लगता है। वंश-परम्परासे मिले हुए इस विषयी उत्तराधिकारको निर्विषयी बनाना कठिन ही है। फिर भी वह अमूल्य आत्माका निवास-स्थान है। यह प्रत्यक्ष हो जाये तब ब्रह्मचर्य स्वाभाविक हो सकता है। और वह ब्रह्मचर्य साक्षात् रम्भा स्वर्गसे उतर आये और स्पर्श करे, तो भी अखण्डित रहता है। अपनी माँ सबके लिए रम्भाके समान होती है। इस रम्भामाताका खयाल करनेसे भी विकार शांत हो जाने चाहिए। मगर पत्रका कितना विस्तार करूँ? इसीपर बार-बार विचार करके फलितार्थ निकालना।

कुर्सी लगानेसे कोई पिघल जाये,[1] तो तुम उसे अहिंसाका परिणाम समझो, यह ठीक नहीं। मगर यह विषय महत्त्वपूर्ण नहीं है। जैसे-जैसे श्रद्धा बढेगी, वैसे-वैसे बुद्धि भी बढेगी। 'गीता' तो यह सिखाती जान पड़ती है कि बुद्धियोग ईश्वर कराता है। श्रद्धा बढाना हमारा कर्त्तव्य है। यहाँ यह समझनेकी बात जरूर है कि श्रद्धा और बुद्धिका अर्थ क्या है। यह समझ भी व्याख्यासे नहीं आती, सच्ची नम्रता सीखने से आती है। जो यह मानता है कि वह जानता है, वह कुछ नहीं जानता। जो यह मानता है कि वह कुछ नहीं जानता, उसे यथासमय ज्ञान हो जाता है। भरे हुए घडेमें गंगाजल डालनेकी सामर्थ्य ईश्वरमें भी नहीं है। इसलिए हमें ईश्वरके पास रोज खाली हाथ ही खडे होना है। हमारा अपरिग्रह भी यही बताता है। अब बस? मुझे जब लिखना हो लिखो। अधिकारी पत्र मुझतक पहुँचा देंगे।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ ७०।

१. यहाँ लेखकके कुर्सीकी तरह बाहें फैलाकर घुटनोंके बल बैठनेका उल्लेख है।

३२७. एक पत्र[1]

४ अप्रैल, १९३२

जब किसी बातके विषयमें कहना पडे, तब कोई भी कुर्बानी करके सत्य ही कहना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ ७१।

३२८. पत्र : मनु गांधीको

४ अप्रैल, १९३२

चि० मनुडी,

तेरा पत्र मिला। उसे मैं दो बार पढ गया। तुझे घबरानेकी जरूरत नही है। हरिलालकी दुर्दशा तूने आँखो देख ली, यह बहुत अच्छा हुआ। मुझे तो सब हाल मालूम ही था। इतनेपर भी हमे किसीके बारेमे आशा नही छोडनी चाहिए। ईश्वर क्या नही कर सकता? हरिलालमे कुछ भी पुण्य बाकी होगा, तो वह उग आयेगा। हम उसकी लल्लो-चप्पो न करे। हम झूठी दया न करें और अधिकाधिक पवित्र होते चले जाये, तो उसका असर हरिलालपर भी जरूर होगा। तुझे कठोर हृदय बनाना है। हरिलालको लिख देना चाहिए कि जबतक शराब न छोडे तबतक यह समझ ले कि तू है ही नही। हम सब यह रास्ता अख्तियार कर ले तो हरिलाल सँभल जाये। शराबीको जब कोई बडा आघात पहुँचता है, तब वह अक्सर अपनी कुटैव छोड देता है।

शादीके बारेमे तूने जो जवाब दिया है, वह मुझे पसन्द आया। इस निश्चय पर कायम रहेगी तो तेरा भला ही होगा। तू बिलकुल बचपनमे तो इतनी बीमार थी कि तेरे बचनेकी आशा ही नही थी। उस समयकी बा की भारी सेवा और आइस-डॉक्टर[2] के इलाजसे तू बच गई। लेकिन यह कहा जा सकता है कि इस बीमारीके कारण तू पाँच सालतक तो बिलकुल बढी ही नही। अब भी कमजोर तो है ही। बलीने[3] तेरी सार-सँभालकी है। वह न करती तो तू जरूर बीमार पडती। इसलिए मैं तो तेरी उम्रमे से कम-से-कम पाँच साल हमेशा घटा देता हूँ। हमने तो स्त्रियोके

१. लेखकने पूछा था कि सच बोलनेसे किसीके प्राण जाते हों तब भी क्या सच ही बोलना चाहिए?

२. डॉक्टर केलकर।

३. बलीबहन वोहरा, मनु गांधीकी मामी।

विवाहका समय जल्दी-से-जल्दी २१ वर्षका माना है। इसलिए तूने जो उम्र सोची है, वह ठीक है। तेरे लिए २५वाँ वर्ष मुश्किलसे शादीके लायक मानता हूँ। मगर मैं तुझे बाँधना नहीं चाहता। यह इतना ही बतानेको लिखा है कि आज जो तेरे विचार हैं, वे ठीक हैं। रामीने जल्दी शादी करनेका आग्रह किया, तो मैंने उसमें रुकावट नहीं डाली। हाँ, इतनी छोटी उम्रमें उसका विवाह करना मुझे जरा भी पसन्द नहीं आया। तेरे लिए तो जल्दी शादी न करनेके बहुत-से कारण हैं। ईश्वर तेरा निश्चय कायम रखे। अभी तो खूब पढ़। शरीर मजबूत बना और 'गीताजी' जो धर्म सिखाती है, उसे समझ और उसीके अनुसार आचरण कर।

मुझे लिखती रहना। मिलनेको जी करे तो आकर मिल भी सकती है। अपने अक्षर खूब सुधारना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५११) से; सौजन्य: मनुबहन मशरूवाला।

३२९. पत्र: विट्ठलदास जेराजाणीको

४ अप्रैल, १९३२

भाई विट्ठलदास,

तुम्हारे अक्षर देखकर हम सबको बड़ा आनन्द हुआ। पूरा-पूरा विश्राम अवश्य लेना। शरीर बिलकुल ठीक हो जाये तभी काम हाथमें लेना।

मेरा कार्ड तुम्हें मिले, इसके पहले ही तुम्हारे खजूर फिर आ पहुँचे। इल्ली लग जानेके बाद खजूरोंको खाने लायक कदापि नहीं मानना चाहिए। इल्लियाँ गूदे और ऊपरी सतहके बीच रहती हैं। वे धोनेसे नहीं निकलती। मैंने खजूरोंके बारेमें यही देखा है। ज्यादातर खजूर तो मैं यहाँ महारोगियोंके चिकित्सालयमें पहुँचा देता हूँ। जो बिगड़े नहीं हैं, ऐसे थोड़े-बहुत खजूर मैं खाता हूँ। मगर अब मत भेजना। यहाँ बाजारमें बिना इल्लीके सूखे और सख्त खजूर मिलते हैं; इनसे मेरा ठीक काम चल जाता है। अपने पास न फालतू वक्त है, न पैसा। इसलिए इन दोनोंको बचाना ठीक।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७८१) से।

३३०. पत्र : लक्ष्मी जेराजाणीको

४ अप्रैल, १९३२

चि० लक्ष्मी,

तेरी चिट्ठी मिली। पैसिलसे लिखा हुआ फीका होता है और रोज-रोज फीका पडता जाता है। मिलनेवालेको मिलते-मिलते पत्र इतना धुंधला पड जाता है कि पढनेमे वक्त लगाना पडता है। पत्र पानेवालेकी जगह दूर हो तब तो अक्षर कई बार अपाठ्य हो जाते है। फिर पैसिलसे अक्षरोका आकार भी उत्तम नही बन पाता। आखिरी बात यह, कि पैसिलसे लिखे अक्षरोको अच्छा-बुरा कहना आसान नही होता। भविष्यमे कलम और स्याही मिलनेपर पत्र या अन्य कुछ लिखनेमे उन्हीके उपयोगका निश्चय करो।

अगर विट्ठलदास बिलकुल स्वस्थ हो जाते है तो तू भी निश्चय ही यशकी भागी होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८१२)से; सौजन्य: पुरुषोत्तम दा० सरैया।

३३१. पत्र : रैहाना तैयबजीको

४ अप्रैल, १९३२

रैहानाको खुदा तन्दुरुस्त और मनदुरुस्त करे और रखे। शागिर्द उस्तानीके पास शैतानी सीखने थोडे ही पहुँचा है। शागिर्दके पास उस्तानीकी शैतानी भी चलनेवाली नही है। तुम्हारा भजन बिना सुने, रहना अच्छा नही लगता। आकर सुनाओ तभी बने। इसके लिए तुम्हे लडका बनकर जेलमे आना होगा। देखता हूँ, महादेव गा सकता है या नही। अब पढिए आजकी गजल:

> अगर है शौक मिलनेका तो हरदम लौ लगाता जा,
> जलाकर खुदनुमाईको भसम तन पर लगाता जा।
> पकड़कर ईश्ककी झाड़ू सफाकर . . . दिलको,
> जमींकी धूलको लेकर मुसलीपर उड़ाता जा।
> मुसल्ला छोड़ तसबीह तोड़ किताबों डाल पानी में,
> पकड़ दस्त तू फरिश्तोंका गुलाम उसका कुहाता जा।[1]

१. यहाँतक उर्दूमें है; देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ४४६।

अपने उर्दू अक्षरोपर मुझे शर्म आती है। लेकिन वाये हाथसे इससे अच्छे अक्षर नही वन पाते। ऊपरकी इवारत लिखनेमे लगभग पौन घटा लग गया। सच तो यह है कि मुझे रोज थोडा लिखना चाहिए। परन्तु मै ठहरा लोभी। इस एकान्तवासमे जितना हो सके उतना कर लेनेकी इच्छाके कारण अकेली उर्दूको वहुत समय नही दे सकता। मुझे लोभमें तो तूने ही डाला है। तू थोड़े वाक्य उर्दूमें लिख देती थी, इसलिए मुझे उर्दूका लोभ हुआ और शागिर्द वन गया। कैसा शागिर्द और कैसी उस्तानी। जोड तो जवर्दस्त वना है, अव देखे अपनी नाक सावुत रहती है या नही।

वावाजानके छट्ठीके लेखमे क्या लिखा जाता है सो हम उत्सुक होकर देख रहे हैं। हम लोग तुम सवको अक्सर याद करते हैं। सरदार, काका और महादेव वावा-जानके अनेक सस्मरण सुनाते और गौरवका अनुभव करते है कि वावाजानके साथ रह सके। मै थोड़े ही उस तरह रह सका हूँ! कभी मेरी भी पारी आयेगी।

हमीदा, रोहिणी, वगैरह की खवरे अव इसके वादके खतमें पानेकी आशा रखूंगा।

पाशाभाईकी चिट्ठी आज ही मिली है। जवाव आज इसीके साथ नही भेज पाया तो वादमे भेजूँगा।

आज अव और नही लिखूंगा।

बापूकी वहुत-वहुत दुआ

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६४०) से।

३३२. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

[५][1] अप्रैल, १९३२

भाई घनश्यामदास,

आपका पत्र मिला। इस पत्रके अक्षरसे ही जानोगे कि महादेव यहाँ आ गया है। सवके खोराकका अभ्यास कर रहे है यह मुझको अच्छा लगता है। हमारे मध्यम वर्गके खानेमे समतोलता नही है, और वहुत चीज निकम्मी खाकर शरीर विगाड़ते है उसमें कोई सदेह नहि है। और डाकतर और वैद्य लोग पैसे कमानेमे इस विषयका खयाल तक भी नही करते हैं। इसलिए तुम्हारे प्रयोगोकी उपयोगिता मैं समज सकता हू। और मेरी आशा है कि रामेश्वरजी और लक्ष्मीनिवासको लाभ हुआ होगा। कुछ भी नई शोध करे मुझको वताते रहे।

मेरे वारेमे गैरसमज रहती है उसका मुझे पूरा ख्याल है। परतु मै निश्चिंत रहता हू। अनुभवसे देखा है कि धीरज रखनेसे वहुतसी गलतफहमिआं दूर हो जाती हैं। रात्रि कितनी भी लवी हो उसका अत है ही।

१. देखिए "दैनन्दिनी, १९३२"।

अबतक मेरा खुराक वही चलता है। और अच्छा ही लगता है। एण्ड्रयूझको मिलते हैं क्या? उनकी तबीअत कैसी है?

बापूके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७८९७ से; सौजन्य घनश्यामदास बिडला।

३३३. पत्र : मैथिलीशरण गुप्तको

५ अप्रैल, [१९३२][1]

भाई मैथिलीशरणजी,

आपका पत्र मिला था। 'साकेत', 'अनघ', 'पंचवटी' और 'झंकार' सब रसपूर्वक पढ गया। बहुत अच्छे लगे। परन्तु टीका करनेकी मै अपनी कुछ भी योग्यता नही समझता हूँ। तो भी आपने मेरे अभिप्राय पूछे है और क्योकि जैसे पढता गया वैसे विचार भी आते रहते थे, इसलिए जैसे आये वैसे ही आपके सामने रखता हूँ। उर्मिलाका विषाद अगरचे भाषाकी दृष्टिसे सुन्दर है परन्तु 'साकेत' में उसको शायद ही स्थान हो सकता। तुलसीदासजीने उर्मिलाके बारेमें बहुत कुछ नही कहा है यह दोष माना गया है। मैंने इस अभावको दोष दृष्टिसे नही देखा। मुझको उसमें कविकी कला प्रतीत हुई है। मानसकी रचना ही ऐसी है कि उर्मिला-जैसे योग्य पात्रका उल्लेख आध्याहारमे रखा गया है, और उसीमें काव्यका और उन पात्रोका महत्त्व है। उर्मिला इत्यादिके गुणोका वर्णन सीताके गुण विशेष बतानेके लिए ही आ सकता था। परन्तु उर्मिलाके गुण सीतासे कम थे ही नही। जैसी सीता वैसी ही उसकी भगिनीआ। मानस एक अनुपम धर्मग्रन्थ है। प्रत्येक पृष्ठमे और प्रत्येक वाक्यमे सीता सीता रामका ही जप जपाया है। 'साकेत' में भी मै वही चीज देखना चाहता था। इसमे कुछ भग उपरोक्त कारणके लिए हुआ। एक और चीज भी कह दूँ। दशरथादिका रुदन तुलसीदासजीके मानसमे पढनेसे आघात नही पहुँचा था। तुलसीदाससे दूसरा कुछ नही हो सकता था। परन्तु इस युगके पुस्तकमे ऐसा रुदन अच्छा नही भाता है। उसमे वीरताको हानि पहुँचती है, और इधर भक्तिको भी। जो ऐहिक भोगको क्षणिक माननेवाले हैं, आत्मामे जिनका विश्वास है उनको मृत्युका और वियोगका असह्य कष्ट हो ही नही सकता है। क्षणिक मोह भले आ जावे। परन्तु उनसे करुणाजनक रुदनकी आशा हम कैसे रखे?

यह सब लिखनेका मेरा उद्देश्य हरगिज नही कि आप दूसरे सस्करणके लिए कोई सुधारणा करें। हा, यदि मेरे लिखनेमे आपको कुछ योग्यता प्रतीत हो तो दूसरी बात है।

1. विषय सामग्रीके आधारपर, देखिए "पत्र: मैथिलीशरण गुप्तको", २६-४-१९३२ और "दैनन्दिनी, १९३२" में ५ अप्रैलकी प्रविष्टि भी।

महादेव मेरे पास आ गये हैं। और क्योंकि मेरे दाहिने हाथमें लिखनेसे कुछ कष्ट होता है और बायें हाथसे लिखनेमें कुछ देर होती है, इसलिए मैंने यह पत्र उनसे लिखवाया है।

आपका,
(ह०) मोहनदास

सी० डब्ल्यू० ९४५५ से, सौजन्य: भारत कला भवन, वाराणसी।

३३४. पत्र: चन्द्र त्यागीको

५ अप्रैल, १९३२

भाई त्यागीजी,

तुम्हारा पत्र मिलनेसे आनन्द हुआ और ज्यादह यह जाननेसे कि प्लेगके रोगियोंकी सेवाका काम कर रहे हैं। आजकल मैं दूध नहीं लेता हूं। डबलरोटी, बादाम, खजूर, भाजी और नीबु इससे यहां तो काम निपटता है। मन जैसे था वैसा ही है। देवशर्माजी के[1] खतकी प्रतीक्षा करता हूँ। दाहिने हाथमें सिर्फ लिखनेसे ही दर्द होता है। यह करीब एक वर्षकी बात है। और तो कुछ नहीं है। बलवीरके हरफ अच्छे हैं। पुराने दोषोंको अब तो भूल गया है ना?

महादेव मेरे साथ है। यह कार्ड उन्हींके हाथ लिखा गया है।

बापूके आशीर्वाद

जी० एन० ३२५९ से।

३३५. एक पत्र[2]

७ अप्रैल, १९३२

आपका पत्र मिला। मैं यह नहीं कह सकता कि मैं अपने लक्ष्यतक पहुँच गया हूँ। लगता है कि अभी मुझे बहुत फासला तय करना है . . .

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी,[3] भाग – १, पृष्ठ ५९।

१. आचार्य अभयदेवके नामसे भी प्रसिद्ध थे।

२. पत्र-लेखक कोई ओवरसियर थे। उन्होंने गांधीजी से पूछा था कि क्या उन्हें मुक्ति मिल गई है और उन्होंने ईश्वरको साक्षात् देखा है?

३. साधन-सूत्रके अनुसार।

३३६. पत्र : नृसिंहप्रसाद का० भट्टको

७ अप्रैल, १९३२

क्षयसे क्षयका डर ज्यादा दुःख देता है।[1] जिसे क्षयकी बीमारी बता दी जाती है, वह अपनी बीमारीका ही खयाल करता रहता है और जहाँ-तहाँ क्षयसे होनेवाले दर्दकी कल्पना करता रहता है। मनसे यह भूत निकाल भगाया जा सके, तो बीमार जल्दी अच्छा हो जाता है।

धनका सवाल तुम्हे क्यो परेशान करता है?[2] यह चीज तो तुम मुझसे सीख ही लो, क्योकि इस मामलेमे मै विशेषज्ञ माना जा सकता हूँ। 'महात्मा' बननेसे पहले ही मै जो बात सीख चुका था वह यह है —— उधार रुपया लेकर व्यापार करना जैसे गलत अर्थशास्त्र है, वैसे ही उधार रुपयेसे सार्वजनिक सस्था चलाना गलत धर्मशास्त्र है। और जिस सस्थामे अच्छे-से-अच्छे आदमियोको भीख माँगनेके लिए भटकना पडे, उसका नाम उधार व्यापार ही है। तुमने सख्याका हिसाब रखा है, उसके बजाय यह हिसाब क्यो नही रखते कि जितना रुपया आये, उसीके अनुसार विद्यार्थी लिये जाये? मै जो-कुछ लिख रहा हूँ, उसपर अमल करना बहुत ही आसान है। सिर्फ सकल्पकी आवश्यकता है। हर सालका आँकडा तय कर लिया जाये। उसके मुताबिक घर बैठे रुपया आये तो सस्था चलाई जाये। न आये तो बन्द कर दी जाये। तुम्हारी सस्था तो बहुत पुरानी कही जायेगी। उसका पिछला इतिहास उज्ज्वल है। शिक्षक अच्छे हैं। इतना होनेपर भी लोगोमे श्रद्धा पैदा क्यो न हो? अपना सारा साहस ईश्वरको समर्पित करके उसके नामपर सकल्प करो। उसकी मरजी होगी तो वह सस्था चलायेगा। 'हरिने भजता हजी कोईनी लाज जतां नथी जाणी रे।' यह भजन आज शामकी प्रार्थनामे गाया था। एक लडकीको लिखे हुए मेरे पत्रसे उसकी याद आई। तुम लिखते हो कि वल्लभभाई होते या मै होता तो तुम्हे यह परेशानी न होती। परेशानी है कहाँ? और है तो उसे मिटानेवाले हम कौन? अधा अधेको क्या रास्ता बताये? लेकिन परेशानी मानते हो तो वह भी उसीकी गोदमे डाल दो। इन सब बातोको पाडित्य समझकर फेक न देना। परन्तु इनपर अमल करना।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ ७८।

१. पत्र-लेखकने गिजुभाई बधेकाके बच्चेको इलाजके लिए पंचगनी ले जानेका उल्लेख किया था।

२. पत्र-लेखकने भावनगरमें चलाई जानेवाली शिक्षा-संस्था दक्षिणामूर्तिकी आर्थिक समस्याका उल्लेख किया था।

३३७. पत्र : वनमाला न० परीखको

७ अप्रैल, १९३२

चि० वनमाला,

अच्छे विचार करे तो मन अच्छा रखा जा सकता है। अच्छे विचार अच्छे काम करनेसे आते हैं। पशु मर रहा है, इसका अन्दाज लग ही जाता है, ऐसा नही है। इसका अनुमान प्राय: अनुभवी व्यक्तिको ही हो पाता है।

मैं भी भाईके बारेमें खबर पानेकी कोशिश कर रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

भूलसे तेरे ही पत्रपर लिख दिया। माफ करना। कतरन रखे ले रहा हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७७१)से। सी० डब्ल्यू० २९९३ से भी। सौजन्य : वनमाला म० देसाई।

३३८. पत्र : मीराबहनको

८ अप्रैल, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र[1] मिला। मुझे ऐसा लगता है कि दाये हाथमें अभी तकलीफ रहेगी। यहाँ आनेपर मैं दाये हाथसे काफी लिखने लगा था, किन्तु मुझे जल्दी ही मालूम हो गया था कि उससे कोई लाभ नही। यह चुपचाप आते हुए बुढापेका एक चिह्न हो सकता है। अगर ऐसा है तो वह न दु:खका कारण है और न आश्चर्यका ही। अगर मैंने शरीरको केवल सेवाके साधन और भगवानके मन्दिरके तौरपर इस्तेमाल करना सीखा होता, तो बुढापा एक ऐसे सुन्दर पके हुए फलकी तरह होता, जिसमें उसकी जातिके फलके तमाम गुण पूर्णरूपमें होते। यदि मैं इतनी-सी असमर्थता भुगतकर ही बच जाऊँ तो यह सौभाग्य ही होगा। लेकिन यह भी व्यर्थकी अटकलबाजी है। इन चीजोके बारेमे अटकल लगाना मेरा काम नही है। इन चीजोको ध्यानमें रखकर निश्चित मर्यादाओके भीतर उचित सावधानी रखना काफी है। इसलिए तुम हाथके बारेमें चिन्ता न करना।

१. दि डायरी ऑफ महादेव देसाई, भाग-१ से उद्धृत इस पत्रके उद्धरणोंके लिए देखिए परिशिष्ट ५।

उपवासके दिनके सिवाय मेरा वजन १०६ पौंड बना हुआ है। उपवासके दिन स्वाभाविक रूपसे ही घटकर १०३½ पौंड हो जाता है। २४ घंटोंमें मैं अच्छी सिकी हुई डबलरोटीके ५-६ टुकड़े, ३० खजूर, एक बार कटोरा-भर उबली हुई भाजी, सुबह ४–१५ पर दो चम्मच शहद, चुटकी-भर सोडे और गरम पानीके साथ,[1] और दो बार सोडा और नीबू ले लेता हूँ। लगभग २ औंस बादामकी लुगदी भी लेता हूँ। इतनेसे मुझे सन्तोष मालूम होता है। अगर इससे काम न चला तो फिर दूध लेने लगूँगा। दस्त दिनमें दो-तीन बार बिना किसी दवा या अन्य उपायके साफ हो जाता है। नौ बजेसे पौने चार बजेतक रातमें और दिनके समय २०-२० मिनट करके दो बार सो लेता हूँ। दो दिनमें ३७५ तार कातता हूँ। अभीतक धुनाई शुरू नहीं की है। तुम्हारी भेजी हुई पूनियाँ खतम होती ही नहीं दीखतीं। शेष समय पढ़ने-लिखनेमें लगाता हूँ। अभी तो रस्किनका 'फोर्स क्लेविगेरा' नामक मानवीय भावनासे ओतप्रोत ग्रन्थ पढ़ रहा हूँ। यह आदमी जो कहता है, वह बिलकुल सच्चे दिलसे कहता है। ये पत्र वचन और कर्ममें लेखककी आत्माभिव्यक्तिका उत्तम प्रयत्न है।

मुझे पत्रोंके लिखने और अब लिखानेमें भी बहुत वक्त लगता है। चूँकि मुझे साथी कैदियोंको लिखनेकी इजाजत है, इसलिए पिछली बारसे लिखनेका काम ज्यादा सहज रहता है। इससे मैं खुश हूँ। हर सप्ताह आश्रमको नैतिक समस्याओंपर कुछ-न-कुछ लिखकर भेज देता हूँ। और अब पिछले पाँच दिनसे मैंने आश्रमका इतिहास[2] लिखना शुरू किया है।

मेरे बारेमें तुम्हारे सब सवालोंके जवाब खत्म हुए।

वल्लभभाई और महादेवकी तबीयत बहुत अच्छी है।...[3] इन मामलोंमें हमपर अपनी लगाई हुई पाबन्दियोंके सिवा और कोई पाबन्दी नहीं है।

थोड़े समयतक नमक छोड़ देनेसे कोई हानि नहीं हो सकती। जो परिणाम तुमने अपने बारेमें देखे हैं, वे तो होते ही हैं। कमजोरी आनेकी जो बात तुम देख रही हो, वह थोड़े दिनकी है और किसी-न-किसी रूपमें ताजा नीबू लेनेसे इसे बहुत हदतक दूर किया जा सकता है। मेरे खयालसे तुम जानती हो कि मैं लगातार ७-८ वर्ष तक बिना नमकके रहा हूँ और उसका कोई दुष्परिणाम नजर नहीं आया। इस प्रयोगमें बहुत लोग मेरे साथ शरीक हुए थे। इसलिए तुम नमक छोड़नेका अपना प्रयोग उससे लाभ होनेकी अवधितक चला सकती हो। दूधमें खालिस नमक बहुत होता है। कच्चे दूधमें खारेपनका स्वाद आता है।

१. "ठंडे पानीके साथ" – मीराबहन।

२. इसे गांधीजी ने ५ अप्रैल, १९३२ को गुजरातीमें लिखना शुरू किया था। देखिए "दैनन्दिनी, १९३२"; इसका अंतिम उपलब्ध भाग ११ जुलाई, १९३२ को लिखा गया। इसलिए यह पुस्तक खण्ड ५० में सम्मिलित की गई है।

३. यहाँ जेल-अधिकारियोंने एक वाक्य काट दिया था।

तुम अपने बारेमें जो-कुछ कहती हो, उसे मैं समझता हूँ और उसकी कद्र करता हूँ। मैं तुम्हें आश्वस्त कर दूँ कि जब मैं बाहर जाऊँगा, तुम निश्चय ही मेरे साथ रहोगी और निजी सेवाका अपना पहलेवाला काम सँभालोगी। मैं बिलकुल साफ देखता हूँ कि तुम्हारे पास आत्मविस्तारका केवल यही रास्ता है। मैं पहलेकी तरह तुम्हें किसी भी प्रकार कुंठित करनेका दोषी नही बनूँगा। विगतको सोचते हुए मुझे यही सान्त्वना मिलती है कि मैंने जो-कुछ किया, तुम्हारे प्रति गहरे प्रेम और तुम्हारे भलेके विचारके सिवा अन्य किसी कारणसे नही किया। मैं इस सत्यको एक बार फिर समझ रहा हूँ कि सुराज्य स्वराज्यका स्थान नही ले सकता।[1] एक गुजराती कहावत है कि व्यक्ति जो-कुछ स्वय देखता है, यह शायद उसके घनिष्ठतम मित्रको भी न दिखाई दे, फिर भले ही उसके पास समीक्षणका कोई तीव्र प्रकाश-साधन हो। ये दोनो कहावते चाहे सबपर लागू न होती हो तो भी तुम्हारे मामलेमें निश्चय ही लागू होती है। इसलिए अबसे मेरी तरफसे किसी हस्तक्षेपकी आशका करनेकी तुम्हे जरूरत नही है। फिर तुमसे अधिक स्नेहपूर्ण मेरी सेवा और कौन कर सकता है?

तुम्हारे भेजे हुए भजन महादेवको मिल गये। वे उनपर काम करेंगे।

मैं तुम्हे यह बताना भूल गया कि अब मैंने आकाशके अध्ययनकी आदत डाल ली है। तुम देखती हो कि मेरी लेखनीकी स्याही खतम हो गई है। यह महादेवकी है। और अब सोनेका समय यानी सवा नौसे ज्यादा वक्त हो गया है। लेकिन अपने खयालसे मैंने कोई बात उत्तर दिये बिना नही छोडी है। नरगिससे जालके बारेमें विस्तृत पत्र मिला है। खूब मुक्ति मिली।

हम सबकी तरफसे प्यार।

बापू

[पुनश्च .]

मैं एक दिलचस्प कतरन साथ भेज रहा हूँ। मैं समझता हूँ कि वह इतनी गैर-राजनीतिक है कि रोकी नही जायेगी।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५०६)से, सौजन्य : मीराबहन।

१. यह वाक्य मूल पत्रमें जेल-अधिकारियोंने काट दिया था, यहाँ यह दि डायरी ऑफ महादेव देसाई, भाग–१, पृष्ठ ६३ से लिया गया है।

३३९. पत्र : कुसुम देसाईको

८ अप्रैल, १९३२

चि० कुसुम (वडी),

तेरे पत्र मिलते रहते है। प्यारेलालका पत्र मिला था। मैने जवाव भी दिया था। अव सस्कृत उच्चारण पक्के कर लेना और व्याकरण भी सीख लेना। तकलीकी वात तो है ही। कब्ज रहता है? तेरा स्वास्थ्य सुधरना चाहिए। 'सरस्वतीचन्द्र'[1] का पहला भाग मुझे बहुत पसन्द आया था। परन्तु चारो ही भाग पढ़ डालने चाहिए। 'काव्य-दोहन' के चार भाग है। वे पढ लेने चाहिए। 'करण घेलो'[2] और 'वनराज चावडो' तथा नर्मदाशकर[3] और मणिलाल नभुभाईके[4] कुछ लेख पढ जाने चाहिए। इतना पढ लेनेसे गुजराती भाषाका स्वरूप समझमे आ जायेगा। ये पुस्तके इकट्ठी करके तू ही शायद पहुँचा सकती है।

रैले साइकिलके आनेका मुझे तो पता ही नही था। किग्स्ले हाल[5] पत्र लिखूंगा। रोलाँकी[6] पुस्तके मिल गई है। पढ लूँगा। तारादेवी[7] यही है। उनका मेरे नाम पत्र भी आया है। वे और दूसरी बहने आनन्दमे है। तारादेवीने 'रामायण' माँगी है, सो भेजूँगा। सुशीलाके दो पत्र आये थे। वह पत्र लिखनेका साहस करे तो प्यारेलालकी बहन कैसे कहलाये? लकाशायरवाली पुस्तक [छगनलाल] जोशीके पास गई है। वापस आनेपर पढूँगा और राय दूँगा। इस बार पुस्तकोका ढेर इकट्ठा नही किया। पुस्तके आती तो रहती ही है। उनमे से भेजने लायक नही दिखी। रस्किनके 'फोर्स क्लेवीगेरा' के खण्ड आये है। चाहिए तो वे भेज दूं। प्यारेलालको शायद ही इनमे नई बात मिले। मेरे पास म्यूरियल[8] और अगाथा[9] तथा होरेसके[10] पत्र आते है। मेरा वजन जितना था, उतना ही अर्थात् १०६ पौण्ड बना हुआ है। खानेमे पिसे हुए बादाम, खजूर, सिकी हुई रोटी, नीबू और कोई उबला हुआ साग—एक बार ये चीजे होती है। अभी तो दूधके बिना काम चल रहा है। इस बार कब्ज बिलकुल नही है। नीद वढी है। हाथकी खराबी अभीतक है, यह मै देख

१. गुजरातीके प्रसिद्ध कथा-लेखक गोवर्धन त्रिपाठीका उपन्यास।
२. नर्मदाशकर मेहताका उपन्यास।
३. १८३३-८६; गुजराती कवि, 'कवि नरमद' के नामसे विख्यात।
४. द्विवेदी (१८५८-९८), गुजरातीके एक प्रसिद्ध विद्वान और वेदान्ती।
५. १९३१ में गाधीजी गोलमेज परिषदके लिए इग्लैड गये, उस समय उनका निवास वहाँ था।
६. रोमाँ रोलाँ।
७. प्यारेलाल नैयरकी माँ।
८. म्युरियल लेस्टर।
९. अगाथा हैरिसन।
१०. होरेस एलेक्जेंडर।

रहा हूँ। लेकिन फिलहाल कोई दर्द नही होता जान पड़ता। पढना थोडा होता है। अभी रस्किनका 'फोर्स' चल रहा है। लिखनेमे 'गीता'का जो हिस्सा बाकी था, वह पूरा हो गया। अब आश्रमका इतिहास हाथमें लिया है। महादेवको लिखवाता हूँ। आश्रमके पत्र काफी समय लेते है। बाये हाथसे लिखता हूँ, इसलिए अधिक कातनेमे डेढ-दो घटेतक लग जाते होगे। हाथके कारण अधिक जान-बूझकर नही कातता। दो दिनमे ३७५ तार पूरे करनेका आग्रह रखा है। अभी पीजा नही। मीराकी दी हुई पूनियाँ चल रही है। महादेवने पीजना शुरू किया है।

हरिलाल[1] के बारेमे पूछनेवाला था, इतनेमे तूने ही पूछनेकी हिम्मत कर ली। तूने क्या किया, जहाँ मुझे यह पूछना था, वहाँ तू ही मेरे गले पड रही है। मेरी शर्त बनी हुई है। तू क्यो नही लिख सकती? तू चाहे जैसा लिख, सुधारना और पास करना तो मुझे है न? सकोच छोड़ कर लिखना है। तू प्रयत्न ही नही करती, इसमे एक प्रकारका आलस्य होगा। ऐसा हो तो उसे निकाल दे। तू इतना करे तो प्रस्तावना लिखना मैंने मजूर किया है सो लिखूंगा। अभी प्रकाशित तो नही हो सकती, मगर एक बार लिख ली जाये तो बहुत अच्छा होगा। हो सकता है, बाहर निकलनेके बाद न लिख पाऊँ। मेरा आग्रह सकारण है, यह तो तू समझती है न? तेरे लेखके बिना पत्र-सग्रह सुशोभित ही नही होगा। ये अभी प्रकाशित नही किये जा सकते।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८३४)से।

३४०. पत्र: प्रेमाबहन कंटकको

८ अप्रैल, १९३२

चि० प्रेमा,

धुरन्धर यहाँ है तो बहुत करके कभी हम मिलेगे ही। तू एक पत्थरसे बहुत-से पक्षी मारनेका लोभ रखे, इसके बजाय एक बारमे बहुत-से बेर गिरानेका लोभ क्यो नही रखती? पक्षी मारनेका लोभ तेरे लिए तो त्याज्य होना चाहिए।

खपरैल[2] की चोटसे अच्छी बची। इसका यही अर्थ लगायेंकि तेरे हाथसे अभी बहुत बडी सेवा होनी बाकी है।

बहनोके बारेमे मुसीबतमे पडनेका कोई कारण नही है। बहने तुझसे यह सेवा लेना चाहे और तुझे आत्मविश्वास हो तो करना, वरना यह बात उठी ही नही, ऐसा

१. कुसुम देसाईके पति हरिलाल देसाई, जिनके पत्र-संग्रहके लिए कुसुम देसाईको उनका जीवन वृत्तान्त लिखना था।

२. प्रेमाबहन कटक छज्जेके नीचे सो रही थी। हवाके झोंकेसे एक खपरैल टूटकर उसके बिस्तरपर आ पड़ा था।

समझकर भूल जाना। तुझमे आत्मविश्वास दूसरोको सिखानेके लिए नही, लेकिन अपनी नम्रताके लिए, गलतफहमी न होने देनेके लिए, कठिन प्रसग सामने आनेपर उनसे निबट सकनेके लिए होना चाहिए। कई बार हम मानभग, गलतफहमी, वगैरहके डरसे जिम्मेदारी लेनेमें हिचकिचाते हैं। इस सकोचको तू पार कर सके तो जिम्मेदारी लेना। यह तो तू मानती ही है कि सब बहनें बहुत भली हैं। उन्हे ऐसे व्यक्तिकी मददकी जरूरत है जो उनके विचार लिख सके, दफ्तर सँभाल सके। अपढ माँ मे पढ़ी-लिखी लडकीसे ज्यादा समझ और व्यवहार-बुद्धि हो सकती है। लेकिन उस बुद्धिका उपयोग वह निरक्षरताके कारण नही कर सकती। इस कमीकी पूर्ति वह लडकीके माध्यमसे कर सकती है। यह कमी तू पूरी करे, ऐसी मेरी इच्छा है। गगाबहन थी, तब मण्डल बहुत काम करता था, ऐसा मैं नही मानता। लेकिन किसी-न-किसी बहाने गगाबहन सब बहनोको इकट्ठा कर लेती थी। उन्हे ऐसा लोभ था और उन्होने इसका बीज बोया था। यहाँ भी तो वे वैसा ही कर रही हैं। उस बीजका वृक्ष देखनेकी मै आशा रखता हूँ। सामाजिक काम तो बहनें करती ही हैं, लेकिन वह व्यक्तिगत रूपमे करती हैं। मेरी इच्छा है कि किसी सामाजिक सेवाके लिए बहनें सामूहिक रूपमे जिम्मेदारी ले। ऐसा करनेसे संघ-शक्ति पैदा होती है। ऐसी शक्ति पैदा हो तो फिर व्यक्ति भले ही आते और जाते रहे, सघ चलता ही रहता है। यह शक्ति ईश्वरने केवल मनुष्यको ही दी है। इस देशमे स्त्रियोने यह शक्ति विकसित नही की। इसमें दोष पुरुषोका है। अभी हमे इस विवादमे नही पड़ना है। अगर हम यह माने कि यह शक्ति स्त्रियोमे बढ़नी ही चाहिए तो उसे बढानेके लिए हमे प्रयत्न करना चाहिए। फिर चाहे आरम्भमे इस सघका काम सिर्फ मेरा पत्र प्राप्त करना और उसका उत्तर देना ही हो। धीरे-धीरे (भले बहुत धीरे ही) उसमे वृद्धि की जाये। मेरी बात तू अच्छी तरह समझ गई हो, वह तेरे गले उतरी हो, दूसरी बहनोको भी यह ठीक लगती हो, इसमें रस लेनेके लिए वे तैयार हों, तभी यह चीज हाथमें ली जाये। लेकिन इसमे कठिनाइयाँ दिखाई दे या कोई महत्त्व न दिखाई दे, तो इसे छोड दिया जाये।

मुझे पुस्तकोकी सूची मत भेजना। अप्टन सिक्लेयरकी पुस्तके मैंने मँगाई हैं। उनके सिवा दूसरी कोई पुस्तके नही मँगानी हैं।

एक धर्मके लोगोको दूसरे धर्ममे लेनेकी प्रथा मुझे तो बिलकुल पसन्द नही है। दो अलग धर्मोंके स्त्री-पुरुषोमे विवाह होना असम्भव या अयोग्य ही है, ऐसा मैं नही मानता।

हिन्दू-धर्मके मूल तत्त्व तो वे हैं ही; किन्तु मुझे गोरक्षा और वर्णाश्रम उसके विशिष्ट तत्त्व भी लगते हैं। किसी भी राष्ट्रको उन्नतिके रास्तेपर जाना हो तो उसे सत्य और अहिंसाका आश्रय लेना चाहिए।

मुझे लगता है कि तेरे सब प्रश्नोके उत्तर इसमे पूरे आ जाते हैं।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च.]

विद्यापीठकी तरफसे प्रकाशित गुजराती जोडणीकोशके द्वितीय सस्करणकी मेरी प्रति वहाँ होनी चाहिए। वह भेज देना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२८०) से। सी० डब्ल्यू० ६७२८ से भी, सौजन्य : प्रेमाबहन कटक।

३४१. पत्र : सन्तराम आश्रमके सचिवको

८ अप्रैल, १९३२

आपका पत्र और गुजराती 'गीता' और 'रामायण' मिले। दोनोके लिए महाराजश्रीका आभार मानता हूँ। इस बारेमे मतभेद हो ही नही सकता कि ब्राह्मण पण्डित सन्त पुरुष हो और लोगोमे उपनिषदादिका प्रचार करे तो अच्छा है। विद्वत्ता और साधुताका मेल आजकल कम पाया जाता है। इसलिए ऐसी प्रवृत्तियोके बारेमे मनमे उदासीनता तो जरूर रहती है।

'गीता' और 'रामायण' के पूरे पारायणके बारेमे [भी लोगोके मनमे] ऊपर-जैसी या उससे भी कुछ ज्यादा उदासीनता रहती है। अर्थ समझे बिना या अर्थ समझते हुए भी केवल उच्चारणके लिए — यह मानकर कि मानो उच्चारणमे ही पुण्य हो — या आडम्बर या कीर्तिकी खातिर जो लोग पाठ करते हैं, उनके पारायणका मेरी नजरमे कोई मूल्य नही है। इतना ही नही, बल्कि मैं यह मानता हूँ कि इससे नुकसान होता है। अगर ऊपरके दोषोको दूर रखनेके उपाय महाराज खोज सके हो और उसके अनुसार पारायण करा रहे हो, तो इसमे शक नही कि उससे भला होगा।

मैं कैदी हूँ, इस बातको ध्यानमे रखकर मेरे ऐसे पत्रोका सार्वजनिक उपयोग नही होना चाहिए। इसलिए इस बारेमे पूरी सावधानी रखियेगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ ८१–२।

३४२. पत्र : हनुमानप्रसाद पोद्दारको

८ अप्रैल, १९३२

१-२ ईश्वरको मानना चाहिए, क्योंकि हम अपनेको मानते हैं। जीवकी हस्ती है तो जीवमात्रका समुदाय ईश्वर है, और यही मेरी दृष्टिमें प्रबल प्रमाण है।

३. ईश्वरको नहीं माननेसे सबसे बड़ी हानि वही है, जो हानि अपनेको न माननेसे हो सकती है। अर्थात्, ईश्वरको न मानना आत्महत्याके समान है। बात यह है कि ईश्वरको मानना एक वस्तु है और ईश्वरको हृदयगत करना और उसके अनुकूल आचार रखना बिलकुल दूसरी वस्तु है। सचमुच इस जगतमें नास्तिक कोई है ही नहीं। नास्तिकता आडम्बर मात्र है।

४ ईश्वरका साक्षात्कार राग-द्वेषादिसे सर्वथा मुक्त होनेसे ही हो सकता है, अन्यथा कभी नहीं। जो मनुष्य ऐसा कहता है कि मुझे साक्षात्कार हुआ है, उसे साक्षात्कार नहीं हुआ, ऐसा मेरा मत है। यह वस्तु अनुभवगम्य है, परन्तु अनिर्वचनीय है। इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं है।

५. ईश्वरमें विश्वास रखनेसे ही मैं जिन्दा रह सकता हूँ। ईश्वरकी मेरी व्याख्या याद रखनी चाहिए। मेरे समक्ष सत्यसे भिन्न कोई ईश्वर नहीं है। सत्य ही ईश्वर है।

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ ८२।

३४३. एक पत्र

९ अप्रैल, १९३२

चि०

देव अर्थात् भला करनेवाले। दैत्य अर्थात् बुरा करनेवाले। भले और बुरेके बीच मेल कैसे हो सकता है? इसलिए इसमें पक्षपातकी कोई बात नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०१९)से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

३४४. एक पत्र

९ अप्रैल, १९३२

चि०,

मीराबाईके सम्बन्धमे हम जिन चमत्कारोकी बात सुनते हैं, उनपर ध्यान देनेकी जरूरत नही है। मैं यह भी नही मानता कि ये चमत्कार इसी तरह घटित हुए होगे। हमे जिस चीजको ध्यानमे रखना है, वह तो मीराबाईकी पवित्रता है।...[1]

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०२५) से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

३४५. पत्र: मंगला शं० पटेलको

९ अप्रैल, १९३२

चि० मगला,

शत्रुको हम मित्र-जैसा माने और वैसा ही व्यवहार करे तो अन्तमें वह हमारे ऊपर विश्वास करने लगेगा।

बीमार आदमीको अनेक तरहकी अपथ्य वस्तुओको खानेकी इच्छा होती है। इस इच्छाको यदि वह रोक सके तो बीमारी जल्दी जा सकती है। तेरा वजन धीरे-धीरे बढ़ेगा।

'गीता' समझनेके लिए यदि तू, जितना चाहिए, उतना ध्यान देगी तो समझने लगेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०८२)से। सी० डब्ल्यू० ४६ से भी; सौजन्य: मंगलाबहन ब० देसाई।

१. शेष पत्रांश उपलब्ध नहीं है।

३४६. पत्र : महेन्द्र वा० देसाईको

९ अप्रैल, १९३२

चि० मनु,

तेरे पत्रकी भाषा ठीक है। लिखावटमे सुधारकी जरूरत है। बीमार क्यो पड गया था? अब तो बिलकुल अच्छा हो गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४२६) से; सौजन्य: वालजी गोविन्दजी देसाई।

३४७. पत्र : निर्मला ह० देसाईको[1]

९ अप्रैल, १९३२

चि०,

तुलसीको लोग इसलिए पूजते है कि तुलसीमे कुछ गुण है। क्रोध तो क्रोध पर ही करना चाहिए। विपक्षी मूर्खता करे इसलिए क्या हम भी वैसा ही करे? बड़े-बूढे क्रोध करते है तब वे भी भूल करते है। वे क्रोध करे तो भी हम जिस बातको सही [मानते है][2], उसीको पकड़े रहे। बडे भाई[3] का पत्र तुझे मिल गया न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४७०) से। सी० डब्ल्यू० ९०१८ से भी; सौजन्य: नारणदास गाधी।

१. एस० एन० रजिस्टरमें यह पत्र निर्मला देसाईको लिखा बताया गया है।
२. सी० डब्ल्यू० की प्रतिके अनुसार।
३. महादेव देसाई।

३४८. पत्र : रावजीभाई मणिभाई पटेलको

९ अप्रैल, १९३२

चि० रावजीभाई,

यह तो केवल तुम्हारे पत्रकी पहुँचकी सूचना देनेके लिए है। जो भी व्यक्ति अपनी शक्तिसे ज्यादा कुछ करनेकी कोशिश करता है, वह मूढ है। जो अपनी शक्तिके अनुसार अपने कर्त्तव्यका पालन करता है, वह धन्य है। सामान्यत कर्त्तव्यपरायणता धन्यवादका कारण नही होनी चाहिए। किन्तु जहाँ अधिकाश लोग दिवाला निकाल रहे हो, वहाँ जो थोडे लोग अपना ऋण चुकाते हैं, वे धन्यवादके पात्र हो जाते हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल(जी० एन० ८९९५) से। सी० डब्ल्यू० ९०१४ से भी; सौजन्य : नारणदास गाधी।

३४९. पत्र : विद्या रा० पटेलको

९ अप्रैल, १९३२

चि० विद्या,

भगवान न कहीसे आते हैं और न कही जाते हैं। भगवान तो सदा है और रहेगे। अवकाशके समय पत्ते खेलनेमे मुझे कोई दोष तो नही दिखता, पर मैं उसे प्रोत्साहन नही दूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४२४)से, सौजन्य : नारणदास गांधी।

३५०. पत्र : जमनालाल बजाजको

९ अप्रैल, १९३२

चि० जमनालाल,

तुम्हारे पत्रकी हम सब राह देख रहे थे। पत्र सम्पूर्ण है। वहाँकी खुराक माफिक आ गई है, यह बडे सन्तोषकी बात है। जानकीबहन और कमलनयनके सम्बन्धमे मुझे समाचार मिल चुके थे। विनोबा यदि व्रत लेकर न बैठ गये हो तो मै समझता हूँ कि उन्हे दूध लेनेकी जरूरत है। वहाँ भी उनका काम तो सख्त मालूम होता है। उसको करते रहनेके लिए दूधकी जरूरत है, ऐसा मेरा खयाल है। मेरा दृढ विश्वास है कि वनस्पतियोमे ऐसी कोई वनस्पति जरूर है जो दूधकी आवश्यकताको पूरा करती है और दूधके दोषोसे मुक्त है, परन्तु ऐसी वनस्पतिकी खोज करनेकी योग्यता जिन वैद्योमे है, उन्हे इसका खयाल नही है। यह हम-जैसोकी शक्तिके बाहर की बात है; या फिर इसकी खोज करे तो हमे एक ही वस्तुके पीछे पड जाना चाहिए। परन्तु मेरी निश्चित राय है कि हम ऐसा नही कर सकते। अत: जो धर्म सहज प्राप्त हो गया है, उसीको पकड रखना हमारा कर्त्तव्य है। मुझे यही खयाल रहता है कि विनोबाको अपना वजन इतना ज्यादा कम न होने देना चाहिए।

वहाँ तुम्हारे आसपास अच्छा समाज जम गया मालूम होता है। तुम्हारे 'सी' श्रेणीकी मुझे ईर्ष्या होती है। जब तुमको वह वर्ग मिला तो मुझे बहुत खुशी हुई थी। तुम्हारा स्वास्थ्य उससे कुछ खराब होगा, ऐसी शका मुझे कभी नही हुई। खुद अपनी और अपने पडोसियोकी तबीयतकी देखभाल करनेकी तुम्हारी क्षमताके विषयमे मेरे मनमे कभी शका आई ही नही; और जो अनुभव तुमको मिल रहे है, वे दूसरी तरह तुम कभी प्राप्त नही कर सकते थे।

प्यारेलालसे कहो कि कुसुमके द्वारा लिखे उसके पत्रका पूरा जवाब[1] मै दे चुका हूँ। इसलिए यहाँ कुछ नही लिखाता। वह जवाब कदाचित् इससे पहले उसे मिल जायेगा। न मिले तो मुझे खबर कर देना। हम तीनो मजेमे है। अभी दो महीने से मै रोटी, बादाम, खजूर, एक साग और नीबू लेता हूँ। उससे अच्छा रहता है। एनिमाकी बिलकुल जरूरत नही रहती। 'आश्रमका इतिहास' लिख रहा हूँ। बहुत-सा समय पत्र लिखनेमे जाता है। इस छोटे-से मण्डलमे तुम्हारे सम्बन्धमे तो दिनमे कितनी ही बार बाते होती है। सबको हम सबके यथायोग्य कहना। जब-जब लिख सको, तब-तब लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २८९७) से।

१. देखिए "पत्र: कुसुम देसाईको", ८-४-१९३२।

३५१. पत्र : शारदा चि० शाहको

९ अप्रैल, १९३२

चि० शारदा,

सत्यसे राज्य भी मिल सकता है, इसका अर्थ यह है कि सत्यके लिए कुछ भी असाध्य नही। लेकिन इसका अर्थ यह नही है कि सत्य-भाषण करनेवाला कोई व्यक्ति राज्य प्राप्त करनेके लिए निकल पडे। यह तो ईश्वरकी परीक्षा करनेके समान हुआ। सत्यका पुजारी राज्यका लोभ नही रखता। सत्यका आचरण करना ही उसका राज्य है। मुझे तो सव भाषाएँ अच्छी लगती है। यज्ञके अर्थका विस्तार तो हमेशासे ही होता रहा है। गुजराती स्त्रियोकी पोशाक अच्छी कही जा सकती है। उसमे दो परिवर्तन होने चाहिए। नीचे चड्डी भी पहने और चोलीके वदले कुर्ता।

वापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९४९) से; सौजन्य: शारदावहन गो० चोखा-वाला।

३५२. एक पत्र

१० अप्रैल, १९३२

चि०,

यह तो जैसा व्रत लिया हो, उसपर निर्भर है। कोई अमुक घटे कातनेका व्रत लेता है, कोई अमुक तार कातनेका और कोई दोनोका — यानी, कम-से-कम इतने घटे और इतने तार कातनेका। जो भी व्रत लिया हो, उसका मन, वचन और कर्मसे पूरा पालन करना चाहिए।

मनुष्यकी वृत्तियोका सूत्र-सचालन ईश्वर भी करता है और शैतान भी। हम इन दोनोके वीचमें झूलते रहते है, इसीलिए वृत्तियोमें फेरफार होता रहता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०१७) से; सौजन्य: नारणदास गाधी।

३५३. पत्र: चिमनलाल एन० शाहको

१० अप्रैल, १९३२

चि० चिमनलाल,

तुम्हें प्रतिदिन सोडा और नमक डालकर गरम पानी नाकसे चढाना चाहिए। ऐसा करनेसे नाक रुँधेगी नही। नाकसे रोज पानी पीनेकी यह आदत डालने लायक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० जी० १३) से।

३५४. पत्र: नारायण मोरेश्वर खरेको

१० अप्रैल, १९३२

चि० पण्डितजी,

विद्यापीठके पुस्तकालयके बारेमें तुमने जो लिखा है, वह ठीक है।

वाणी ऐसी होनी चाहिए जिससे किसीको उद्वेग न हो, इसका यह अर्थ नही है कि दूसरे आदमीको उद्वेग होगा ही नही। बोलनेवालेका उद्देश्य उद्वेग करनेका न रहा हो फिर भी यह सभव है कि सुननेवालेको उसकी बातसे उद्वेग हो। पिता अपने लडकेसे भाँग न पीनेको कहे तो इसमें उसका उद्देश्य उद्वेग करनेका नही होता, किन्तु लड़केको भाँग पीनेकी आदतके कारण उद्वेगका अनुभव होता है। तथापि, यह तो मानना ही होगा कि पिताका धर्म भाँगका निषेध करनेका था।

'नारायणराव'[1] वाली बात महादेवकी समझमे नही आई। 'हसूद' नाम कहाँसे आया है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २२५) से, सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

१. देखिए "पत्र: नारायण देसाईको", ११-३-१९३२।

३५५. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

१० अप्रैल, १९३२

प्रिय बालको और बालिकाओ,

राष्ट्रीय सप्ताह[1] के कार्यक्रमका थोडा विवरण मुझे अब [तुम्हारे] अगले पत्रमें मिलेगा। हम तो यहाँ उपवास और थोडा अधिक कातनेके सिवा कुछ नही कर सके। तुम्हारे शब्दोके हिज्जोमे गलतियाँ रह जाती है, यह नही होना चाहिए। मेरी कमीसे तुम्हे सबक लेना चाहिए। वह 'जोडनीकोश' तुम लोगोके देखते रहनेके लिए जल्दी तैयार करवाया गया था।

प्रार्थनामे सचमुच सावधान रहते हो तो कहा जायेगा तुम एक कदम आगे बढे।

हमे पाप करनेके लिए कौन प्रेरित करता है, इसका उत्तर तो 'गीतामाता' ने दिया ही है। काम और क्रोध हमसे पाप करवाते है। इसे तुम सब अपने पिछले जीवनका स्मरण करके देख सकोगे। कथनकी सगति मिलाकर जाँचना। विद्यार्थी मण्डल आश्रम-व्यवस्थाके अन्तर्गत होनेके कारण अशत परतन्त्र है। सभी मण्डल अशत. परतन्त्र होते ही है। अपने निर्धारित क्षेत्रमे विद्यार्थी मण्डल स्वतन्त्र है।

विद्यार्थी-जीवनमे किसी उद्योगके बारेमे कहूँ तो कह सकता हूँ कि जिल्दसाजी और बढईगिरी मुझे पसन्द थे। चरखेसे ही सम्बन्धित इतने अधिक उद्योग है कि उनके बाद फिर दूसरा कोई काम हाथमे लेनेका सवाल नही रहता। सम्पूर्ण चरखा-शास्त्र जाननेके लिए इतने सब उद्योगोका थोडा-बहुत ज्ञान होना चाहिए· खेती, रसायन, रगरेजी, चित्रकला, बढईगिरी, लुहारी, बुनाई, सुइयोसे बुनना, सीना, ओटाई, पिंजाई, धोबीका काम, फिर विभिन्न देशोके उद्योगोका इतिहास, खुदाई, अकगणित, रेखागणित, आदि। तुम खुद सोचकर देखना कि ऊपरकी बातोकी सामान्य जानकारी चरखा-शास्त्रके लिए आवश्यक है या नही। मैंने तो जो याद आ गये, उन कलाओ और उद्योगोके नाम लिख दिये। साथ बैठकर विचार करोगे तो तुम और भी सम्बन्धित उद्योगोके नाम सोच सकोगे। कुछ नये सूझे तो मुझे लिखना। आशा है इस सूचीको तो ध्यानमे रखोगे ही।

हम जिनको पूजते है वे कृष्ण, भूलके पुतले नही, पूर्णावतार है और इसलिए कोई ऐतिहासिक कृष्ण न होकर वे योगेश्वर कृष्ण थे, जिन्होने अर्जुनको गीतामृत पान कराया।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ९०२० से भी; सौजन्य: नारणदास गाधी।

१. सन् १९१९ में सत्याग्रह-आन्दोलनके शुरू होनेपर यह ६ से १३ अप्रैलतक प्रति वर्ष मनाया जाता था।

३५६. पत्र : मनु गांधीको

१० अप्रैल, १९३२

चि० मनुडी,

तूने पत्र लिखकर अच्छा किया है। तू हरिलालका डर छोड दे और उसे भूल जा। बली बहादुर है। उसने जो तमाचा मारा[1], उसमे हिंसा नही थी, उसका सरस प्रेम ही था।

मैंने पिछले सप्ताह जो पत्र[2] लिखा था, वह मिल गया होगा। उसमे मैंने सभी कुछ लिखा था इसलिए आज ज्यादा नही लिख रहा हूँ। अब तेरा वजन कितना है? बा को पत्र न लिखा हो तो अब लिख देना। उन्हे तेरे पत्रकी प्रतीक्षा जरूर होगी।

क्या रोज प्रार्थना करती है? भजन गाती है? न करती हो तो अब करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५१२) से; सौजन्य . मनुबहन मशरूवाला।

३५७. पत्र : विमलचन्द्र वा० देसाईको

१० अप्रैल, १९३२

चि० नानु,

तेरा पत्र सुन्दर माना जा सकता है। किन्तु तुझे अक ऐसे लिखने चाहिए मानो छपे हुए हो। बालपोथी पढना ही चाहता हो तो प्रेमाबहन पढा देगी। जो-कुछ भी करे, उसे सुन्दरतासे करनेकी आदत डाल ले।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५७५५) से; सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई।

१. हरिलालको; देखिए महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ ९१।
२. देखिए "पत्र : मनु गांधीको", ४-४-१९३२।

३५८. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

१० अप्रैल, १९३२

चि० परसराम,

मीराबहनकी दी हुई पूनियाँ चल रही हैं; फिर पाँच तारीखसे महादेवने पीजना शुरू कर दिया है। इसलिए उसमें से भी कुछ हिस्सा मिल जाता है। पिछली बार जेल गया था, तभीसे मालिश कराना छोड़ दिया है। किन्तु महादेव तलवोंपर घी मल देता है।

शिक्षकोंके विषयमें लिख सका तो लिख दूँगा। बालकोंकी चोरी आदि करनेकी आदत प्रेमसे छुड़ा सकते है, भय दिखाकर नही। धमकानेका ज्यादा असर नही होता।

खुशामद और शुद्ध सेवामें उतना अन्तर है जो झूठ और सचमें है।

दूसरी त्याज्य बातोंमे लोकनिन्दाका भय भी आ जाता है। हमारे मनमें लोक-निन्दाका डर नही होना चाहिए परन्तु हम उसकी अवगणना भी न करें।

नीति-व्यवहार निरपेक्ष है और सापेक्ष भी।

रसायनशास्त्रसे हानि तो नही होती पर उसके दुरुपयोगसे हो सकती है। और उसका दुरुपयोग खूब हो रहा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४९३) से। सी० डब्ल्यू० ४९७० से भी; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा।

३५९, पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

१० अप्रैल, १९३२

चि० ब्रजकिसन,

तुम्हारा खत मुझको मिल गया। तुमने सब हाल विस्तारसे दिये हैं यह अच्छा किया। और डाक्टर [अंसारी][1] साहेब वगैरह तुम्हारे साथी हैं उसे मैं तुम्हारा सौभाग्य समजता हूँ। सबको हम तीनोंके बहुत सलाम और वं० मा० कहो। डाक्टर साहेबके दांत अब बन गये होंगे। तुम्हारा ३ तारीखका पत्र मुझे नही मिला।

३३ वे वर्षमे प्रवेश करनेके लिये आशीर्वाद है ही। एक तीहाइ आयु खत्म हुआ। उम्मीद तो रखें कि दो तीहाइ पूरा पूरा बाकी रहे और उसमें सेवाके सब

१. ब्रजकृष्ण चाँदीवाला इन दिनों डॉ० अन्सारीके साथ दिल्ली जेलमें बन्द थे। ११ अप्रैलको उन्हें मुल्तान-जेल भेज दिया गया था।

साधन तुमको मिलते रहे। तुम्हारी भावना उत्तम प्रकारकी है इसलिये मेरा विश्वास है कि दृढता इ० गुण धीरे धीरे तुममे आ जायेगे।

मुझको खत लिखते रहो। देवदासके बारेमे खबर मिलते रहते है। कृष्ण नायर कुछ खबर आजकल कुछ नही है। मेरा स्वास्थ्य बहुत अच्छा रहता है। वैसे ही सरदार वल्लभभाई और महादेवका। दो महिनेसे मैंने दूध छोडा है और उसके बदलेमे बादाम लेता हू। और दूध छोडा उस वख्तसे रोटी और एक भाजी और लीबु लेता हूं। और अब तक तो अच्छा रहा है। वजन जो यहा आनेपर था वही है यानी १०६ रतल।

गीता शब्दानुक्रम तो पिछली साल ही खत्म किया था। इस समय आश्रमका इतिहास लिख रहा हू। थोडा पढनेका होता है और कातनेका तो है हि।

बापूना आशीर्वाद

जी० एन० २३९१ से।

३६०. तार : कमला नेहरूको

११ अप्रैल, १९३२

आनन्द भवन
इलाहाबाद

यह जानकर कि आम सभामें[1] माँको चोट आ गई और रणजीत[2] बुखार मे पडा है, खेद हुआ। आशा है चिन्ता योग्य नही है। पूरा ब्यौरा तारसे भेजो।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्सस्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेन्ट, स्पेशल ब्राच, फाइल स० ८०० (४०) (३), भाग १, पृष्ठ १२७। बॉम्बे क्रॉनिकल, १८-४-१९३२ से भी।

१. इलाहाबादमें राष्ट्रीय सप्ताह (६-१३ अप्रैल) के उत्सवके दौरान स्वरूपरानी नेहरू एक जलूसका नेतृत्व कर रही थीं; पुलिसके लाठीचार्ज करनेपर उनके सिरपर चोट आई थी।

२. रणजीत एस० पण्डित।

३६१. आकाश-दर्शन[1]–१

सत्यके पुजारीका रस अनन्त होता है। सत्यनारायणकी झाँकीके लिए वह अपने आपको कभी बूढ़ा नही मानता। जो हर काम सत्यरूप ईश्वर के ही प्रीत्यर्थ करता है, जो सर्वत्र सत्यको ही देखता है, उसके लिए बुढापा विघ्नरूप नही होता। सत्यार्थी अपने ध्येयको ढूँढनेके लिए अमर है, अजर है।

यह सुन्दर स्थिति मै तो बरसोसे भोग रहा हूँ। जिस ज्ञानसे जान पडे कि मै सत्यदेवके अधिक पास पहुँच रहा हूँ, उसके पीछे जानेमे बुढापा मुझे बाधक नही हुआ। इसकी ताजा मिसाल मेरे लिए आकाश-दर्शन है। आकाशका सामान्य ज्ञान प्राप्त करनेकी इच्छा तो अन्तरमे अनेक बार उपजी, पर मैने यह मान लिया था कि मेरे और काम मुझे इस ओर लगनेकी इजाजत न देगे। यह खयाल गलत भले ही हो, पर जबतक मेरा मन अपनी भूल न देख ले, तबतक तो वह मेरे लिए रुकावट बनेगी ही। सन् १९२२ के कारावासमे भाई शकरलालको प्रेरणा देनेवाला बहुत करके मै ही था। उस विषयकी पुस्तके मँगाई गईं। भाई शकरलालने तो इतनी जानकारी प्राप्त कर ली जितनेसे उन्हे सन्तोष हो जाये। मुझे फुरसत न मिली।

सन् १९३०–३१मे काकासाहबका सत्सग मिला। उन्हे इस विषयका अच्छा ज्ञान है। पर मैने उनसे उसे न पाया। इसलिए कि उस वक्त मुझे सच्ची जिज्ञासा न थी। १९३१ मे कारावासके आखिरी महीनेमे एकाएक शौक जगा। बाह्य दृष्टिसे जहाँ सहज ही ईश्वर रहता हो, उसका निरीक्षण मै क्यो न करूँ? आँखे पशुकी तरह महज देखा करे, पर जिसे देखे, वह विशाल दृश्य ज्ञानततुतक न पहुँचे, यह कैसी दयनीय बात है? ईश्वरकी महान लीलाके निरखनेका यह सुयोग कैसे जाने दिया जाता? यो आकाशको पहचान लेनेकी जो प्यास जगी, उसे अब बुझा रहा हूँ और यहाँतक आया हूँ कि आश्रमवासियोको अपने मनमे उठनेवाली तरगोमे साझीदार बनाये बिना अब रहा नही जाता।

हमें बचपनसे यह सिखाया गया है कि हमारा शरीर पृथ्वी, जल, आकाश, तेज और वायु नामके पचमहाभूतका बना हुआ है। इन सभीके विषयमे हमे थोडा-बहुत ज्ञान होना ही चाहिए, फिर भी इन तत्त्वोके विषयमें हमे बहुत थोड़ी जानकारी है। इस समय तो हमे आकाशके विषयमे ही विचार करना है।

आकाशके मानी है अवकाश — खाली जगह। हमारे शरीरमे अवकाश न हो तो हम क्षण-भर भी न जी सके। जो बात शरीरके विषयमें है, वही जगतके विषयमे भी समझनी चाहिए। पृथ्वी अनन्त आकाशसे घिरी हुई है, हम अपने चारो ओर जो आसमानी रगकी चीज देखते है, वह आकाश है। पृथ्वीके छोर सिरे है। वह ठोस गोला है। उसकी धुरी ७,९०० मील लम्बी है; पर आकाश पोला है। उसकी

१. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", ११-४-३२ के साथ भेजा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

धुरी मानें तो उसका कोई ओर-छोर न होगा। इस अनन्त आकाशमें पृथ्वी एक रज-कणके समान है और उस रज-कणपर हम तो रज-कणके भी ऐसे तुच्छ रज-कण हैं कि उसकी कोई गिनती ही नहीं हो सकती। इस प्रकार शरीररूपसे हम शून्य हैं, यह कहनेमें तनिक भी अतिशयोक्ति या अल्पोक्ति नहीं। हमारे शरीरके साथ तुलना करते हुए चीटीका शरीर जितना तुच्छ है, पृथ्वीके साथ तुलना करनेमें हमारा शरीर उससे हजारों-गुना तुच्छ है, तब उसका मोह क्यों हो? वह छूट जाये तो शोक क्यों करें?

पर इतना तुच्छ होते हुए भी इस शरीरकी भारी कीमत है, क्योंकि वह आत्माका और हम समझें तो परमात्माका — सत्यनारायणका — निवास-स्थान है।

यह विचार अगर हमारे दिलमें बसे तो हम शरीरको विकारका भाजन बनाना भूल जायें। और अगर हम आकाशके साथ ओतप्रोत हो जायें और उसकी महिमा तथा अपनी अधिकाधिक तुच्छताको समझ लें तो हमारा सारा घमण्ड चूर हो जाये। आकाशमें जिन असंख्य दिव्य गुणोंके दर्शन होते हैं, वे न हों तो हम भी न हों। खगोलवेत्ताओंने बहुत खोज की है, फिर भी हमारा आकाशविषयक ज्ञान नहींके बराबर है। जितना है, वह हमें स्पष्ट रीतिसे बताता है कि आकाशमें सूर्यनारायण एक दिनके लिए भी अतन्द्रित तपश्चर्या बन्द कर दें तो हमारा नाश हो जाये। वैसे ही, चन्द्र अपनी शीत किरणें लौटा ले तो भी हमारा यही हाल होगा और अनुमानसे हम कह सकते हैं कि रात्रिके आकाशमें जो असंख्य नारायण हमें दिखाई देते हैं उन सबका इस जगतको बनाए रखनेमें स्थान है। इस प्रकार इस विश्वमें सम्पूर्ण प्राणियोंके साथ, सम्पूर्ण दृश्योंके साथ हमारा बहुत घना सम्बन्ध है और हम एक-दूसरेके सहारे टिक रहे हैं। अतः हमें अपने आश्रयदाता आकाशमें विचरनेवाले दिव्य गणोंका थोड़ा परिचय कर ही लेना चाहिए।

इस परिचयका एक विशेष कारण भी है। हमारे यहाँ कहावत है — "दूरके ढोल सुहावने।" इसमें बहुत सचाई है। जो सूर्य हमसे इतनी दूर रहकर हमारा रक्षण करता है, उसी सूर्यके पास जाकर हम बैठें तो उसी क्षण भस्म हो जायें। यही बात आकाशमें बसनेवाले दूसरे गणोंकी भी है। अपने पास रहनेवाली अनेक वस्तुओंके गुण-दोष हम जानते हैं। इससे कभी-कभी हमें उनसे विरक्ति होती है, दोषोंके स्पर्शसे हम दूषित भी होते हैं। आकाशके देवगणके हम गुण ही जानते हैं, उनको निहारते हम थकते ही नहीं, उनका परिचय हमारे लिए हानिकर हो ही नहीं सकता और इन देवोंका ध्यान धरते हुए हम अपनी कल्पना-शक्तिको उदात्त विचारोंके साथ जितनी दूर ले जाना हो, ले जा सकते हैं।

इसमें तो शंका ही नहीं कि आकाशके और अपने बीच हम जितना पर्दा खड़ा करते हैं, उतने ही अंशमें अपनी देह, मन और आत्माको हानि पहुँचाते हैं। हम स्वाभाविक रीतिसे रहते हों तो चौबीसों घंटे आसमानके नीचे ही रहें। यह न हो सके तो जितने समय रह सकते हों, उतने समय रहें। आकाश-दर्शन अर्थात् तारा-दर्शन तो रातमें ही हो सकता है और सबसे अच्छा तो सोते समय हो सकता है। अतः जो इस दर्शनका पूरा लाभ उठाना चाहे उसे तो सीधे आकाशके नीचे

ही सोना चाहिए। आसपास ऊँचे मकान या पेड़ हो तो वे इस दर्शनमे विघ्न डालते है।

बच्चोको और बडोको भी नाटक और उनमे दिखाये जानेवाले दृश्य बहुत रुचते है, पर जिस नाटककी योजना प्रकृतिने हमारे लिए आकाशमे की है, उसको मनुष्य-कृत एक भी नाटक नही पा सकता। फिर नाट्यशालामे आँखे बिगडती है, फेफडोमें गन्दी हवा जाती है, और आचरणके बिगडनेका भी बहुत डर रहता है। इस प्राकृतिक नाटकमें तो लाभ-ही-लाभ है। आकाशको निहारनेसे आँखोको शान्ति मिलती है। आकाशके दर्शनके लिए बाहर रहना ही होगा, इसलिए फेफडोको शुद्ध हवा मिलेगी। आकाशको निहारनेसे किसीके आचरणका बिगडना आजतक नही सुना गया। ज्यो-ज्यो इस ईश्वरीय चमत्कारका ध्यान किया जाता है, त्यो-त्यो आत्माका विकास ही होता है। जिसके मनमे रोज रातको सपनेमे मलिन विचार आते हो, वह बाहर सो कर आकाश-दर्शनमे लीन होनेका यत्न कर देखे। उसे तुरन्त निर्दोष निद्राका आनन्द मिलेगा। आकाशमे अवस्थित दिव्यगण मानो ईश्वरका मूक स्तवन कर रहे हो। हम जब इस महादर्शनमे तन्मय हो जायेगे तब हमारे कान उसको सुनते जान पडेगे। जिसके आँखे हो वह इस नित्य नवीन नृत्यको देखे। जिसके कान हो, वह इन अगणित गन्धर्वोका मूक गान सुने।

आइए, अब हम इनके बारेमे कुछ जाने या मुझे जो बहुत थोडा मिला है, उसमे सब साथियोको साझी बनाऊँ। सच पूछिए तो पृथ्वी आदिके विषयमे थोडा सामान्य ज्ञान प्राप्त कर लेनेके बाद आकाश-दर्शन किया जाये तो ठीक कहा जायेगा। हो सकता है कि मै जो लिखनेवाला हूँ, वह काकासाहबके सम्पर्कमे आये हुए आश्रमके सब बालक जानते हो। ऐसा हो तो अच्छा ही है। मै आश्रमके छोटे-बडे, नये-पुराने सभीके लिए लिख रहा हूँ। उसमे जिसको रस मिले, उसके लिए तो यह विषय बिलकुल ही आसान हो जायेगा।

प्रार्थनाके बाद तुरन्त आकाश-दर्शन करना अच्छा होगा। इसमे एक बार बीस मिनटसे अधिक समय देनेकी जरूरत नही। जो समझेगा, वह इसे प्रार्थनाका अग ही मानेगा। बाहर सोनेवाला अकेले जितनी देर ध्यान करना हो, करे। थोडी ही देरमें उसी ध्यानमे वह सो जायेगा। रातमे नीद टूटे तो फिर थोडी देर दर्शन कर ले। आकाश प्रतिक्षण फिरता दिखाई देता है। इससे क्षण-क्षणमे उसके दर्शन बदला ही करते है।

रात आठ बजे आकाशकी ओर देखिए तो पश्चिममें एक भव्य आकृतिके दर्शन होगे।

यह आकृति पश्चिममे होगी। मै पूर्वमे सिर रखकर सामने देख रहा हूँ। इस तरह देखनेवाला इस आकृतिको भूल ही नही सकता। इन दिनो उजाला पाख है, इसलिए यह तारा-मण्डल और कई दूसरे कुछ धूमिल तारा-मण्डल भी दिखाई देते है। फिर भी यह मण्डल इतना तेजस्वी है कि मुझ-जैसे नौसिखियेको भी इसे ढूंढ लेनेमे कठिनाई नही होती। इसके विषयमे हमारे यहाँ और पश्चिममे लोगोका क्या खयाल है, यह पीछे बताऊँगा। इस वक्त तो इतना ही कहूँगा कि इस मडलके स्थानका वर्णन वेदमे देखकर लोकमान्य तिलक महाराज वेदके कालकी खोज कर सके थे। आश्रमके पुस्तक-सग्रहमे स्वर्गवासी दीक्षितजी की एक पुस्तक है। उसमे तो बहुत बाते बताई गई है। मेरा काम तो रस उत्पन्न कर देना मात्र है, पीछे तो आश्रमवासियोसे ही मै अधिक सीख सकूँगा। मेरे लिए तो ये नक्षत्र ईश्वरके साथ सम्बन्ध जोड़नेके एक साधन हो गये है। आश्रमवासियोके लिए भी हो।

"जैसा बने वैसा तू रह पर जैसे-तैसे हरिको प्राप्त कर।"[1]

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८२१८ से भी; सौजन्य: नारणदास गाधी।

३६२. पत्र : नारणदास गांधीको

११ अप्रैल, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। मिलनेके लिए किसीका न आना मुझे तो पसन्द ही है। उसका मुख्य कारण यही है कि पैसेका व्यय होता है, फिर खर्च करनेवाला कोई भी हो। जहाँ जाये बिना काम चल ही नही सकता, वहाँ तो कहनेकी कोई बात है ही नही। यह विचार जिसके मनमे न बैठे, उसको इसपर अमल नही करना है। बाहर रह जानेवाले लोगोकी स्थिति या उनकी भावनाका माप मै कर ही नहीं सकता।

तिलकम मलाबार तो बिलकुल न जाये। किसी दूसरी जगह भेजना सम्भव हो तभी बात बने। बम्बई भेजना सम्भव हो तो यह भी आजमाने योग्य है। सम्भव है, अहमदाबाद जिन्हे माफिक नही आता, उन्हे बम्बई ठीक बैठ जाये। बम्बईकी आबहवा मलाबारसे मिलती-जुलती तो है ही। हमने देखा, कि वह जमनाको माफिक आई। मणिलालसे (रेवाशकरभाईके) पूछकर देखना या दामोदरसे — शायद तुम्हे मेरा खयाल ठीक लगे। मनु बिलकुल ठीक हो गया होगा। अगर अमतुलको पैसेकी तंगी हो तो मुझे लगता है कि किराये वगैरहका प्रबन्ध हमे करना चाहिए।

विद्यापीठके पुस्तकालयके बारेमे समझ गया। तुम सबको जो योग्य लगे, वही करना।

१. गुजराती सन्तकवि अखा भगत (१६१५-१६७४ ई०) के गीतकी एक पंक्ति।

दूध छूटे अब तो दो महीने हो गये। उसका कोई खराब असर पडा हो तो मेरी दृष्टिमे तो नही आया। कह सकते है, वजन टिका हुआ है। जैसा कि मै पहले लिख चुका हूँ, मेरा यह विचार बनता जा रहा है कि जिसे बहुत दौड-धूप नही करनी पडती और जिसे नियमपूर्वक सोने-बैठनेको मिल सकता है, वह दूधके बिना काम चला सकता है। अर्थात्, दूध राजसी-प्रवृत्तियोके लिए जरूरी है।

मै हरियोमलकी कीमत समझ पाया हूँ। हठ कर-करके वह अपना शरीर निचोड न डाले, यह देखना। कृष्णमय्यादेवीको तो हम लोग समझते ही है, किन्तु यह सोचकर कि ये कुटुम्बीजन है, इन्हे बर्दाश्त किये बिना चारा नही है। कुटुम्बीजनोको जिस हदतक सहते है, इस कुटुम्बको उससे भी जरा ज्यादा सहन करे। जब तुम्हे लगे कि अब हद हो गई है, तब पैसा भेजना बन्द कर देना। मै यहाँसे अधिक और कोई राय नही दे सकता।

'अनासक्तियोग' के मलयालममे अनुवादकी अनुमति दे देना। तुम्हारे पत्रसे ऐसा लगता है कि हरिहर शर्मा बाहर है। मेरा ऐसा खयाल है कि वह राजगोपालाचारीके साथ है।

मथुरादासके बारेमे तुम जो लिखते हो सो ठीक है।

अनन्तपुरसे जेठालालके समाचार मुझे नही मिले। पत्र भी नही मिला। मेरा खयाल है कि हरिलाल यदि अब आश्रममे आये तो शराब छोड देनेकी शर्तपर ही उसे आने दिया जा सकता है। पद्माको अल्मोडामे कबतक रखना है, अब यह बात थोडे विचारके योग्य है। इस विषयमे पद्माकी और सीतला सहायकी राय भी जान लेना।

वहाँ शेर आ जाये तो क्या करना चाहिए, इसकी तो मै काफी चर्चा कर चुका हूँ। उसमे से तुम्हे जो याद रह गया हो और जितना तुम पचा सके हो, उसीके अनुसार करना।

सासवडके भाई विष्णु काणेके बारेमे सवेदनाका पत्र मैने सीधे चिन्तामणि शास्त्रीकी मारफत भेजा है।

पत्रोको सेसर करना। रावजीभाईका पत्र पास न करने लायक था। तुम्हारा बोझ तो बढता है। किन्तु हम जिन बातोको महत्त्व देते है, उनके विचारसे यह आवश्यक है।

बापूके आशीर्वाद

सलग्न .
ह्यूमके नाम एक अग्रेजी-पत्र।
'आकाश-दर्शन' पर लेख।[1]

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

३६३. पत्र : हीरालाल शाहको

१२ अप्रैल, १९३२

भाईश्री हीरालाल,

आपकी पुस्तके और प्रेमपूर्ण पत्र मिला। ये एक हफ्ते देरसे मिले क्योकि डाह्याभाई भूल गये थे। पुस्तके उपयोगी सिद्ध होगी। आपके पत्र और टिप्पणियाँ उनको अधिक उपयोगी बनायेंगी। आप मानते है उतना लोभ मुझे नही है। इतना मामूली ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहता हूँ कि जिससे मै आकाशमे ईश्वरको ज्यादा अच्छी तरह देख सकूँ। आपको जो ठीक लगे, वही खगोल-विद्याकी कोई छोटी-सी पुस्तक भेज देना। आपकी पुस्तके सँभालकर रखूँगा। इस बारेमे आपकी सावधानी मैने देखी है। मै मित्रोसे ऐसी पुस्तके एकाएक नही लिया करता। कही खो जाये या खराब हो जाये, तो!

आपकी मेहनत और सुघडपनकी जितनी तारीफ करूँ, थोडी है। लेकिन मुख्य कुजी[1] मिल जानेका दावा क्या कुछ ज्यादा नही है? वह कुजी क्या है? उसे कुजी और मुख्य कुजी माननेके क्या आपके पास सबल प्रमाण है? विशारदोने उसे स्वीकार किया है? अपनी खोजसे आप किस फलके निकलनेकी आशा दिलाते है? इसमे चरखेवाला मुख्य कुजीके अभावका दोष तो नही है? मै आपसे समझनेके लिए तैयार हूँ। और तटस्थभावसे आपकी दलीलोको तोलूँगा। मगर शोधकको, जो शोभा दे, ऐसी नम्रता अपनेमे पैदा कीजिये। मै जानता हूँ कि वह पैदा करनेसे नही आती। सच्ची खोजोमे वह छुपी ही रहती है। अपने पास हजारो प्रमाण हो तो भी शोधकको अपनी खोजके बारेमे शका रहती ही है। नतीजा यह होता है कि जब वह अपनी खोज दुनियाके सामने रखता है, तब उसे साक्षात्कार हो चुकता है। जगत विस्मित होता है और उसपर विश्वास करता है। उसके वचनमे सत्ता होती है, तेज होता है। ससार उसकी बातको मान लेता है। उसके प्रमाणोसे जगत चकित हो जाता है। क्योकि शोधक तो अपनी खोजकी दसो दिशाओसे जाँच कर चुकता है। ये सब बाते आपकी खोजके बारेमे सच हो, तो मुझे कुछ कहना नही है। ऐसा हो तो आपको सहस्र प्रणाम! परमात्मा करे ऐसा ही हो।

हम सब यानी तीनो आनन्दमे है। शकरसे कहे कि स्वास्थ्य न बिगाडे, खत लिखे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ ९३-४।

१. दि डायरी ऑफ महादेव देसाई, भाग–१ मे महादेव देसाई लिखते है: "हीरालाल शाहने बापूको लिखा था कि उन्होने कुछ विषयोंकी व्याख्या करनेके लिए मुख्य कुजी प्राप्त कर ली है।"

३६४. पत्र : नारणदास गांधीको

१२ अप्रैल, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। गुरुवारको मिलनेवालोंका दल आयेगा, यह मैंने लिख रखा है। अमेरिका तार दे देना कि आश्रमकी नीति [अपने प्रकाशनोंमें] विशेष अधिकारोंका उपभोग करने या दूसरोंको वैसा अधिकार देनेकी नहीं है। इसलिए तफसीलसे पत्र लिखें जिससे निश्चित निर्णय लिया जा सके।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

बेचारी नणि मुक्त हो गई। मैं तो यह खबर पाकर हल्का ही हुआ।

अखण्ड कताईका परिणाम जाननेके लिए आतुर रहूँगा। उसके लिए अलग कार्ड लिख भेजना।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२१९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

३६५. पत्र : शान्तिलाल मेहताको

१२ अप्रैल, १९३२

चि० शान्ति,

तुम्हारा दूसरा पत्र मिल गया था। कुछ भी करो धैर्यपूर्वक करना। अपनी पत्नीको थोड़ा-बहुत पढ़ाओ तो अच्छा है। मणिलालको मई मासमें आ जाना चाहिए। काम समेटनेमें जितना सोचा था, उसे उससे ज्यादा समय लग गया है। सोच-विचार कर खर्च करना। अपनी पत्नीको पढ़ाओ; या उसकी पढ़ाईका बन्दोबस्त करनेके विषयमें जमनादाससे सलाह करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२) से।

३६६. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

१२ अप्रैल, १९३२

भाईश्री खम्भाता,

मैं यह सोच ही रहा था कि तुम्हारा पत्र क्यो नही आया; इतनेमे तुम्हारा पत्र मिल गया। तुम्हारे पत्रसे अनुमान लगा रहा हूँ कि तुम्हारी तबीयत ठीक है। तुम्हारा विलायतसे भेजा हुआ पत्र अन्तमे मेरे पास पहुँच गया था और मेरा तो यही खयाल है कि मैंने उसका जवाब भी दिया था। सिरके नीचे हाथ दबाकर सोनेकी आदत है, यह तो मैं नही जानता। सम्भव है कि किसी समय दबा रह गया होगा। तुम्हारा पत्र मिलनेके बाद मैंने ध्यान तो रखा ही था और इस विषयमे चौकस भी रहता हूँ। इसलिए उसके बाद हाथ उस ढगसे कभी नही रखा, यह मैं कह सकता हूँ। किन्तु उसका कुछ असर हुआ है, ऐसा मुझे नही लगता। इस दुर्बलताका क्या कारण है यह अभीतक कोई नही बता सका। सिर्फ सावधान रहनेके लिए दाहिने हाथसे लिखना भी छोड दिया था। तो भी डाक्टरोने बादमे निर्णय किया कि जो दर्द होता है, वह लिखनेके कारण नही होता। मालिश करनेसे आराम हो सकता हो तो यहाँ भी मालिश करनेकी अनुमति तो जरूर मिल जायेगी। किन्तु किस तरह मालिश करनी है यह लिखो, जिससे मैं उसी तरह अपने-आप मालिश कर लूँ या महादेवसे करा लूँ। परन्तु मेरे हाथके बारेमें तनिक भी चिन्ता करनेकी जरूरत नही है। हर समय दर्द रहता है, ऐसा नही है। कुछ खास काम करते ही दर्द होता है। यहाँके डाक्टरोका तो ऐसा विचार था कि यह बुढापेकी निशानी है। इसलिए कोई इलाज नही हो सकता। साधारण तौरपर बुढापेमे कई तरहकी कमजोरी आ जाती है क्योकि हम अपने जीवनमे पहले संयमका पालन नही करते। यह ऐसा भी हो सकता है; और अगर हो तो इसमे दुःख या ताज्जुब करनेका कोई कारण नही। इसलिए इस विषयमे सावधान रहनेके अतिरिक्त मैं और किसी तरहकी चिन्ता नही करता। आजकल यहाँ एक नया डाक्टर आया है। उसका विचार है कि वह दर्द ठीक कर पायेगा। देखता हूँ क्या होता है।

तुम दोनो प्रसन्न होगे। हम तीनो आनन्दसे हैं। एण्ड्रचूज मिला ही होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५४८) से। सी० डब्ल्यू० ५०२३ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता।

३६७. पत्र : आर० बी० मार्टिनको

१३ अप्रैल, १९३२

प्रिय मेजर मार्टिन,

६ मार्चको मैंने मेजर भण्डारी[1] को गैर-राजनीतिक साथियोसे मुलाकातोके बारेमे लिखा था। मैंने ३० मार्चको एक स्मरण-पत्र[2] भेजा था, लेकिन अभीतक मुझे जवाब नही मिला। मैंने उदाहरणके तौरपर नामोकी जो सूची पहले ही भेज दी है, उसके बारेमे अब मुझे जवाव मिल ही जाना चाहिए। कुछ ऐसे मित्र है जो मुझसे मिलना चाहेगे और जिनसे मै मिलना चाहूँगा। उनसे न मिल पानेपर मुझे काफी असुविधा और कुछ उद्विग्नता भी होती है।

सरकारने कृपापूर्वक अपने जेलके साथियोकी कुशलता जाननेके लिए पत्र लिखनेकी मेरी इच्छाको उचित मान लिया है। सरकारकी अनुमति पानेपर मै जेलके कुछ साथियोको पत्र लिखता रहा हूँ, परन्तु वेलगाँवसे मुझे कोई जवाव नही मिलता। मैंने श्रीमती मणिवहन पटेलको लिखा है। वे सरदार वल्लभभाई पटेलकी बेटी है, लेकिन वे दस वर्षोसे ज्यादा समयतक आश्रमके अनुशासनमे रही है। कुछ समय पहले उनके पिताको उनका एक पत्र मिला था जिससे पता चला कि वे इन दिनो बीमार है। इसलिए मैंने उनको पत्र लिखा। उसमे मैंने उनके स्वास्थ्यके बारेमे पूछा था, लेकिन मुझे कोई जवाव नही मिला। फिर काका कालेलकर है, उन्हे आप अच्छी तरहसे जानते है। आपको पता ही है कि वे तपेदिकसे पीडित रहे है और उन्हे विशेष देखरेखकी जरूरत है। मैंने उन्हे भी पत्र लिखा, किन्तु कोई जवाब नही मिला। तीसरे व्यक्ति प्रभुदास गाधी[3] है। वे मेरे नजदीकी कुटुम्बी है। वे बचपनसे ही, जब मै दक्षिण आफ्रिकामे था, मेरी देखरेखमे पले-बढे। वह भी उसी बीमारीसे ग्रस्त है जो काकासाहब कालेलकरको है और उनका विशेष उपचार होता रहा है। इनके सिवा श्रीयुत नरहरि परीख है जो आश्रमके एक सदस्य है। वे एक पुराने सहयोगी है। वे भी बेलगाँव-जेलमे है। मैंने प्रभुदास गाधी व नरहरि परीख, दोनोके बारेमे काकासाहब कालेलकरसे पूछताछ की थी, लेकिन कोई खबर नही मिली। क्या आप कृपया उनके स्वास्थ्य, उनकी खुराक तथा वजनके वारेमे जरूरी सूचना हासिल करेगे। उनके बारेमे किसी खबरका न मिलना मेरे लिए काफी चिन्ताका कारण है।

मेरे लिए इस बातका पक्का पता लगा देनेकी भी कृपा करे कि मैंने इलाहाबाद भेजा जानेवाला जो तार[4] मेजर भण्डारीके हाथमे दिया था और जिसमे

१, २. देखिए पृष्ठ १७३ और २४५।

३. छगनलाल गांधीके पुत्र, गांधीजी के भतीजे।

४. कमला नेहरूको, देखिए पृष्ठ २८५।

श्रीमती मोतीलाल नेहरूको लगी चोटो तथा उनके दामाद श्रीयुत रणजीत पंडितकी बीमारीके बारेमे पूछताछ की गई थी, ठीकसे भेज दिया गया था या नही। मै यह बताना ठीक समझता हूँ कि नेहरू-परिवारसे मेरे सम्बन्ध राजनैतिक उतने नहीं है जितने कि निजी और अन्तरग है। नेहरू-परिवारके सदस्योके स्वास्थ्य व कुशल-क्षेममे बहुत दिलचस्पी रखना मेरे लिए स्वाभाविक है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई-सरकार, गृह विभाग, आई० जी० पी० फाइल स० ९।

३६८. पत्र : एस्थर मेननको

१३ अप्रैल, १९३२

रानी बिटिया,

मुझे हमेशा तुम्हारा पत्र पाकर खुशी होती है। तुम्हारा पत्र दिलचस्प है और उससे कुछ भेदोकी झलक भी मिलती है। तुम अब भी कुछ-कुछ उद्विग्न बनी हो। तुम्हें उद्विग्नता त्याग देनी चाहिए। यदि हमे ईश्वरमे विश्वास है तो हमे चिन्ता नही करनी चाहिए, जैसे कि विश्वासपात्र द्वारपाल अथवा चौकीदारके होनेपर हम चिन्ता नही करते। ईश्वरसे बढकर अच्छा द्वारपाल अथवा चौकीदार कौन हो सकता है; उससे कभी चूक नही होती। इतना ही काफी नही कि हम ऐसी बातोका भजन करे या उनको केवल बौद्धिक रूपसे ग्रहण करें। जरूरी यह है कि हम भीतरसे वैसा महसूस करे। यह महसूस करना ठीक वैसा है जैसे कि दर्द या आनन्द महसूस करते है। हमे अपने अनुभवपर तर्कसे कौन हरा सकता है? मै यह इसलिए लिख रहा हूँ कि मै चाहता हूँ कि तुम सारी चिन्ताओ और परेशानियोसे पूरी तरह मुक्त हो जाओ।

बच्चोको विभिन्न कौमोकी गुड़ियाँ देनेका विचार बहुत अच्छा रहा। हिन्दी लड़कीका क्या नाम है और वह किस प्रान्तकी है?

क्या मैंने तुम्हे बताया था कि महादेव मेरे साथ है?

बच्चोको चुम्बन।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सं० १०९)से, सौजन्य . भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार। माई डियर चाइल्ड, पृष्ठ ८९-९० से भी।

३६९. पत्र : शंकरराव देवको[1]

१५ अप्रैल, १९३२

भाई,

तुम्हारे बारेमे बहुत सोचा, रातको भी विचार किया, हम तीनोने मिलकर भी चर्चा की। परिणाम यही आया है कि निश्चयसे मानते हैं कि जिसको तुमने धर्म माना है, वह धर्म नही, परन्तु अधर्म है। सत्याग्रह चलते हुए जिसका सम्बन्ध सत्याग्रहके साथ होनेका सम्भव रहता है, उस बारेमे कोई भी सत्याग्रही बगैर सभापतिकी सम्मतिके कुछ व्रत ले ही नही सकता। तुम्हारे व्रतका अर्थ जो तुमने किया है वह अनर्थ है। जेलमे मधुकरीका कुछ अर्थ रहता नही है। जेल खत्म होनेके बाद मधुकरीके लिए घूमनेमें शर्म होगी या नही होगी, उसका निश्चय आज करनेका तुम्हे अधिकार नही है। बाहर निकलनेके वक्त दिल कैसा रहेगा उसका आज निश्चय करना ईश्वर जैसा होनेका दावा करने जैसी बात हुई। हम तीनो मानते हैं कि जो-कुछ भी 'क' वर्गका खाना मिलता है, वही ईश्वरार्पण बुद्धिसे खाना तुम्हारा कर्त्तव्य है। सन्यास-धर्म भी यही बताता है।

अब रही बात कपडोकी। जेलमें खद्दर ही पहननेका आग्रह करना किसी तरह योग्य नही कहा जा सकता। इस बारेमे हरएक सत्याग्रह-कैदीका धर्म है कि जब तक महासभा [कांग्रेस] इस बारेमें निर्णय न करे, तबतक जेलमे खद्दर पहननेका आग्रह न रखा जाये। और इस बारेमे भी स्वावलम्बनका तुम्हारा व्रत है उसमे कोई हानि नही आती। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि उपवास छोड दो और भूल स्वीकार करो और खाना शुरू कर दो। उपवासके कारण एक-दो दिन दूध ही लेकर या तो फल लेकर रहना अच्छा होगा। यह तो केवल वैद्यकीय दृष्टिसे लिखता हूँ। मेरी उम्मीद है कि हम सबने तटस्थतासे जो अभिप्राय दिया है उसके अनुकूल करोगे।

बापूके आशीर्वाद

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ ९८।

१. शंकरराव देवका नाम "दैनन्दिनी, १९३२", में से दिया गया है। महादेव देसाई लिखते हैं: "श्री देवने कपडेके विषयमें आत्मनिर्भरताकी शपथ ली हुई थी। इसलिए वे अपने द्वारा काते हुए सूतका ही कपडा पहनते थे। दूसरे, उन्होने मधुकरीसे प्राप्त भोजनपर ही निर्भर रहनेकी शपथ ली थी। यदि इससे भोजन प्राप्त न हो तो वे दूध व फल लेते थे।" (दि डायरी ऑफ महादेव देसाई, भाग १, पृष्ठ ७१)

३७०. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

१५ अप्रैल, १९३२

प्रिय श्री भण्डारी,

इसके साथके पत्रकी[1] इबारत आप मंजूर करे, तो आप उसे . . .को[2] तुरन्त ही दे दीजिएगा। उसमे उपवास तोडकर रोजमर्राकी खुराक लेना शुरू करनेके लिए दुबारा आग्रह करनेके सिवा और कुछ नही है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

[पुनश्च :]

अगर श्री . . .[3] इस पत्रमे दी हुई मेरी सलाह मान ले और अपना उपवास तोड दे, तो मैं आशा रखता हूँ कि आप उन्हे एक-दो दिन दूध दे देंगे। उपवासके विशेषज्ञ होनेके नाते मेरा यह अनुभव है कि ठोस खुराक लेकर उपवास तोडनेसे शरीरको बहुधा बडा नुकसान पहुँचता है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ ९९।

३७१. पत्र : खगेन्द्र प्रिय बरुआनीको

१५ अप्रैल, १९३२

प्रिय मित्र,

आपने मुझे जो खादी भेजी है, उसके लिए धन्यवाद। इसके साथ कोई पत्र नही है। कृपया इसका इतिहास मुझे लिख भेजिए।

हृदयसे आपका
मो० क० गांधी

श्रीयुत खगेन्द्र प्रिय बरुआनी
नोगांग
असम

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५५१)से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२ और ३. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ा हुआ है पर पत्रसे स्पष्ट है कि यह व्यक्ति शंकरराव देव ही हैं।

३७२. एक पत्र

१६ अप्रैल, १९३२

प्रियवर,

यदि बादामकी लुगदी आपको माफिक पडती है तो अवश्य लीजिए। लेकिन कॉडलिवर आयलका पर्याप्त परीक्षण करके देखना ही चाहिए। मैंने सुना है कि उसका स्वाद रद्दी है; लेकिन या तो स्वाद दबा देना चाहिए या उसे इस तरह पीजिए जैसे हम [कभी-कभी] ओठोसे गिलास लगाये विना और तालूसे उसका स्पर्श बचाकर पानी पीते है, इससे वह सीधा गलेके नीचे उतर जायेगा।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९०२६)से, सौजन्य : नारणदास गांधी।

३७३. पत्र : शारदा चि० शाहको

१७ अप्रैल, १९३२

चि० शारदा,

उद्धारका रास्ता यही है कि हम सत्यका पालन करे। प्रकृतिमे जन्म लिया है तो उसका असर हुए विना न रहेगा। बुरे प्रभावोका विरोध करना हमारा धर्म है। [1] किसी विशेष दिशामे सोनेका कोई विशेष परिणाम होता है, इस कथनमे कुछ सार है, ऐसा मुझे नही लगता। . . [2] सप्ताहमे मैंने दुगुना काता। महादेवने भी दुगुनी कताई की। उपवास तो किया ही था। तुम सबने तो बहुत ज्यादा किया। ईश्वर तो हमारे विरुद्ध निरन्तर सत्याग्रह करता है क्योकि हमारे असत्यको वह क्षण-भरके लिए भी सहन नही करता। ईश्वर अर्थात् सत्य। उसके सत्याग्रहके विषयमे क्या कहना? क्या समझ नही आया?

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९०९)से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला।

१. व २. साधन-सूत्रके अनुसार।

३७४. एक पत्र

१७ अप्रैल, १९३२

चि०,

हम आश्रममें सारे भयोंके पार जानेके लिए रहते हैं। सत्यका पालन करते हैं, सो भी सत्यके विचारसे ही, किसीके भयसे नहीं। समाजने जिन्हें कुचला है, उन सबको हिम्मतके साथ अपने बन्धन तोड़ने हैं। आश्रमका अस्तित्व उन्हींके लिए है। बहनें इस बातको अच्छी तरह समझकर उससे लाभ उठायें, मैं ऐसी इच्छा करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०३२)से, सौजन्य: नारणदास गांधी।

३७५. एक पत्र

१७ अप्रैल, १९३२

चि०,

पृथ्वी कब बनी, पहले कौन-सा प्राणी पैदा हुआ और कब, यह हमें नहीं जानना है। यह ईश्वरका काम है। हम अपना धर्म जानकर सन्तोष करें।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०३६)से, सौजन्य: नारणदास गांधी।

३७६. एक पत्र

१७ अप्रैल, १९३२

भाई,

मणिकी मृत्युका शोक नहीं करना है। वह तो महादुःखसे छूट गई है। शल्य-क्रिया करानेके लिए भी पश्चात्ताप न करना। मणिके पुण्यस्मरण अवश्य लिखना। तुम सब उसके गुणोंका अनुसरण करना। ऐसा करोगे तो कह सकते हैं कि वह विशेष रूपसे जी रही है। फिर जीवकी मृत्यु तो होती नहीं। सिर्फ उस घरका नाश होता है जिसमें उसका वास था। और ऐसा तो होता ही रहता है। कोई जल्दी और कोई देरसे जाता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०४३)से, सौजन्य: नारणदास गांधी।

३७७. पत्र : मंगला शं० पटेलको

१७ अप्रैल, १९३२

चि० मंगला,

तुम सब उस दिशामें जाकर चन्द्रभागाका उद्गम-स्थान खोज निकालो। तनिक भी दूर नहीं है। सिर्फ नाम ही बड़ा है। उसका मुहाना तो तुम सबने देखा ही होगा। उद्गम स्थलकी ओर जाओ और किनारेपर क्या-क्या है, यह भी देखो। कातनेसे क्या मिलता है, हम यह नहीं देखते। सिर्फ कताई करनेसे करोड़ोंका पोषण होता है, इसलिए हम एकाग्रचित्तसे कताई करें। ऐसा करते हुए हममें से कोई अच्छा चरखा खोज पायेगा और वह न भी हुआ तो भी हम दूसरे अनेक काम कर पायेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०८३) से। सी० डब्ल्यू० ४७ से भी; सौजन्य: मंगलाबहन ब० देसाई।

३७८. पत्र : नारायण देसाईको

१७ अप्रैल, १९३२

चि० बाबलो,

तूने 'नारायण' लिखकर हस्ताक्षर किये, इसलिए मैंने तुझे 'राव' बना दिया।[1] अब तुझे 'नारायण देसाई' कहकर बुलाना है। बाबलो कहनेमें ही क्या बुराई है। पहले इनामी चरखा खोज डाल फिर देसाई कहूँगा। जो पहले देसाई कहलाये सो अपने कामके कारण। तू भी कोई बड़ी सेवा करके 'देसाई' बन तो कितना अच्छा है। बाप देसाई हैं इसलिए बेटा भी देसाई कहलाये, इसमें कोई मजा नहीं है। इसकी बजाय क्यों न बचपनके नामको ही कायम रखें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४७८) से।

1. देखिए "पत्र: नारायण देसाईको", ११-३-१९३२

३७९. पत्र : पृथुराज ल० आसरको

१७ अप्रैल, १९३२

चि० पृथुराज,

तुम्हे पत्र कहाँ लिखूँ, यह तुमने नही लिखा है इसलिए आश्रमके पतेसे ही लिख रहा हूँ। अपने सुन्दर पत्रमे तुमने हाथके वारेमे कुछ नही लिखा। आत्मनिर्भर और बापपर निर्भर होना कोई दो विरोधी बाते नही है। जिस तरह माँ-वापके गुण सन्तानमे आ जाते है, उसी तरह उनका घन और प्रतिष्ठा भी। यदि कोई इन्हे त्याग दे तो वह मिथ्याभिमानी कहलायेगा। वह उसका सदुपयोग करे और उसमे वृद्धि करे, यही सुपुत्रका कर्त्तव्य है। इसलिए ऐसा मानो कि तुम्हे अपने पुरुषार्थसे पिताके कामको पूरा करना है।

सारा ससार जो-कुछ कहे, उसे हम सुन ले, लेकिन करे वही जो हमारी अन्तरात्मा कहे। और हमारी अन्तरात्मा आदेश दे सके, इसके लिए हम नियमोका पालन करे। सबको अन्तरात्माकी आवाज सुनाई नही देती। उसको सुननेके लिए दिव्य कानोकी आवश्यकता है।

तुमने अक्षरोमे काफी सुधार कर लिया है, पर अभी भी वे पूरी तरह गढ़े हुए नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० १२१८७-ए) से। सी० डब्ल्यू० ९०४५ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

३८०. पत्र : रावजीभाई म० पटेलको

१७ अप्रैल, १९३२

चि० रावजीभाई,

तुम्हारे पत्र मजेदार है, परन्तु मर्यादाका उल्लघन करते है[1] हमे तो वडे वादशाहको, सत्यरूपी ईश्वरको जवाब देना है। तुम सवपर मुझे विश्वास है इसलिए तुम्हारे काम-काजका हाल जाननेकी इच्छा नही होती। तुम्हारे कुशल-मगलका समाचार मिलता रहे, इतना ही काफी है। यह आलोचना नही है। सिर्फ तुम्हे सावधान और निश्चिन्त कर देना चाहता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८९९६) से। सी० डब्ल्यू० ९०४० से भी; सौजन्य : नारणदास गाधी।

१. राजनैतिक विषयोंकी चर्चाके कारण।

३८१. एक पत्र

१७ अप्रैल, १९३२

चि०

अस्पृश्यता कब घुस गई उसका मुझे पता नहिं। मोटर ई० वाहन नहिं थे तब लोग पैदल जाते थे। गंगाबहन वगेरह अच्छी है। बच्चोंके लिए दूध सबसे अच्छा है। मुझे कुछ याद नहिं कौनसा खेल भाता था। हां, नाटक देखनेका शोख था।

बापूके आ[शीर्वाद]

सी० डब्ल्यू० ९०४६ से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

३८२. आकाश-दर्शन–२[1]

१८ अप्रैल, १९३२

पिछली बार तारा-मंडलका जो चित्र भेजा है, उसके विषयमें अनेक कल्पनाएँ हैं। इस मंडलके चित्रोंमें से एक भी सम्पूर्ण नहीं होता। जितने तारे चित्रमें दिखाई देते हैं, उनसे कहीं अधिक उसमें होते हैं। इसलिए सबसे अच्छा उपाय यह है कि हर आदमी अपने-अपने लिए चित्र बनाए और जितने तारे खाली आँखसे दिखाई दें, उनके चिह्न बना ले। इससे तारोंको पहचाननेकी शक्ति जल्दी ही बहुत बढ़ जायेगी और नक्शोंमें जो तस्वीरें आती हैं, उनकी बनिस्बत अपने लिए अपने हाथों खींचा हुआ चित्र बढ़िया होगा, क्योंकि अलग-अलग जगहसे देखनेमें थोड़ा-थोड़ा फर्क तो पड़ता ही है। हर आदमी नियत स्थानसे नियत समयपर निरीक्षण करे तो ज्यादा अच्छा है। यह सूचना नक्शोंके बारेमें और आरम्भ करनेवालेके लिए है। आप एक बार अच्छी तरह नक्षत्रोंकी पहचान कर लें तो फिर कहीं भी हों, अपने इन दिव्य मित्रों या दिव्य गणोंको तुरन्त पहचान लेंगे।

मद्रासके 'हिन्दू' दैनिकके साथ एक साप्ताहिक परिशिष्ट निकलता है, बम्बईके 'टाइम्स' के साथ भी निकलता है। दोनोंमें हर महीने दिखाई देनेवाले तारा-मंडलोंके नक्शे छपा करते हैं। 'हिन्दू' में हर महीनेके पहले हफ्तेमें और 'टाइम्स' में दूसरे हफ्तेमें निकलता है। इनमें से कोई नक्शा हाथ आ जाये तो उसमें हमें बहुत-कुछ मिल जायेगा। 'कुमार' (गुजराती मासिक)का सौवाँ या शती-अंक निकलनेवाला है, उसमें भाई हीरालाल शाहने इस विषयपर लेख भेजा है। उनका अध्ययन गहरा

१. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", १५/१८-४-१९३२ के साथ भेजा गया था। देखिए अगला शीर्षक।

मालूम होता है। यह लेख जिसे देखना हो वह देख जाये। मै तो इस लेखके वाद इस विषयपर अधिक न लिखूंगा। मै आकाश-दर्शन किस रीतिसे कर रहा हूँ, इसको यहाँ थोडा अधिक स्पष्ट करूँगा। इससे आगे जाऊँ तो इस हफ्तेमे जो दूसरी चीजे लिखनेको है, वे रह जायेगी। प्रसगवश कुछ भेज दूं तो वह अलग वात है, या फिर किसीके प्रश्नपर भेजूं।

जिस नक्षत्रका चित्र मैने दिया है, उसका नाम अपने यहाँ मृग या मृगशीर्ष है। उसीके कारण हमारे अगहन महीनेका नाम मार्गशीर्ष — मगसिर — पडा है। हमारे महीनोके नाम नक्षत्रोके नामपर पडे है। मृग-नक्षत्रको पश्चिममे 'ओरायन' कहते है। यह शिकारी है। इसके पूरवमे दो सीधी रेखाओमे वहुत तेजस्वी तारे है। उनके शिकारीके कुत्ते होनेकी कल्पना की गई है। जो पश्चिममे है, वह वडा और जो उत्तरमे है वह छोटा कुत्ता है। पूरवकी ओर और दक्षिणमे शिकारीके चौथे कोनेके तारेके नीचे जो नक्षत्र दिखाई देता है वह खरगोश मान लिया गया है। कुत्ते उसकी ओर दौडते है। बीचमे जो तीन तारे है, वे शिकारीके कमरवन्दके तीन रत्न हैं।

ऐसी आकृतियाँ भी खीची गई है। बड़े कुत्तेको हमारे यहाँ लुब्धक और उपर्युक्त तीन तारोको मृगका पेट कहते है। उसके दक्षिणमे जो तारा है, वह लुब्धकका छोडा हुआ बाण है। उत्तरकी ओर चतुष्कोणके बाहरके तीन तारे मृगके सिर है। यह सारी कल्पना खासी मनोरजक है। इसकी उत्पत्तिके विषयमे बहुत लिखा गया है। उसमे से बहुत ही थोडा मैं पढ पाया हूँ।

आकाशमे ऐसी आकृति विलकुल नही है। वह हमे जितनी नजदीक दिखाई देती है, उतनी नजदीक भी नही है। ये तारे तारे नही, वल्कि सूर्यसे भी बडे सूर्य है। करोडो मील दूर होनेके कारण ये आकाशमे बूंदकी तरह झलकते है। इन सूर्योके विषयमे हमारा ज्ञान बहुत थोडा है, पर अपढ-से-अपढके लिए भी ये तारागण मित्रके प्रयोजनकी पूर्ति करते है। क्षण-भरको उनकी ओर दृष्टि डाली कि देखनेवाला चाहे तो तुरन्त अपने सारे दु ख-दर्द भूल जाये और भगवानकी महिमा गाने लगे। तारोको वह ईश्वरके दूत मान सकता है, जो सारी रात हमारी रखवाली किया करते है और हमे आश्वासन देते है। यह तो सत्य सिद्ध हुआ है। तारे सूर्य है, वहुत दूर है, आदि वुद्धिके प्रयोग है। वे हमे ईश्वरकी ओर ले जानेमे जो सहायता देते है, वह अवश्य हमारे लिए पूरा सत्य है। शास्त्रीय रीतिसे हम जलको अनेक रीतियोसे पहचानते है, पर उस ज्ञानका शायद कोई उपयोग नही करते। वह प्राण और शरीरको साफ-सुथरा रखनेकी चीज है, यह ज्ञान और इसका यह उपयोग हमारे लिए बडे ही कामके है और हमारे लिए यह उपयोग सत्य है। फिर वस्तुत वह कोई दूसरा ही पदार्थ हो और उसका इससे अधिक उपयोग हो सकता हो तो अच्छा ही है। यही वात तारागणके विषयमे है। उनके उपयोग अनेक है। मुझे उनका जो प्रधान गुण जान पडा, मैने तो उसका ही मनन और तदनुसार उपयोग सुझाया है। जान पड़ता है,- कुछ ऐसा ही प्राचीन कालसे चलता आ रहा है। पीछे कालक्रमसे अनेक

प्रकारके दूसरे वर्णन उसमें मिल गये और आख्यायिकाएँ उत्पन्न हुईं। इन सबको हम इस विषयमें रुचि बढ़ानेके लिए अवश्य पढ़ें, पर जो मूल उपयोग मैंने सुझाया है, उसको न भूलें।

मृगके उत्तरमें दो दूसरे मंडल हैं, उनकी पहचान हम कर लें—

इनमें बड़ा मंडल सप्तर्षि है। छोटेको ध्रुव मत्स्य कहते हैं। दोनोंमें सात-सात तारे दिये हैं, पर सप्तर्षिमें दूसरे बहुत-से हैं। वे 'टाइम्स' और 'हिन्दू' के चित्रोंमें मौजूद हैं। ध्रुव मत्स्यमें दूसरे तारे नहीं दिखाई देते। इन दिनों उजाले पक्षमें तो शायद तीन ही दिखाई देंगे—दो चतुष्कोणके और एक सिरेका, जिसका नाम ध्रुव है। ध्रुव ऐसा तारा है जो लगभग अचल रहता है और इससे पिछले जमानेमें नाव-जहाज चलानेवालोंको बड़ी मदद मिलती थी। ये दोनों मंडल ध्रुवकी प्रदक्षिणा करते हुए जान पड़ते हैं। इन दिनों इनकी गति देखनेका बड़ा आनन्द आता है। सारी रात इनका स्थान बदलता रहता है। इसको नोट करते जायें तो इनके मार्गका नक्शा खासा कुण्डलाकार होगा। पश्चिममें इन्हें बड़ा रीछ और छोटा रीछ कहते हैं। एक पुस्तकमें तो इनके सुन्दर चित्र भी मैंने देखे हैं। बड़े रीछको हल की उपमा भी देते हैं। सप्तर्षि रातकी घड़ीका काम देते हैं। थोड़ा अभ्यास हो जानेके बाद सप्तर्षिकी गतिका समय अवश्य जाना जा सकता है।

पर अमूल्य होते हुए भी ये उपयोग और ये नाम मूल उपयोगके सामने मुझे तुच्छ-से लगते हैं। हमें चाहिए कि आकाश जैसा स्वच्छ है वैसे हम स्वच्छ हों, तारे जैसे तेजस्वी हैं वैसे हम तेजस्वी हों। वे जैसे ईश्वरका मूक स्तवन करते जान पड़ते हैं, वैसे हम करें। वे जैसे अपना रास्ता एक क्षणके लिए भी नहीं छोड़ते, वैसे हम भी अपना कर्त्तव्य न छोड़ें।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

३८३. पत्र : नारणदास गांधीको

१५/१८ अप्रैल, १९३२

चि० नारणदास,

अमेरिकाके तारके विषयमे मेरा कार्ड[1] मिला होगा। बली वगैरह मिलकर गये। आ गये, यह अच्छा किया।

मुझे लगता है कि अब हरिलालको फिरसे आश्रममें आश्रय नही दिया जाना चाहिए। मैंने तो उसे सीधे पत्र लिख दिया कि अब फिरसे आश्रय नही मिलेगा। पत्र जमनादासकी मारफत भिजवाया है। वह जहाँ-तहाँ आश्रय माँगता है और थोडा रहकर अपने दुर्व्यसनोका सेवन करने लगता है। और फिर जहाँ आश्रय मिला था, उसका हवाला देकर दूसरी जगह जा टिकता है। आजतक उसे आश्रमने इस आशासे सहन किया कि इसी तरह धीरे-धीरे शायद वह ठिकाने आ जायेगा। पर ऐसा होनेके बजाय इसका हाल और खराब हो गया।

लगता है, तुमने वहाँ राष्ट्रीय सप्ताहको बहुत अच्छी तरह सम्पन्न किया। इस कारण कोई बीमार न पडे तो अच्छा। एक और बातकी तरफ मैंने पहले ध्यान खीचा था; फिर याद दिलाता हूँ। राष्ट्रीय सप्ताहमे सात दिनोतक देह-तोड मेहनत करके फिर जैसे रहते थे, वैसे ही रहने लगे और कुछ दिन थकावट उतारनेमे निकाल दे, उसकी जगह मैं यह अधिक ठीक समझता हूँ कि इस अवधिमे सावधान रहकर हम उत्पादनमे जो वृद्धि करे, उसे सदा बनाये रखे। 'गीता'की भाषामे कहे तो पहले प्रकारकी प्रवृत्ति आसुरी और दूसरी दैवी अथवा पहली राजसी और दूसरी सात्विकी[2] कहलायेगी। हमने तो यहाँ ऐसा किया कि महादेवने पीजना प्रारम्भ कर दिया और पहलेसे थोडा ज्यादा काता, लेकिन मैंने जितना काता, मुझे उतना कातते रहनेमे सदेह है; फिर भी, अगर मेरा दाहिना हाथ बेकाम नही हो जाता है तो मै उतना कातते रहनेका इरादा करता हूँ।

कुछ बीमार [आश्रमवासी] अगर हमेशा भी बाहर रहे तो उनका खर्च उठाया जाना चाहिए। अल्मोडामे आश्रम बनानेका यही उद्देश्य था न? इसी तरह दूसरी जगह क्यों नही बना सकते? और जब हम देखते है कि जमना-जैसोको आश्रमकी आबहवा माफिक आती ही नही है तब वे ऐसी जगह रह सकते है। इसपर हमे बहुत खर्च नही पडेगा और फिर उन सभी स्थानोमे हम कुछ कर भी सकेगे। वर्धा इसी तरह बना। पहले रमणीकलाल[3] या किसी औरको भेजा था, पर जब आश्रम बन गया और उसे निबाहना जरूरी हो गया तो रमणीकलाल बीमार पडा या उसे वहाँ

१. देखिए पृष्ठ २९२।

२. देखिए अध्याय १७, श्लोक ११ और १२।

३. यह रमणीकलाल मोदी था।

काम करना कठिन लगा — क्या हुआ था सो तो मुझे ठीक याद नही है, तब विनोबा को भेजा। विनोबा-जैसा और कोई व्यक्ति तो हमारे पास नही है, पर हमारे पास जितनी सुविधा है, उसीके अनुसार किसीको भेजकर काम चलाया जा सकता है, ऐसा मुझे लगता है। समुद्र-तटपर कोई जगह मिले तो उसे चुनना ठीक होगा। पर यह तो आगेकी बात हुई, फिर भी हम इतना तो कर ही सकते हैं कि समुद्र-तटपर कोई जगह खोजकर वहाँ कुछ लोगोको रख दे और मनमे निश्चय कर ले कि अगर कोई ऐसी दो-तीन जगह बदल-बदल कर भी अच्छा नही होता और उसका शरीर छूट जाता है, तो भी हम बीमारोके बाह्योपचारकी यही मर्यादा रखेंगे। इस मर्यादाको बनाये रखे या नही, इसका निर्णय तुरन्त न हो तो भी जिन बीमारोको आबहवा बदलनेकी जरूरत है, उनके लिए इसका प्रबन्ध करना ही चाहिए। पद्माको वापस बुलानेसे सम्बन्धित हमारा पत्र शायद भटक गया। जान पड़ता है, उसकी भी ऐसी ही इच्छा है। सीतलासहाय और सरोजिनी देवीकी राय जानकर उचित कार्रवाई करना। जमनाको या तो फिर बम्बई चले जाना चाहिए, या बोरडी, सासवड, चोरवाड, पोरबन्दर, वेराबल, माँगरोल, घोघा, गोपनाथ, वगैरहमे से कोई एक जगह चुननी चाहिए। मेरा खयाल है कि जमनाको बम्बई माफिक आया, इसका इतना ही अर्थ है कि समुद्र-तट माफिक आया। इस अनुमानमे कसर होगी तो बात अनुभवसे मालूम पड जायेगी। मै मानता हूँ कि जो जगह जमनाको अनुकूल बैठेगी, वही तिलकमके लिए भी ठीक होगी। मै यह तो पहलेसे ही मानता हूँ कि कृष्णमय्यादेवी, पद्मा और राधाका खर्च आश्रमके वशके बाहरकी बात है। फिर भी जैसे अन्य खर्च अनुचित होनेपर भी बर्दाश्त किये हैं, इसी तरह इसे भी मन बर्दाश्त करता है। लज्जा तो आती ही है। लेजिमके व्यायामसे उत्पन्न प्रश्नकी चर्चा और उसपर लिए गये निर्णयकी प्रतीक्षा रहेगी। चन्द्रकान्ताके पक्षमे जिसने अपने प्रभावका उपयोग किया, उसने भला नही किया। विदेशसे आये हुए जो पत्र मेरे पास भेजने योग्य लगे, उनकी नकल भेजना। बाकीकी कोई जरूरत नही। हस्ताक्षर माँगनेवालोको हस्ताक्षर नही भेजे जा सकते। बादाम और खजूरके मिश्रणके बारेमे अभीतक कुछ नही मिला। मुझे लगता है कि यह किस तरह बन सकता है, यह मेरी समझमे आ गया है।

काका, नरहरि, प्रभुदास और मणिबहनकी तबीयत अच्छी है, ऐसा समाचार जेलके अधिकारियोसे मिल गया है। उन लोगोमें से अभीतक किसीका पत्र नही आया है।

मौनवार, १८ अप्रैल, १९३२

महावीर[1] का सीधे ही मेरे पास पत्र आया है। मैंने उसे लिखा है कि खर्चका अनुमान-पत्र भेजे और रहनेकी अन्तिम तारीख तय करे। तय करते समय याद रखे कि हम गरीब लोग हैं। ऐसा जान पडता है कि नीमू और बच्चे लखतरमे भले-चंगे नही रहते। इसलिए यही ठीक लगता है, कि उन्हे वहाँसे बुलवा लिया जाये।

१. महावीर गिरि; देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", २१/२२-४-१९३२।

बच्चोको लखतरकी गर्मी शायद सहन नही होती। उसके मुकाबले तो साबरमती ठण्डा ही है। यदि बीजापुर ठीक बैठे तो वे वहाँ रहे। लेकिन आश्रमके सिवाय कही और रखना हो तो भी यह निर्णय, मेरी समझमे, उनके आनेके बाद ही लिया जा सकेगा।

दाहिने हाथके अगूठेकी ही तरह बाये हाथकी कोहनी दर्द करती है। इसलिए डॉक्टर कहता है कि बाये हाथको आराम दो। बाये हाथसे तार खीचनेमे कष्ट होता है, ऐसा अबतक तो मैने अनुभव नही किया। कष्ट तो हाथकी दूसरी गतियोके समय होता है। लेकिन सावधानीके विचारसे मैने कलसे दाहिनेसे तार खीचना और बायेसे चक्र चलाना शुरू किया है। कल बाये हाथसे लगभग साढे तीन घटोमे ९५ तार निकाले, आज अढाई घटोमे ८५। गाडीव-सन्धानमे इस प्रकारका फेरफार करते हुए यान्त्रिक कठिनाई तो कोई नही होती। केवल तकुएको एक तरफसे दूसरी तरफ लगाना पडता है और चक्रको बायी तरफ रखना होता है। यह तो बादमे मालूम होगा कि हाथपर इसका असर कैसा पडता है। सप्ताहमे एक ही दिन कातकर ३५५ तार निकालनेका नियम रखा था और उसे कायम रखना सोचा था, मगर अभी उसे मुल्तवी कर दिया है। लेकिन अगर बाये हाथका अभ्यास हो जाये तो यह साधारण लाभ नही है। इसलिए कम तार निकाल पानेका दुख नही है। बल्कि यह सब लिखनेका उद्देश्य तो यह है कि वहाँ किसीको उत्साह हो तो वह बाये हाथका उपयोग दाहिने हाथ-जितना करनेमे लग जाये। जापानमे बचपनसे ही दोनो हाथोसे समान काम लेनेकी आदत डलवाई जाती है। इससे दुगना नही तो लगभग दुगना लाभ तो हो ही सकता है। बायाँ हाथ दाहिनेके बराबर काम दे तो दाहिनेको आराम मिलता ही रहे और कभी उसमे चोट वगैरह आ जाये तो बायेसे वही काम लिया जा सके —यह मामूली बात नही होगी। यदि इस बातमे कोई सार लगे तो जिसे माफिक आये, उसे बाये हाथसे दाहिनेका काम लेना शुरू कर देना चाहिए। मुझे तो ऐसे कामोमे सहज ही लिखना, कातना और भोजन करना सूझ रहे है। विचार करे तो ऐसे बहुत काम दिखेगे जिन्हे हम दाहिने हाथसे करते आ रहे होगे और जो धीरे-धीरे बाये हाथसे बिना बहुत परिश्रमके थोडा ध्यान रखकर किये जा सकते है।

मेरे पासकी रुई समाप्त होनेको आ गई है; इसलिए अगर तुम्हारे पास अच्छी रुई हो तो दो सेर भेजना। आज कुल मिलाकर ३९ पत्र है। इनके अतिरिक्त तुम्हारे नामका पत्र और आकाश-दर्शन – २[1]।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२२० भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

३८४. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

१८ अप्रैल, १९३२

प्रिय बालको और बालिकाओ,

हम स्वयं प्रजाजन हैं इसलिए हमारा स्वभाव सहज रूपसे हमें प्रजातन्त्रकी ओर आकर्षित करता है। किन्तु सत्यका उपासक होनेके कारण हमारा यही कर्त्तव्य है कि हम न्यायको पहचानें और जिस तरफ न्याय हो, उसीका पक्ष लें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ९०३१ से भी, सौजन्य : नारणदास गांधी।

३८५. एक पत्र

१८ अप्रैल, १९३२

चि०,

अहिंसा, धीरज, शान्ति, सहनशीलता और पवित्रता स्त्रियोंके विशेष गुण हैं। स्वप्नोंका कारण कम नींद है। बदहजमी होनेसे या बहुत सोच-विचार करनेसे भी स्वप्न आते हैं। कारण मालूम करके उनका निवारण किया जा सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०२९)से; सौजन्य . नारणदास गांधी।

३८६. एक पत्र

१८ अप्रैल, १९३२

चि०,

जहाँ देखें वहाँ अज्ञान तो है ही। उसका दुःख न करें किन्तु यदि अपना अज्ञान निकाल दें तो दूसरोंके अज्ञानका दूर होना भी सम्भव है। अज्ञानका अर्थ है अपने कर्त्तव्यका ज्ञान न होना या ज्ञान होते हुए भी तदनुसार व्यवहार करनेकी अनिच्छा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०३०) से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

३८७. एक पत्र

१८ अप्रैल, १९३२

चि०,

बहन भाईको राखी बाँधकर उसकी मगल कामना करती है और यही चाहती है कि अवसर आनेपर वह उसकी जो सेवा कर सकता हो, करे। एक बार जिसे राखी बाँध दे, वह हमेशाके लिए भाई तो बन ही जाता है। और ्ाई बहनकी खातिर प्राणतक देकर उसकी सेवा करनेके लिए बँध जाता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०३५) से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

३८८. एक पत्र

१८ अप्रैल, १९३२

चि०,

बहन या किसी भी असहायपर कोई हमला करे तो हमें अपने प्राण देकर उसे बचाना चाहिए। जहाँ हिंसाका अवसर है, वहाँ प्राण तो दिये ही जा सकते हैं। किन्तु प्राण देनेकी शक्ति न हो तो हिंसाका सहारा लेकर सहायता करना भी उचित है। इससे हिंसाका हिंसत्व तो नही मिट जाता, सदोष तो वह है ही। किन्तु कायरता हिंसाकी तुलनामें अधिक खराब है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०३७) से; सौजन्य. नारणदास गाधी।

३८९. एक पत्र

१८ अप्रैल, १९३२

चि०,

नाकसे खून गिरना बन्द करनेके लिए सिरपर रोज दोपहरको मिट्टी बाँधनी चाहिए। सुबह-शाम नाकसे ठंडा पानी चढाकर मुँहसे निकालना चाहिए। नाकसे ठंडा पानी लेना आसानीसे आ जाता है। धूपमें नहीं घूमना चाहिए। सिर गरम न होने दें। किताबमें लिखी हर चीज ठीक ही होती है, ऐसा नहीं मानना चाहिए। शामको सातके पहले ही खा लेना अच्छा है। यह अनुभवसिद्ध है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०३८) से, सौजन्य: नारणदास गांधी।

३९०. पत्र: परशुराम मेहरोत्राको

१८ अप्रैल, १९३२

चि० परसराम,

विमलके लिए तुमने ठीक कविता लिखी। पिताका प्रेम ठहरा न? और यह सही है। वह नहीं पढ़ता, मैं ऐसा नहीं मानता। बच्चे अच्छे वातावरणमें रखे गये हों तो वे सुविधापूर्वक सीखते रहते हैं। मैंने कई बार अनुभव किया है कि वे वर्गमें जितना सीखते हैं, उसके बाहर कहीं ज्यादा सीखते हैं। इसलिए हमारा काम है कि हम सारे वातावरणको वर्ग-जैसा बना डालें। उसमें से बालक अनुकूल ज्ञान खींचते ही रहेंगे। यही सही मॉन्टेसरी-पद्धति है। किन्तु इसका अर्थ यह हुआ कि सभी बड़ोंको अप्रत्यक्ष रूपमें शिक्षक होना चाहिए अर्थात्, उनका चरित्र उज्ज्वल होना चाहिए और बालकोंके प्रति उनमें प्रेम होना चाहिए। इसका अर्थ यह नहीं है कि हम अपना वर्ग ही तोड़ दें, फिर भी इसका इतना अर्थ जरूर है कि जितनी जल्दी बने, वातावरण वर्ग-सरीखा बना डालें और सभी बड़े अपनेको बच्चोंका अभिभावक समझने लगें और वैसी योग्यता प्राप्त करें। ऐसा करनेपर चलनेवाला वर्ग बच्चोंको बोझ नहीं महसूस होगा।

मैंने लिखा है इसलिए 'साकेत' और 'अनघ'को पढ़ाना जरूरी नहीं है। तुम्हें मेरा सुझाव जँचे और आश्रममें कुछ लोग उन्हें समझ सकें, तभी ये पुस्तकें पढ़ाई जायें।

(१) वर्गसे बाहर थोडा काम दिया जा सकता है, (२) मन स्थितिके अनुसार घूमते जाते समय कभी एकान्त, कभी बातचीत, तो कभी पठन-पाठन लाभप्रद होता है। जब जैसा अनुकूल लगे, वैसा करे, (३) जो व्यक्ति माता-पिता और गुरुतुल्य हो, वे सभी ईश्वरतुल्य है; (४) आश्रममे नये आनेवालोको आश्रमके नियमोका ही अनुसरण करना है, क्योकि व्यक्ति तो अच्छे-से-अच्छे हो तो भी अधूरे है और इसलिए वे [हर बातमे] अनुकरणीय नही है। इसके सिवा यह मनुष्य-स्वभाव ही है कि जो अधिक-से-अधिक नियमानुसार चलता होगा, नियम-पालनका सकल्पकर्त्ता उसीकी ओर खिचेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४९४) से। सी० डब्ल्यू० ४९७१ से भी, सौजन्य: परशुराम मेहरोत्रा।

३९१. पत्र : जमनाबहन गांधीको

१८ अप्रैल, १९३२

चि० जमना,

जो मुझसे नियमित पत्रकी आशा रखे और खुद मुझे नियमित रूपसे लिखे चाहे न लिखे, उसे हर हफ्ते मै क्या लिखता रहूँ?

कुसुम बीमार रहती है तो उसे आराम करनेको बाध्य करना चाहिए। डर है कि वह बिना आराम किए अच्छी नही होगी। मै तो उसे लिखूंगा ही।

यह तय हो गया कि साबरमतीकी आबहवा तुम्हे माफिक नही आती। इसका यह अर्थ हुआ कि लम्बी अवधितक तुम्हे साबरमतीमे नही रहना चाहिए। यह दु:खकी बात नही है। आश्रम जमीनका टुकड़ा नही है। जहाँ जाओ, वही पूरी तरह आश्रमके नियमोका पालन करो तो आश्रम सार्थक होगा। अगर तुमने बम्बईमें बारीकीसे नियमोंका पालन किया होगा तो वहाँके वातावरणपर उसका असर हुआ होगा। नियम-पालनके बारेमे किसी दिन लिखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८५१) से, सौजन्य: नारणदास गाधी।

३९२. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

१८ अप्रैल, १९३२

भाई खम्भाता,

तुम्हारा पत्र मिला है। फिलहाल तो तुम्हे नही बुला सकता। मित्रोसे मिलनेके बारेमे पत्र-व्यवहार चल रहा है। अगर सन्तोषप्रद फल निकला तो जरूर बुलवाऊँगा। मालिश आपके कहे अनुसार शुरू कर दी है। मेरे पास लाक्षादि तैल नामका एक तेल है, उसीकी मालिश चलती है। परिणाम तुम्हे बताऊँगा। एन्ड्रयूजकी तबीयत ठीक होगी।

आप सबको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५९९) से।

३९३. पत्र : मणिबहन न० परीखको

१८ अप्रैल, १९३२

चि० मणि,

नरहरिकी चिन्ता करनेका कोई कारण नही है। उसकी तबीयत अच्छी है, ऐसा सरकारने सूचित किया है। उसके हाथका लिखा पत्र पानेका प्रबन्ध कर रहा हूँ। जिसने सब-कुछ ईश्वरको सौंप दिया है, वह चिन्ताका बोझ क्यो उठाये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९६६) से। सी० डब्ल्यू० ३२८३ से भी; सौजन्य : वनमाला म० देसाई।

३९४. पत्र : निर्मला ह० देसाईको

१८ अप्रैल, १९३२

चि० निर्मला,

हम जबतक सबको सगे भाई-बहन नही मानने लगते, तबतक सब [प्रगति] मिथ्याभास है। सगे और दूसरोके बीच भेद क्यो माने? जिनके सगा कोई न हो, उनका क्या हो? और सगेका देहावसान हो जाये तो क्या हो? जो सबको सगा मानता है, उसके सगेका देहावसान नही होता, क्योकि उसके अ[सख्य][1] सगे है। यही सगापन सच्चा है, दूसरा झूठा और क्षणिक है। समझी या नही?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४७२) से। सी० डब्ल्यू० ९०३३ से भी; सौजन्य: नारणदास गाधी।

३९५. पुष्पा शं० पटेलको

१८ अप्रैल, १९३२

चि० पुष्पा,

स्वराज्यका अर्थ अगर गाधीराज हो, तब तो वह कष्ट ही हुआ न? स्वराज्य अर्थात् सबका राज; उसमे पुष्पा भी आती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९८६) से। सी० डब्ल्यू० ३२ से भी; सौजन्य: पुष्पा ना० नायक।

१. साधन-सूत्रमें यहाँ कटा-फटा है।

३९६. पत्र : पद्माको

१८ अप्रैल, १९३२

चि० पद्मा,

मुझे नही मालूम, इन दिनो भुवालीमे कौन है। बाहर कौन-कौन है, यह भी नही मालूम। वहाँके किसी व्यक्तिसे परिचय हो, तभी जाना ठीक होगा। फिलहाल तू आश्रम जाये तो वह मुझे तो ठीक लगता है। जो भाग्यमे होगा, सो होगा। सरोजिनी देवीकी क्या इच्छा है? जानना चाहूँगा, सीतलासहाय क्या चाहता है। मुझे ऐसी याद है कि तेरे जो पत्र आये है, उनका मैंने उत्तर तो दिया है। तेरे ही पत्र नियमसे नही आये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१३१)से। सी० डब्ल्यू० ३४८३ से भी; सौजन्य · प्रभुदास गाधी।

३९७. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१८ अप्रैल, १९३२

चि० प्रेमा,

तू सचमुच लिखनेकी मन स्थितिमे नही थी। पत्र तो लगभग हमेशा-जितना ही लम्बा है, लेकिन बेसिर-पैरका है। जब खानेकी जरूरत न हो तब खाना नही चाहिए, घूमनेकी जरूरत न हो तब घूमना नही चाहिए, वैसे ही लिखनेकी जरूरत न हो तब लिखना नही चाहिए। अथवा थक गई हूँ, इसलिए नही लिखती, इतना लिखकर खत्म कर देना चाहिए।

दिनका अन्त होनेपर आनन्दके बदले मनमे चिढ होती है, यह अच्छा लक्षण नही है। यह अनासक्ति तो नही ही है। मेरी सलाह है, मेरा आग्रह है कि तू अपने जजाल कम कर। इससे तुझे या आश्रमको कोई नुकसान नही होनेवाला है। प्रफुल्ल चित्तसे किया हुआ काम बढता है और फलदायी सिद्ध होता है।

हर हफ्ते यहाँके साथियोसे मिलता हूँ। उनमे धुरन्धरको भी बुलाया था। उसकी तबीयत अच्छी है। वजन घटा है, क्योकि 'सी' श्रेणीकी ही खुराक लेता है। अगर बीचमे उससे कोई मिला न हो तो तू मिल सकेगी।

लेजिमके सम्बन्धमे उठनेवाले प्रश्नोपर तूने जो लिखा है, वह बिना विचारे लिखा है, ऐसा मानता हूँ। 'कलाके लिए कला' का विचार मनुष्यको कहाँ ले जाता है, यह तू नही जानती। इसके नामपर पश्चिमके जवान लडके-लडकी बिलकुल नरकमें उतर रहे है। पत्र लिखते समय शायद कलाकी परिभाषा तेरे ध्यानमें ही नही थी।

लेकिन तेरे पत्रमे सब-कुछ बे-ठिकानेका होगा, ऐसा तूने ही मुझे चेताया है। इसलिए मैं ज्यादा लम्बा नही लिखता।

तू अपने-आपको 'हिस्टेरिकल' न समझे, यह सम्भव है। यह हो सकता है कि किसन भी यह न देख सके। फिर यह भी सम्भव है कि 'हिस्टेरिकल' का पूरा अर्थ भी तुम दोनो न समझी हो। इसका अर्थ समझनेके लिए तूने शब्दकोश कभी नही खोला होगा। ऐसा नही है कि हमारे एम० ए० आदि पढे लोग अंग्रेजी जानते ही हो। फिर ऐसे खास शब्दके अर्थ तो बहुत कम लोग ही जानते हैं। 'हिस्टेरिकल' व्यक्तिका तू सुन्दर नमूना है। यह दोष ही है, ऐसा माननेकी जरूरत नही है। लेकिन आखिर तो हिस्टीरियाको मिटा डालनेकी आवश्यकता रहती ही है। लेकिन मैं तुझे इसके विवेचनमे नही उतारूँगा। तू हिस्टेरिकल नही है, ऐसा खुशीसे मानती रह। तू इसे सच्चा ही सिद्ध करना चाहती है, इसलिए मैं निश्चिन्त हूँ। 'न हि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गति तात गच्छति।'[1]

तेरा वाक्य यह था कि आश्रममे जिस चीजके पीछे हम पडते हैं, उसे छोडते नही, यह आश्रमकी खूबी है। इसे मैं प्रमाण-पत्र मानता हूँ। भले ही आज आश्रम इसके योग्य नही है। लेकिन अन्तमे हम इसके योग्य होगे, ऐसा आग्रह तो रखेंगे ही। हम जो कर नही सके, उसका मुझे दुःख नही है। मुझे उसका भान है, इसलिए जाग्रत हूँ। जो-कुछ सोचा था, उसे सीखनेका समय नही है, यह तो स्पष्ट रूपसे मेरी कमी है। मेरी व्यवस्था-शक्ति कम है, शिक्षण-शक्ति कम है और समयके प्रमाणका भी ज्ञान मुझे कम है। ऐसा होते हुए भी अगर परिस्थितिवश मैं ज्यादा समयतक बाहर नही रहा होता, तो अधिकतर कार्यक्रम किसी तरह मैंने पूरा कर लिया होता। मेरा ऐसा अनुभव है। लेकिन बीती हुई बातोको इसीलिए याद करते है कि अब भी कुछ सुधारा जा सकता हो तो सुधार ले। जो मैं नही कर सका, उसे तुम सब विचार करके और योजना बनाकर जितना कर सको, करो। क्या करना था, क्या-क्या करना बाकी है, उसमे से क्या-क्या करना सम्भव है, इसकी समय निकाल कर जाँच करो। जो हो सके, वह करो। ऐसा लगे कि कुछ भी नही हो सकता तो फिर अपरिहार्यको भूल जाओ। उसकी चिन्ता नही करनी चाहिए।

शून्यवत् होनेका अर्थ है 'मैं करता हूँ' की वृत्तिको छोडना। इसमे निराशावादके लिए स्थान ही नही है।

महादेव और मैंने सप्ताहमे दुगना काम किया, ऐसा कहा जायेगा। सरदारको इस बार अभी कातनेकी धुन नही लगी है। उपवास[2] तो हम तीनोने किये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२८१) से। सी० डब्ल्यू० ६७२९ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कटक।

१. भगवद्गीता, अध्याय ६ श्लोक ४०।

२. राष्ट्रीय सप्ताहमें ६ और १३ अप्रैलके दिन।

३९८. पत्र : पुरुषोत्तम गांधीको[1]

१८ अप्रैल, १९३२

चि०,

१ जैन निरूपण और साधारण वैदिक निरूपणके बीच मैंने विरोध नही पाया, मगर केवल दृष्टिकोणका ही फर्क है। ईश्वर वेदका कर्त्ता-अकर्त्ता दोनो है। सारा जगत ईश्वरमय है, इसलिए ईश्वर कर्त्ता है। मगर वह कर्त्ता नही है, क्योकि वह अलिप्त है। उसे कर्मका फल भोगना नही पड़ता। और जिस अर्थमें हम कर्म शब्द इस्तेमाल करते हैं, उस अर्थमें जगत ईश्वरका कर्म नही है। 'गीता'के जो श्लोक तूने उद्धृत किये है, उनका इस तरह सोचनेपर मेल बैठ जाता है। इतना याद रखना: 'गीता' एक काव्य है। ईश्वर न कुछ बोलता है, न करता है। ईश्वरने अर्जुनसे कुछ कहा हो, सो बात नही है। ईश्वर और अर्जुनके बीचका संवाद काल्पनिक है। मै तो ऐसा नही मानता कि ऐतिहासिक कृष्ण और ऐतिहासिक अर्जुनके बीच ऐसा संवाद हुआ था। 'गीता'की शैलीमें कुछ भी असत्य है या अयुक्त है, सो भी नही। इस तरहसे धर्मग्रन्थ लिखनेका रिवाज था। और आज भी कोई संस्कारी व्यक्ति लिखे, तो उसमे कोई दोष नही माना जा सकता। जैनोने केवल न्यायकी, काव्यरहित यानी रूखी बात कह दी और बता दिया कि जगतकर्त्ता कोई ईश्वर नही है। ऐसा कहनेमें कोई दोष नही, मगर जन-समाज रूखे न्यायसे नही चलता। उसे काव्यकी जरूरत रहती ही है। इसलिए जैनोके बुद्धिवादको भी मन्दिरोंकी, मूर्त्तियोकी और ऐसे अनेक साधनोकी जरूरत मालूम हुई हैं। वैसे, केवल न्यायकी दृष्टिसे इनमें से कुछ भी नही चाहिए।

२. असलमे पहले प्रश्नके उत्तरके गर्भमें ही तेरे दूसरे प्रश्नका उत्तर आ जाता है जैसे, मै यह मानता हूँ कि तेरा दूसरा प्रश्न भी पहलेके गर्भमें ही है। । 'कृपा' शब्द काव्यकी भाषा है। भक्ति ही काव्य है। मगर काव्य कोई अनुचित या घटिया चीज या अनावश्यक वस्तु हो सो बात नही है। यह निहायत जरूरी चीज है। पानी दो हिस्से हाइड्रोजन और एक हिस्सा ऑक्सीजनसे बना हुआ है, यह न्यायकी बात हुई। मगर पानी ईश्वरकी देन है, यह कहना काव्यकी बात हो गई। इस काव्यको

१. पुरुषोत्तम गांधीने निम्न प्रश्न पूछे थे:

(१) गीताके ईश्वरवाद और जैनमतके अनीश्वरवादमें क्या अन्तर है?

(२) ईश्वरमें कार्यका समर्पण नहीं है तो कृपा कौन करता है? भक्तके पास ईश्वरकी कृपाके अतिरिक्त दूसरा क्या साधन है जिसमें उसकी श्रद्धा हो? आदमीकी प्रार्थना तो उसकी शुभेच्छा ही होती है या इससे कुछ अधिक?

(३) 'सत्य ही ईश्वर है'—आपके इस कथनका सही अर्थ क्या है?

समझना जीवनका आवश्यक अग है। पानीका न्याय समझना जीवनका आवश्यक अग नही है। इस तरह यह कहना कि, जो-कुछ होता है, वह कर्मका फल है, अत्यन्त न्याययुक्त है। मगर कर्मकी गति गहन है। हम देहधारी इतने ज्यादा पामर है कि मामूली-से-मामूली परिणामके लिए भी जितने कर्मके जिम्मेदार होते है, उस सबका ज्ञान हमे नही हो सकता। इसलिए, यह कहना कि ईश्वरकी कृपाके विना कुछ नही होता, ठीक है और यही शुद्ध सत्य है। देहमे रहनेवाली आत्मा एक घड़ेमें रहनेवाली हवाकी तरह कैदी है और घडे की हवा जबतक अपनेको अलग समझती है, तबतक वह अपनी शक्तिका उपयोग नही कर सकती। इसी तरह, शरीरमे कैद आत्मा अगर यह माने कि वह स्वय कुछ करती है, तो सर्वशक्तिमान परमात्माकी शक्तिसे वचित रहती है। इसलिए, यह कहना कि जो-कुछ होता है वह ईश्वर ही करता है, वास्तविक है और सत्याग्रहीको शोभा देता है। सत्यनिष्ठ आत्माकी इच्छा पुण्य होती है और इसलिए वह फलती ही है। इस विचारसे जिस प्रार्थनाके श्लोक[1] तूने उद्धृत किये है, वह प्रार्थना हमारी निष्ठाके हिसाबसे सारी दुनियाके लिए भी जरूर फलेगी। जगत हमसे भिन्न नही है, न हम जगतसे भिन्न है। सब एक-दूसरेमे ओतप्रोत है और एकके कामका असर दूसरेपर हुआ करता है। यहाँ यह समझ लेना चाहिए कि विचार भी कार्य है, इससे एक भी विचार बेकार नही जाता। इसीलिए हमे हमेशा अच्छे विचार करनेकी आदत डालनी चाहिए।

३ ईश्वर निराकार है और सत्य भी निराकार है, इसलिए सत्य ईश्वर है, यह मैंने कोई हिसाब लगाकर तय नही किया है। बल्कि मैंने यह देखा है कि ईश्वरका सम्पूर्ण विशेषण तो सत्य ही है, बाकीके सब विशेषण अपूर्ण है। ईश्वर शब्द भी विशेषण है और अनिर्वचनीय महान तत्त्वको बतानेवाला एक विशेषण है। मगर ईश्वरका धात्वर्थ ले तो ईश्वर शब्द फीका लगता है।

ईश्वरको राजाके रूपमे देखनेसे बुद्धिकी तृप्ति नही होती। उसे राजाके रूपमे देखनेसे हममें एक प्रकारका भय भले ही पैदा हो जाये और इससे पाप करते डरे और पुण्य करनेका प्रोत्साहन मिले। मगर इस तरहका भयवश किया हुआ पुण्य भी लगभग पुण्य नही रहता। पुण्य करे तो पुण्यकी खातिर ही करे, इनामके लिए नही। ऐसे अनेक विचार करते-करते एक दिन ऐसा समझमे आ गया कि ईश्वर सत्य है, यह कहना भी अधूरा वाक्य है। सत्य ही ईश्वर है, यह जहाँतक मनुष्यकी वाचा पहुँच सकती है, वहाँतक पूर्ण वाक्य है। सत्य शब्दका धात्वर्थ विचारनेपर भी यही परिणाम आता है। सत्य सत् धातुसे निकला हुआ शब्द है और सत्के मानी तीनो कालमे होना है। तीनो कालमे जो हो सकता है, वह तो सत्य ही है और उसके सिवा दूसरा कुछ है नही। मगर सत्यको ही ईश्वरके रूपमे देखनेसे श्रद्धा जरा भी कम न होनी चाहिए। मेरे खयालसे तो उलटे बढनी चाहिए। मुझे तो यही अनुभव हुआ है। सत्यको परमेश्वरके रूपमे जाननेसे अनेक प्रपचोसे छूट जाते है। चमत्कार देखने या सुननेकी इच्छा नही रहती। ईश्वर-दर्शनका अर्थ समझनेमे मुश्किल

१. सी० डब्ल्यू० साधन-सूत्रके अनुसार "समस्ताः सुखिनो भवन्तु।"

हो सकती है, सत्य-दर्शनका अर्थ समझनेमें कठिनाई है ही नही। सत्य-दर्शन खुद भले ही मुश्किल हो, मुश्किल है ही, मगर जैसे-जैसे सत्यके नजदीक पहुँचते जाते है, वैसे-वैसे हम इस सत्यरूपी ईश्वरकी झाँकी देखने लगते है, इसलिए पूर्ण दर्शनकी आशा बढती है और श्रद्धा भी बढती है।[1]

इससे प्रश्नोका उत्तर न मिला हो तो फिर पूछना। मै जवाब देते उकताऊँगा नही और मुझे विश्वास है कि मै सन्तोषजनक उत्तर दे पाऊँगा। तुम्हारे मनमें जो-जो शकाएँ उठे, उनका समाधान इतनेसे न हो सका हो तो फिर पूछना।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग १, पृष्ठ १०५-७। सी० डब्ल्यू० ९०४४ से भी, सौजन्य नारणदास गांधी।

३९९. एक पत्र

१९ अप्रैल, १९३२

प्रिय,

हम सब ऋषियोकी सन्तान है और इसलिए हमारे मनोमें अपने पुरोहित या किसी वर्ण विशेषका होनेके कारण अभिमान नही होना चाहिए। ब्राह्मणने स्वेच्छया जनताकी सेवा चुनी और इसी तरह क्षत्रियने भी। अपने व्रतका पालन करना केवल ब्राह्मणका या सैनिकका ही नही, बल्कि प्रत्येक मनुष्यका कर्त्तव्य है। इसलिए, यदि आप अपने वर्णका अभिमान माने बिना सोच-समझकर उचित ढगसे व्रत लेते, तो मै उसे प्रशसनीय मानता। लेकिन यदि अब आप अपना व्रत निवाहना चाहते है तो उसके लिए जितनी सावधानी जरूरी है, उतनी तो रखनी ही पडेगी अर्थात्, देहको जितने आरामकी जरूरत है, उतना आराम अवश्य करो ताकि तुम्हारा व्रत भग न हो और न उसपर अनुचित रूपसे बोझ ही पडे। सिर्फ निर्वाह-भरके लिए पैसा लोगे, उससे ज्यादा नही, तुम्हारा यह निर्णय बहुत ठीक है।

सस्नेह,

बापू

अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९०४१) से, सौजन्य: नारणदास गांधी।

१. इसके बादका अनुवाद सी० डब्ल्यू० प्रतिसे किया गया है।

४००. पत्र : सुरेन्द्रजीको

१९ अप्रैल, १९३२

तुम्हारे पत्रका उत्तर देनेकी जल्दी नही थी, इसलिए यह सोचकर जवाब रोक रखा था कि कैदीके नाते मर्यादा रखे तो अच्छा है। पहलेके (विलायतवाले) पत्रमे तुमने मुझे जो लिखा था, वह मै बिलकुल भूल गया हूँ। मेरे बारेमे जो मनम आये, उसे लिखनेमे सकोच रखना ही नही चाहिए, सकोच रखना असलमे दोष ही माना जायेगा। सम्बन्धी और साथी मेरी जो-कुछ भी आलोचना मनमे करते हो, उसे वे मेरे सामने रखे तो उससे मुझे सीखनेको मिलेगा; क्योकि इस आलोचनामे वैर-भाव तो होगा ही नही। और प्रियजनोके बारेमे मनमे कुछ भी आ जाये, उसे तत्काल कहना प्रेम और मित्रताकी निशानी है। जो प्रेम कहनेमे संकोच रखे, वह अधूरा है।

सभी हालतोमे कायम रह सके, वही ब्रह्मचर्य है[1], इसमे 'सभी हालतो' का पूराअर्थ करना चाहिए। किसी भी लालचमे या किसी भी प्रलोभनमे पड़नेपर भी जो टिका रहे, वह ब्रह्मचर्य है। किसीने पत्थरका पुरुष बनाया हो और उसके पास कोई रूपवती युवती जाये, तो पत्थरपर उसका असर नही होगा। इसी तरह जो पत्थरकी तरह रह सके, वह ब्रह्मचारी है। मगर जैसे पत्थरकी मूर्त्ति न कानोसे काम लेती है, न आँखोसे, वैसे ही पुरुष भी लालचके पीछे न दौडे। जो दौडता है, वह तो ब्रह्मचारी नही है। इसलिए, अपनी तरफसे तो पुरुषका एक भी कृत्य ऐसा नही होना चाहिए, जिसे विकारके चिह्नके तौरपर माना जा सके। मगर बडा सवाल तुम्हारे मनमें यह है: स्त्री-जातिका दर्शन और उसका सग अनुभवसे सयम भग करनेवाला पाया गया है, इसलिए वह त्याज्य है। इस विचारमे मुझे दोष दिखता है।

जो सग स्वाभाविक है और जिसका मूल सेवा है, उसे छोडकर ही जिस सयमका पालन किया जा सके, वह सयम नही, ब्रह्मचर्य नही। वह तो वगैर वैराग्यका त्याग है। इसलिए यह सग अवसर पाकर बढेगा ही। 'पर' के दर्शनोके बिना विषयोकी निवृत्ति हो ही नही सकती[2], यह वेदवाक्य है। मगर इससे उल्टा वाक्य भी उतना ही सच है। विषयोकी निवृत्तिके बिना 'पर' के दर्शन नही हो सकते। यानी, दोनो चीजे साथ-साथ चलती है। अन्तिम वचनको जरा समझ लेनेकी जरूरत है। रस तो 'पर' के दर्शनके बाद मिट जाता है यानी, विषयोके शान्त हो जानेपर भी भीतर अगर रस रह जाता है, तो 'पर' के दर्शन हुए बिना विषय-वासनाके जाग्रत होनेकी सम्भावना रह जाती है। साक्षात्कार' होनेके बाद वासनामात्र असम्भव हो जाती है। यानी, पुरुष नर न रहकर नपुसक हो जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि वह एक न रहकर शून्य बन जाता है। दूसरे शब्दोमे कहे तो वह परमेश्वर मे समा

१. देखिए, "पत्र: सुरेन्द्रजीको", पृष्ठ २६७।

२. भगवद्गीता, अध्याय २, श्लोक ५९।

जाता है। जहाँ वासना नहीं रही, वहाँ रस भी क्या और विषय भी क्या? इस तरह बुद्धिको तो यह बिलकुल सीधा लगता है। यहाँ 'पर' और जहाँ-जहाँ ईश्वर, ब्रह्म, परब्रह्म, वगैरह शब्द आते हैं, वहाँ-वहाँ 'सत्य' शब्द इस्तेमाल करके अर्थ करने और समझनेसे वस्तुस्थिति स्पष्ट हो जायेगी और साक्षात्कारका अर्थ भी आसानीसे समझमें आ जायेगा। यह खेल आत्मवंचनाका नहीं है। आश्रममें जो कुटुम्ब-भावनाके नामपर मन-ही-मन विषयोंका सेवन करते होंगे, वे तो तीसरे अध्यायवाले मिथ्याचारी हैं। हम यहाँ सत्याचारीकी बात कर रहे हैं, और यह सोच रहे हैं कि सत्याचारीको क्या करना चाहिए। इसलिए, आश्रममें अगर ९९ फीसदी लोग कुटुम्ब-भावनाका ढोंग करके विषयोंका सेवन करते हों, और अगर १ फीसदी लोग भी बाहर और भीतरसे केवल कुटुम्ब-भावनाका ही सेवन करते हों, तो इससे आश्रम कृतार्थ हो जायेगा। और इससे आश्रम-द्वारा कल्पित आचरण उचित माना जायेगा। इसलिए, हमें यह नहीं सोचना है कि दूसरा क्या करता है। हमें तो यही विचार करना है कि अपने लिए क्या हो सकता है। इसके साथ-ही-साथ इतना तो सही है ही कि किसीके पहल करनेकी स्पर्धामें हम अपनी झोपड़ी न फूंक लें। कोई कुटम्ब-भावनासे रह सकनेका दावा करे, मगर हम अपनेमें यह शक्ति न पायें तो उसके दावेको स्वीकार करते हुए भी हम कुटुम्ब-भावनाका दावा न करें और [अनावश्यक] सम्पर्कसे बचें। आश्रममें हम एक नया, और इसलिए भयकर, प्रयोग कर रहे हैं। इस कोशिशमें सत्यकी रक्षा करते हुए जो घुलमिल सकें, वे घुलमिल जायें। जो न घुलमिल सकें, वे दूर रहें। हमने ऐसे धर्मकी कल्पना नहीं की है कि आश्रममें सभी सब तरहसे स्त्री-मात्रके साथ घुले-मिलें। इस तरह घुलने-मिलनेकी हमने सिर्फ छूट रखी है। धर्मका पालन करते हुए जो इस छूटको ले सकता है, वह ले ले। मगर इस छूटके लेनेमें जिसे धर्म खो बैठनेका डर है, वह — आश्रममें रहते हुए भी — उससे सौ कोस दूर भाग सकता है। एक आश्रमवासी . . .[1]को अपनी लड़की समझ सकता है और उसी तरह उससे व्यवहार कर सकता है। मगर दूसरा आश्रमवासी इच्छा होते हुए भी ऐसा व्यवहार मनमें पैदा न कर सके, तो उसका धर्म है कि वह . .[2]का संग छोड़ दे। मैंने यहाँ मृत देहकी मिसाल दी है। ऐसा दृष्टान्त लेनेमें भी शायद दोष हो तो इन दोके बजाय 'अ', 'ब' समझ लिए जायें। 'क' का मन 'ब' के प्रति 'अ' के जैसा न रह सके, तो 'क' के लिए आश्रममें 'ब' को न छूना ही धर्म है। और इस धर्मका पालन जहाँ-जहाँ मुझे मालूम हुआ है, वहाँ-वहाँ करानेकी मैंने कोशिश की है।

कुर्सीकी बात भूल जाने लायक है। इसे महत्त्व देनेकी जरूरत नहीं है। तुम 'कल्याणकृत' हो इसलिए आखिरकार सब ठीक होकर रहेगा। बुद्धिका उपयोग तो होता ही रहेगा। बुद्धिको कुंठित कर डालनेकी जरा भी जरूरत नहीं है। भूलें करते-करते सच्चे प्रयोग भी होंगे। और ऐसी तो कोई बात है ही नहीं कि बुद्धिके जितने प्रयोग करते हो, वे सभी गलत निकलते हैं। सौमें पाँच प्रयोग गलत साबित हुए

१ और २. नामका साधन-सूत्रमें उल्लेख नहीं है।

हो, तो उससे क्या हुआ? हमें भूलें करनेका अधिकार है। जहाँ भूल होगी, वहींसे फिर गिनेंगे और आगे बढ़ेंगे।

लन्दनमें किस मौकेपर मैं बोला था, यह तो मुझे याद नहीं है। मगर जो व्रत पालन करता है वह स्त्री-समाजकी ज्यादा सेवा कर सकता है, यह वाक्य तो सच है ही। और जिस हदतक मुझे उसमें सफलता मिली होगी उस हदतक सेवा ज्यादा हुई ही होगी, यह बात तो सचमुच माननी ही चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ १०८–१०।

४०१. पत्र : नृसिंहप्रसाद का० भट्टको

२० अप्रैल, १९३२

मुझे जो डर था, परिणाम वही हुआ है। मैं दरिद्रनारायणके लिए भटका, तुम्हें इसमें और मेरी सलाहमें असंगति दिखाई दी। तुम असंगति देखोगे, मुझे यह अन्देशा था। मगर मुझे असंगति दिखाई नहीं दी। जब दौरेपर निकला था, तब भी मुझे ऐसी कोई बात नहीं लगी थी। फर्क यह है: दक्षिणामूर्ति तुम्हारी संस्था कहलाती है, जैसे आश्रम मेरी संस्था कहलाती है। दक्षिणामूर्तिमें तुम्हारा काम रुपया इकट्ठा करना नहीं है बल्कि पढ़ाना है, विद्यार्थियोंमें अपनी आत्माको उँडेल देना है। आश्रममें मेरा कर्त्तव्य रुपया लाना नहीं, नियमोंका पालन करके आश्रमवासियोंसे पालन कराना और आश्रमकी विविध प्रवृत्तियोंको पुष्ट करना है। ऐसा करनेसे आवश्यकतानुसार रुपया आ जायेगा, यह श्रद्धा रखनी चाहिए। दरिद्रनारायणके कोषके लिए इससे उल्टा कानून है। इसमें तो वृत्ति ही कोष जमा करनेकी है। दक्षिणामूर्तिके लिए तुम नहीं जा सकते; मगर मित्र लोग उसके लिए शौकसे माँगें। माँगना उनका धर्म है। अब भेद समझमें आया? यह भेद आजका नया नहीं है। दक्षिण आफ्रिकामें भी मैं इसी भेदके अनुसार चलता था। यानी, ज्ञान होनेपर फीनिक्सके लिए भिक्षा बन्द कर दी थी। मगर वहाँ जो लोक संस्थाएँ चल रही थी, उनके लिए मैं घर-घर भटका था। इसलिए मेरा तो अब भी यही कहना है कि तुम्हें आज नहीं तो कल निश्चय कर लेना चाहिए कि रुपया उगाहनेके लिए तुम नहीं जा सकते। मदद करनेवाले मित्रोंको जानते हो। उन्हें पत्र लिखो और निश्चय बता दो, और फिर जो-कुछ होना हो, होने दो। ऐसी संस्थाओंकी अभीतक लोगोंमें कद्र नहीं है, लोग अपने-आप इन संस्थाओंको दान भेजनेका धर्म नहीं समझते, यह सब अर्धसत्य है। इन संस्थाओंके चलानेवाले हम लोग श्रद्धा-रहित है, इसलिए दानके बारेमें लोगोंने सच्ची शिक्षा नहीं पाई। वैसे यह एक 'दुष्ट चक्र' है। हमने लोगोंको तालीम नहीं दी, इसलिए उन्हें नहीं मिली; और जबतक लोग अपने-आप दान देना न सीखें, तबतक हम उनके यहाँ भटकते रहे; इस तरह काम कभी ठिकाने नहीं लगेगा। लोग सीखेंगे

नही और हममे श्रद्धा आयेगी नही। नतीजा यह होगा कि नौ दिन चले अढ़ाई कोस। इसलिए हममे से कुछ लोगोको वड़ी-से-वडी जोखिम उठाकर भी श्रद्धाका मार्ग अपनाना जरूरी है। इसके लिए तुम विलकुल योग्य हो। दूसरी सस्थाओकी तुलनामे यह सस्था पुरानी है, प्रतिष्ठा-प्राप्त है, शिक्षक सभी स्वार्थी नही है, जो शिक्षा दी जाती है, वह प्रेमसे दी जाती है। इसके साक्षीके रूपमें कितने ही विद्यार्थी तैयार भी हुए है। कुछ नियमित रूपसे दान देनेवाले मिल गये है। इसलिए व्यवहार-वुद्धिसे जाँच करनेपर भी मेरा बताया हुआ कदम अयोग्य नही लगता। और मेरे खयालसे शुद्ध श्रद्धा ही शुद्ध व्यवहार है।

यह क्यो मान लेते हो कि तुम फीस बढा दोगे और स्वावलम्वी वन जाओगे, तो धनवानोके लडके ही आयेगे? कुछ तो तुम्हे मुफ्त लेने ही होगे। इनका वोझा तुम धनवानोपर डालो, तुम्हारी शिक्षाकी उन्हे गरज होगी तो इतना कर वे देगे, देना ही चाहिए। अपनी शिक्षाकी आवश्यकताके वारेमे शका किसलिए करते हो? मेरा तो दृढ विश्वास और अनुभव है कि हमारी अच्छी-से-अच्छी सस्थाएँ भी इसलिए पूरा विकास नही कर पाती कि उनके आचार्योको अपना समय रुपया माँगनेमें लगाना पडता है। सस्थाका भीतरी विकास ही आचार्यकी साधना होनी चाहिए। उसके वजाय आचार्यको अपना अमूल्य समय रुपये जुटानेपर खर्च करते देखा गया है। मुझे तो ऐसा लगता है कि ऐसा करनेमे आचार्य अपना धर्म भूल गये। उन्होने अपने धन्धेके बारेमे श्रद्धा नही रखी। नतीजा हम देख रहे है। एक वार तुम सब शिक्षक मिलो, और फिर जो मित्र आजतक धन देते आये है उनके साथ मिलो, और वादमे सकल्प करो। मिलना सलाह लेनेके लिए नही, बल्कि सकल्प करनेके लिए और उसे प्रकट करनेके लिए ही हो। श्रद्धा किसीकी सलाहकी राह नही देखती, और सलाह लेने वैठोगे तो खोओगे।

आज तो इतना कहकर ही खत्म करता हूँ। फिर मेरे साथ झगड़ना हो तो शौकसे झगडना। तुम्हे पत्र लिखनेकी फुरसत है तो मुझे भी है ही। वाहर होता तो यह फुरसत मिल ही नही सकती थी। इसलिए मेरे विशेष ज्ञानका और विशेष अनुभवका पूरी तरह लाभ उठा लेना। नही उठाओगे, तो तुम घाटेमें रहोगे। यह कहनेमे कि इस मामलेमे मै कुशलता रखता हूँ, न मुझे कोई सकोच है, न शर्म। मेरी कुशलता तुम मजूर करो या न करो, यह तुम्हारी मर्जी। साँपका जहर उतारना जाननेवाला अगर अपनी कलाके वारेमें शकित रहे या उसे छिपाये, तो जिस तरह वह मूर्खोका सरदार माना जायेगा, उसी तरह मै भी अगर अपनी कलाको जानते हुए छिपाऊँ तो मूर्खराज कहलाऊँगा। जान-बूझकर ऐसा वननेकी मेरी इच्छा नही है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१ पृष्ठ ११२–४।

४०२. पत्र : ई० ई० डॉयलको

२१ अप्रैल, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,[1]

मेजर मार्टिनको लिखे गये मेरे १३ अप्रैलके पत्रका[2] सरकारने जो जवाब दिया है, वह मुझे मेजर भण्डारीने पढकर सुना दिया है। उस पत्रमे मैने, और बातोके अलावा, पहले ही भेजी गई उन अराजनैतिक साथियोकी विवरणात्मक सूची[3] के बारेमे भी लिखा था जो मुलाकातके लिए आ सकते है। उसी पत्र-व्यवहारके सिलसिलेमे आज मै, जितने अराजनैतिक साथी मेरे ध्यानमे आते है, उनकी पूरी सूची भेज रहा हूँ। मैंने सूचीमे उल्लिखित व्यक्तियोका सक्षिप्त वर्णन भी कर दिया है। परन्तु मैंने उसे सिर्फ उन व्यक्तियोतक सीमित रखा है जिनसे मै निकट भविष्यमे मिलनेकी इच्छा कर सकता हूँ। वे राजनीतिसे किसी भी तरह तनिक भी सम्बन्धित नही है। इसलिए मेरा सुझाव है कि जब मै ऐसे व्यक्तिसे मिलना चाहूँ जिसका नाम सूचीमे नही है, तब वह निर्धारित मर्यादाके अनुसार मुझसे मिल सकता है या नही, इसका निर्णय सुपरिंटेंडेटपर छोड़ दिया जाये। कारण, मै देखता हूँ कि यदि सूचीमे दर्ज न किए गए हर व्यक्तिका नाम सरकारको भेजना जरूरी माना जाये तो उत्तर-प्राप्तिमे विलम्बके कारण मेरी प्रार्थनाका उद्देश्य ही विफल हो सकता है।[4]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[सलग्न]

अराजनैतिक साथियोंकी विवरणात्मक सूची

१. इन्दिरा नेहरू	पण्डित जवाहरलाल नेहरूकी बेटी, आयु चौदह वर्ष, पूनामे श्री वकीलके स्कूलमे पढ रही है।
२ जहाँगीर वकील और उनकी पत्नी	शिक्षाविद्, पूनामे एक आदर्श विद्यालय चला रहे है। इन्दिरा नेहरू इसी विद्यालयमे पढ रही है।

१. बम्बई-प्रान्तकी जेलोंके महानिरीक्षक।

२. देखिए "पत्र: आर० बी० मार्टिनको", १३-४-१९३२।

३. देखिए "पत्र एम० जी० भण्डारीको", ६-३-१९३२।

४. अपने २३ अप्रैलके पत्रमें डॉयलने जवाब दिया था: "आप अपने जिन अराजनैतिक साथियोंसे मिलनेकी इच्छा कर सकते हैं, उनकी दूसरी सूची भी मैंने सरकारके पास भेज दी है। और उससे आपके इस सुझावपर निर्णय करनेको भी कहा है कि जो व्यक्ति सूचीमें नही हैं, वे आपसे मिल सकते हैं या नहीं, इसका निर्णय सुपरिंटेंडेंटको करने दिया जाये। सरकारसे आदेश प्राप्त होते ही मैं आपको सूचित करूँगा।"

३. हेमप्रभा देवी	सतीशचन्द्र दासगुप्तकी पत्नी; सौदपुर (बंगाल) में खादी-कार्यमें पूरी तरह संलग्न।
४. रैहाना तैयबजी	श्री अब्बास तैयबजी की बेटी, जन्म-रोगी।
५. हीरालाल शाह	बम्बईमें रहनेवाले एक व्यापारी; इनकी गणित-ज्योतिषमें रुचि है।
६. दामोदरदास कानजी	बम्बई-वासी एक सज्जन; आश्रमके साथ इनका गहरा सम्पर्क है।
७. करमचन्द चुनीलाल	बम्बईके एक दलाल।
८. हीरावन्ती मनसुखलाल	समाज-सेविका; मनसुखलाल चुनीलालकी पत्नी।
९. नरगिस कैप्टन	भारतीय डाक-विभागके स्वर्गीय श्री कैप्टनकी सदा बीमार पत्नी।
१०. रमाबहन	गुजरात विद्यापीठकी छात्रा; अहमदाबादके सेठ रणछोड़लाल अमृतलालकी बेटी।
११. प्रभाशंकर पारेख	अपना धन्धा करनेवाले राजकोटके एक सज्जन। आश्रममें रहनेवाली एक बालिकाके पिता।
१२. बहराम खम्भाता और तहमीना खम्भाता	बम्बईके एक अस्थि-विज्ञानी और उनकी पत्नी।
१३. मजुकेशा मशरूवाला	एक आश्रमवासीकी भतीजी, एक खैराती दवा-खाना चला रही है।
१४. सुशीला कुमारी	दिल्लीके मैडिकल कॉलेजकी छात्रा; आश्रमके श्री प्यारेलालकी बहन।
१५. सुशीला कुमारी	राजकोटके बालिका विद्यालयकी शिक्षिका।
१६. दिनकर मेहता	विद्यापीठका एक बीमार छात्र; इसका इलाज आजकल डॉ० मुथु कर रहे हैं।
१७. पुरातन बुच	विद्यापीठका एक बीमार छात्र।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रेक्ट्स, होम डिपार्टमेन्ट, स्पेशल ब्रांच, फाइल संख्या ८०० (४०), भाग–१, पृष्ठ १८७।

४०३. पत्र : प्रेमलीला ठाकरसीको

२१ अप्रैल, १९३२

प्रिय बहन,

कल रुई और शहद मिल गये। आभार मानूं? पर यह रुई तो मिलकी पिंजी जान पडती है। आप जानती तो होंगी कि यह काम नही आयेगी। पिछले बरसकी याद दिलाऊँ? तब मैंने आशा तो यह की थी कि आप अच्छी हाथकी ओटी हुई रुईका सग्रह करेगी और उसे आप अपने यहाँ पिंजवायेगी और वही कातनेको देगी। मैंने तो ऐसी ही रुईमे हिस्सा बँटानेकी इच्छा की थी। अगर आप ऐसा न करा सकी हो, तो खादीकी दुकानसे मै ऐसी रुई मँगा लूंगा। लगता है, यहांके दफ्तरवाले यह समझाकर नही बता सके। ऐसी रुई मिल सके तो तुरन्त भिजवाइए।

आश्रमके लोगोके सिवा मै जिन-जिनसे मिलना चाहता हूँ, उनके नाम मुझे देने थे। उनमे से कुछ नाम मै दे चुका हूँ। उनमे आपका नाम भी दिया था। सरकारकी ओरसे उत्तर आ गया है कि आप मिलने आ सकती है। इसलिए जब इच्छा हो तब किसी आश्रमवासीके साथ, जो आ रहा हो, या अपने-आप भी आ सकती है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८२२)से; सौजन्य : प्रेमलीला ठाकरसी।

४०४. पत्र : नारणदास गांधीको

२१/२२ अप्रैल, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारी डाक यहाँ नियमसे बुधवारकी शामको मिल जाती है। कल भी इसी तरह मिली। कह सकते है, कताईका नतीजा बहुत अच्छा निकला। तुम्हारे तारोके बारेमे तो मैंने यही बैठे-बैठे अनुमान लगा लिया था। किन्तु दूसरोने भी खूब काता। इसका हमारी पूरी कताईपर असर पड़े तो बहुत अच्छा है।

मेरी बाईं कोहनीमें दाहिने हाथके अँगूठे-जैसा दर्द होता है। और पिछले कुछ दिनोसे डॉक्टर कातना छोड़कर उसे कुछ समय पूरा आराम देनेको कह रहा है। इसके बारेमे तुम्हे मैंने पिछली बार लिखा था। यह लिखाते समय इतना ही कहता हूँ कि अभी प्रयोग चल रहा है। दाहिने हाथसे सूत ठीक निकाल पाता हूँ। इसलिए अभी यह तो नही कह सकता कि कोहनीका दर्द बिलकुल निकल जायेगा या नही, किन्तु चिन्ताका कोई कारण नही है। हर मंगलवारको जब डाक बन्द करके भेजूंगा, तुम्हे निश्चित समाचार दिया करूँगा। पत्र लिखवानेका प्रारम्भ तो गुरुवारको किया है।

मथुरादास आ गया, यह ठीक हुआ। तिलकम कालीकट जाये तो अच्छा। किन्तु वहाँ इसकी ठीक सार-सँभाल करनेवाला कोई न हो तो हम इसे अपनी जिम्मेदारी पर वहाँ न भेजें। अमतुलके बारेमें उसे पत्र लिख रहा हूँ; सो पढ़ लेना।[1] दार्जिलिंगसे मेरे पास पत्र[2] आया था। उन्हें जो लिखा था सो तुम्हें सूचित कर चुका हूँ। तुम जब आनेका निश्चय करो, आ जाना। जिन बहनोंसे अभी कोई मिलकर नहीं गया, उनसे तुम्हारी भेंट हो सकेगी।

काकाके बारेमें यहाँसे जितना किया जा सकता है, कर रहा हूँ।

सोनीरामजी के पैसेका जो उपयोग करना योग्य लगे, करना। जब कभी 'गीता' मुफ्त देना जरूरी लगे, इस पैसेका अवश्य ही उसके लिए उपयोग किया जाना चाहिए।

तुम्हारे यहाँ जो चोर घुसा था, उसे सब-कुछ मालूम रहा होगा। यह लिखने का लोभ होता है कि जमनाको यही सबक जरूरी था। किसी भी घरमें एक पैसा तक नहीं होना चाहिए। जो-कुछ हो वह आश्रमकी तिजोरीमें रहना चाहिए। और वहाँ भी रखे बिना काम न चले तभी रखा जाये। किताबें, चरखा और थोड़े-से औजारोंके सिवा हमारे कमरोंमें और कोई असबाब होना ही नहीं चाहिए। कपड़े भी रोज पहनने-भरके रखें। धनी जिस तरह अपने सामानकी सूची बनाता है और जितने ज्यादा पन्ने भरते हैं उतना खुश होता है, उसी तरह हमारे पास सूचीके लिए जितना कम होता चला जाये, हम उतने खुश होते चले जायें।

हमारा आदर्श तो यह है कि लिख रखने लायक कुछ हो ही नहीं। यों तो हम जबतक संग्रह करेंगे तबतक चोर भाई अपना हिस्सा लिए बिना रह ही नहीं सकते। हम स्वेच्छासे नहीं देते, इसलिए वे जोर-जबर्दस्तीसे ले जाते हैं।

मैं कुसुमको जो पत्र लिखूँगा, तुम तो उसे देखोगे ही। कुसुम बीमारोंकी परिचर्या करना सीखे, यह अच्छा तो है ही। श्रीमती लाजरस[3] उसे अच्छी तरह रखेंगी, मैं यह भी मानता हूँ। किन्तु, फिलहाल यह काम कुसुमके वशके बाहरका लगता है। यह जब अपने शरीरको नहीं सँभाल सकती तो दूसरोंकी परिचर्या क्या करेगी। बीमारकी परिचर्यामें शरीरको कम नहीं खटना पड़ता। कई बार रात-दिन काम करना पड़ता है। चलने-फिरनेका तो पार नहीं होता। बीमार सामान्यतया सहनशील नहीं होता। चिड़चिड़ा और अधीर होता है। इसलिए जो गम्भीरताके साथ इस सेवाके कार्यको अपनाता है, उसे अपना शरीर और मन मजबूत बनाना ही चाहिए। यह सब उसके लिए है जो शुद्ध सेविका बनना चाहती है। जिसे बीमारके प्रति कोई सहानुभूति नहीं और जो बेगार टालना चाहती है, ऐसी नर्सको तो दूरसे ही नमस्कार। नर्सका काम, सच कहें तो डॉक्टरके कामसे भी अधिक जोखिमका है। कुशल डॉक्टरोंका तो यह कहना है कि यशके पात्र वे नहीं, नर्सें होती हैं। यह सब समझ लेनेपर और कुसुमका शरीर पूरी तरह समर्थ हो जाये, तो मैं उसे पूरा-पूरा प्रोत्साहन दूंगा।

१. देखिए "पत्र : अमतुस्सलामको", २२-४-१९३२।
२. महावीर गिरिका। देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", १८-४-१९३२।
३. वाडीलाल साराभाई अस्पताल, अहमदाबादकी प्रधान परिचारिका।

मेरा यह विचार तो है ही कि हर नर्सको ब्रह्मचारिणी होना चाहिए। ससारकी अच्छी-से-अच्छी नर्से कैथोलिक सम्प्रदायमे देखी जाती है। अधिक-से-अधिक सख्या भी इसी सम्प्रदायसे प्राप्त होती है और इन सबका ब्रह्मचारिणी होना जरूरी होता है। इस सम्प्रदायकी यह और इसके सिवा दूसरी ध्यान खीचनेवाली विशेषता यह है कि इस सम्प्रदायमे प्राथमिक कक्षासे लगाकर ऊँची-से-ऊँची शिक्षा देनेवाले सारे शिक्षक ब्रह्मचारी ही होते है। इन्हे मात कर सकनेवाले बहुत ही थोडे शिक्षक देखनेमे आते है।

२२ अप्रैल, १९३२

धीरूने मगनचक्र लेकर आने या भिजवानेकी बात लिखी थी। मै लिख चुका था कि साथ लेकर आये या भिजवाये। अभीतक नही आया, यह क्यों? हाथका कष्ट बना हुआ है, इसलिए यह चरखा ज्यादा याद आता है। पद्माके पत्रमे भी इसपर कातनेका आग्रह है, इसलिए धीरूको लिखा और पहले जितना उत्सुक था, उससे अब अधिक उत्सुक हूँ। चरखा तैयार हो तो किसी आते-जातेके साथ भेज देना। बम्बईतक पहुँच जाये तो कोई और आनेवाला न हो तो भी डाह्याभाई ले आयेगा क्योकि यह हर शनिवारको आता ही है। रूई भेजनेके लिए तो तुम्हे लिखा ही है।

कुसुमके बारेमे वीणाबहनको पत्र लिखा है, वह देख लेना। इसलिए अब कुछ अधिक कहनेको नही बचता। मणिबहन बेलगाँवसे १४ मईको छूटेगी। उसका पत्र आया है, उसमे लिखा है कि केशुने उसके लिए एक चरखा बना देनेकी जिम्मेदारी ली थी। वह तैयार हो गया हो तो डाह्याभाईके पास बम्बई भेज दिया जाये। और न हुआ हो तो तैयार करके बादमे भिजवाये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२२१ से भी; सौजन्य : नारणदास गाधी।

४०५. पत्र : ई० ई० डॉयलको

२२ अप्रैल, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

यदि आप मेजर मार्टिनकी छोडी हुई फाइल उलटाये तो आप देखेगे कि मै जिस मामलेका उल्लेख कर रहा हूँ, वह कई दिनोसे टलता चला आ रहा है। शायद काका कालेलकरको आप उतना ही अच्छी तरहसे जानते है जितना कि मै। वे इस समय बेलगाँव केन्द्रीय जेलमे है। वे बीसापुरसे बेलगाँव भेज दिए गए थे। मै उनके तथा तीन अन्य साथियोके स्वास्थ्यके सम्बन्धमे बिलकुल सही खबर पानेकी कोशिश करता रहा हूँ, लेकिन काफी देरके बाद थोडी-सी अस्पष्ट जानकारी पानेके अलावा मुझे कुछ भी सफलता नही मिल सकी है। मेजर मार्टिनने जानेसे कुछ ही

पहले जो उत्तर मुझे दिया था, उसमे बताया था कि मै जो सूचना चाहता हूँ, वे उसके बारेमे पता लगा रहे है। मेजर भण्डारी-द्वारा प्राप्त पहलेकी सूचना से पता चलता है कि काकासाहब कमजोर है। शायद उनका वजन घट गया है और उन्हे गायका दूध नही मिलता; उन्हे यहाँ गायका दूध मिला करता था। इसलिए यदि मेरे सुझावके विपरीत कोई राजनैतिक कारण न हो तो मै उनका तबादला यरवदा कर देनेका सुझाव देता हूँ, और यदि वे मेरे साथ रखे जा सके, तो मै आशा करता हूँ कि मै उनका वजन ११६ पौंडतक पहुँचा दूंगा। १९३० मे यहाँ उनका यही वजन था।

मेजर मार्टिनको लिखे मेरे १३ अप्रैलके पत्रमे जिन तीन अन्य कैदियोका उल्लेख है, उनमे से नरहरि परीखको नाककी तकलीफ है, जिसके कारण उन्हे अक्सर बहुत कष्ट हो जाता है। उनकी पत्नी श्रीमती परीख लिखती है कि यद्यपि उन्होने जवाबी पोस्टकार्ड भेजे है, फिर भी बेलगाँव-जेलसे पत्रकी प्राप्ति-स्वीकृति भी नही मिल पाती है। उन्हे अपने पतिका कोई पत्र नही मिला। वे चिन्तित है, यह स्वाभाविक है। मैने खुद भी काकासाहबको लिखा और उनके बारेमे पूछनेके साथ-साथ अन्य तीनोके बारेमें भी पूछा, क्योकि वे सब आश्रमके निवासी है। लेकिन मुझे न तो काकासाहबका जवाब मिला है न उनका। यदि हो सके तो मै उनके निजी पत्र चाहूँगा। मै ऐसा मानता हूँ कि मुझे साथी कैदियोके साथ पत्र-व्यवहार करनेकी अनुमति दिये जानेका उद्देश्य यही था कि मुझे वह मानव-सुलभ सन्तोष दिया जाये जिसकी मुझे जरूरत है और जो मुझे साथियोंकी कुशल-क्षेमकी सूचना पाकर मिल सकता है।

मै जानता हूँ कि आप अभी-अभी आये है और बहुत ही व्यस्त होगे। यदि इन मामलोको, जिनकी ओर मैने आपका ध्यान दिलाया है, जल्दी जाननेकी सख्त जरूरत न होती तो आपके आते ही मै शायद आपको परेशान न करता।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई-सरकार, गृह विभाग, आई० जी० पी० फाइल स० ९।

१. डॉयलके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट-६।

४०६. पत्र : मीराबहनको

[२२ अप्रैल, १९३२][1]

चि० मीरा,

तुम्हारे पत्रकी राह देख रहा था, अभी मिला। तुम्हारी तरह मै पत्र देनेमे देर क्यो करूँ?

मुझे बहुत खुशी है कि कमलादेवी[2] तुम्हारे साथ है और वे सुबहकी प्रार्थनामे तुम्हारे साथ शरीक होती है और शामको भजन गाती है। उनके जोरसे रस्सी कूदनेकी बातसे मुझे उन दिनोकी याद आ जाती है जब मै इसी तरह कूदा करता था। मैंने लड़कोको भी सिखा दिया था। रामदास सबसे बढ़िया कूदता था। यह व्यायाम सचमुच बढिया है, खास तौरपर जाड़ेके दिनोमे।

अच्छा है कि तुम्हारा बिना नमकके भोजनका प्रयोग जारी है और वह तुम्हे अनुकूल आ रहा है।

यहाँ एक नये डॉक्टर आये है। वे पारसी मेजर है। उन्हे अपने कामसे प्रेम है और उनमे वैसी ही सहज गौरवपूर्ण शिष्टता है जो किसी सभ्य पारसीमे प्रायः पाई ही जाती है। वे मेरे दाहिने अँगूठे और बाई कोहनीपर बिजलीकी सेक करते है। कोहनीमे कुछ समयसे दर्द रहने लगा है। लेकिन यह उसी वक्त होता है जब मै एक खास ढंगसे काम करता हूँ। उनका खयाल है कि कुछ रोज कातना बन्द करनेकी आवश्यकता हो सकती है। राष्ट्रीय सप्ताहके दिनोंमें मैंने दुगना काम किया है, पर इस वक्त कताईका यह हाल है कि रोज लगभग ८५ तार कात पाता हूँ। डॉक्टर मेहताके कुछ कहनेसे पहले ही मैंने बायें हाथसे चरखा चलाना शुरू कर दिया है। आज चौथा दिन है। मैंने बहुत अच्छी प्रगति की है। दाहिने हाथसे ज्यादा जमकर सूत निकाल पाता हूँ और तार पहलेसे बारीक और समान होता है।

बाये हाथसे इस तरह अभ्यास करनेपर मुझे फिर विचार आता है कि हम लोगोको दाये हाथके बराबर ही बाये हाथसे काम लेनेकी कोशिश करनेकी जरूरत है। और हमे बच्चोंको[3] अभीसे दोनो हाथोसे काम करना सिखाना चाहिए। इस बारेमें नारणदासको मै पहले ही लिख चुका हूँ।

१. "जेल सुपरिंटेंडेंटने पत्रपर इसी दिन हस्ताक्षर किए थे"—मीराबहन।

२. मीराबहन लिखती हैं: "कमलादेवीको सजा 'बी' श्रेणीके कैदीकी हुई थी और वे रखी गई थीं 'बी' श्रेणीकी अन्य कैदी बहनोंकी तरह दीवानी जेलमें 'सी' श्रेणीवाली बहनोंके साथ। वे और मैं बाकी कैदियोंकी तरक्कीमें बहुत अधिक दिलचस्पी लेने लगीं। नतीजा यह हुआ कि हम दोनों बड़े आर्थर रोड वाले जेलमें स्त्रियोंके स्थायी वार्डमें भेज दी गईं। वहाँ हमें तीन छोटी-छोटी बैरकोंमें से एकमें रख दिया गया, जिनका एक ही बरामदा था। अन्य बैरकोंमें अपराधी स्त्रियाँ रहती थीं।"

३. "आश्रमके बच्चे"—मीराबहन।

मेरे खयालसे दो दिनके उपवासके कारण मैंने दो पौंड वजन खोया है। अगर वजन बराबर न घटे, तो इससे कोई अन्तर नही पडता। अगर घटेगा, तो मैं जरा भी सकोच किए बिना फिर दूध लेने लगूँगा। मैंने सिर्फ जानकारी देनेके विचारसे तुम्हे इतना लिखा है। वजनके इस प्रकार घट जानेकी बातपर तुम परेशान न होती रहना।

धीरे ही सही, पर आश्रमके इतिहासका काम चल रहा है। बकाया पडे हुए पत्र-व्यवहारको निपटानेके लिए मैंने पिछले तीन दिनसे इतिहासका काम स्थगित कर दिया है। जल्दी ही फिर शुरू करूँगा।

आकाशका अध्ययन चलता रहेगा। अब मुझे उसके सम्बन्धमे कुछ पुस्तकें भी मिल गई है। इस अध्ययनसे अनन्तके साथ मैं अधिक एकराग हो जाता हूँ।

मुझे कातनेके लिए पीजनेकी जरूरत नही पड़ेगी। महादेवने पहले ही पीजना शुरू कर दिया है। वह हमेशा अपनी जरूरतसे ज्यादा पीजता है। और ऐसा वह मेरे लिए करता है। पूनियाँ इतने नियमित रूपसे मिलती रहती है कि यह नही लगता कि यह भण्डार कभी खाली होगा।

स्वास्थ्य बिगडनेके लिए काफी हदतक राधा खुद जिम्मेदार है। वह बहुत कुढती है और सफाईमे जरूरतसे ज्यादा समय लगाती है। और डॉक्टर जिस तरह पूरा आराम करनेको कहते है, उस तरह आराम नही करती। अब मैं अल्मोड़ा जानेके लिए ज्यादा जोर नही देना चाहता। हमे रहन-सहनकी कला गरीबोसे सीखनी चाहिए। मैं जानता हूँ कि उस आदर्शकी ओर बढनेमे सबसे बड़ी रुकावट मैं हूँ। तुमको और मेरे बादमें बच रहनेवाले दूसरे लोगोको उन बहुत-सी चीजोको फिरसे जमाना पड़ेगा जो मेरे साथ सम्बन्ध होनेके कारण छोड़ दी गई है या छोड दी जायेगी, पर दरअसल जिन्हे छोडना नही चाहिए था।

हम सबकी तबीयत अच्छी है। हाँ, वल्लभभाईकी नाक और कब्ज अब भी उन्हे पहलेकी तरह परेशान करते है। इन दिनो डॉक्टर मेहता इन दोनो बीमारियोका इलाज कर रहे है, और थोडे ही अरसेमे कुछ आराम पहुँचा देनेकी आशा रखते हैं।

मैं रुकावटोके बीच यह पत्र लिख रहा था तभी हमने आये हुए अखबारोसे यह जाना कि कमलादेवीका तबादला बेलगाँव कर दिया गया है। कैदीकी कोई पसन्द नही होती। वह अपने शरीरका आप मालिक नही होता।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२१८) से, सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६८४ से भी।

४०७. पत्र : अमतुस्सलामको

२२ अप्रैल, १९३२

बेटी अमतुल,[1]

मेरे पास समय होता तो मैं तुझे उर्दूमें लिखता। तू क्यो नही लिखती? सिर्फ लिखावट साफ होनी चाहिए। मेरे लिए वह अच्छी मश्क रहेगी। मैंने तेरा नाम[1] ठीक तो लिखा है न?

मुझे डॉ० शर्माकी किताबे अबतक नही मिली। जब मिलेगी, तब पढूँगा और उनके बारेमे सब कुछ बताऊँगा।

तेरे बारेमे मै नारणदाससे लिखा-पढी कर रहा हूँ[2]। बेशक, तू जब चाहे आश्रम जा सकती है। मुझे ऐसा लगता है कि जहाँ तेरी तबीयत ठीक रहे, तुझे वही रहना चाहिए। सेवाके मौके सब जगह मिलते है। उचित अवसरपर एक स्नेहपूर्ण बात कह देना भी पर्याप्त सेवा है। किसी सहृदयतासे भरे विचारपर अमल करना भी बड़ी सेवा है। शरीरसे की जाये, सेवा वही है, दूसरी नही, ऐसा मानना तो बुत-परस्ती है।

अपना दैनिक कार्यक्रम लिखना। डायरी रखती हो?

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २४९) से।

४०८. एक पत्र

२२ अप्रैल, १९३२

प्रिय,

मुझे लगता है कि तुमने आश्रमके लोगोको परखनेमे भूल की है। किसी भी दूसरे व्यक्तिके हृदयमे प्रेम है या नही, यह कह सकना बहुत कठिन है। मानव हृदयमे अच्छाई-बुराईका जो सघर्ष निरन्तर चलता रहता है, उसके बारेमे हमे क्या मालूम? हम दूसरोके दोष गिननेके लिए सदा तैयार रहते है, पर उन्होने अपने किन दोषो पर विजय पाई है, यह हम नही जान पाते। मेरे कहनेका यह अर्थ नही है कि आश्रममे रहनेवाले हम सब लोग पूर्ण है। पूर्णतासे तो हम बहुत दूर है। किन्तु मैं यह जरूर कहना चाहता हूँ कि आश्रमका एक सदस्य दूसरेको परखनेका अधिकारी नही है।

१. गांधीजी ने नाम उर्दूमें लिखा है।

२. देखिए पृष्ठ २४३ और २८९।

उससे तो प्रेमका अभाव प्रकट होता है। मैंने यह भी देखा है कि जो अपने कर्त्तव्य-पालनमें बहुत पक्के है, वे अक्सर दूसरोकी आलोचना करते है, खासकर जब उन्हें ऐसा लगे कि वे लोग उनके समान कर्त्तव्यपरायण नही हैं। यह बहुत बड़ी भूल है और दूसरोंकी प्रगतिमे बाधा डालती है। हम अपना ध्यान रखें। दूसरे अपना ध्यान नही रखते तो उन्हे देखनेवाला ईश्वर है।

मेरे लिखनेका यह अर्थ भी नही कि तुम यन्त्रवत् अपनी आँखें और कान बन्द कर लो और जो-कुछ तुम्हारे सामने हो रहा हो, उसे न देखो, न सुनो। मैंने जो सुझाव दिया है, वह यन्त्रवत् व्यवहार करनेका कदापि नही कहा जा सकता। यह तो एक मन.स्थिति है जो अभ्याससे प्राप्त होती है। इस बीच जहाँ-कही तुम्हे स्नेहका अभाव खटके, जिस किसीमे यह दोष दिखाई दे, तुम, जहाँतक बन पडे, स्नेहपूर्ण ढगसे उसका ध्यान इस ओर खीचो। यदि तुममे ऐसा करनेके लिए पर्याप्त कोमलता न हो तो कम-से-कम नारणदासको बता दिया करो। फिर वह जो चाहे करे।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९०४८)से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

४०९. एक पत्र

२२ अप्रैल, १९३२

चि०,

हम आश्रममें आवारा कुत्तोंको नही रखते। रखें तो आश्रम उनसे भर जाये और कुत्तोंके पालनमें लग जायें तो मनुष्योको भूल बैठें। भोजनके पहले जो मन्त्र हम कहते है, वह ईश्वरसे एक प्रार्थना है। हमे हर समय ईश्वरका अनुग्रह मानना चाहिए। जहाँतक बने, हमे चीन, जापानका माल भी काममें नही लेना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०५२)से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

४१०. पत्र : महेन्द्र वा० देसाईको

२२ अप्रैल, १९३२

चि० मनु,

इस बार तूने अक्षर थोड़े ठीक किये हैं; फिर भी अभी बहुत सुधार करने हैं। किसीकी मदद लेकर सुधारना। अगर नानु पत्र पढ़नेके लिए नही देता तो उससे छीनना नही चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४२७)से; सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई।

४११. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२२ अप्रैल, १९३२

चि० प्रेमा,

धुरन्धरके बारेमे मैं लिख चुका हूँ।[1] उसने अन्न-त्याग नही किया है।

मुझे लगता है कि तुम्हे आनन्दी[2] को जबरदस्ती अपने साथ घूमने नही ले जाना चाहिए। उसमे उत्साह न हो तो वह यह नही कर पायेगी। उसे प्राणायाम सिखा दे और थोड़ी 'पैसिव एक्सरसाइज' कराये तो अभी काफी होगा। पै० ए० तू जानती है?

धर्म-परिवर्तनके बारेमें मैं यह नही कहना चाहता कि यह कभी उचित हो ही नही सकता। हमे दूसरेको अपना धर्म बदलनेके लिए निमन्त्रण नही देना चाहिए। मेरा धर्म सच्चा है और दूसरे सब धर्म झूठे हैं, इस तरहकी जो मान्यता इन निमन्त्रणोके पीछे रहती है, उसे मैं दोषपूर्ण मानता हूँ। लेकिन जहाँ जबर्दस्तीसे या गलतफहमीसे किसीने अपना धर्म छोड़ दिया हो, वहाँ उस मनुष्यको अपनी गलती सुधारनेमें यानी अपने असली धर्ममे जानेमे बाधा नही होनी चाहिए। इतना ही नही, उसे प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। इसे धर्म-परिवर्तन नही कहा जा सकता। मुझे अपना धर्म झूठा लगे तो मुझे उसका त्याग करना चाहिए। दूसरे धर्ममे जो-कुछ अच्छा लगे, उसे मैं अपने धर्ममे ले सकता हूँ — लेना चाहिए। मेरा धर्म अपूर्ण लगे तो उसे पूर्ण बनाना मेरा फर्ज है। उसमें दोष दिखाई दे तो उन्हे दूर करना भी फर्ज है।

१. देखिए "पत्र : प्रेमाबहन कंटकको", १८-४-१९३२।

२. श्री लक्ष्मीदास आसरकी पुत्री।

मीराबहनको मैं ईसाई मानता हूँ। अब तो वह भी अपनेको ईसाई मानती है। ईसाई होनेपर भी 'गीता' को वह आदरसे पढ़े, इसमें मुझे विरोध नहीं दीखता। हमारी प्रार्थना दूसरे धर्मके लोग भी आदरसे गाते हैं।

स्वराज्य मिलनेपर क्या करूँगा, यह मैं सचमुच ही नहीं जानता। उस समय भी ईश्वर मुझे रास्ता दिखायेगा, जैसे आज दिखाता है। श्रद्धालु पहलेसे ही व्यवस्था नहीं करते। पहलेसे व्यवस्था करे, वह श्रद्धा नहीं है, अथवा है तो कमजोर श्रद्धा है।

ज्ञान, उपासना और कर्म — ईश्वर-प्राप्तिके तीन अलग मार्ग नहीं हैं, बल्कि ये तीनों मिलकर एक मार्ग हैं। उसके तीन भाग सुविधाके लिए कर दिये गये हैं। पानी हाइड्रोजन और ऑक्सीजनका बना है; लेकिन पानी न तो हाइड्रोजन है और न ऑक्सीजन। वैसे ही न तो ज्ञान अकेला प्राप्ति-मार्ग है और न अकेली भक्ति। लगभग ऐसा कहा जा सकता है कि प्राप्ति-मार्ग तीनोंका मिला हुआ रासायनिक प्रयोग है। इस उपमामें दोष है, फिर भी मैं जो कहना चाहता हूँ, उसे समझानेके लिए यह काफी है।

द्रौपदीकी लाज रखी, यह पानीकी शराब बनाने-जैसा चमत्कार नहीं है।[1] संकटके समय ईश्वर अपने भक्तोंकी मदद करता है, यह विश्वास उपयोगी है; ऐसे उदाहरण संग्रह करने योग्य हैं। लेकिन अगर कोई ऐसी सहायताकी शर्त लगाकर ईश्वरकी भक्ति करे तो वह निरर्थक है।

जबरदस्ती लोगोंके शरीर मजबूत बनानेकी पद्धति मुझे पसन्द नहीं है। इसमें जबरदस्तीकी जरूरत ही नहीं होती। शरीरको दुर्बल रखना किसीको कभी अच्छा नहीं लगता। यह शिक्षाका विषय है।

जरूरतें कम करनेका आदर्श लोगोंके सामने रखा जा सकता है। फिर उसके परिणामस्वरूप जो होना होगा, वह होगा। इसमें समझौता कहाँ आता है? समझौता करने न करनेकी जरूरत रहती ही नहीं है। जो गरीब भूखों मरते हैं उनकी जरूरतें बढ़नी ही चाहिए। लेकिन यह कोई नई बात नहीं है। आज भी यह कोशिश चल रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२८२) से। सी० डब्ल्यू० ६७३० से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक।

१. बाइबिलमें एक प्रसंग ऐसा दिया गया है कि किसी भोजके समय लोगोंको पिलानेके लिए शराब नहीं थी। उस समय प्रभु ईसा मसीहने पानीकी शराब बना दी थी। सेन्ट जॉन, अध्याय २।

४१२. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

२२ अप्रैल, १९३२

चि० परसराम,

गुजराती तुमने किससे लिखवाई ? जिसने भी लिखी, अक्षर सुन्दर वनाये। भाषा तो तुम्हारी ही मान रहा हूँ।

गुरुभाई या दूसरे किसीसे भी मधुर स्पर्धा अवश्य ही की जा सकती है। इसका अर्थ यह कि जो कोई काम ज्यादा अच्छी तरह कर सके, उसे आदर्श मानकर आगे बढते जाये। इसमे द्वेषका लेश भी नही होना चाहिए। इसीलिए मधुर विशेषणका उपयोग किया। इस स्पर्धामे हमने जिसे आदर्श माना हो, उसके विषयमे हमारी कामना यह होनी चाहिए कि वह अपने कौशलमे नित्य वृद्धि करे जिससे हमारा आदर्श और अधिक ऊँचा होता चला जाये। ऐसी कामनाका परिणाम हमारे अपने लिए भी अच्छा होता है, यानी हम भी आगे बढते जाते हैं।

किसी एक भी क्षेत्रमे हम नीतिच्युत हो जाये तो उसका असर दूसरे सब क्षेत्रोपर पडे बिना नही रहता, यह मेरी दृढ मान्यता और अनुभव है। दुराचारी व्यक्तिमे राजनीतिके क्षेत्रको नुकसान नही पहुँचता, ऐसा मानना बिलकुल गलत है। अथवा कोई व्यापारमे अनीति बरतते हुए अपने व्यक्तिगत या कौटुम्बिक व्यवहारमे नीतिकी रक्षा कर सकता है, ऐसी जो धारणा है वह भी झूठ है। इसलिए जहाँ-जहाँ दोष हो वहाँ-वहाँ उसपर दवा लगानी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४३७) से; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा।

४१३. पत्र : रैहाना तैयबजीको

२२ अप्रैल, १९३२

प्रिय रैहाना,

तुम्हारा खत मिला है। अब्बाजान भले कुछ दिनोके लिए आराम करे। मै उम्मीद करता हूँ कि जिस कामके लिए उनको ठहरना होता है, वह कुछ ऐसा कडा नही है। अब्बाजानको हम सबके बहुत सलाम, वन्देमातरम्। उनको यह भी कहो, मै हमेशा दुआ करता हूँ कि अब्बाजानको खुदा बहुत बरसो तक जिन्दा रखे और उनके हाथोसे बहुत सेवा करवाये। अम्माजानको भी बहुत सलाम और वन्देमातरम्। मेरे हाथमे उर्दूकी एक किताब आ गई है; उसमे से लिखता हूँ।[1]

१. यहाँतकका अंश उर्दू लिपिमें है। किताबसे उद्धृत भाग यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

मैं उर्दू अक्षरोकी बनावटके पीछे न पड़ूँ तो वह सुधर नही सकती। इतना समय कहाँसे निकले? फिर बाये हाथको अभ्यस्त बनाना है। इसलिए जितना हो पाता है, उसमे सन्तोष मान लेता हूँ। धीरे-धीरे जो हो जाये वही ठीक।

इस बार हमीदा और उसकी सहेलियोके बारेमे कोई खबर नही दी। इसके बादके पत्रमे मिलनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६४१) से।

४१४. पत्र : विद्या रा० पटेलको

२२ अप्रैल, १९३२

चि० विद्या,

रसोईघरमे जानेके पहले नहा लेनेकी टेव डालना ठीक है। खानेवालोपर भी यह नियम लागू किया जा सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४२५) से; सौजन्य : रवीद्र रावजीभाई पटेल।

४१५. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

२२ अप्रैल, १९३२

भाईश्री खम्भाता,

आपका पत्र मिला। आप दोनोकी एन्ड्रयूजसे भेट हो गई, यह अच्छा हुआ। आपसे भेटकी अनुमति मिल सकी और तबतक तबीयत ठीक नही हुई तो आपको तकलीफ दूँगा। मालिशके बारेमे पुस्तके मिलनेपर हम दोनो उन्हे देख जायेंगे। देखता हूँ, लाक्षादि तैल बहुत अच्छा तैल है।

आप सबको बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६००) से। सी० डब्ल्यू० ४३८६ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता।

४१६. पत्र : एक लड़कीको

[२२][1] अप्रैल, १९३२

चि०,

बापके राजमें लूट मची हो, तो वहाँ गरीब बेटा वंचित रह जाता है। माँका चरखा तो उसकी गरीब सन्तानके लिए ही चलता है।[2] जनेऊ या माला पवित्रताके अनुशीलनमें कुछ मदद कर सकते हैं। पर आजकल उनका बहुत उपयोग नहीं रहा है। गाय इसलिए माता मानी जाती है क्योंकि वह माँकी तरह दूध देती है। और फिर माता तो अपने बच्चेको भी एक सालतक दूध देती है; मगर गाय सबको देती है। इसलिए वह सबकी माँ है। माता बच्चोंसे बहुत सेवा लेती है। गायकी सेवा कौन करता है? इसलिए गाय तो बड़ी माँ है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ ११९। सी० डब्ल्यू० ९०५५ भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

४१७. पत्र : मणिबहन पटेलको

२२ अप्रैल, १९३२

चि० मणि,

जैसे लोग मौसममें बरसातकी राह देखते रहते हैं, वैसे ही हम लोग वहाँके पत्रोंकी राह देख रहे थे। उनमें से एक-दो मिले। . .[3] छूटनेके बाद यहाँ हो कर ही जानेका विचार रखना। सोमवार हो तो मंगलवारतक ठहरकर दोपहरको बारहसे या साढ़े ग्यारहसे एक बजेतक मिलनेका वक्त सबसे अच्छा है। उस समय आयेगी तो हम दो तो मिल ही सकेंगे। . . .हम तीनोंकी तबीयत अच्छी है। . . .

मैं देखता हूँ कि तूने अपने अक्षर सुधारनेका प्रयत्न अच्छी तरह किया है। यह बताता है कि प्रयत्नसे अक्षर अच्छे हो सकते हैं। और यह नियम सब बातोंपर लागू होता है।

'गीता' कंठस्थ करनेका अभिप्राय यह है कि वह अर्थके साथ आनी चाहिए और उच्चारण शुद्ध होना चाहिए। शिक्षिका कौन है? शायद यह जवाब तो तू मिलनेके

१. सी० डब्ल्यू०की प्रतिमें दी गई तारीखके अनुसार।

२. लड़कीके प्रश्न थे : बापके राजमें न समाये और माँके चरखेमें समा जाये, इसका अर्थ क्या है? जनेऊ किसलिए पहनते हैं? गाय माता क्यों कहलाई?

३. साधन-सूत्रके अनुसार, यह निशानी पत्रके जेल-अधिकारियों-द्वारा काटे हुए भागको सूचित करती है।

समय ही देगी, अथवा आखिरी खत लिखने दे तो पत्र भी लिख डालना। तन्दुरुस्ती अच्छी है या नही, यह प्रमाणपत्र तो हम लोग देखकर दे तब सही होगा। . . .

बाबा और यशोदा एक बार यहाँ आ गये। बाबा तो कुर्सीपर चढ बैठा था। और इतना ज्यादा मौजमे आ गया था कि अपने नये जूते भूल गया। उसके सौभाग्यसे या डाह्याभाईके सौभाग्यसे हममे से किसीने देख लिये और तुरन्त भेज दिये। यशोदाकी तबीयत बहुत अच्छी नही कह सकते। उसने कुछ वर्षोसे अच्छा स्वास्थ्य रखा ही कहाँ है? डाह्याभाई हर सप्ताह आते है और हम दोनो उनसे मिल सकते है।

जीवतरामका[1] काम अभी चलता रहता है। देवदास गोरखपुर [जेलमे] है। उसका पत्र अभी आया है। वह अकेला है, मगर आराममे है। पठन अच्छी तरह कर रहा है। लक्ष्मीको बेचारी हरगिज नही कहा जा सकता। पापा (राजाजी की बडी लडकी)की देखभाल जरूर करती है। परन्तु पापा अच्छी हो गई कही जा सकती है। राजाजी मजेमे है। उनका स्वास्थ्य अच्छा रहता है। उनके साथी भी काफी स्वस्थ है। इन्दु[2] मुझसे नही मिली। अब कहाँ है, यह पता नही। बहुत करके पूनामे ही है। कमला (नेहरू) प्रयागमे है। कमलापति [जवाहरलालजी]की प्लूरसी तो कुछ शान्त हुई मालूम होती है। परन्तु थोडा बुखार है।

चरखेके बारेमे अहमदाबाद लिखूँगा। परन्तु बढिया चरखा चाहिए तो यहाँसे भी दे सकूँगा। . . .

. . . बा को तो पहला पत्र मैने आज ही लिखा है। परन्तु उसके पत्र मिलते रहते है। वह और दूसरी बहने (यरवदा जेलमे) मजेमे है। मीठूबहन अपनी कक्षा चलाती है।

चश्मा टूट गया हो तो वहाँ भी बदलवाया जा सकता है। परन्तु अब निकलनेका समय नजदीक आ गया है। इसलिए इस सुझावमे बहुत सार नही है।

तेरा पत्र आज ही यहाँ आया और आज ही मिला है। और यह उत्तर भी आज ही लिखा जा रहा है। कल यहाँसे निकलेगा, ऐसी आशा रखता हूँ। वहाँ कब मिलेगा, यह हम सबके भाग्यपर आधारित है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४: मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ ८१–३।

१. आचार्य जे० बी० कृपलानी।

२. जवाहरलाल नेहरूकी पुत्री इन्दिरा; उस समय पूनामें पढती थी।

३. मणिबहन पटेल जेलसे १५ मई, १९३२ को छूटी थीं।

४१८. एक पत्र

२३ अप्रैल, १९३२

चि०,

कृष्ण भगवानने अर्जुनको हिंसाके पथपर आरूढ कराया, ऐसा कहना ठीक नही है। अर्जुन अहिंसाके नामपर जो अनर्थ करने जा रहा था, उसे उससे रोका। हिंसा तो अर्जुन कर ही चुका था, क्योकि वह सेना इकट्ठी कर चुका था। इस तरह अर्जुनके लिए दूसरा मार्ग बचा ही नही था। अर्जुनको हिंसासे भय नही था। वह तो स्वजनोको नही मारना चाहता था। परजनोसे युद्ध करनेमे उसे दोष नही दिखता था।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०५१)से, सौजन्य: नारणदास गाधी।

४१९. एक पत्र

२३ अप्रैल, १९३२

चि०,

कह सकते है तूने [राष्ट्रीय] सप्ताहमे अच्छा काम किया।

उपवासमे पेटमे जो आवाज होती है, वह हवा है।

सबको स्वजन मान सकनेके लिए यह भावना पैदा करनी चाहिए कि हम सबका एक ही ईश्वर है।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०६०)से, सौजन्य: नारणदास गाधी।

४२०. एक पत्र

२३ अप्रैल, १९३२

चि०

लडको और लडकियोके साथ खेलते समय कुछ मर्यादाएँ रखी जायें तो मैं इसमें कोई हर्ज नही देखता। कबड्डी साथ-साथ नही खेल सकते, ऐसा लगता है। इसमे एक-दूसरेका इतना अधिक स्पर्श होता है कि कोई विकारवश हो सकता है। हमे इस खतरेसे बचना चाहिए। हमे यह समझ लेना चाहिए कि जब बडी उम्रके लडके और लडकियाँ इस तरह मिलते हैं, तो उनके मनमे विकृति आती है। ऐसी बातको छुपा रखनेसे कोई लाभ नही।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०६१)से, सौजन्य: नारणदास गाधी।

४२१. एक पत्र

२३ अप्रैल, १९३२

चि०,

बीमारकी सेवा तो करनी ही चाहिए। किन्तु उस कारणसे कातना बन्द नहीं किया जा सकता। बीमारकी सेवा बीमारके लिए ही है। कातना तो करोड़ोंके लिए है।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०६७)से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

४२२. एक पत्र

२३ अप्रैल, १९३२

चि०,

चोटी रखने, न रखनेका धर्मसे कोई बड़ा सम्बन्ध नहीं है। व्यक्तिका जीवन ईश्वरपर अवलम्बित है। जिस चीजके बिना काम न चले, वह विलायती भी हो तो काममें लाई जा सकती है।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०६८)से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

४२३. पत्र: दूधाभाई दाफड़ाको

२३ अप्रैल, १९३२

भाई दूधाभाई[1],

तुम्हारी चिट्ठी मिली। सुन्दरभाईकी मददके लिए धन्यवाद। लगता है, तुमने काफी विद्यार्थियोंको आकर्षित कर लिया है। अब धनीबहनका[2] कष्ट ठीक हो गया होगा। लक्ष्मी[3] की खबर मिलती रहती है।

सरदार और महादेव मेरे साथ ही हैं।

दोनोंके यथायोग्य।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ७७५७ से भी; सौजन्य नारणदास गांधी।

१. सन् १९१७ में गांधीजी-द्वारा आश्रममें भरती किये जानेवाले प्रथम हरिजन।

२. दूधाभाईकी पत्नी।

३. दूधाभाईकी पुत्री, जिसका पालन-पोषण गांधीजी की देख-रेखमें आश्रममें ही हुआ था।

४२४. पत्र : कुसुम देसाईको

२३ अप्रैल, १९३२

चि० कुसुम (बडी),

तू आत्म-विश्वास रखेगी तो मेरे-जैसेकी आशा फलेगी।

गंगाबहन [वैद्य] की फकी और गोलीके बारेमें आश्रमको लिखा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८३५) से।

४२५. पत्र : मणिबहन न० परीखको

२३ अप्रैल, १९३२

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिला। नरहरिकी कोई भी चिन्ता मत करो। उसका पत्र पा सकनेकी आशा अभी रखे हूँ। उसकी खबर तो इस हफ्ते भी मिली है। उसे कोई परेशानी हो, ऐसा नही लगता। मैंने आज पत्र लिखा है; फिर भी बेलगाँव जानेकी इच्छा हो तो जा सकती हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९६७) से। सी० डब्ल्यू० ३२८४ से भी, सौजन्य : वनमाला म० देसाई।

४२६. पत्र : मंगला शं० पटेलको

२३ अप्रैल, १९३२

चि० मंगला (लाडली),

तू दूसरे नम्बर आई, यह अच्छी बात है। हमारा शरीर तुच्छ है, तू यह समझ गई कि नही? यह बात समझमें आ गई हो, तो आगेकी बात समझना सरल है। तुच्छ शरीरमें भी ईश्वर रहता है, क्या यह बडी बात नही है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०८५) से। सी० डब्ल्यू० ४९ से भी; सौजन्य : पुष्पाबहन ना० नायक।

४२७. पत्र : मोहन न० परीखको

२३ अप्रैल, १९३२

चि० मोहन,

तेरे अक्षर सुन्दर दिखते हैं। तुझे भी ऐसा ही सुन्दर बनना चाहिए। महादेव आनन्दमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१७७) से।

४२८. पत्र : निर्मला ह० देसाईको

२३ अप्रैल, १९३२

चि० निर्मला,

जहाँतक बने, विदेशकी चीजें नहीं लेनी चाहिए। लेकिन किसी देशकी चीज ले और किसीकी न ले तो इसमें हिंसा हो जाती हो, ऐसी कोई बात नहीं है। यह सारी बात प्रेमाबहनसे समझ लेना।

ताश खेलनेसे जिसे जुआ खेलने लगनेकी आशंका हो, उसे पत्ते कभी नहीं खेलने चाहिए। पत्ते खेलना कोई कर्त्तव्य तो है ही नहीं; न खेलना कर्त्तव्य बना दिया जाये, तो यह ज्यादा अच्छा कहलायेगा। जो बिना खेले रह सकते हैं, वे न खेलें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४७१) से। सी० डब्ल्यू० ९०५६ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

४२९. पत्र : पुरातन बुचको

२३ अप्रैल, १९३२

चि० पुरातन,

मेरा जो-कुछ विकास हुआ है, वह केवल सत्यकी आराधना से। दूसरा सब कुछ मुझे उसीमें से मिला है। फिलहाल जेलका विचार ही छोड दो। एक बार शरीर ठीक कर लेना है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१६६)से।

४३०. पत्र : पद्माको

२३ अप्रैल, १९३२

चि० पद्मा,

तुझे लम्बी चिट्ठी तो नही लिखूंगा, क्योकि बाये हाथसे बहुत नही लिखते बनता। फिर भी जितना कहना है, सब कह पाऊँगा। मुझे तो लगता है, तुझे आश्रम जाना चाहिए। लेकिन बा की और सीतलासहायकी राय भी जान लेनी चाहिए। मगन चक्रपर कातनेके योग्य हो गया हूँ। सुझाव तूने ठीक उतारकर भेजे। तूने इतनी मेहनत क्यो की? लेकिन अब वह पत्र सँभालकर रखूंगा। यह याद रख कि सेवा केवल शरीरसे ही नही होती। तू सच्ची कुमारी और साथमे विदुषी बने तो सेवा कर सकेगी। जिनका शरीर चलता है, फिर भी जो काया बचाते है, वे नाहक पैदा हुए। और उनका ज्ञान भी निकम्मा है। तू इसे समझ जाये तो चिन्ता करना छोड दे और तेरा स्वास्थ्य भी जल्दी सुधर जाये। शान्तिलालको आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१३२) से। सी० डब्ल्यू० ३४८४ से भी; सौजन्य: प्रभुदास गाधी।

४३१. पत्र : रामचन्द्र ना० खरेको

२३ अप्रैल, १९३२

चि० रामभाऊ,

तूने हिसाब ठीक लिखकर भेजा है।

एक ही व्यक्ति जिस तरह अलग-अलग घरोमें जा बसता है, उसी तरह अलग अलग शरीरोमें भी बसे तो इसमें अजीब कुछ नही है।

रामने इतना या कितना विलाप किया था[1], यह कौन जानता है? जो हम पढते हैं, वह तो कविका वर्णन है। ज्ञानीको ऐसा विलाप शोभा नही देता, यह तो स्पष्ट ही है, इसलिए हम यह माने कि हमारी कल्पनाके रामने ऐसा विलाप नही किया होगा।

खोया हुआ वजन पूरा कर लो।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २९१)से; सौजन्य. लक्ष्मीबहन ना० खरे।

४३२. सन्देश : यज्ञोपवीत संस्कारके[2] अवसरपर

[२४ अप्रैल, १९३२से पूर्व][3]

मुझे आजकल यज्ञोपवीत सस्कारका कोई महत्त्व नही दिखाई देता। फिर भी कोई उसे आवश्यक माने तो यह सस्कार बालकके सयाने हो जानेपर ही किया जाना चाहिए। यज्ञोपवीत सस्कारका अर्थ है, एक नये जीवनमे प्रवेश। उसके बाद आत्मसयम और सेवाका जीवन व्यतीत करनेका सतत प्रयत्न करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २५-४-१९३२।

१ सीता-हरणके समय।

२. गुजरात विद्यापीठके भूतपूर्व चित्रकला-शिक्षक श्री मढुलीकरके पुत्रका।

३. समाचारपर दी गई तारीख थी: "अहमदाबाद, २४ अप्रैल"।

४३३. पत्र : पुष्पा शं० पटेलको[1]

२४ अप्रैल, १९३२

चि०,

भारतमातामें धीरज, सहनशीलता, क्षमा, वीरता, अहिंसा, निर्भयता, वगैरह गुण होने चाहिए। उन्हें विकसित करनेके लिए तो आश्रम है ही।

हमें इस जन्मका भी सब कहाँ याद रहता है?[2] और रहे तो हम पागल हो जायें। किसी चीजको याद रखकर उसमें से जो लेना हो, वह ले ले। फिर उसे भूल जायें तो उसमें क्या हर्ज? उलटे लाभ ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९०५३) से; सौजन्य : नारणदास गांधी। **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-१, पृष्ठ ११९ से भी।

४३४. पत्र : दूधीबहन वा० देसाईको

२४ अप्रैल, १९३२

चि० दूधीबहन,

समय हो तो पत्रोंका उत्तर उसी समय देनेमें कम श्रम है। जब हाथ काम नहीं देगा, तो लिखना अपने-आप छूट जायेगा। पति जिस पथको पकड़े, पत्नी भी उसपर चल सकती है, पर धर्म कई बार अलग ही रास्ता सुझाता है। सच्ची बात तो धीरज है। जो धर्म प्राप्त हो गया, उसका खुशी-खुशी पालन करना चाहिए — ऐसा करना सीखना चाहिए। स्त्री अपनेको निर्बल क्यों गिने? दोनों बराबर हैं और परस्पर मित्र-जैसे हैं। स्त्री अपंग बनकर पतिको भी अपंग बना देती है। इसलिए पतिके विचारसे भी उसके लिए वीरांगना बनना योग्य है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४२८) से; सौजन्य . वालजी गोविन्दजी देसाई।

१. नाम साधन-सूत्रमें नहीं दिया गया है। लेकिन नाम "पत्र : पुष्पा शं० पटेलको", पृष्ठ २६० से लिया गया है, जिसमें गांधीजी ने पुष्पा शं० पटेलकी नाटकमें भारतमाताकी भूमिकाका जिक्र किया है।

२. पुष्पा पटेलने यह सवाल भी पूछा था कि "हमें पिछले जन्मकी बातें याद क्यों नहीं रहती?"

४३५. पत्र : देवदास गांधीको

२४ अप्रैल, १९३२

चि० देवदास,

तूने अपना विचार खुद झूठा सिद्ध कर दिया। क्योकि तेरी जो चिट्ठी अभी-अभी मिली है, वह अतिशय सक्षिप्त न सही, पर्याप्त बडी भी नही है। खैर।

तेरे पत्र तो नही आते थे, पर तेरी खबर मिलती रहती थी। तुझे वहाँ एकान्त मिल गया, यह अच्छा हुआ। तुझे इसकी आदत डालनी भी थी। तेरी तबीयत ठीक बनी है, इसलिए मै निश्चिन्त हूँ।

मै बेशक चाहता हूँ कि तू अपनी उर्दू खूब पक्की कर ले।

इस समय दो बजनेमें दस मिनट है। महादेव अपना काम पूरी तरह निबटा कर आ गया है और चूंकि मै अभीतक बाँये हाथसे बहुत धीरे-धीरे ही लिख पाता हूँ इसलिए अब यह पत्र उसीसे पूरा करा रहा हूँ। उर्दूको पूरी तरह सीखनेको कहनेमे मेरा अभिप्राय यह है कि तू मौलाना शिबलीकी रचनाएँ पढ जाये। इन्होने पैगम्बर साहबका जीवन-चरित्र और उनके साथियोके जीवनकी घटनाएँ भी लिखी है। और भी बहुत-सा है, मै मानता हूँ कि यह सब हमारे ध्यानमे रहना चाहिए। इसलिए उत्साह हो तो यह सब पढ लेना। तू ये किताबे आजमगढसे मँगवा सकता है। इनका कार्यालय और मदरसा वही है। शायद तू उस यात्रामे मेरे साथ था और तूने यह सब देखा भी होगा। मौलाना शिवलीकी जगह आजकल मौलाना सुलेमान नदवी है। शिबलीसाहबका देहान्त हो गया है, सो तो तू जानता ही होगा।

लक्ष्मीके पत्र बराबर आते रहते है। यानी, मै लिखता हूँ तो वह धर्म समझकर जवाब देती है। उसके पत्र तो बहुत ही छोटे होते है। पर बेचारी करे भी क्या? वह लिखती है कि कुछ सूझता नही है, इसलिए दो-चार वाक्योसे काम चला लेती है। जितना लिखती है, सुन्दर होता है। और उसकी हिन्दी काफी अच्छी कही जा सकती है। लगता है, लडकी शान्त स्वभावकी है। लेकिन यह सब तुझे किसलिए लिखूं? फिर भी मुझपर जो छाप पडी है, वह ऐसी है। जान पडता है, वह आश्रममे भी लोगोको लिखती रहती है।

हम यहाँ आनन्दसे है। जेल-जैसा कुछ भी नही है। जो मनमे आये, खाते है, जहाँ जी होता है, घूमते है, जहाँ चाहते है, सोते है। यह सब न हो तो 'शाही कैदी' कैसे कहलाये? हर हफ्तेकी मुलाकातोमे डाह्याभाई आता है। हम दोनो उससे मिल लेते है। महादेवको हमारा दर्जा प्राप्त नही है, इसलिए वह उससे नही मिल पाता। कभी-कभी आश्रमके लोग भी आते है; और हम दोनो उनसे भी मिलते है। एक बार दुर्गा और जीवनजी महादेवसे मिल गये। फिलहाल तो यह तय किया

है कि दुर्गा पैसा निरर्थक खर्च करके न आये। फिर भी वह इस निश्चयको बदलना चाहे तो बदल सकती है। यह सकल्प नही है।

हमारी दिनचर्या यो है ३–४५ पर तीनो साथ उठ जाते है। साथ प्रार्थना करते है। फिर महादेव सो जाता है। हम दोनो शहद, पानी लेते है और घूमने चले जाते है। फिर मै कोई चौथाई घटा सोता हूँ। साढे छ बजे हम तीनो नाश्ता करते है। नाश्तेमे चाय-रोटी आदि होती है। मेरी चाय तो पीसे हुए बादामका पानी। वह मुझे पसन्द है। और अभीतक तो दूधकी जरूरत नही लगी। इसके साथ हमारा सह-भोजन समाप्त समझो। दूधवाले लगभग बारह बजे खाते है। मै चार बजे खाता हूँ। बीचमे मै खजूर और बादाम ले लेता हूँ। चार बजे मै सब्जियाँ, रोटी और बादाम लेता हूँ। महादेव खूब पींजता और कातता है। समय बचा रहता है तो कुछ पढता है। अभी तो उसे ऑक्सफोर्ड प्रेससे छप रही पुस्तक भी दुबारा देखनी पडती है। उसका दो-एक घटा समय मै लेता हूँ। हाथके दर्दके कारण मै राष्ट्रीय सप्ताहसे चरखेका चक्र बाये हाथसे चला रहा हूँ और सूत दाहिने हाथसे खीचता हूँ। ठीक अभ्यास हो गया है, कोई अडचन नही होती। पर गति तो धीमी हो ही गई है। पहले मै ३७५ तार कात लेता था — उससे ज्यादा भी। अब तो कुछ ठीक नही है। दो-तीन घटोमे जितने तार हो जाये, उन्हीसे सन्तोष कर लेता हूँ। दाहिने हाथसे अभी तो अधिक-से-अधिक १८२ तार निकाले है। किन्तु धीरे-धीरे गति जरूर बढेगी। पढ़नेकी बात यह है कि यहाँ उर्दू-पुस्तके मिल गई है, इसलिए उन्हे पढ रहा हूँ; रस्किन भी पढ रहा हूँ। आकाश-दर्शनकी धुन लग गई है, इसलिए उस विषयकी पुस्तकोंमें भी थोडा समय देता हूँ। दिनमे बीस-पच्चीस मिनट सो भी लेता हूँ। आश्रमका इतिहास लिखना शुरू कर दिया है। 'गीता'[1] के जो अध्याय बच गये थे, वे तो कबके पूरे हो गये। हम दोका तो हिसाब यह हुआ। सरदारकी नाकमे दर्द रहता है, इसलिए वे ज्यादातर अखबार पढकर और सुनकर सन्तोष मान लेते है। बहुत पढ पाते हो, सो नही है, नाक जल्दी ही बह उठती है। इस बार ज्यादातर तो मै पुस्तके मँगा नही रहा हूँ। लोग जो भेज देते है, उनसे काम चलाता हूँ। वे भी बहुत हो गई है — दो सौ से ज्यादा। इनमे बहुत-सी किताबे पढने योग्य हो, ऐसी बात नही है। अपटन सिन्क्लेयरने अपनी नई किताब मुझे भेजी है। वह मुझे बहुत पसन्द आई है। उपन्यासके रूपमे अमेरिकाके मद्यनिषेध-सम्बन्धी कानूनके अमलका ठीक चित्र प्रस्तुत किया है। यह किताब तुझे भेजता हूँ। नाम है 'वैट परेड'। आश्रममे उनकी दूसरी किताबे तो है, लेकिन मेरा खयाल है, यह किताब अभी वहाँ नही आई है। पुस्तके गुम करनेके तेरे पराक्रमकी बात महादेवने बताई है। उसे सुनकर मुझे कोई आश्चर्य नही हुआ, क्योकि मेरी समझमे तेरी इस शक्तिसे मेरा भी ठीक परिचय है। प्यारेलाल धुलियामे है। प्रभुदास बेलगाँवमे। सुनता हूँ, उसकी तबीयत अच्छी है। वजन दो पौड बढा है। काका कमजोर है। जमनालालजी, विनोबा, गुलजारीलाल, आदि भी धुलियामे है। रामदास यही है। छगनलाल जोशी, सुरेन्द्र,

1. देखिए "गीता-पत्रावली", २१-२-१९३२।

मोहनलाल, कुरैशी, वगैरह भी यहीं हैं। उनसे कभी-कभी मिलना सम्भव है। मथुरादास नासिकमें हैं। कभी-कभी तारामतीके पत्र आते हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१५४) से।

४३६. पत्र : जानकीदेवी बजाजको

२४ अप्रैल, १९३२

चि० जानकीबहन,

मुझे पत्र लिखना। तुम्हारी तबीयत खराब क्यों रहती है? क्या खाती हो? फल बराबर खाने चाहिए। तबीयत सुधारनी चाहिए। जमनालालकी, कमलनयनकी या और किसीकी फिक्रकी जरूरत नहीं। कुछ पढ़ना होता है क्या? साथमें कौन है?

हम तीनों मजेमें हैं। तुम्हें अक्सर याद करते हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २८९८) से।

४३७. पत्र : रामीबहन पारेखको

२४ अप्रैल, १९३२

चि० रामी,

तेरा पत्र आया, इसे मैं अद्भुत मानता हूँ। तूने यह तो लिखा कि तेरा जन्म-दिवस है, किन्तु कौन-सा, सो लिखना भूल ही गई। मैं तो याद रखता नहीं हूँ। तेरे बहुत-से जन्म-दिन आयें, पर तू कुछ सेवा करना भी सीख। जब इच्छा हो, तब मिलने आ जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७१७) से। सी० डब्ल्यू० ६९८ से भी; सौजन्य : नवजीवन ट्रस्ट।

४३८. पत्र : तारामती म० त्रिकमजीको

२४ अप्रैल, १९३२

. . .[1] तुम्हारा अपना स्वास्थ्य कैसा रहता है? किसीसे मिल पाती हो? अपनी शक्तिके अनुसार थोडा-बहुत सेवा-कार्य ले लो। मनको शान्त रखनेमें सेवा बहुत सहायक होती है। अपने पड़ोसीकी मदद करना भी सेवा है। ससारमें कोई व्यक्ति ऐसा नही जिसे कभी दूसरेकी जरूरत ही न पडे। . . .[2]

[पुनश्च:]

किसी दिन मुझसे मिलनेकी इच्छा हो तो आ जाना।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १०९।

४३९. एक पत्र

२४ अप्रैल, १९३२

भाई,

यदि आप ब्रह्मचर्यका नियम समझ गये हो तो मै पिताकी खिन्नता या रोषको नगण्य वस्तु मानता हूँ। पिताकी खिन्नता एक पलडेमे और धर्म को दूसरे पलडेमे रखे तो वह खिन्नता हवा-जैसी हल्की ठहरेगी। अलबत्ता, आप यह पक्का कर ले कि आप ब्रह्मचर्य-धर्मको समझ गये है। आप दृढ रहें, तो पिता जल्दी ही शान्त हो जायेंगे।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०५७) से। सौजन्य: नारणदास गाधी।

१. व २. साधन-सूत्रक अनुसार।

४४०. पत्र : आश्रमकी बालिकाओंको

२४ अप्रैल, १९३२

चि०,

बाल कटवा डालनेसे सँवारनेमें लगनेवाला समय बचेगा, तेल-कघा आदिका खर्च बचेगा। बालोंसे सुन्दरता बढती है, यह भ्रम दूर होगा। बाल काट डालनेसे सिर साफ रहता है। स्त्रीके लिए यह ब्रह्मचर्यकी निशानी है। लडकियाँ और अन्य स्त्रियाँ बाल कटवा डाले तो इसको वैधव्यका चिह्न माना जाना बद हो जाये। और भी लाभ सोचे जा सकते हैं। लेकिन फिलहाल तो इतने ही काफी हैं न?

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०५८)से; सौजन्य नारणदास गाधी। **महादेवभाईनी डायरी**, भाग–१, पृष्ठ १२० से भी।

४४१. पत्र : वत्सला वी० दास्तानेको

२४ अप्रैल, १९३२

चि०,

बाल कटवाना मे अेसी बात नहिं समझता जिसे मातापिताका विरोध किया जाय। उनको समझा कर हि बाल कटवाये जाय। माताजीकी दलीलमे मैं तथ्य नहिं पाता। यदि कटवाना अच्छी बात है तो दूसरी लडकीयोको उठाना है तो भले उठा लेवे। परतु धीरजसे तेरा कहना माता मानेगी। अण्णाको[1] मैं लिखुगा।

सी० डब्ल्यू० ९०५९ से; सौजन्य. नारणदास गाधी।

१. देखिए "पत्र: वी० वी० दास्तानेको", २६-४-१९३२।

४४२. लेखा-जोखा रखनेकी आवश्यकता[1]

२५ अप्रैल, १९३२

आश्रमका इतिहास लिखते समय मनमे अनेक विचार आते है, अपनी अनेक त्रुटियोकी ओर ध्यान जाता है। उससे मुझे ऐसा लगता है कि हमे समय-समयपर अपना लेखा-जोखा तैयार करना चाहिए। व्यापारी अपने व्यापारका हर रोज लेखा-जोखा — आर्थिक चिट्ठा — तैयार करता है, हर महीने करता है, हर छठे महीने करता है और बडा गोशवारा हर साल बनाता है। हमारा व्यापार आध्यात्मिक माना जायेगा, इसलिए हमे आध्यात्मिक गोशवारा बनाना उचित है। हरएकको अपना-अपना चिट्ठा तैयार करना चाहिए और समाजको सारी सस्थाका। ऐसा न करे तो गोशवारा न बनानेवाले व्यापारीकी तरह हमारा आध्यात्मिक दिवाला निकलेगा। अपने व्रतोमे और कामो, उद्योगोमे हम आगे बढ रहे है या पीछे छूट रहे है, यह हम न जाने तो हम यन्त्रकी तरह जड बन जायेगे और अन्तमे यन्त्रसे भीकम काम करेगे यानी, अपनी हानि करेगे।

यह गोशवारा हम किस रीतिसे तैयार करे? इसका जवाब मै कुछ प्रश्न लिखकर दे सकता हूँ.

१ क्या हम असत्य विचारते, बोलते या आचरण करते है? हम यानी हरएक।

२ ऐसा है तो वैसा करनेवाला कौन है? कहाँ-कहाँ असत्यका आचरण हुआ? उसके लिए उसने क्या किया? आश्रमने क्या किया?

३ आश्रमके इतने वर्षके जीवनमे हम इस विषयमें आगे बढे कि पीछे हटे?

इस प्रकार सब व्रतोके विषयमे विचार करके जहाँ-जहाँ खोट-खामी दिखाई दे, वहाँ-वहाँ उपाय ढूँढे और करे।

कार्यो, उद्योगोके विषयमे भी यही कर्त्तव्य है। उनके विषयमे तो दूना विचार करना है। क्या आर्थिक दृष्टिसे जमा-खर्च बराबर आता है? हम मानते है कि भौतिक उद्योगमे अगर दोनो मद बराबर आवे तो यह सम्भव है कि वह धार्मिक रीतिसे चलाया गया हो, अगर घाटा आवे या नफा रहे तो अवश्य कही नीति-भग हुआ है। दूसरी दृष्टि यह है कि उस उद्योगके चलानेमे धर्मका ही विचार प्रधानत. रखा गया है? आश्रममे यह बात आवश्यक है, क्योकि उसके सारे उद्योग धर्मके अर्थात् सत्यके अधीन है।

इन दोनो — व्रतो और उद्योगो — के विषयमे य विचार मनमे आये बिना नही रहते.

१. आश्रममे ही एक-दूसरेके बीच सूक्ष्म दुराव-छिपाव क्यो होते है?

१. यह "पत्र नारणदास गाधीको", २५-४-१९३२ के साथ भेजा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

२. ऐसा वक्त कब और कैसे आयेगा जब हममे एक-दूसरेपर अविश्वास ही नही रहे?

३. आश्रममे अब भी बाहरसे चोर क्यो आते है?

४. हमारा व्यक्तिगत परिग्रह क्यो बढ़ रहा है?

५. हमने आस-पासके गाँवोके साथ क्यो सम्बन्ध नही जोड़ा? वह किस तरह जोडा जा सकता है?

६. आश्रममे अब भी बीमारी क्यो रहा करती है?

७. आश्रमके मजदूर-वर्गके लिए हमने क्या किया? वे क्यो आश्रमवासी नही बने? या मजदूर आश्रममे हो ही क्यो? आश्रममें मालिक और मजदूर, ये विभाग ही न हो?

ऐसे सवाल अभी और बहुत-से सोच सकता हूँ, पर मेरे विचार बता देनेके लिए इतने काफी है। मै चाहता हूँ कि छोटे-बडे सभी विचार करने लग जाये। रोजनामचा रखनेके मेरे आग्रहमें यह हेतु तो था ही।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

४४३. पत्र : नारणदास गांधीको

२५ अप्रैल, १९३२

चि० नारणदास,

'आश्रम समाचार' नाम बदल दो। निरर्थक आपत्ति उठाई गई है कि यह तो अखबार हुआ। यह किसी भी दृष्टिसे अखबार नही है, इसलिए उस अर्थको सूचित करनेवाला नाम अलग कर दिया जाये।

इसका नाम 'आश्रमवासी और अन्य मित्रोसे' कर दिया जाये और अन्तमें शकरभाई 'आपका सेवक शकर'— इस तरह लिख दिया करे। शुल्कका उल्लेख भी छोड दिया जाये। किसी बाहरी आदमीको तो यह दिया ही नही जाता। जो लोग आश्रमवासी है और जिन्हे इसकी प्रति मिलती है वे तो इसके खर्चके लिए अपना अश देते ही होगे। यदि इतना परिवर्तन कर दिया जाये तो तुम जो प्रति भेजते हो, मै वही प्रति छगनलाल और गगाबहनको भेज सकता हूँ और मुझे उनकी नकल नही करनी पड़ेगी। मै समझता हूँ कि मैने बात स्पष्ट रूपसे कह दी है।

रुई न भेजी हो तो मत भेजना। लेडी विट्ठलदासने भेज दी है। वह बहुत दिनोतक चलेगी।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

लेखा-जोखा बनानेके विषयमे जो लिखा है, उसपर विचार कर लेना। इस तरहकी कोई चीज हमे हमेशा तैयार करते रहना चाहिए।

दुर्गासे कहना कि महादेवको उसका पत्र मिल गया है। उसका पाँव अब बिल्कुल अच्छा है। दाँतका इलाज हो रहा है। जीवनजी से कहना कि गोलमेज परिषद और लन्दन-निवाससे सम्बन्धित महादेवकी दैनन्दिनीकी वहियाँ और अन्य जो-कुछ भेजनेको लिखा था, वह किसी आते-जातेके साथ भेजना न भूले। नरहरिसे मिलने जाते हुए मणिबहन यहाँ मिलने अवश्य आये। आश्रमसे आनेवाले लोगोंके साथ आनेका सयोग साध लेना चाहिए।

[जिन ४४ लोगोंके नाम हस्ताक्षर-सहित पत्र लिखे हैं, उनकी सूची और उसके साथ नारणदासभाईके नाम पत्र और 'लेखा-जोखाकी आवश्यकता' नामक लेख सलग्न है][1]।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२२२ से भी; सौजन्य: नारणदास गाधी।

४४४. पत्र : वैरियर एल्विनको

२५ अप्रैल, १९३२

मैं चाहता हूँ कि बिशपकी[2] बातोंसे तुम जरा भी विचलित न हो। तुम्हारा गिरजा तुम्हारे दिलमें है। सारी दुनिया तुम्हारा व्यासपीठ है। यह नीला आकाश तुम्हारे गिरजेकी छत है। और यह 'कैथोलिसिज्म' क्या है? निश्चय ही यह भी दिलकी चीज है। इस नामका उपयोग जरूर है। हालाँकि आखिरमें तो यह मनुष्यका रखा हुआ नाम ही है। अगर सुवार्त्ताओंमें अभिव्यक्त ईसाके सन्देशका अर्थ करनेका मुझे कुछ भी अधिकार हो, तो अपने दिलमें जरा भी शक न रखकर मैं यह कहनेको तैयार हूँ कि आज गिरजोंमें इस सन्देशकी अवमानना की जा रही है, फिर भले ही वह गिरजा रोमन हो या अंग्रेजी हो, बड़ा हो या छोटा हो। लाजरसके[3] लिए तो इन गिरजोंमें जगह ही नहीं है। इसका अर्थ यह नहीं कि पुजारियोंको भी इसका कोई अनुमान है कि देवस्थान कहलानेवाले इन स्थानोंमें से करुणासागर ईसाको निकाल दिया गया है। मगर मेरा मत तो यह जरूर है कि [तुम्हारा] यह बहिष्कार इस बातकी अचूक निशानी है कि सत्य तुम्हारे अन्दर और तुम्हारे पक्षमें है। मगर जब तुम एकान्तमें भगवानके ध्यानमें मग्न हो, उस वक्त अगर ऐसी आवाज न सुनो कि 'तू सच्चे रास्ते पर है,' तो मेरी रायको कुछ भी मत गिनना। सच्ची कसौटी अन्तरकी आवाज है, दूसरी कोई नहीं।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ ११६।

१. इतना कदाचित् महादेवभाईने जोड़ दिया था।
२. बिशपने एल्विनको ईसा-द्रोही कहा था और गिरजेमें उनके प्रवचन देनेपर रोक लगा दी थी।
३. आशय साधारण व्यक्तिसे है।

४४५. पत्र: एक बंगाली साधकको

२५ अप्रैल, १९३२

तुम्हारा पत्र मिला। ब्रह्मचर्य मनकी स्थिति है। अलबत्ता, उसे मदद सभी तरहके निग्रहसे मिलती ही है। आवश्यक मन स्थिति प्राप्त करनेमे आहार बहुत ही कम सहायक होता है, फिर भी गलत आहारसे प्रगति रुकती तो है ही। इस प्रकार मै यह कहना चाहता हूँ कि आहार योग्य और परिमित मात्रामे लिया जाये। लेकिन यह एक ही साधन ब्रह्मचर्यके पालनमे मदद देनेके लिए काफी नही। हाँ, बहुत-से जरूरी साधनोमे से इसे एक माना जा सकता है। जीभका चटोरापन कमजोर मन-स्थितिका लक्षण है, और यह चीज ब्रह्मचर्यमे बाधक है। ब्रह्मचर्यके पालनके लिए रामबाण उपाय तो इस बातका अनुभव होना है कि जीव परमात्माका ही अश है और परमात्माका हमारे हृदयमे वास है। हम यह चीज समझने लग जाये, तो उससे मनकी शुद्धि और दृढता प्राप्त हो जाये। तुम्हे ऐसी पुस्तके पढनी चाहिए जो इस मुख्य चीजके समझनेमे सहायक हो। तुम्हे ऐसी सगतिमे रहना चाहिए जिसमे तुम्हे सदा ईश्वरके हाजिर-नाजिर होनेका खयाल रहे। 'अनीतिके मार्गपर'[1] नामकी मेरी किताबमे ताजी हवा और कटि-स्नान वगैरहके बारेमें जो सूचनाएँ दी गई है, उनपर अमल करो। ये सब बाते नियमितता और लगनसे करो। फिर स्खलन हो तो उसकी चिन्ता न करो, मगर विश्वास रखो कि तुम्हारा प्रयत्न सफल होगा ही।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ ११७।

४४६. एक पत्र

२५ अप्रैल, १९३२

तुम्हारा करुण पत्र मिला।[2] ईश्वर तो अन्तरमे रहता है इसलिए भौतिक विज्ञान-सम्बन्धी किसी भी छानबीनसे हमारे मनमे ईश्वरके प्रति जीवन्त श्रद्धा उत्पन्न नही हो सकती। कुछ लोगोको भौतिक विज्ञानसे सहायता जरूर मिली है। पर ऐसे लोग गिने-चुने है। इसलिए, मै तो तुम्हे यही सलाह देता हूँ कि ईश्वरके अस्तित्वके बारेमे उसी तरह तर्क मत करो, जिस तरह तुम अपने अस्तित्वके बारेमे नही करते। यूक्लिडके [स्वयसिद्ध] सूत्रोकी तरह बस इतना मान लो कि ईश्वर है, किसी और

१. सेल्फ-रेस्ट्रेन्ट वर्सेस सेल्फ इन्डल्जेन्स।

२. पत्र-लेखकने लिखा था: "मैंने विज्ञानका काफी अध्ययन किया है, फिर भी मनमें ईश्वरके प्रति श्रद्धा नहीं जमी और मुझे यही लगता रहता है कि श्रद्धा होनी ही चाहिए। इसका क्या उपाय है?"

कारणसे नही तो केवल इसलिए कि असख्य सिद्ध पुरुष ऐसा कह गये है; और उससे भी बड़ी बात यह कि उनका जीवन इसका असन्दिग्ध प्रमाण रहा है। और फिर, तुम्हारे मनमे श्रद्धा है, इसे प्रमाणित करनेके लिए रोज सुबह-शाम कम-से-कम पाव घटा रामनाम जपो और रामायणके पाठमे पूरी तरहसे रमे रहो।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ ११८।

४४७. पत्र : एक बहनको[1]

२५ अप्रैल, १९३२

उसमे आलस्य ही कारण नही है। डायरीमे सीधी बात लिखना कठिन है। लिखकर देख लो।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १२० ।

४४८. पत्र : ई० ई० डॉयलको

२६ अप्रैल, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

आपके दो पत्रोके लिए धन्यवाद। मै आशा करता हूँ कि बेलगाँव-जेलमे वन्दी अपने चार मित्रोके सम्बन्धमे मुझे जल्दी ही सूचना मिल सकेगी। पिछली बार जब आपको पत्र लिखा था, तबसे अबतक मुझे दो पत्र मिले है, एक मणिबहन पटेलका और एक काकासाहब कालेलकरका। दोनो ही पत्रोसे यह मालूम पडा कि जो खबर मै चाहता था, वही बेलगाँवके जेल-अधिकारियोने काट दी है। इसलिए, कह सकते है, ये पत्र जिस दृष्टिसे लिखे गये थे उस दृष्टिसे बेकार साबित हुए। और पत्रके मजमूनसे मै यह अनुमान भी लगा सका कि काकासाहब कतई अच्छे नही है।

तथापि, चूँकि आपने कृपा करके जल्दी ही ध्यान देनेका वायदा किया है, मै अपने मनको अशान्त नही होने दे रहा हूँ।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई-सरकार, गृह विभाग, आई० जी० पी० फाइल स० ९ ।

१. इस बहनने लिखा था: "मुझे अपना बेहद आलस्य स्वीकार करना चाहिए। मुझसे डायरी लिखी ही नहीं जाती।"

२. डॉयलके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट-७।

४४९. पत्र: के० नटराजनको[1]

२६ अप्रैल, १९३२

प्रिय श्री नटराजन,

गोकुलदास तेजपाल अस्पतालमें खास तौरपर बुलाई गई सभाने एक भारतीय योगीने अपनी सिद्धियोंका जो प्रदर्शन किया, उसका विवरण तो आपने पढ़ा ही होगा। कहा गया है कि योगी एक जीवित साँपका सिर, कील, नाइट्रिक एसिड आदिको खा गया। और इस विशिष्ट दर्शक-समूहमें मुख्य न्यायाधीश और उनकी पत्नी भी शामिल थे। विवरणमें कहा गया है कि योगीको साँपका सिर खाते देखकर एक महिलाको इतनी घिन हुई कि वह एकाएक ही उठकर चली गई। मैं नहीं जानता कि ऐसे प्रदर्शनोंके बारेमें आपका क्या विचार है। लेकिन मेरी रायमें वह प्रदर्शनकर्त्ता और जनता दोनोंके लिए लज्जाजनक है। यदि प्रदर्शनकर्त्ता मर जाय, जैसा कि ऐसे प्रदर्शनोंके दौरान किसी दिन जरूर होगा, तो जिन लोगोंने वहाँ जाकर उसे प्रोत्साहन दिया, उन्हें मैं नरहत्याका अपराधी मानूंगा। मुझे नहीं लगता कि ऐसे घिनौने प्रदर्शनोंसे विज्ञान या मानवताकी कुछ सेवा होती है। हठयोगकी पुस्तकोंमें साफ लिखा है कि हठयोगीको अपनी सिद्धियोंका न तो प्रदर्शन करना चाहिए और न धन कमानेके लिए उन्हें साधन बनाना चाहिए। यदि आप मुझसे सहमत हों तो क्या आप ऐसे क्रूर प्रदर्शन बन्द करानेके लिए दैनिक समाचारपत्रोंमें आन्दोलन शुरू नहीं कर सकते? शायद आप जानते होंगे कि बम्बईका-सा प्रदर्शन करते हुए एक आदमीने अभी हाल ही में रंगूनमें अपनी जान गँवा दी थी।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी: भाग – १, पृष्ठ १२३। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेन्ट, स्पेशल ब्रांच, फाइल संख्या ८०० (४०) (३), भाग १, पृष्ठ १६९ भी।

१. इंडियन सोशल रिफॉर्मरके सम्पादक।

२. इसका उत्तर देते हुए नटराजनने लिखा था: "जैसे प्रदर्शनका आपने उल्लेख किया है उसको मैं भी घिनौना मानता हूँ और क्योंकि उससे कुछ लाभ नहीं होता, मैं आपसे सहमत हूँ कि जनताको उन्हें बन्द करवाना चाहिए। इससे रामकृष्ण परमहंसका एक कथन याद आ जाता है। इसे मैंने कहीं पढ़ा था। किसीने उनसे पूछा कि क्या पानीपर चलना सम्भव है। उन्होंने जवाब दिया "हाँ, पर इसके लिए माँझीको पैसा दे देते हैं।" देखिए "पत्र: के० नटराजनको", २५-५-१९३२ भी।

४५०. पत्र : मॉड रायडनको

२६ अप्रैल, १९३२

आपका पत्र[1], जिसके साथ आपके और सर एरिक ड्रमड[2] तथा सर जान साइमनके बीच हुआ पत्र-व्यवहार सलग्न है, मिल गया है। धन्यवाद। जब मैंने आपके आन्दोलनके[3] बारेमे पढा तो मुझे ऐसा नही लगा कि आप किसी भी तरह भारतपर चीनको तरजीह दे रही हैं। मुझे लगा कि जिस स्थितिमें ज्यादा रक्तपात होनेकी सम्भावना है, उसे रोकनेमें अपनी पूरी शक्ति केन्द्रित करना आपके लिए ठीक ही है। और फिर जब इसके लिए आपका इरादा सत्याग्रहका साधन अपनानेका है तब तो कहना ही क्या!

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ ९० ।

४५१. पत्र : वी० वी० दास्तानेको

२६ अप्रैल, १९३२

भाई दास्ताने,

शान्ताने पेन्सिलसे लिखा आपका एक पत्र भेजा है। वत्सला अपने बाल कटवा डालनेके लिए अधीर हो गई है, ऐसा जान पडता है। मैंने उसे लिखा है[4] कि मै तो तेरे विचारका समर्थन करता हूँ;[5] किन्तु यह कोई ऐसी बात नही है कि माता-पिताकी इच्छाके प्रतिकूल होनेपर भी इसे किया जाये। वत्सला चाहती है कि मै स्वय आपको लिखूं। मुझे ऐसा तो जरूर लगता है कि ऐसी बातोमे हमे बच्चोको प्रोत्साहित करना चाहिए। यदि प्रोत्साहन देनेको तैयार न हो तो उन्हे पूरी स्वतन्त्रता तो दी ही जानी चाहिए। बादमे विचार बदल सकता है। और बाल कोई ऐसी चीज

१. पत्रमें लिखा था: "मुझे यह पत्र-व्यवहार भेजते हुए संकोच हुआ। मुझे भय है कि आप शायद सोचें कि पहले भारतका विचार किया जाना चाहिए था। पर सुदूर पूर्वमें जापान और चीनके बीच हो रहे लड़ाई-झगड़ोंपर ध्यान देनेकी जरूरत हमें ज्यादा बड़ी लगी है। मुझे विश्वास है कि आप इसे समझ सकेंगे और हमें आपकी सहानुभूति प्राप्त होगी। इसलिए मैं यह पत्र-व्यवहार आपकी जानकारीके लिए भेज रही हूँ।"

२. राष्ट्र संघके महासचिव।

३. शान्तिसेनाका संगठन।

४. देखिए "पत्र : वत्सला वी० दास्तानेको", २४-४-१९३२।

५. देखिए "पत्र : आश्रमकी बालिकाओंको", २४-४-१९३२।

नही है कि फिर न डगे। लेकिन मेरे विचारको निरर्थक समझे। वत्सलाको अनुमति न देनेके आपके अनेक कारण हो सकते है। इसलिए आपको जैसा उचित लगे, वैसा करे। आपकी तबीयत अच्छी रहती होगी। आपको तो जो साथ मिला है, सो ईर्ष्याके योग्य है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०८६) से।

४५२. पत्र : रावजीभाई म० पटेलको

२६ अप्रैल, १९३२

चि० रावजीभाई,

तुम्हारे सारे पत्र मिले है। मैंने जवाब भी दिये है। अब्बास साहबसे मिलते हो, यह बहुत अच्छी बात है। तुम यहाँ आओगे तो मुझे अच्छा लगेगा। किन्तु तुम न आओ, इसीमे हमारी शोभा है। जहाँ हमपर विश्वास रखा जाये, वहाँ हमे शर्तोका अपने पक्षके विरोधमे जानेवाला अर्थ लगाना चाहिए। इसीलिए तुम्हे नही बुलाता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८९९७) से।

४५३. पत्र : मैथिलीशरण गुप्तको

२६ अप्रैल, १९३२

भाई मैथिलीशरणजी,

आपका पत्र[1] मिल गया। वह पत्र पत्र नही है, परन्तु काव्य है। आपने मुझको हरा दिया है। मै आपकी बात समझ गया हू, और उस दृष्टिसे उर्मिलाका विलापको स्थान है। बात यह है कि मुझको कुछ भी कहनेका अधिकार नही था। हमारे शास्त्रोका मेरा अभ्यास यत्किंचित् है, साहित्यका उससे भी कम, भाषाका ज्ञान वैसा हि। यह सब अपनी त्रुटियोको जानते हुए मैंने जो असर मेरे दिलपर हुआ आपको बता दिया[2]। मित्रवर्ग मेरी अपूर्णता जानते है तो भी क्योकि मै सत्यका पुजारी हु मेरा अभिप्राय कैसा भी हो चाहते है। ऐसे प्रेमके वश होकर मैंने आपको अभिप्राय भेज दिया था। इसके उत्तरमे आपके सुन्दर पत्रकी, काव्यकी, प्रतीक्षा कभी नही कर

१. १५ अप्रैल, १९३२ का। (एस० एन० १९३१२)।
२. देखिए पृष्ठ २६५-६।

सकता था। इसे मैं रखुगा, दुबारा पढुगा। और अब आपने जो दृष्टि दी है उस दृष्टिसे 'साकेत' फिर पढना होगा। मुश्किल यह कि अगरचे आपकी भाषा बहुत आसान है तो भी हिन्दीका मेरा ज्ञान अल्प होनेके कारण कही कही समझनेमें कठिनता आती है। और हिन्दी शब्दका ज्ञान भी मेरा बहुत परिमित है यह भी कठिनाईका कारण होता है। हिन्दीमे ऐसा कोई शब्दकोष है क्या जिसमे से 'साकेत' आदि ग्रन्थके प्रत्येक कठिन शब्दका अर्थ मिल सके? मैं जानता हूँ कि अधिक परिश्रमसे बहुतसी चीज तो ऐसे हि समझ लुगा।

अजमेरीजी[1]को मेरे बन्देमातरम्। उनके भजनोका मुझे खूब स्मरण है। ईश्वर कृपा होगी तो दुबारा किसी दीन सुनुगा।

हा, 'साकेत' और 'अनघ' दोनो आश्रममे पढानेका मैंने परसरामको लिखा[2] था। सम्भव है उसका आरम्भ भी हो गया हो।

आपका,
मोहनदास

सी० डब्ल्यू० ९४५६ से, सौजन्य: भारत कला भवन, वाराणसी।

४५४. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

२७ अप्रैल, १९३२

बालको और बालिकाओ,

लडके और लडकियाँ साथ-साथ कबड्डी[3] खेले, यह मुझे ठीक नही लगता। उसमे एक-दूसरेको पकडना और गिराना पडता है। इस तरहका खेल साथ खेलना अनुचित है। जहाँ विकार उत्पन्न होनेकी सम्भावना है, वहाँ जान-बूझकर नही जाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ९०६३ से भी; सौजन्य. नारणदास गाधी।

१. एक मुस्लिम कवि; इन्होंने १९२९ में गाधीजी की झाँसी-यात्राके समय स्वरचित कुछ हिन्दी-पुस्तकें गाधीजी को भेंट की थी।

२. देखिए पृष्ठ २६५-६।

३. देखिए "एक पत्र", २३-४-१९३२ भी।

४५५. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

२७ अप्रैल, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

विशेषज्ञको यहाँ बुलानेके लिए पत्र लिखना आखिर जब जरूरी ही माना गया है, तो सरदार वल्लभभाईने सोचा कि खुद वे ही पत्र लिख दे। इसलिए उनका यह पत्र सलग्न कर रहा हूँ। आप देखेगे कि पत्रमे १२ पौड वजन कम हो जानेका उल्लेख ही नही किया गया है। आपकी तथा अन्य डॉक्टरोकी इस बातसे मै सहमत नही हूँ कि किसी अग-विशेषमे जो तकलीफ है, पाचन-प्रणालीसे उसका कोई सम्बन्ध नही है। मै कोई विशेषज्ञ नही हूँ फिर भी मेरा दृढ विश्वास है कि नाककी तकलीफका वजन घटनेसे बहुत ताल्लुक है। सरदार वल्लभभाईके मामलेमे मै जानता हूँ कि मनके मजबूत होनेके बावजूद निरन्तर पीडाके कारण जो बेचैनी होती है और इस कारण उसपर जो ध्यान देना पडता है, उससे उन्हे उतनी ही परेशानी होती है जितनी कि किसीको भी हो सकती है। यदि और कुछ नही तो यह परेशानी ही किसी व्यक्तिके खाना न खानेका पर्याप्त कारण हो सकती है। अपनी हदतक मै जानता हूँ कि यदि मुझे ऐसी तकलीफ होती तो मै खाना खाना बन्द कर देता। डॉक्टरी रायके विपरीत होनेके बावजूद, मै इसका कारण पेटमे कुछ गडबडी होना मानता। लेकिन यह सब तो मैने सहज ही लिख दिया है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]

बम्बई-सरकार, गृह विभाग, आई० जी० पी० फाइल स० ९।

४५६. हरिलाल गांधीको लिखे पत्रका अंश[1]

२७ अप्रैल, १९३२

मै अभी भी तेरे अच्छे बननेकी आशा नही छोडूंगा, क्योकि मै आशावादी हूँ। मै मानता रहा हूँ कि तू जब बा के पेटमे था, उस वक्त तो मै नालायक था। मगर तेरे जन्मके बाद मै धीरे-धीरे प्रायश्चित्त करता आ रहा हूँ। इसलिए बिलकुल आशा तो कैसे छोड दूं? जबतक हम दोनो जीवित है, तबतक मै अन्तिम घडी तक आशा रखूंगा। इसलिए अपने ढगके बावजूद तेरा यह पत्र रख छोड रहा हूँ, ताकि जब तुझे होश आये, तब तू अपने पत्रकी उद्धतता देखकर रोये और इस मूर्खतापर हँसे। मै तुझे ताना मारनेके लिए यह पत्र सँभालकर नही रख रहा हूँ। लेकिन अगर ईश्वर कभी ऐसा मौका लाये तो खुद हँसनेके लिए यह पत्र रख रहा हूँ। दोषसे तो हम सब भरे है। मगर दोषमुक्त होना हम सबका धर्म है। तू भी हो।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १२५–६।

४५७. पत्र : एक सिखको

२८ अप्रैल, १९३२

केश और दाढी रखनेके मामलेमे मै आपसे बिलकुल ही भिन्न विचार रखता हूँ।[2] बाहरी निशानियोका महत्त्व पहले जमानेमे चाहे कुछ भी माना गया हो, लेकिन आप केश और दाढी रखनेको जैसा सर्वाधिक महत्त्व देते दिखाई देते है, वैसा महत्त्व उनका न है और न होना चाहिए। इसके सम्बन्धमे मै आजतक जो करता आया हूँ, उसमे कुछ भी परिवर्तन करनेकी मुझे जरूरत नही जान पडती। मेरे बाहरी रूपके बजाय मेरे आचरणसे लोग मेरी कीमत लगाये, यही मुझे अधिक पसन्द है।

[अग्रजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १२९।

१. हरिलालने लिखा था कि उसकी बेटी मनुको अपनी मौसी बलीबहन वोहराके पास न रहने दिया जाये। हरिलालने बलीबहन-द्वारा अपनेपर हमलेके लिए गाधीजी को दोषी ठहराया था। देखिए "पत्र: मनु गाधीको", ४-४-१९३२ और १०-४-१९३२।

२. पत्र-लेखकने लिखा था: "मुझे सद्गुरु नानकदेव और आपमें कोई विशेष अन्तर नहीं दिखाई पड़ता। आजके सर्वश्रेष्ठ भारतीय और ससारके सर्वश्रेष्ठ महापुरुष आप प्राचीन महापुरुषोंकी तरह बाल-दाढ़ी रखें तो उचित ही है।" (महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ १२८)

४५८. पत्र : लक्ष्मी जेराजाणीको

२८ अप्रैल, १९३२

चि० लक्ष्मी,

तेरी चिट्ठी मिली। तुझे स्याहीसे लिखनेका अभ्यास कम है, इसलिए वह और कठिन लगता है। स्याहीसे लिखनेका अभ्यास हो जानेपर यही सरल लगेगा। इसके सिवा पैन्सिलका उपयोग करते समय अँगुलियोपर जोर ज्यादा पडता है और उससे हाथ जल्दी थक जाता है।

पत्र तो मैंने लिखा था। जिस पत्रके अक्षर इस पत्रसे मिलते हो उसे बायें हाथका समझना। अक्षर तो मेरे खराब है ही। इसमे कोई मेरा अनुकरण न करे। मेरा दाहिना अँगूठा दुखता है।

सरदार, महादेवभाई और मेरे आशीर्वाद।

बापू

गजराती (सी० डब्ल्यू० २८१०) से, सौजन्य. पुरुषोत्तम दा० सरैया।

४५९. पत्र : नारणदास गांधीको

२८ अप्रैल, १९३२

चि० नारणदास,

वहाँ हमारे पास सूखे मेवेके बीज यानी बादाम आदिके पीसनेके लिए दो लोहेके यन्त्र है। एक तो ग्रेगने भेजा था, वह बिलकुल नया है, और दूसरेको हम काममे ला चुके है। इन दोनोके बारेमे केशु जानता होगा या प्रेमाबहन जानती होगी। उपयोग तो इनका प्यारेलाल करता था। शायद कुसुमको मालूम हो। अगर मिल जाये तो एक मुझे तुरन्त भेज देना। लेकिन 'तुरन्त' का अर्थ इतना ही है कि किसी आते-जातेके हाथ या आठ आनेमे रेलवे पार्सल हो सकती हो तो उससे। केशु इस यन्त्रकी तलाश करके देखे। केशुने भी इसे चलाया तो है ही। मेरा बादामका प्रयोग फिलहाल तो चल रहा है। एक आदमीको पीसनेमे पाँच घटे लग जाते है और उतनी मात्रा नौ दिनोतक चल पाती है। अगर लेनेका प्रमाण बढा दूं तो शायद छ दिन ही चले। ऐसा यन्त्र रहते हुए भी इतनी ज्यादा मेहनत किसी आदमीसे क्यो कराई जाये, यह सोचकर यन्त्र भेजनेके लिए लिखा है। आज बादाम पीसे गये है इसलिए अगले शुक्रवारतक तो मेरा गुजारा आसानीसे हो जायेगा। उससे पहले यन्त्र आ

जाये तो समस्या सुलझ जाये। आज ही हरिलालके बारेमे पत्र लिखा है[1], इससे पहले ही शायद मिल जाये। आशा है, यह पत्र कल शुक्रवारकी डाकसे निकलेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२२३ से भी; सौजन्य : नारणदास गाधी।

४६०. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

२८ अप्रैल, १९३२

तुमने पिण्ड-ब्रह्माण्डका बहुत बडा प्रश्न पूछा है। मगर थोडेमे समझाता हूँ। अभी यह समझ लेना चाहिए कि पिण्डका मतलब यह देह है। और ब्रह्माण्डका अर्थ है यह पृथ्वी। अब जो-कुछ हमारे शरीरमे है, वह सब पृथ्वीमे है, और जो शरीरमे नही, वह पृथ्वीमे भी नही। शरीर मिट्टीका वना है, तो पृथ्वी भी मिट्टीकी वनी है। पृथ्वीमे पाँच तत्त्व है, तो शरीरमे भी पाँच तत्त्व मौजूद है। पृथ्वीमे तरह-तरहके जीव है, तो शरीरमे भी है। शरीर नष्ट होता है और पैदा होता है तो पृथ्वीका भी इसी तरह रूपान्तर होता रहता है। इस तरह इस विचारका और भी विस्तार किया जा सकता है। मगर इतनेसे हम यह कह सकते है कि यदि हमारे शरीरका हमे सच्चा ज्ञान हो जाये, तो पृथ्वीका भी सच्चा ज्ञान हो जाये। इस दृष्टिसे देखे तो हमे ज्ञान प्राप्त करनेके लिए बहुत-सी बेकार कोशिशे करनेकी जरूरत नही है। शरीर तो अपने पास है ही। उसका ज्ञान प्राप्त कर ले, तो हमारा बेडा पार लग जाये। पृथ्वीका ज्ञान प्राप्त करनेका लोभ रखे, तो वह हमेशा अधूरा ही होगा, और इसीलिए ज्ञानी हमे सिखा गये है कि जो पिण्डमे है वही ब्रह्माण्डमे है। ओर अगर हम आत्मज्ञान प्राप्त कर लेते है, तो उसमे सारा ज्ञान आ जाता है। लेकिन यह आत्मज्ञान जुटाते-जुटाते हमे कितना ही बाहरी ज्ञान भी मिल जाता है। इसमे जो रस मिल सके उसे चखनेका हमे अधिकार है। क्योकि वह रस भी हमे आत्मज्ञानके निमित्त चखना है[2]। . मुझे लगता है कि नृसिहभाई 'गीता'का अर्थ करनेमे गहरे नही उतरे। 'गीता'के कृष्णका विचार करते समय हमे उसके साथ ऐतिहासिक कृष्णको नही मिला देना चाहिए। कृष्णके पास हिंसा या अहिंसाका सवाल नही था। अर्जुन हिंसासे नही डरा था, मगर स्वजनोको मारनेमे उसे अरुचि पैदा हो गई थी, इसलिए कृष्णने उसे समझाया कि कर्त्तव्यका पालन करनेमे स्वजन-परजनका भेद किया ही नही जा सकता। गीता-युगमे लडाईमे होनेवाली हिंसा की जाये या न की जाये, यह सवाल किसी प्रामाणिक आदमीने छेडा ही नही था। असलमे यह सवाल इस जमानेमे

१. उपलब्ध नही है, परन्तु देखिए "हरिलाल गाधीको लिखे पत्रका अश", २७-४-१९३२।
२. साधन-सूत्रके अनुसार।

ही उठा मालूम होता है। अहिंसा-धर्मको तो उस वक्त सभी हिन्दू मानते थे। लेकिन कहाँ हिंसा है और कहाँ अहिंसा है, यह जैसा आज है वैसा ही उस समय भी चर्चाका विषय तो था ही। आज हम ऐसे बहुत-से काम करते है जिन्हे हम हिंसा नही मानते है, लेकिन शायद हमारी बादकी पीढियाँ उन्हे हिंसाके रूपमे ले। जैसे हम दूध पीते है या अनाज पकाकर खाते है, उसमे जीव-हिंसा तो है ही। यह बिलकुल सम्भव है कि आनेवाली पीढियाँ इस हिंसाको त्याज्य मानकर दूध पीना और अनाज पकाना बन्द कर दें। आज यह हिंसा करते हुए भी हमें यह दावा करनेमे सकोच नही होता कि हम अहिंसा-धर्मका पालन कर रहे है। ठीक इसी तरह गीता-युगमे लडाई इतनी स्वाभाविक मानी जाती थी कि उस वक्त मनुष्यको यह नही लगता था कि लडाई करनेसे अहिंसा-धर्मको कुछ भी आँच आती है। इसलिए 'गीता' मे लडाईका दृष्टान्त लिया है, और वह मुझे बिलकुल निर्दोष लगता है। लेकिन हम सारी 'गीता' का मनन करे और स्थितप्रज्ञ, ब्रह्मभूत, भक्त या योगीके लक्षण 'गीता' मे देख जाये, तो हम एक ही निर्णयपर पहुँच जाते है कि 'गीता' के उपदेशक या नायक श्रीकृष्ण साक्षात् अहिंसाके अवतार थे और अर्जुनको यह उपदेश देनेमे उनकी अहिंसाको जरा भी आँच नही आती कि तू लडाई कर। इतना ही नही, वे दूसरा उपदेश देते तो उनका ज्ञान कच्चा कहलाता और मेरी पक्की राय है कि वे योगेश्वरके रूपमे या पूर्णावतारके रूपमे कभी न पूजे जाते। इस विषय पर मैंने 'अनासक्तियोग'[1] मे जो लिखा है, उसपर विचार कर लेना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-१, पृष्ठ १२७-८।

४६१. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

२९ अप्रैल, १९३२

चि० परसराम,

(१) मौलाना शौकतअलीके बारेमे जो प्रश्न तुमने पूछा, वह हमारे लिए शोभनीय नही है। किसीके छिद्र देखना और किसीका काजी बनना हमारा काम नही है। अपनेको परखते रहनेमें ही हमे अपनी शक्ति खर्च करनी चाहिए। जबतक हम एक भी दोष अपनेमे शेष देख पाते हो और इसके बावजूद हमारे सगे-सम्बन्धी, मित्र, आदि हमारा त्याग न करे, ऐसा हमारी अन्तरात्मा चाहती हो, तबतक हमे दूसरोके दोष देखने अथवा उनकी आलोचना करनेका अधिकार नही है। जब कभी हमारी नजरमे — अनिच्छासे — किसीके ऐसे दोष आ जाये तो अगर हममे शक्ति हो और वैसा करना उचित हो तो जिसका दोष देखा है, उसीसे हम पूछे, किसी औरसे पूछना हमारा धर्म नही है। वैसा करनेमे कोई लाभ नही

१. देखिए खण्ड ४१, पृष्ठ ९२-९।

है। फिर भी मुझसे पूछनेका मन हुआ और पूछ लिया, यह ठीक ही किया। न पूछते तो इतना व्याख्यान देनेका मुझे अवसर न मिलता।

अब उत्तर देता हूँ बाहरसे देखनेपर और जितनी जानकारी हमें मिली है, उसके आधारपर तो मौलानासाहबका काम हमें उचित नहीं लगता। किन्तु जबतक उन्हींके मुँहसे उनके कामके बारेमें न जान लूँ, तबतक पक्का निर्णय मैं नहीं कर सकता। मेरी समझमें पैगम्बरसाहबने जो-जो काम किये हों, वे सब काम पैगम्बर साहबके अनुयायियोंको करने चाहिए या करना उचित है, ऐसा कहना ठीक नहीं है। महान पुरुष जो करते हैं, सबको वैसा करनेका अधिकार हो, ऐसा नहीं है। ऐसा करनेके अनिष्ट परिणाम देखे गये हैं। फिर भी, हिन्दू, मुसलमान और अन्य धर्मावलम्बी इस स्वर्ण-नियमका पालन करते नहीं देखे जाते। इतना ही नहीं बल्कि ऐसा मानकर कि अवतारोंने अमुक काम किये थे इसलिए हमें भी वैसा करनेका अधिकार है, उस तरहके काम करते हैं। ऐसी परिस्थितिमें मौलानाने पैगम्बरसाहबका उदाहरण दिया तो मुझे आश्चर्य नहीं हुआ।

(२) भीष्मादिके बारेमें हम जैसा करते हैं, आधुनिक समाजसेवकोंके विषयमें भी वैसा कर सकते हैं। हम लोगोंमें आजकल जलांजलि देनेकी जो रूढ़ि है, मैं उसमें परिवर्तन करनेकी आवश्यकता देखता हूँ।

तुम 'रामायण' पढ़ा रहे हो। उसके विषयमें जिस किसीने लिखा है, तारीफ ही लिखी है। इसी तरह उन्हें रसास्वादन कराते रहना। आश्रममें सबको हिन्दी सीखनेका शौक हो जाये और सब 'रामायण' में रस लेने लगें तो मैं समझूँगा कि एक बहुत बड़ा काम हो गया। और इसीलिए मुझे बहुत अच्छा लगता है कि तुम उसमें लीन हो गये हो।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४९५)से। सी० डब्ल्यू० ४९७२से भी; सौजन्य: परशुराम मेहरोत्रा।

४६२. पत्र : जमनाबहन गांधीको

३० अप्रैल, १९३२

चि० जमना,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरा खयाल है कि अगर बम्बईमें अच्छा लगे तो बम्बई ही जाना चाहिए। नियम-पालन अर्थात् आश्रमके व्रतोंका पालन करते रहना। सबके प्रति विनयभाव रखना और जितनी बने, उतनी सेवा जहाँ रहो वहीं करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८५२)से। सौजन्य: नारणदास गांधी।

४६३. पत्र: मंगला शं० पटेलको

३० अप्रैल, १९३२

चि० मंगला (लाड़ली),

आत्मा कहे वही करना. इसका अर्थ यह नहीं है कि जो मनमें आये सो करना। आत्मा अर्थात् हृदयमें रहनेवाला ईश्वर — वह जो कहे सो करना। हृदयमें रहनेवाले ईश्वरको सुन सकें. इसलिए हम प्रार्थना करते हैं. व्रत लेते हैं और संयमका पालन करते हैं। जब हमें ईश्वरकी आवाजका पक्का भरोसा हो जाये फिर चाहे जो नाराज हो, हम उसकी चिन्ता न करें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०८४) से। सी० डब्ल्यू० ४८ से भी; सौजन्य: मंगलाबहन ब० देसाई।

४६४. पत्र: मथुरी ना० खरेको

३० अप्रैल. १९३२

चि० मथुरी.

तेरे अक्षर इस बार ठीक हैं। ऐसे ही अच्छे बल्कि और अच्छे लिखा करना।

भगवान स्वयं पैदा हुआ है। उसे जन्म नहीं लेना पड़ता। ऐसा हो तो वह भगवान काहेका?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २६५) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

४६५. पत्र : विद्या रा० पटेलको

३० अप्रैल, १९३२

चि० विद्या,

सिरपर पिन लगानेकी कोई जरूरत नही है। स्वप्न तो आते ही है। उनका कारण कोई नही जानता। तू मेहनत करे तो अपने अक्षर सुधार सकेगी। हार मत मान लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४२६)से, सौजन्य. रवीन्द्र रावजीभाई पटेल।

४६६. लॉर्ड सैंकीको लिखे पत्रके मसविदेका अंश

१ मई, १९३२

आपने मेरे खिलाफ ऐसे प्रमाणोके आधारपर फैसला दिया है जिनके विषयमे मुझे अज्ञानमे रखा गया है। और अब आपने फैसला ऐसे समय दिया है जब मै इस हालतमे नही हूँ कि अपना बचाव कर सकूँ।[1]

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १३१।

१. महादेव देसाई समझाते हुए लिखते है: "... बापूकी भावनाओंकी गहराई पत्रके मसविदेमें इस वाक्यसे जाहिर है...। *न्यूज लेटर*में सैंकीका लेख पढ़कर बापूके दिलको बड़ी चोट पहुँची थी। उन्होंने कहा कि यह विकृत लेख है और मुझे इसके लेखकको पत्र लिखना चाहिए...।

इस वाक्यका कुछ अंश बादमें इस तरह कर दिया गया था कि आपने फैसला मुझे अपना बचाव कर सकनेमें अयोग्य बना देनेके बाद दिया है...।

सरदारने कहा: 'इतना लम्बा पत्र लिखानेके बजाय आप सीधे शब्दोंमें उन्हें यह क्यों नहीं कहते कि आप झूठे हैं?'

बापू हँसे और जवाब दिया, 'वास्तवमें मैंने कुछ इससे भी कड़ी बात कही है। मैं कहता हूँ कि उनका आचरण शरीफो-जैसा नही है कि उन्होंने एक मित्र या साथीको धोखा दिया। यह कुछ ऐसी बात है कि जो एक अंग्रेजको बहुत चुभेगी; लेकिन मैंने जैसा महसूस किया है वैसा लिखा है। शफी और आगाखाँ-जैसे लोगोंने, जो उनसे अक्सर मिला करते थे, ये सब झूठी बातें बतायी होंगी। और उन्होंने न केवल उन बातोंपर भरोसा कर उन्हें सच माना बल्कि मुझसे कभी उनके बारेमें नहीं पूछा और मुझपर उस समय दोषारोपण कर रहे है जब मैं जेलमें हूँ...।'

'यह भी सच नही है कि हमने अपनी माँग बढ़ा-चढ़ाकर रखी है। हमारी स्वतन्त्रताकी माँगको बढ़ा-चढ़ाकर की गई माँग क्यो माना जाये? ऐसा तब माना जा सकता है जब मेरा खयाल इंग्लैंडको दास बनानेका हो। मैं कांग्रेसकी माँग अपने भाषणोंमें पेश करता हूँ; लेकिन बातचीतोंके दौरान मैंने कई एक उपायोपर विचार किया।"

(*महादेवभाईनी डायरी*, भाग–१, पृष्ठ १३२)।

४६७. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

१ मई, १९३२

चि० भगवानजी,

तुमने मुझे लिख दिया, यह ठीक ही किया। मैं इसके बारेमें लिखने ही वाला हूँ[1], इसलिए यहाँ विस्तार नहीं करूँगा। तुम्हें जहाँ दोष दिखाई दिया, वहाँ एक जवाबदेह आदमीका ध्यान तुमने खींच दिया। अब वे क्या करते हैं, यही देखना रहा। तुम तो अपने धर्मका पालन कर ही चुके।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ३४६) से; सौजन्य: भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्या।

४६८. पत्र : मोहन न० परीखको

१ मई, १९३२

चि० मोहन,

तेरी उम्रवालोंको तो पढ़ना, खेलना और काम करना चाहिए। ईश्वरकी स्तुति तो करनी ही चाहिए। बेलगाँव जायेगा तो यहाँ होकर ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१७९) से।

४६९. पत्र : मणिबहन न० परीखको

१ मई, १९३२

चि० मणि (परीख),

मैंने तुम्हारे आनेकी आशा इसी अवसरपर की थी। आओगी तो सम्भवत. महादेवसे भी मिलना हो सकेगा। बेलगाँवसे मुझे समाचार मिलने लगे हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९७२) से। सी० डब्ल्यू० ३२८९ से भी, सौजन्य: वनमाला म० देसाई।

१. यहाँ आशय "सप्ताहका सार" से है। देखिए पृष्ठ ३७२-४।

४७०. पत्र : नारायण देसाईको

१ मई, १९३२

चि० नारायण राव उर्फ नारायण देसाई उर्फ ववलो,

'गीताजी' पढने और समझनेसे हमें अपना धर्म ठीक-ठीक समझमे आयेगा। राष्ट्रीय सप्ताहमे अथवा किसी भी समय कातनेसे देशकी सम्पत्ति वढती हे और गरीवो की सेवा वन पडती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४७९) से।

४७१. पत्र : पुष्पा शं० पटेलको

१ मई, १९३२

चि० पुष्पा,

'गाधीराज' का मतलब होगा, ऐसा राज जिसमे गाधी नामके व्यक्तिका ही हुक्म चले। इससे क्या लाभ? स्वराज्यमे तो सभीका हुक्म चलेगा, अत. उसमे तो मै और सभी आ गये। यह किस प्रकार हो सकता है, यह बात यदि समझमे न आये तो प्रेमाबहनसे पूछना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९८७) से। सी० डब्ल्यू० ३३ से भी, सौजन्य : पुष्पाबहन ना० नायक।

४७२. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको[1]

१ मई, १९३२

चि० प्रेमा,

अगर तुझपर कामका बोझा ज्यादा पड़ता हो तो वह कम नही हो सकता, यह बात मेरे गले नही उतर सकती। इस विचारमे मोह और दुर्बलता है। तेरी चिढका कारण तू ही है, कामका बोझ नही है, यह मै सोच सकता हूँ। यही हो तो तू इसे धीरे-धीरे अनुभवसे समझ जायेगी, क्योकि तू ज्यादा दिनतक अपने-आपको धोखा नही दे सकती। इस बारेमे मै तुझे त्रस्त नही करना चाहता। अपनी नाजुक प्रकृतिको सख्त बनाना।

हमारी पुस्तकोमे कुछ उर्दूकी पुस्तके है। उनमे से कुछ सम्भवत इमाम साहबके यहाँ होगी, वहाँ भी देखना। तू न पहचान सके तो परसराम जरूर पहचानेगा। उनमे 'सीरत उन्नबी' हो तो भेज देना। वह मौलाना शिबलीकी लिखी हुई है। एक और पुस्तक डॉ० मुहम्मद अलीका लिखा हुआ नबी का जीवन है। वह भी भेजना। 'सीरत' के दो भाग है।

तेरे चारो तरफ मजदूर है, यही सच्चा जीवन है। आश्रमकी यही कल्पना है। हाँ, मजदूर सत्यार्थी होने चाहिए। क्या तू सत्यार्थी नही है? दूसरे भाई-बहन सत्यार्थी नही है? मै मानता हूँ कि सभी यथाशक्ति सत्यार्थी है।

तू पूछती है कि 'मै कब आऊँगी'। अगर अपनी आँखोको काम मे ले, तो तू मुझे देखे बिना न रहे। मेरी आत्मा तो वही बसती है। शरीर भले ही यहाँ रहे या राखमे मिल जाये। यह भी बिलकुल सम्भव है कि शरीर वहाँ हो तब भी मै वहाँ न होऊँ। इस सत्यको तू देख और मायाको भूल जा।

असन्तोष तो होना ही चाहिए। लेकिन वह असन्तोष अपने बारेमे होना चाहिए। 'अब तो मै पूर्ण हो गया', जिस दिन मै ऐसा मान बैठूं उसी दिनसे मेरा पतन शुरू हुआ समझना चाहिए। इसलिए मुझे अपने बारेमें असन्तोष जरूर होना चाहिए। इस असन्तोषका यह अर्थ कभी नही है कि मुझे अपने कर्त्तव्योमे परिवर्तनकी इच्छा करते रहना चाहिए।

लेकिन यह सब दलीलोसे नही समझाया जा सकता। समय अपना काम करेगा ही। आज जहाँ घोर अन्धकार लगता है, वहाँ कल उजाला भी दिखाई देगा। मुझे तो ऐसी स्थितिको पहुँचानेवाला भजन 'प्रेमल ज्योति'[2] ही दीखता है। गुजरातीमे भी उसका ठीक अर्थ उतरा है। अंग्रेजी भजन तो अलौकिक है ही।

१. प्रेमाबहनने अपने पत्रमें मानसिक थकावट, देशकी अवस्थाके प्रति असन्तोष, आदि व्यक्त किया था।

२. 'लीड काइन्डली लाइट' का नरसिंहरावभाई-द्वारा किया हुआ गुजराती अनुवाद।

ऐसा सुना है कि धुरन्धर ठीक है। तेरा वजन कितना है? दूध-दही कुल मिलाकर कितना लेती है?

हमारे पुस्तकालयमें कुल मिलाकर कितनी पुस्तकें होगी?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२८३) से। सी० डब्ल्यू० ६७३१ से भी, सौजन्य : प्रेमाबहन कटक।

४७३. पत्र : वनमाला न० परीखको

१ मई, १९३२

चि० वनमाला,

गेहूँके एक दानेसे जैसे अनेक दाने पैदा होते है, उसी तरह दो व्यक्तियोसे करोडो बन जाते हैं। यह बात तो ऐसी है जो पट्टीपर हिसाब लगाकर भी जानी जा सकती है। हिसाब लगाकर देखना।

बायें हाथसे केवल चरखा चलानेकी ही बात मैंने नही कही। बात तो उन सारे कामोको बायें हाथसे करनेकी आदत डालनेकी है जिन्हे हम दाहिने हाथसे करते हैं। बायें हाथसे लिखना, खाना, दातुन करना और तब और आगे बढना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७७२) से। सी० डब्ल्यू० २९९५ से भी, सौजन्य . वनमाला म० देसाई।

४७४. पत्र : शारदाबहन चि० शाहको

१ मई, १९३२

चि० शारदा,

कातनेके विषयमे सब-कुछ समझ ले। जिन लोगोको कोई दूसरा उपयोगी धन्धा प्राप्त है, कातना उनका धन्धा नही हो सकता। इसीलिए मिल-मजदूरोसे जीविका पानेकी दृष्टिसे कातनेके लिए नही कहा जाता। हिन्दुस्तानके करोडो लोगोको सालके सात महीनोमें कोई काम नही रहता। कातना उनकी जीविका है। यो, किसी भी निमित्तसे काता जाये तो देशमें उतनी पूँजी बढती ही है, यह इसका लाभ है।

खादीको श्रेष्ठ माननेका यह कारण है कि उसके द्वारा गरीबोकी सर्वाधिक सेवा होती है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९१०)से, सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला।

४७५. पत्र : विमल किशोर मेहरोत्राको

१ मई, १९३२

चि० विमल,

स्याहीसे लिखो। तुमने लिखा सो तो बहोत ठीक किया।

यज्ञके बारेमें परसरामसे समझो पीछे जरूरत रहे तो मुझसे पूछो।

बापुका आ०

सी० डब्ल्यू० ४९७३ से; सौजन्य परशुराम मेहरोत्रा। जी० एन० ७४९६ से भी।

४७६. पत्र : संतुको

१ मई, १९३[२][1]

चि० सतु,

हम अहिंसाधर्मका पालन करना चाहते हैं इसलिये हिंसक शस्त्रोंका कम उपयोग करें। लठी लेजीमका मैंने विरोध नहिं किया है। मीणबत्तीमें कोई दोष मैंने नहिं पाया।

बापु

मूलकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७१२) से।

४७७. सप्ताहका सार[2]

२ मई, १९३२

अप्रैल मासके आत्मशुद्धि-सप्ताहपर भाई भगवानजी का पत्र आया है। उसमें मेरा ध्यान कपासकी खराब जानेवाली मात्राकी ओर खींचा गया है। उनको शक है कि कुछ लोगोंने जान-बूझकर तार बढाकर लिखे हैं। उनके अनुसार खराब जानेवाली मात्रा दो तरहकी हैं — एक तो सूत जितना टूटना चाहिए उससे अधिक टूटता है, दूसरे, उतावलीमें कातनेसे सूतका नम्बर बहुत कम होता है[3]।

किसीने जान-बूझकर गलत तार लिखे हों तो इसे मैं भारी दोष मानता हूँ। इससे आश्रमके नामपर आँच आती है। गलत लिखनेवालेका काता हुआ ईश्वरकी

१. साधन-सूत्रमें '१९३१' है।

२. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", २८-४/२-५-१९३२ के साथ भेजा गया था। देखिए अगला शीर्षक।

३. भगवानजी पु० पण्ड्याको गांधीजी के उत्तरके लिए देखिए पृष्ठ ४६८।

वहीमे यज्ञकी तरह तो लिखा ही नही जाता। हमारी वहीमे चाहे जितने तार या गज लिखे गये हो, उनकी तो कोई कीमत ही नही है। कीमत तो जो वास्तविक है, वही है, लिखनेसे उसमे घट-वढ नही होती; और सूतकी कीमत तो कुछ आने ही होती है। असली कीमत तो सूत कातनेमे निहित शुद्ध उद्देश्यकी ही है। यह कीमत हम आँक ही नही सकते। यह तो दैवी वहीमें ही आँकी जा सकती है; क्योकि एक मनुष्यके हेतुको दूसरा कौन मनुष्य समझ सकता है? फिर भी हमारे पास अपना एक माप है। अगर अन्तमे ऐसे यज्ञका सोचा हुआ फल न निकले तो जानना चाहिए कि हममे कही-न-कही मलिनता है। इस दृष्टिसे हरएक अपने-अपने कामका विचार कर ले और कोई असत्य बात कही हो तो नम्रतापूर्वक उसे स्वीकार करके शुद्ध हो जाये। आश्रममे हम किसीपर चुपचाप निगरानी नही कर सकते। बहुत-सा काम विश्वासपर ही चलता है। आश्रम दूसरी रीतिसे चल भी नही सकता। इसलिए सवको अपने धर्मका बुद्धिपूर्वक पालन करना है। गलत तार-सख्याके साथ-साथ दूसरे दोष भी सब विचार ले। क्या कातनेमें आलस किया था, वेगार टाली थी, वक्त चुराया था और टूटा हुआ सूत [जोडनेके वजाय] फेंक दिया था? यज्ञकी शर्त यह है कि याज्ञिक उसमें तन्मय हो जाये तथा कार्यमे अपना सारा कौशल लगा दे।

कोई ऐसा भी न सोचे कि पूरे वरस चाहे जैसा व्यवहार करके आत्मशुद्धि-सप्ताहमे ऊपरके नियमका पालन कर लेगे। इतना याद रखना चाहिए कि हमारा आश्रम-जीवन ही यज्ञ-रूप होना चाहिए। उसमे कातना महायज्ञ है। इस सप्ताहका अन्य दिनोसे इतना ही अन्तर है कि इस समय हम कातनेमे अधिक समय दिया करते है।

आगेके लिए मै ये नियम सुझाता हूँ:

१. वीस नम्वरमे नीचेका सूत काता जाये तो वह यज्ञमें न गिना जाये।

२. सूतकी खरावी नियत मापमे अधिक हो तो उस कताईको भी यज्ञ न माना जाये।

३. कस-मजवूती नियत सीमासे नीचे आये तो भी यज्ञमे न गिना जाये।

यज्ञ-कार्य हो या फिर दूसरा कोई, सख्या या वजनसे सफाई-सचाईकी कीमत ज्यादा होगी। पचास अपग वैल हमारे सिरपर वोझ होगे, एक मजवूत वैल हमारा पूरा काम कर देगा। पचास भोथरा छुरियोसे शाक ठीक नही कट सकती। एक धारदार छुरी पूरा काम कर देगी। इसलिए हमे अपना ध्यान हर कामकी पूर्णताकी ओर देनेकी आदत डालनी चाहिए। अगली वारके सप्ताहमे हम इस वातपर ही ध्यान दे।

मै देखता हूँ कि कातनेमे कुछ लोगोंका मन ऊवता है। दूसरे काम वे ज्यादा पसन्द करते है। इसमे एक तो स्वाभाविक त्रुटि है। आदमीको जो काम रोज करना पडता है, उससे वह ऊवता है और मनको फुसलाता है कि कोई दूसरा काम होता तो मै न ऊवता। पर वह दूसरा काम भी अगर रोजका हो जाता है तो वह तीसरा माँगता है। फिर कातनेवालेका ध्यान जाने-अनजाने कताईसे मिलनेवाली थोडी

मजदूरीकी ओर जाता है। आश्रमकी दृष्टिसे यह दोष है। कातनेकी मजदूरी कम-से-कम रखी जाती है। कारण, कि इस वक्त तो यही एक धन्धा है जिसे करोडो कर सकते है और जिससे कुछ कमा भी सकते है। इसलिए इस कामको व्यापक बनानेके लिए हम सब यज्ञ-रूपमे कातते है। यज्ञमे कल्पना यह है कि हम ईश्वरार्पण बुद्धिसे काम करते है और फल देना भगवानके हाथ है। यह रहस्य समझकर सबको नित्य तन्मय होकर कताई-यज्ञ करना चाहिए।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

४७८. पत्र : नारणदास गांधीको

२८ अप्रैल, [२ मई, १९३२][1]

चि० नारणदास,

हरिलालके विषयमे तो तुम्हे आज ही पत्र[2] लिखा है। आशा करता हूँ कि तुम्हे वह जल्दी ही मिल जायेगा। इसलिए अब उस विषयमे अधिक लिखनेके लिए कुछ नही रहता।

गगाबहनके लिए दस-दस तोला 'चैयार्ज' और हीगकी गोलियाँ और भिजवा देना। पहले जो मँगाई थी, वे मिल गई है। किसी आते-जातेके हाथ मेरे पास भिजवा दोगे, तो मै वहाँ पहुँचवा दूँगा।

तिलकमका थाना जाना मुझे तो ठीक लगा। अगर प्यारे अलीको वे बोझ स्वरूप न बन जाये तो दूसरे भी जा सकते है। जाना शोभनीय भी है। क्योकि हम जितने प्रेमसे किसी हिन्दूके घर रह सकते है उतने ही प्रेमसे हमे मुसलमानके घरमे भी रहना चाहिए। इसके सिवाय यदि किसीको ऐसा लगे कि तिलकम तो एक बाहरी आदमी था और अन्त्यज माँ-बापसे उत्पन्न है इसलिए उसका वहाँ जाकर रहना चल सकता है, तो इस तरहका विचार असह्य हो जायेगा। यदि जमुना वहाँ खुशी-खुशी जाये तो नूरबानो ऐसी है कि उसपर अपनी जान भी दे दे। नूरबानोकी आँखमे अपार पवित्रताका तेज है, जबसे मैने उसे देखा, मुझे तमीसे ऐसा लगता है।

गगादेवी ठीक हो गई होगी। सन्तोकका पत्र मेरे नाम आया था, उसने लिखा है कि वह अभी राधाको देवलालीमे और चार महीने रखना चाहती है। यदि राधाकी तबीयत सुधर जाये तो यह ठीक ही है। मुझे बा का कोई पत्र नही मिला।

मै यह तो नही कह सकता कि कताईमे हाथ बदलनेसे दर्द कम हो गया है। किन्तु देखता हूँ कि अगर हाथ न बदलता तो काम रुक जाता। धीरे-धीरे चक्र फेरनेमे कोहनीके हिस्सेके ऊपर जितना दबाव पडता है, तार खीचनेमे उससे बहुत अधिक पडता है। यह बात मै दाहिने हाथसे तार खीचते हुए समझ पाया हूँ। अब

१. पत्रकी सामग्रीके आधारपर तिथिका अनुमान किया गया है।

२. देखिए पाद टिप्पणी, पृष्ठ ३६३।

मैं दाहिने हाथसे रोज २०० तारतक खींच लेता हूँ। अर्थात्, बायें हाथसे एक सप्ताह पहले जितने तार निकालता था, उससे अब दस-पाँच ज्यादा निकालने लगा हूँ। उन दिनों औसतन १८७½ तार कातता था अथवा उतनी औसत रखनेकी कोशिश करता था। अलबत्ता, मैं समय कुछ ज्यादा दे रहा हूँ। किन्तु अधिक समय तो मैं एक सप्ताहसे दे ही रहा था। इसलिए कह सकते हैं कि किसी भी दृष्टिसे फिलहाल तो मैं जो-कुछ कर रहा हूँ, वह ठीक है। हाथके बारेमें चिन्ता करनेका कोई कारण नहीं है।

मैं आकाश-दर्शन इत्यादिपर जो लेख भेजता हूँ, उन्हें छापनेपर कोई प्रतिबन्ध तो नहीं है, फिर भी मैं मानता हूँ कि न छापना अधिक अच्छा है। सर्वोत्तम बात तो यह है कि यन्त्रपर अधिक प्रतियाँ निकालनेके बजाय पाँच, दस या उससे भी अधिक व्यक्ति लिखने बैठ जायें और एक आदमी बोलता या लिखाता चला जाये, यह बात हमारे सिद्धान्तके अधिक अनुकूल पड़ती है। ऐसा करनेसे एक तो अच्छे अक्षर लिखनेकी कला आ जायेगी और ये प्रतियाँ उन लोगोंके बीच वितरित की जा सकती हैं जो उन्हें पढ़नेकी इच्छा करते हों। और फिर यदि पढ़नेवाले चाहें तो स्वयं भी उसकी और प्रतियाँ बना सकते हैं। अथवा उसी दिन जिस आदमीके पास भेजनेकी सूचना दी जाये, उसके पास पढ़नेके बाद भेज सकते हैं। ऐसा किया जाये तो थोड़ी ही प्रतियाँ कई लोगोंमें घुमाई जा सकती हैं। और जो लोग उन्हें इस प्रकार विशेष दिलचस्पी लेकर पढ़ेंगे, उन्हें उससे अधिक लाभ होगा। यह बात सोचकर देखना।

[२ मई, १९३२]

मैंने इस बार सप्ताहमें जो काम हुआ, उसके विषयमें लिखा है, उसे पढ़ लेना। ठीक लगे तो सबको पढ़वा देना। यदि ठीक लगे तो उसपर जितना सम्भव हो उतना अमल भी करना। इसमें कुछ परिवर्तन-परिवर्धन करना हो तो जरूर कर सकते हो। सामान्य रीतिसे तो मेरे पास मुझ अकेलेका अनुभव है। वहाँ तो अनुभवकी खान है। इसलिए सम्भव है कि मेरा कोई सुझाव व्यावहारिक न हो, फिर भी इतना तो ठीक ही है कि अंककी बारीकी, तारकी मजबूती और कम टूटनेपर ध्यान दिया ही जाना चाहिए। परीक्षामें तो हमने एक बार इस पद्धतिको अपनाया था। सूतके अंक और मजबूतीका गुणा करके अंक दिये जाते थे। इन दिनों क्या पद्धति है, मुझे इसकी खबर नहीं है। मैं गुणा करनेकी इस पद्धतिमें सूत टूटनेकी बात भी दाखिल करना चाहता हूँ और तब टूटनेकी मात्राके अनुपातमें अंक कम हो जायेंगे। मैंने और महादेवने पद्धतिके विषयमें इस प्रकार सोचा है एक रतल रुईमें एक तोलेतक की टूटन माफ। एक तोलेसे ऊपर टूटे तो उसे गुणा करनेसे प्राप्त हुए नम्बरोंमें से सोलह नम्बर घटा दिये जायें अर्थात्, १/१६ तोलेपर एक-एक नम्बर कटता चला जायेगा। और अगर एक रतलमें दस तोला टूट हो, तो विद्यार्थी बिलकुल फेल माना जायेगा। किन्तु इस विषयपर तुम स्वयं विचार करना कि एक रतलपर एक तोला माफ किया जाये या उससे अधिक। यहाँ तो मैंने अभिप्राय स्पष्ट कर देने योग्य उदाहरण ही दिया

है। परीक्षककी दृष्टिसे मैं तो इस बातपर भी गुण देना चाहूँगा कि कातनेवाला किस तरह बैठता है, अपना चरखा किस तरह रखता है, उससे आवाज होती है या नही; तकुआ सीधा रख पाता है या नही, आस-पास सफाई रखता है या नही; चरखा बिगड जाये तो उसे सुधारना आता है या नही। मै इन सब बातोकी जाँच करूँ और नम्बर दूँ। इसका यह अर्थ हुआ कि सूत्र-यज्ञ करनेवालेका काम हमेशा देख-रेखके अन्तर्गत होना चाहिए और निरीक्षकको स्वय परीक्षक तो होना ही चाहिए। ऐसा करनेमें उत्पादन कुछ कम भले ही हो जाये, मैं उसकी चिन्ता नही करूँगा। हमारे मनमे भरोसा होना चाहिए कि हम सावधान है और रोज प्रगति कर रहे है। साथके कागजमें मैंने लिखा[1] है कि जिसके सूतका नम्बर २० से कम हो, उसका कातना यज्ञ नही कहा जा सकता। इसका यह अर्थ नही है कि तबतक कातनेके कामकी गिनती ही न की जाये। कातना तो रोज है ही, नम्बर भी मिलने चाहिए। सूत काता ही जाना चाहिए किन्तु इतनेसे ही कातनेवालेको याज्ञिकके रूपमे उत्तीर्ण नही माना जा सकता। तबतक वह साधक है, उम्मीदवार है।

डॉक्टर मेहताके नाम जो पत्र लिखा है, वह पढ लेना। मगनलाल[2] की पत्नी मजुलाके नाम लिखा पत्र जैतपुर भिजवा देना। मैं उसके पिताका नाम भूल गया हूँ। यदि तुम्हे याद न हो तो, सम्भव है, चम्पा या रतिलालको याद होगा। पता लगाकर भेज देना और मुझे भी पता लिख भेजना। कुसुमके बारेमे लिख चुका हूँ। सिवा त्रिवेणीबहनके अभी मुझसे कोई मिलने नही आया है। बुधाभाईके विषयमे तुम्हे जैसा योग्य लगे, वैसा करना।

हिलके नाम लिखा गया पत्र तुम्हे ठीक लगे तभी भेजना; क्योकि यदि वह इन दिनो आजाये तो बोझ तुमको ही उठाना है। हरिलालके विषयमे पत्र तुम्हे मिल गया होगा। मनुके पाससे फिर शिकायत-भरा पत्र आया है।

बापू

[पुनश्च :]

इस बारके कुछ पत्रोमे 'के आशीर्वाद' नही लिखा है। उन्हे अध्याहारमे समझना। यह उतना समय बचानेके ध्यानसे किया है। बाये हाथसे लिखते समय जितने अक्षर कम किये जा सके, उतने कम करनेका लोभ रहता है। तुम देखोगे कि साफ अक्षर बनानेकी ओर अधिक ध्यान दे रहा हूँ। अभी और थोडा समय दूँ तो लगता है कि बाये हाथके अक्षर कुछ और अच्छे बनने लगेगे। मौतकी देहलीपर बैठे आदमीकी इच्छाओका कुछ पार है?

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२२४ से भी, सौजन्य : नारणदास गाधी।

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. डॉ० प्राणजीवन दासका सबसे छोटा पुत्र जो विदेश गया था।

४७९. तार: डाह्याभाई पटेलको[1]

२ मई, १९३१

इसे जीवित मृत्यु से मुक्ति पाना समझो।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ १३२।

४८०. तार: मणिबहन पटेलको

२ मई, १९३२

यशोदा कल गुजर गई। यह मानना चाहिए कि वह जीवित मृत्युसे छुटकारा पा गई।

गांधी

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ ८३।

४८१. पत्र: सैम्युअल होरको

२ मई, १९३२

प्रिय सर सैम्युअल,

अपने ११ मार्चके पत्रके जवाबके[2] लिए आपका आभारी हूँ। मैंने उस पत्रके जवाबकी आशा नहीं की थी। मैं आपके प्रति अपना कुछ फर्ज समझता हूँ; पत्र केवल उसी खयालसे लिखा था। हमारे पारस्परिक विचारोंमें चाहे जितना मतभेद हो, फिर भी मैं जो कुछ भी करूँ, यथासम्भव अपनी योग्यता तथा ज्ञानके अनुसार सही-सही करना चाहता हूँ। मैं आपकी इस बातसे बिलकुल सहमत हूँ कि आपके जिस पत्रका जवाब मैं लिख रहा हूँ, उसके पहले भागमें तो जो-कुछ आपने कहा है, उससे अधिक कुछ कहना सम्भव नहीं था। मेरे लिए, एक बन्दीकी हैसियतसे,

१. वल्लभभाई पटेलके पुत्र। यह तार डाह्याभाईके सुबह प्राप्त हुए उस तारके उत्तरमें था जिसमें उन्होंने अपनी पत्नी यशोदाके देहावसानका समाचार दिया था।

३. देखिए परिशिष्ट ३।

आपके पत्रके दूसरे भागके गुण-दोषकी चर्चामे उतरना उचित नही होगा। इसलिए मुझे केवल अपना यह मत व्यक्त करके ही सन्तोष करना चाहिए कि जो अखबार मुझे पढनेको मिलते है, उनके आधारपर भी यह पता चलता है कि इस देशके हालातके सम्बन्धमे आपको कितनी गलत जानकारी है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फ़ोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५५६) से, सौजन्य · इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी।

४८२. पत्र : अगाथा हैरिसनको

३ मई, १९३२

प्रिय अगाथा,

तुम्हारा गत माहकी १५ तारीखका पत्र मिला। हाँ, महादेव हमारे साथ है। तुम्हारे यहाँ अंग्रेजीमे कहावत है कि दो हो तो साथ, तीन हो तो कुछ नही।[1] किसी भी रूपमे कहो, हम तीनो उस कहावतको झुठला रहे है और काफी अच्छी तरह रह रहे है। चूंकि दीनवन्धु अब तुम्हारे साथ है, तुम्हे काफी राहत महसूस हो रही होगी।[2] चाहे आप उसे महादेवकी छोटी-सी आशाका—या बडी आशाका? —आधार कहे या मास्टर देसाई कहे या कुछ और, उसके लिए एक ही बात है क्योकि वह अंग्रेजीसे सर्वथा अनभिज्ञ है। लेकिन जो पुस्तक आपने भेजी है, उसमे निस्सन्देह अनेको तस्वीरे है और इनका आनन्द वह यह पूछे बिना उठायेगा कि आपने उसे कैसे सम्बोधित किया है।[3]

हम दोनोकी तरफसे प्यार।

बापू

[पुनश्च]

चार्लीको प्यार।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४५३) से।

१. 'टू इज कम्पनी, थ्री इज नन'।

२. अगाथा भारत तथा ब्रिटेनके बीच परस्पर सद्भाव पैदा करनेकी गांधीजी की इच्छाको पूरा करनेके लिए सी० एफ० एन्ड्रयूजकी मदद कर रही थी। (अगाथा हैरिसन, पृष्ठ ६८)

३. यहाँतक पत्र महादेव देसाईकी लिखावटमें है। शेष दो पंक्तियाँ गांधीजी के बायें हाथकी लिखी है।

४८३. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

३ मई, १९३२

तुम्हारा पत्र मिला। यदि शक्ति वनी हुई है और किसी प्रकारका कष्ट नही है तो वारह रतल वजन कम होनेका मुझे दुख नही होगा। मैं तारामतीको पत्र लिखता रहता हूँ और इस वार उसके पत्र भी ठीक-ठीक आ रहे है। दिलीपने[1] भी दो पक्तियाँ लिखी थी। माँग करनेपर ही इतनी कृपा हुई है। अवतक तारामती मिलकर गई होगी।

मेरी दृष्टिसे पुनर्जन्म शास्त्रीय प्रयोगो और अनुभवसे सिद्ध वस्तु है। अनुभवसे सिद्ध हो चुका है, ऐसा माननेके लिए हमे उन लोगोपर विश्वास करना होगा जिन्होने अपने अनुभवोका वर्णन किया है। इतने ज्यादा लोगोने इसका प्रमाण दिया है कि उन प्रमाणोको हम रद नही कर सकते। इतना होनेपर भी पुनर्जन्मकी वात किसीको समझानेके लिए मुझे अपना समय वरवाद करने और वहुत वहस करनेकी जरूरत नही है। ऐसी वहुत-सी शास्त्र-सिद्ध वाते है जिन्हे न माननेसे हमारी गाडी रुकती नही है। ऐसा भी सम्भव है कि कोई पुनर्जन्मकी ऐसी व्याख्या करे जिसमे जो सामान्य प्रमाण अभी हालमे दिये जाते है, उनके आधारपर उसे न माना जा सके। पुनर्जन्मकी जो व्याख्या मै करता हूँ, वह तो इतनी ही है देहके अन्तके साथ जीवनका अन्त नही होता और जीवको जहाँ-तहाँ भटकना पडता है। इसीका नाम पुनर्जन्म है। इसलिए ईसाई, मुसलमान और जरतुश्तके अनुयायी जो कयामतको मानते है, कह सकता हूँ कि वे भी मेरी व्याख्याके अनुसार पुनर्जन्मको मानते है। मेरी दृष्टिसे इस मान्यताके अनुसार देहान्तर होना लगभग स्वयसिद्ध है। लेकिन मै जानता हूँ कि कोई कट्टर ईसाई इसे स्वीकार नही कर सकता। यो अव अधिकतर ईसाई लोग मानने लगे है कि देहान्तर सभव है।

सम्बन्ध-विच्छेदके लिए 'लग्नान्तर' शब्द नही चलेगा। 'लग्नान्तर' का अर्थ होगा दूसरा विवाह। यह तो सम्बन्ध-विच्छेदके विना भी सम्भव है। यदि इसके लिए कोई शब्द प्रचलित न हो तो मै 'लग्नभग' शब्दका सुझाव दूंगा। मैंने महादेवसे पूछा तो उसने कहा, 'मै भी इसी शब्दका सुझाव देनेवाला था'। इस तरह एक रोगकी दो औषधियाँ हुई।

हो सकता है कि तारामतीको वम्वईमे 'यरवदा चक्र' ढूंढनेमे कठिनाई हो। मै उसे लिख रहा हूँ कि वहाँ न मिले तो वारडोली या आश्रमसे सीधे भेज देनेके लिए लिख दे। 'गीता' के १८ वे अध्याय [के ६६वे श्लोक]का जो तूने अर्थ लगाया है, वह मेरे अर्थका विरोधी नही है। मैने अपने पत्रमे क्या अर्थ लिखा था, यह कुछ याद नही है। किन्तु यदि तू शरण धर्मको एक नया धर्म वना डाले तो मै तेरा

१. मथुरादासका पुत्र।

विरोध ही करूँगा। मैंने ऐसा कई बार देखा है कि हमें जो कहना है या जो हम कहना चाहते हैं, उसे किसी और व्यक्तिने दूसरे शब्दोंमें कह दिया है। दोनोंमें कोई भेद या विरोध देखनेके बदले मैं तो अर्थका साम्य ही देखता हूँ। भाषा अलग हो तो क्या? ऐसा करनेमें कितनी जोखिम है, यह मैं जानता हूँ। किन्तु यह जोखिम तो उनके लिए है जो किसी-न-किसी तरह ऐक्य देखने या सिद्ध करनेके इच्छुक हैं। ऐसा लगता है कि जो सहज ऐक्य देख पाते हैं, उन्हें कोई जोखिम नहीं उठानी पड़ती। इसलिए, बात तो सिर्फ यह रह जाती है कि ऐक्य देखनेकी आदत डालना अच्छा है या जहाँ शब्दभेद है, वहाँ शब्दभेद है, ऐसा मानना अच्छा है। मुझे लगता है कि शब्दभेदमें अर्थभेद देखना भयंकर है। 'ईश्वर' और 'अल्लाह' में भेद देखनेके बदले उनमें ऐक्य देखना मुझे अत्यन्त प्रिय लगता है।

किशोरलाल और जयरामदासके सिवा दूसरा कोई तुम्हारे साथ नहीं लगता। उन दोनोंसे कहना कि अपने सामान्य पत्रको छोड़े बिना मुझे लिख सकते हो तो लिखें, या मुझे जो लिखना हो, वह सामान्य पत्रमें ही लिख भेजें। जयरामदासका एक पत्र तो मुझे मिला था। मैंने उसका जवाब भी दिया था। तारामतीको भेजे जानेवाले पत्रके स्थानपर मुझे पत्र लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है। तारामतीको लिखो तो उसमें मुझे लिखनेकी सब बातें लिख डालना काफी होगा। या तारामतीको लिखनेकी बातें मेरे पत्रमें लिखनेसे भी काम चलेगा।

हम तीनों मजेमें रहते हैं। मैंने दूध लेना तो तीन महीनेसे छोड़ दिया है। दूधके बदले बादाम और रोटी लेता हूँ। अभी तो वजन टिका हुआ है। कब्जकी बिलकुल शिकायत नहीं है। इसलिए अभी तो इसी तरह निर्वाह कर रहा हूँ।

महादेव कह रहा है कि मराठीमें 'लग्नभंग' को 'विवाह-विच्छेद' कहते हैं। मुझे 'लग्नछेद' या 'विवाह-छेद' शब्दोंका विचार आया था, लेकिन 'लग्नभंग' ज्यादा अच्छा लगा। किन्तु भारतकी भाषाओंके लिए नये शब्द बनायें तो एक ही शब्द होना ज्यादा अच्छा है। इसके पक्षमें होनेके कारण मैं 'विवाह-विच्छेद' शब्दका भी प्रचलन करूँ और शायद उसे पसन्द भी करूँ।

वहाँकी मित्र-मण्डलीको हम तीनोंके यथायोग्य।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १०७-९।

४८४. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

३ मई, १९३२

बहनो,

आज जो डाक गई है उसमे तुम्हे पत्र भेजना था, किन्तु जल्दीमे और समय कम होनेके कारण नही लिख सका। डाक दे देनेके बाद याद आया, तब भी पत्र लिखकर भेज सकता था, लेकिन जाने दिया। गगादेवीकी देख-भालमे सभी बहनें हिस्सा लेती होगी। हमारा उद्देश्य तो यह है कि आश्रममे बच्चेसे लेकर बूढेतक किसीको ऐसा नही लगना चाहिए कि उसका कोई सम्बन्धी नही है। जो धर्मकी रीतिसे चलते है, वे पहले उनका ध्यान रखे जिन्हे पराया माना जाता है। जो अपने है, उनकी सभाल तो होगी ही। किन्तु यदि परायोको पहले देखनेकी आदत डाल ले तो अन्ततक पूरा सामजस्य बैठ जाना सम्भव है। मणिबहनकी कक्षामे रबारियोके[1] बच्चे आते है, इसके लिए उसे शाबाश! बालिकाओके बारेमे तुमने जो लिखा है वह मुझे अच्छा लगा है। जैसा लिखा है उनके साथ वैसा ही व्यवहार कर सको तो यह बहुत बडी प्रगति मानी जायेगी। दो लडकियोके पत्रमे यह प्रश्न है . क्या लड़कियाँ सिरके लिए पिन और क्लिप इस्तेमाल कर सकती है? रिबनसे बाल बाँध सकती है? मैंने उचित उत्तर दे दिया है। परन्तु यह बात तुम्हारे सामने रखता हूँ। मुझे लगता है कि दोनोमे से एक भी चीज जरूरी नही है। पहले तो ये इस्तेमाल नही होती थी। पश्चिममे बाल अनेक प्रकारसे बाँधे जाते है। इसलिए एक ही स्त्री कई पिने और क्लिपे इस्तेमाल करती है। रिबनका तो ठिकाना ही नही। लेकिन हमे तो बाहरी साज-शृगारकी जरूरत नही। वह हमारे लिए उचित नही। हमारा कर्त्तव्य तो कजूसकी तरह पाई-पाई बचाना है। क्योकि हमे जो धन मिलता है उसके हम मालिक नही, रक्षक है, इसलिए उसमे से देहके लिए केवल अन्न-वस्त्रके लायक धन लेनेका हमे अधिकार है। उसमे पिन आदिके लिए गुंजाइश नही है, ऐसा मै मानता हूँ। हमे अपने और बालकोके लिए इस तरह आनन्द जुटाना है जो हमे शोभा दे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ९०९१ से भी; सौजन्य : नारणदास गाधी।

१. ग्वालोंकी एक जाति।

४८५. पत्र : ई० ई० डॉयलको

४ मई, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

बेलगाँव सेन्ट्रल जेलमे मेरे जो चार मित्र व सहयोगी है[1], उनके सम्बन्धमें आपने २ तारीखको ही तुरन्त जवाब[2] दे दिया, इसके लिए धन्यवाद। मैंने सोचा था कि आप मुझे उनका वजन भी बतायेंगे। और अधिक सन्तोषके विचारसे मै उनका वजन अब भी जानना चाहूँगा।

मै काका कालेलकरके बारेमे अभीतक चिन्ता-मुक्त नही हूँ। उन्हे अक्सर रीढके दर्दसे तकलीफ होती है। उन्हे जो खुराक दी जानेकी इजाजत है, उसमे मुझे मक्खनका सर्वथा अभाव दीखता है। शायद आपको याद होगा कि उन्हे यहाँ दूध, रोटी और सब्जियोके अलावा ४ औंस मक्खनकी भी इजाजत थी, और मै जानता हूँ कि वह बिना किसी हानिके उतना मक्खन खा लेते थे और उससे उनका वजन भी बढा था और वे महसूस करते थे कि ताकत लौट रही है। यो जब वे यहाँ आये थे, कमजोरी महसूस करते थे और नियमित रूपसे व्यायाम करनेमे उन्हे कष्ट होता था। इसलिए मै जानना चाहता हूँ कि इस समय उनका वजन कितना है और उनकी रीढकी हड्डीमे दर्दकी कोई शिकायत है या नही। उन्हे मेरे नाम जो पत्र भेजनेकी इजाजत दी गई थी, उसमे उन्होने साफ लिखा है कि पत्र लिखते समय यानी, पिछली १३ अप्रैलको उनकी रीढमे दर्द था।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई-सरकार, गृह विभाग, आई० जी० पी० फाइल सं० ९।

१. देखिए "पत्र : ई० ई० डॉयलको", २२-४-१९३२ और "पत्र : आर० वी० मार्टिनको", १३-४-१९३२।

२. देखिए परिशिष्ट ८।

४८६. पत्र : पर्सी डब्ल्यू० बार्टलेटको

४ मई, १९३२

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र कविकी अपीलके मसविदेके[1] साथ पिछले शनिवारको[2] ही मिला है। मुझे नही मालूम कि क्या आप मुझसे अब कुछ कहनेकी आशा करते है। मै इतना जरूर कह सकता हूँ कि समझौते और शान्तिकी मेरी इच्छा किसीसे कम नही हो सकती। इसलिए आप मुझपर यह भरोसा रख सकते है कि मै ऐसा कोई काम नही करूँगा जो उनके आडे आये। मै वह सभी कुछ करूँगा जिससे राष्ट्रीय सम्मानके अनुरूप समझौते और शान्ति स्थापनाकी सम्भावनाये बढे। जेलकी दीवारोमे घिरे रहकर मुझे इससे अधिक कुछ नही कहना चाहिए।

मुझे खुशी है कि आप तथा अन्य मित्र[3] भारतका दौरा कर सके। आशा करता हूँ कि यहाँकी जलवायुका आपके स्वास्थ्यपर प्रतिकूल प्रभाव नही पडा होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेन्ट, स्पेशल ब्राच, फाइल स० ८०० (४०) (३), भाग – १, पृष्ठ १९३।

१. देखिए परिशिष्ट ९।

२. ३० अप्रैलको। भारत सचिव सर सैम्युअल होरने २९ अप्रैलको कॉमन्समें अपने भाषणमें कहा था: "सविनय अवज्ञासे सम्बन्धित किसी भी व्यक्तिके साथ सहयोगका स्पष्टतः ही कोई प्रश्न नहीं हो सकता। यदि श्री गाधी गोलमेज-परिषदके समय जो सम्बन्ध थे, उन्हें बहाल करनेका रुझान दिखायें तो उन्हें यह तथ्य बिना किसी मध्यस्थके सरकारतक पहुँचानेमें कोई कठिनाई नही होगी। ऐसा करनेपर जो स्थिति होगी, उसपर सरकार ध्यान देगी। परन्तु एक बात बिलकुल स्पष्ट है कि कांग्रेसके सहयोगकी शर्तके रूपमें उसके साथ सौदा करनेका कोई प्रश्न नहीं होगा।" (हिन्दू, २४-६-१९३२)

३. रिकंसिलिएशन फैलोशिपके सदस्य, जिन्होने मार्च, १९३२ में भारतकी यात्रा की थी।

४८७. पत्र : रामदास गांधीको

४ मई, १९३२

चि० रामदास,

कल नारणदासका पत्र मिला। उससे मालूम होता है कि निमु आश्रममें आ गई है।

मुझे डर है कि पिछली बार मुझे जो कहना था, वह शायद मैं समझा नहीं सका। मेरी शुरूसे ही यह राय रही है कि सत्याग्रही भोजनके लिए कहीं भी झगड़ा न करे और जो मिले, उसे ईश्वरकी देन मानकर खा ले।

कैदीके शरीरका मालिक दारोगा है। इसलिए जबतक खुराक इज्जतके साथ मिले, गन्दी न हो और अखाद्य न हो, तबतक उसे ले लिया जाये, और सुपाच्य जान पड़े तो खा ले, नहीं तो फेंक दे। जूठी न की हो तो वापस दे दे। इस जमाने में कैदियोंकी खुराक तय करनेमें थोड़े-बहुत आरोग्यशास्त्रके नियम पाले जाते हैं। लेकिन सिर्फ पानी और रोटी ही दे तो क्या हो?

अधिकारियोंके साथ ऐसे मामलोंमें सन्तुलित चर्चा की जा सकती है, लड़ाई नहीं की जा सकती।

धींगामुस्ती करके बहुत-सी चीजें मिल सकती हैं, मिली हैं; मगर यह हमारे लिए अयोग्य है।

इसलिए मैं मानता हूँ कि सब्जीके बारेमें बिलकुल झगड़ा नहीं होना चाहिए। जिसे अच्छी लगे वह खाये, न लगे वह छोड़ दे। रोटी-दाल मिल जाये, तो भी ईश्वरकी कृपा माननी चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १३५।

४८८. पत्र : नानाभाई आई० मशरूवालाको

५ मई, १९३२

भाईश्री नानाभाई,

मणिलाल और सुशीला आये, तो भी ठीक और न आये तो भी ठीक। इस बारेमे मै विवेकपूर्वक तटस्थ हूँ। क्योकि उसकी प्रतिज्ञाके खयालसे उनके आनेमे ही श्रेय है और उन तीनो[1] की तबीयतकी दृष्टिसे उनका न आना ही श्रेयस्कर है। उसकी प्रतिज्ञाका अर्थ कितनी सख्तीसे लगाते है यह तो वे ही जाने, पर मणिलालके स्वभावको मै जानता हूँ और इसीलिए मुझे पता है कि वह अपनी प्रतिज्ञाका ऐसा स्वतन्त्र और सख्त अर्थ नही लेगा और सुशीलाका तो इच्छा-अनिच्छासे उसीमे समावेश हो जाता है। इन दोनोके बारेमे मेरा विश्लेषण कुछ ऐसा ही है। दोनो ही भोले है और भले है। अत. वे जहाँ भी होगे, यथाशक्ति सेवा कर ही लेगे।

खरी बात तो यह है कि 'अनासक्तियोग' के लिए किशोरलालकी उपस्थिति चाहिए। जबतक मुझे कोई जाग्रत न करे, तबतक 'अनासक्तियोग' को मै मुँदी आँखो ही देख पाऊँगा। महादेव क्या कर सकेगा, यह मै देखूँगा। किशोरलालकी टिप्पणियाँ मिलती रहे तो उन्हे मै अवश्य देख जाऊँगा और जो मुझे सूझते जायेगे, ऐसे सुधार भी करता जाऊँगा। यह कहना होगा कि तुमने ठीक दिशाओमे पाँव जमा लिये है। क्या सुरेन्द्रका वजन कायम है? ताराके पत्र आते है? यहाँसे भी सभीलोग तुम दोनोको यथायोग्य कहते है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६८३) से। सी० डब्ल्यू० ४३२८ से भी; सौजन्य : कनुभाई मशरूवाला।

१. मणिलाल, सुशीला और उनकी बेटी।

४८९. पत्र : इब्राहीमजी राजकोटवालाको

५ मई, १९३२

आपका पत्र मिला। ईश्वरकी हस्तीके लिए बुद्धिसे प्रमाण माँगो, तो कहाँसे मिले? कारण, ईश्वर बुद्धिसे परे है। अगर ऐसा कहे कि बुद्धिसे आगे कुछ नही है, तो जरूर मुश्किल पैदा होती है। बुद्धिको ही सर्वोत्तम पद दे दे, तो हम बडी मुश्किलमे पड जाते है। खुद हमारा जीव या आत्मा ही बुद्धिसे परे है। उसका अस्तित्व सिद्ध करनेके लिए बुद्धिके प्रयोग हुए है। यही बात ईश्वरके बारेमे भी कही जा सकती है। मगर जिसने आत्मा और ईश्वरको बुद्धिसे ही जाना है, उसने कुछ भी नही जाना। बुद्धि भले ही किसी समय ज्ञान प्राप्त करनेमे मददगार हुई हो। मगर जो आदमी वही अटक जाता है, वह आत्मज्ञानका लाभ तो बिलकुल नही उठा सकता। जिस तरह कोई अनाज खानेके फायदे बुद्धिसे जानता हो, तो वह अनाज खानेसे होनेवाला फायदा नही उठा सकता। आत्मा या ईश्वर जाननेकी चीज नही है। वह खुद जाननेवाला है। और इसीलिए वह बुद्धिसे परे है। ईश्वरको पहचाननेकी दो मजिले है। पहली मजिल श्रद्धा और दूसरी तथा आखिरी मजिल उससे होनेवाला अनुभव-ज्ञान। दुनियाके बडे-से-बडे शिक्षकोने अपने अनुभवोकी गवाही दी है। और दुनिया मूर्ख समझकर जिनकी अवज्ञा कर सकती है, उन्होने भी अपनी श्रद्धाका सबूत दिया है। इनकी श्रद्धापर हम अपनी श्रद्धाका निर्माण करे, तो किसी दिन अनुभव भी मिल जायेगा। एक आदमी दूसरेको आँखोसे देखे, मगर बहरा होनेके कारण उसकी कुछ भी सुने नही और फिर शिकायत करे कि मैंने उसे सुना नही, तो यह ठीक नही है। इसी तरह बुद्धिसे ईश्वरको नही पहचाना जा सकता, यह वाक्य अज्ञान-सूचक है। जैसे सुनना आँखका विषय नही है, वैसे ईश्वरको पहचानना इन्द्रियोका या बुद्धिका विषय नही है। इसके लिए दूसरी ही शक्ति चाहिए और वह है अचल श्रद्धा। हमने देखा है कि बुद्धिको क्षण-क्षणमे भरमाया जा सकता है। लेकिन सच्ची श्रद्धाको भरमा सके, ऐसा माईका लाल आजतक पृथ्वीपर देखनेमे नही आया।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १३६–७।

४९०. तार: गंगाबहन वैद्यको[1]

६ मई, १९३२

गगावहनकी मृत्युका समाचार जानकर हम सवको दुख हुआ। मुझे खुशी है कि उन्होने अमर श्रद्धाके साथ सुन्दर जीवन जिया और सुन्दर मृत्यु पायी। तोतारामजी[2] आनन्दमे हैं, इसमे आश्चर्य नही।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ १३८।

४९१. पत्र: सरोजिनी नायडूको

६ मई, १९३२

मैं नही कह सकता कि मैं लीलामणिके उत्साहमे उसका साथ दे सकता हूँ या नही।[3] वीरता अपेक्षाकृत अधिक कठिन तत्त्वोसे वनी होती है। उदार सूरमा वह है जिसका व्यवहार उन सर्वथा अनजाने लोगोके प्रति भी विलकुल निर्दोप रहता है जिन्हे मददकी जरूरत होती है, लेकिन जो बदलेमे उसे कुछ नही दे सकते – यहाँतक कि जो धन्यवादके कुछ शब्द कह पानेमे भी असमर्थ होते हैं। लेकिन इन वातोके वारेमे किसी और दिन और किसी और मौकेपर कहूँगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १०२।

१. यह गंगाबहन वैद्यके उस पत्रके उत्तरमें भेजा गया था जिसमें उन्होंने गंगादेवी सनाढ्यकी मृत्युकी सूचना दी थी।

२. गंगादेवीके पति तोताराम सनाढ्य।

३. साधन-सूत्रमें महादेव देसाई लिखते हैं: "सरोजिनी देवीने अपनी बेटी लीलाको लिखा था कि गिरफ्तारीके बाद उन्हें ताजमहल (होटल) में सोनेकी अनुमति दी गई थी; इससे लीलाको मध्ययुगीन सूरमाओंकी उदारताकी याद आ गई"। (महादेवभाईनी डायरी, भाग १, पृष्ठ १०२)

४९२. पत्र : मीराबहनको

६ मई, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र आशानुसार समयपर मिला।

क्या तुम्हे डाह्याभाईकी दुबली-पतली पत्नी यशोदाकी याद है। वह इतवारको नही रही। यह उसके लिए कष्ट-मुक्ति थी। उसे दौरे पडते थे और उसकी याददाश्त लगभग समाप्त हो चुकी थी। इससे वल्लभभाई पर बोझ और बढ जायेगा, क्योकि वह अपने पीछे लगभग पाँच सालका तेजस्वी बालक छोड गई है। लेकिन उनके कन्धे मजबूत है।

मेरा वजन १०४ और १०६ के बीच रहता है। इसलिए मै खुराकमे कोई फेरफार नही कर रहा हूँ। बादामकी लुगदीके बजाय मूँगफलीकी लुगदी लेनेकी कोशिश कर रहा हूँ। अगर यह बादामकी तरह माफिक आ गई तो अच्छा रहेगा। और लोग भी सकुशल है।

मगनचक्र[1] कल मिला। मै उसे आजमाऊँगा। इससे मुझे बाई कोहनीको पूरा आराम देनेका मौका मिल जायेगा। और प्रभुदास जब यह सुनेगा कि मै उसके आविष्कारकी परीक्षा कर रहा हूँ, तो बडा प्रसन्न होगा। हाँ, मै इधर कुछ समयसे दाहिने हाथसे तार खीचने लगा था। यह अभ्यास इसमे बहुत उपयोगी सिद्ध होगा।

मुझे खुशी है कि तुमने दाये हाथके बजाय बाये हाथसे काम लेना आरम्भ कर दिया है। सिर्फ लिखनेके लिए ही ऐसा नही करना चाहिए। बाये हाथसे खानेका भी प्रयत्न करो। थोडी-सी सावधानीके सिवाय किसी खास प्रयत्नकी आवश्यकता मालूम नही होती।

मुझे प्रसन्नता है कि तुम कुछ दिन सरोजिनीके[2] साथ थी और उनकी सेवा कर सकी।

मैंने अपने बाधक बननेके बारेमे जो-कुछ लिखा है, वह बिलकुल सच है। मै किसी चीजको शुरू करनेमे सहायक हो सकता हूँ, लेकिन उसपर स्वय अमल न कर सकनेके कारण उसकी आगेकी प्रगतिमे बाधक ही बन जाता हूँ। स्वेच्छापूर्वक अपनाई हुई दरिद्रताका आदर्श बहुत आकर्षक है। हमने प्रगति की है, मगर चूँकि मैं अपने खुदके जीवनमे उस आदर्शपर बिलकुल नही चल सका हूँ, इसलिए आश्रममे और लोगोके लिए बहुत प्रगति करना कठिन हो गया है। उनकी इच्छा तो है, परन्तु उनके सामने

१. "इस चरखेमें दो तकुए होते हैं और वे पैरसे चलते हैं। चूँकि बापू एक ही तकुआ काममें लेते थे, इसलिए उनके एक हाथको इससे पूरा आराम मिल गया था।"—मीराबहन

२. "श्रीमती सरोजिनी नायडू गिरफ्तार करके आर्थर रोड जेलमें लाई गई थीं, थोड़े ही दिनोंके बाद वे यरवदा सेन्ट्रल जेलके महिला-कक्षमें भेज दी गई थीं।"—मीराबहन

काइ परिपूर्ण प्रत्यक्ष उदाहरण नही है। हमारे यहाँ दो लुभावने बिल्लीके बच्चे है। वे अपनी माताके मूक आचरणसे शिक्षा ग्रहण करते है। वह उन्हे अपनी आँखोसे ओझल नही होने देती। असल बात अमल करनेकी है। और अभी तो मै बहुत-सी बातोमें पूरी तरह असफल होता रहता हूँ। परन्तु जो अनिवार्य है उसपर शोक करनेसे क्या लाभ?

अभी नारणदासका कार्ड मिला है कि गगादेवी चल बसी। वे रामनाम लेती हुई खुशी-खुशी गईं। वे और तोतारामजी आश्रमके भूषण थे।

शायद हम जल्दी ही मिलेगे।[1]

हम सबकी तरफसे प्यार।

बापू

[पुनश्च:]

मैने 'मगनचक्र' पर २४ तार काते। नारणदास पूछते है कि क्या तुम १८ तारीखको मुझसे मिल सकोगी। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, तुम अवश्य ही मिल सकती हो।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२१९)से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६८५ से भी।

४९३. पत्र: ई० ई० डॉयलको

७ मई, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

काका कालेलकरके मेरे नाम लिखे पत्रसे यह पता चला कि यद्यपि वे तथा सर्वश्री नरहरि परीख और प्रभुदास गाधी बीसापुरमे साथ रखे गये थे, पर बेलगाँव सेन्ट्रल जेलमे दाखिल किए जाते समय उन्हे अलग कर दिया गया है। वे सब आश्रमवासी है। प्रभुदास गाधी काका कालेलकरका शिष्य था और नरहरि परीख उनके सहायक व साथी। मै नही समझता कि उन्हे एक-दूसरेसे अलग करनेका कोई कारण है। यदि कोई कारण नही है, तो आप शायद मेरी इस बातसे सहमत होगे कि काका और प्रभुदास गाधी दोनोके स्वास्थ्यकी इस समय जो हालत है, उसमे यदि वे तीनो साथ हो तो एक-दूसरेके लिए सहायक हो सकते है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई-सरकार, गृह विभाग, आई० जी० पी० फाइल स० ९।

1. "मेरी तीन मासकी सजा पूरी होने आ रही थी।" —मीराबहन

४९४. पत्र : ई० ई० डॉयलको

७ मई, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

मै एक मामला आपके ध्यानमे लाना चाहता हूँ जिसके कारण मेरे मनमें खीझ तक पैदा हो गई है। दो महीनेसे ऊपर हुए, सरदार वल्लभभाईने दो पत्र लिखे थे, एक बम्बईमे अपने लडकेको और एक अहमदाबादमे श्री जी० वी० मावलकरको। दोनो ही पत्र कामकाजी किस्मके थे। वे यथोचित ढगसे अधिकृत थे, लेकिन उन लोगोके पास पहुँचे ही नही। २६ मार्चको श्रीयुत महादेव देसाईने साबरमती आश्रममे अपनी पत्नीको अपना मासिक पत्र लिखा था। वह उनके पास नही पहुँचा। २८ तारीखको मैंने एक पत्र अनुमति प्राप्त करके आश्रममे अपने बच्चेको लिखा था जिससे कोई गलती हुई थी। वह पत्र उसके पत्रके जवाबमे लिखा गया था और अत्यन्त आवश्यक था। वह पत्र आश्रमवालोको नही मिला, हालाँकि उसके बादवाले पत्र वहाँ पहुँच गये। लगभग हमेशा ही आश्रमकी डाक जिस दिन पहुँचनी चाहिए, उसके दो-तीन दिन बाद ही पहुँचती है। मै इस सबसे यह समझता हूँ कि कुछ पत्र तो एकदम रोक लिये जाते है और जो रोके नही जाते, उन्हे पहुँचानेमे किसी अधिकारी द्वारा बीचमे ही देर कर दी जाती है। मै जानता हूँ कि सत्याग्रहियोके पत्र-व्यवहारकी कडी सेंसर की जाती है। मुझे उसके विरुद्ध कुछ नही कहना है। लेकिन मै समझता हूँ कि जेलसे भेजे जानेवाले पत्रादि, जिनका जेल-अधिकारियोने यथोचित ढगसे निरीक्षण कर लिया हो, आगेके सेंसर तथा उसमे होनेवाली देर या बिलकुल ही रोक लिए जानेके खतरेसे बरी होने चाहिए। मै व्यर्थ ही पत्र नही लिखता और आशा है कि जिन शर्तोके अधीन पत्र लिखनेकी अनुमति मुझे मिली है, उनका पालन करनेमे सावधान हूँ। यदि उनके दोहरे सेंसरकी जरूरत हो तो हमे वैसा बता देना बेहतर होगा। यदि जेल-अधिकारियो-द्वारा देखकर भेज दिये जानेके बाद भी वे पत्र रोके जाते है, तो मै समझता हूँ कि हमे यह मालूम होना चाहिए कि वे रोक दिये गये है। जो पत्र मैंने अपने बच्चेको भेजा था वह उसके आगेके आचरणको प्रभावित करनेके लिए था और उसके साथ एक मूल पत्र सलग्न था जिसे मेरे बच्चेने मेरे देखनेके लिए भेजा था और यह चाहा था कि वह उसके पास वापस भेज दिया जाये। मुझे एक भी ऐसी पक्ति लिखनेकी कतई इच्छा नही जिसे मै चाहूँ कि कोई सरकारी अफसर न देखे। लेकिन जब कैदियोके भेजे गये वे पत्र भी जिन्हे जेल-अधिकारी आपत्तिजनक नही मानते, देरसे पहुँचते है या बीचमे रोक लिये जाते है तो मै इस बातका जरूर बुरा मानता हूँ।

इसलिए यदि आप कृपया सम्बन्धित अधिकारियोसे इन पत्रोके बारेमे पता लगाये, तो मै आपका आभारी होउगा। यदि ऐसा पता लगा कि मेरे सन्देह निराधार थे और इस पत्र-व्यवहारके साथ कोई छेड़-छाड़ नही हुई और देरी यो ही हो गई

और लापता पत्र मिल गये तथा जिन्हे वे भेजे गये थे उन्हे पहुँचा दिये गये तो मुझे खुशी होगी।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेन्ट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (३०), भाग – १, पृष्ठ २४७–८।

४९५. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

७ मई, १९३२

चि० प्रेमा,

आध्यात्मिक लेखा-जोखा[1] निकालनेकी आदत पड जाये तो झूठा संकोच दूर हो जाता है और हम जैसे होते है उसी रूपमे दुनियाको दिखाई देने लगते है। स्पष्ट है कि यह बात सच्चे मनुष्योपर ही लागू होती है। झूठे मनुष्य अपना लेखा-जोखा लम्बे अर्सेतक निकाल ही नही सकते। उनके लिए यह असम्भव है।

नारणदासके बारेमे तूने जो लिखा है, वह सब मै मानता हूँ। उसे शक्तिसे ज्यादा काम हाथमे लेना ही नही चाहिए। किसीको भी नही लेना चाहिए। लेकिन सामान्यत मनुष्य अपनेको धोखा देता है। वह अपने प्रति बहुत उदार रहता है और अपने किये हुए थोडे-से कामको भी शक्तिसे बाहरका मान बैठता है। इसलिए सामान्यत कोई ज्यादा काम करता है तो उसे रोकनेकी इच्छा नही होती। लेकिन नारणदासका पन्थ न्यारा ही है। वह हमेशा बहुत काम हाथमे ले लेता है। लेकिन समयपर काम करनेकी आदत होनेके कारण शायद अनजान आदमी उसका काम न देख सके। ऐसा है, इसीलिए नारणदास नया बोझ न उठाये यही ठीक है। मैने उसे लिखा है[2]। तू ध्यान रखना।

आध्यात्मिक लेखा-जोखा निकालनेके बारेमे मैने जो लिखा है, उससे कोई जड-वत् नही बनेगा। अगर आश्रममे रहकर एक भी आदमी जडवत् बने, तो मै हमारी कार्य-पद्धतिमे दोष मानूँगा। यह मै जानता हूँ कि हमारी कार्य-पद्धति पूर्ण नही है। लेकिन आश्रममे रहनेवाला कोई जड नही बना है और कितने ही जड-जैसे आदमी चेतन बने है। इससे मै अनुमान लगाता हूँ कि हमारी कार्य-पद्धति ज्यादा नही तो कम-से-कम ५१ प्रतिशत तो कुशल होनी ही चाहिए। आश्रममे विविध प्रवृत्तियोके सचालक उन प्रवृत्तियोके विशारद नही है। इसमे किसीका दोष नही है। लेकिन फिर भी आश्रमने नई प्रवृत्ति हाथमे ली है या पुरानीको नई दृष्टिसे चलानेका सकल्प किया है। इसलिए विशेषज्ञोको आश्रममे तैयार करनेकी जिम्मेदारी हमपर आई है,

१ और २. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", ४/९-५-१९३२।

जिससे समयका, द्रव्यका कुछ अनुचित जान पडनेवाला व्यय हुआ है। और ऐसा करनेके बावजूद आश्रम बहुत बार कीर्ति-लाभ भी नही कर सका। लेकिन आश्रम कीर्ति-लाभके लिए नही, सेवाके लिए है। सेवा करते हुए उसकी कीर्ति बढे तो अच्छा लगे। लेकिन निन्दा हो तो भी उसे सेवा तो करनी ही चाहिए। इसका सार यह निकला कि जैसे-जैसे हम कुशल होते जायेंगे वैसे-वैसे हमारे कार्यका मापदण्ड बढता जायेगा और फिर भी उसका भार हमे कम लगेगा। इसका ताजा उदाहरण यह है। बाये हाथसे चक्र घुमानेके पहले दिन मेरे सिर्फ ९३ तार निकले। समय ज्यादा लगा। थकान ज्यादा मालूम हुई। धीरे-धीरे कुशलता बढी। इसलिए थोडे समयमे दो सौसे भी ज्यादा तार निकलने लगे और थकान पहलेसे कम लगी। अब मगन-चरखा अपनाया है। कल २४ तार ही निकाले और समय बहुत लगा। आज थोडे समयमे ५६ तार निकाले, थकान थोडी लगी। जो बात एक व्यक्ति और उसके छोटे-से कामके बारेमे सच है, वही सस्था और उसके महान कार्योके बारेमे भी सच है। 'योग. कर्मसु कौशलम्[1]।' कर्म अर्थात् सेवाकार्य, यज्ञ। हमारी सारी मुसीबतोकी जड हमारी अकुशलतामे है। कुशलता आ जाये तो जो काम हमे अभी कष्टदायी लगता है वही आनन्ददायी लगने लगे। मेरा दृढ मत है कि सुव्यवस्थित सात्विक तन्त्रमे कभी कामका बोझ मालूम ही नही होना चाहिए।

तू इसी वस्तुको सिद्ध करनेके लिए आश्रममे आई है। यह तुझे कोई सिखानेवाला नही है। सबको स्वय ही वायुमे से यह वस्तु ग्रहण कर लेनी है। जो तेरी तरह ग्रहण नही कर सके वह आश्रममे आखिरतक नही टिक सकता। जिसे कोई महत्त्वाकाक्षा न हो वह निभ जाये, यह अलग बात है। आश्रम वास्तवमे स्वतन्त्र सस्था है। उसमे जो भी निश्चय करे उसके लिए जितना ऊँचा चढना हो उतना ऊँचा चढनेका अवकाश है। उसे कोई यह चीज दे नही सकता। तुझे अपने अनुकूल वातावरण खुद पैदा करना है। अपनी सहेलीको तू वहाँ खीच सकती है। लेकिन सच बात तो यह है कि यह स्वार्थीपन कहा जायेगा। तेरे लिए तो वहाँ जो लोग है वे ही तेरे सखा और सखी हैं। तुझमे जो गुण हो वे उनमे उँडेल। उनमे हो वे गुण तू ले। अगर तू यह मानती हो कि एक-दोके सिवा और किसीके पास तेरे लिए लेने-जैसा कुछ है ही नही, तो तू मोहकूपमे पडी हुई है। मुझे लगता है कि जगतमे ऐसा कोई भी नही है जिससे हम कुछ भी न ले सके।

रामकृष्णके[2] बारेमे तूने जो लिखा है, उसके सत्य होनेकी पूरी सम्भावना है। मै अपनेको किसी भी तरह सिद्ध नही मानता। इसलिए भूले भी मुझसे हुआ ही करती होगी। लेकिन मेरी भूले निर्दोष होनेके कारण आजतक हानिकर सिद्ध नही हुई है। इसलिए मै निश्चिन्त होकर रास्ता तय कर रहा हूँ और साथियोको भी साथमे लेता जा रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

१. भगवद्गीता, अध्याय २, श्लोक ५०।
२. श्री रामकृष्ण परमहंस।

[पुनश्च:]

निश्चेष्ट व्यायाम[1] दुर्बल आदमीसे उसका सहायक करवाता है, जैसे, मालिश या अर्ध-शीर्षासन, अर्ध-सर्वांगासन, सिर्फ पैर या हाथ धीरे-धीरे ऊँचे करना। इसमे बीमार पडा रहता है और मानसिक सहयोग-भर देता है। तू समझी ?

प्रार्थनापर बहुत बार हमले हुए हैं। लेकिन वह १६ वर्षसे टिकी हुई है। इसमें कितना समय जाता है ? कितना बचाया जा सकता है ? जो प्रार्थनाकी आवश्यकताको मानता है, वह उससे द्वेष नही करेगा। दोष सभीमे देखे जा सकते हैं। लेकिन यह प्रार्थना कुल मिलाकर ठीक मालम हुई है। मुझे बता कि तू क्या परिवर्तन करना चाहती है ?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२८४) से। सी० डब्ल्यू० ६७३२से भी, सौजन्य प्रेमाबहन कटक।

४९६. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

७ मई, १९३२

चि० परसराम,

रिपोर्ट सुन्दर है। किशोरीकान्त नाम अपनाना ठीक नही है[2]। और फिर ऐसा नाम रखनेके पीछे जो हेतु है वह भी दूषित है। मेरे सम्बन्धमे लेख न लिखा गया होता तो ठीक था। पर अब जो हो चुका उसके लिए खेद नही करना चाहिए। अब भविष्यमे न लिखना। पुस्तके रखना परिग्रह नही माना जाता। वे 'तुम्हारी' हैं भी नही। यही बात परचियोकी है।

यह कोई नियम नही है कि जिसके सन्तान नही होती वह शुष्क हृदय होता है। रसायन इत्यादिके द्वारा ईश्वरकी खोज की जा सकती है, पर वह कुछ ही लोगोके लिए सम्भव है। आकाश-दर्शन तो सहज-साध्य है। 'डायरी जैसी रखी जायेगी वैसा ही उसका प्रभाव होगा।

बापू

[पुनश्च]

हिन्दीको रिपोर्ट बढिया है। बिक्री-विभागमे कौन है ?

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७९७) से। सी० डब्ल्यू० ४९७४ से भी, सौजन्य परशुराम मेहरोत्रा।

१. देखिए "पत्र : प्रेमाबहन कटकको" २२-४-१९३२।

२. परशुराम मेहरोत्रा अपनी स्वर्गीय पत्नी राजकिशोरीकी यादमें अपना नया नाम 'किशोरीकान्त' रखना चाहते थे।

४९७. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

८ मई, १९३२

चि० भगवानजी,

नारणदास तुम्हारी वात नही सुनते, ऐसी शिकायतकी ध्वनि तुम्हारे पत्रसे निकलती है। पर ऐसा मत मानो। तुमने वात कह दी, अत तुमने अपना फर्ज अदा कर दिया। तुमने अपनी वात अनासक्तिपूर्वक कही है न?

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३४७) से, सौजन्य भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्या।

४९८. पत्र : बनारसीलाल और रुक्मिणी बजाजको

८ मई, १९३२

चि० वनारसी,

तुमने जो लिखा वह मैं पढ गया। मेरे नाम पिताजीका पत्र भी है, वह तुमने पढा ही होगा। यह वहाँ होकर यहाँ आया है। यह मैं ठीक तौरसे समझ नही पाया।

चि० रुक्मिणी,

तेरा पत्र मिला। [पहाडसे] नीचे उतरे कि तुम दोनोकी तन्दुरुस्ती विगडी। क्या इसका मतलव यह समझे कि दोनोको अव पहाडी स्थानमे ही रहना चाहिए? मुझे उम्मीद है, अव स्वास्थ्य विलकुल ठीक हो गया होगा। क्या माधवको घुमाने ले जाती है? किसी भी वजहसे वच्चेकी तवीयत विगडने न पाये। मुझे नियमपूर्वक लिखती रहना। मीराबहनकी तरह पत्र लिखनेका दिन ही मुकर्रर करले तो भूलनेका प्रश्न ही न रहे।

[पुनश्च .]

गगादेवीके देहान्तका समाचार मिला होगा।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४४२) से, सौजन्य · बनारसीलाल वजाज।

४९९. एक पत्र

८ मई, १९३२

किसी चीजको स्वादके लिए लेना इस व्रतका भग होगा। जितना शरीरको नीरोग और सगक्त वनाये रखनेके लिए जरूरी हो, खाद्य पदार्थोमे से केवल उतना ही खाया जाये, यही अस्वाद-व्रतका पालन है। इस व्रतके पालनसे देह नीरोगी और स्वस्थ वनी रहती है। इससे ब्रह्मचर्यका पालन सहज सध जाता है और अन्य प्रकारसे भी मनपर सयम प्राप्त होता है।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०८७)से; सौजन्य: नारणदास गाधी।

५००. एक पत्र

८ मई, १९३२

पिताजी की आज्ञा होते ही चले जाना तेरा धर्म था। आश्रम सभीको अच्छा ही लगता है, सो वात नही है। जिसे सयमपूर्वक स्वतन्त्रता रुचती है, आश्रम उसीको अच्छा लगता है।

विशुद्ध दयाके कारण इस जगतमे किसी दिन कोई नुकसान नही हुआ। पृथ्वी-राजके वारेमे हमे ठीक तथ्योका पता नही है, इसलिए उस सम्वन्धमे कोई निर्णय नही किया जा सकता। इस तरहकी वातोमे प्राचीन दृष्टान्तोका उपयोग कम ही करना चाहिए। जिस औपधिकी परीक्षा आज भी की जा सकती है, उसके भूतकालमे क्या परिणाम हुए, इसे जानकर क्या लाभ?

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०९७)से; सौजन्य नारणदास गाधी।

५०१. पत्र : दुर्गा म० देसाईको

८ मई, १९३२

चि० दुर्गा,

'साकेत' का पठन रोनेके लिए नही है। उर्मिलाके विषादमे भी ज्ञान भरा है। 'साकेत' को तो रामकी स्तुतिकी दृष्टिसे ही पढा जाना चाहिए। और फिर कहाँ तो उर्मिला और लक्ष्मणका वियोग और कहाँ दुर्गा-महादेवका। इसे भला वियोग कौन कहेगा? [यहाँ तो] पत्र लिखे जा सकते है, मिलनेकी इच्छा होनेपर मिला भी जा सकता है। समाचार मिलते है। उर्मिलाके लिए तो इसमे से कुछ भी उपलब्ध नही था। कहाँ वन और कहाँ मन्दिर! कहाँ दो और कहाँ चौदह वर्ष!

बापू

[पुनश्च.]

मसालोके बिना शरीर ठीक न रहता हो तो मसालोका सेवन किया जाये।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४८५) से।

५०२. पत्र : कुसुम देसाईको

८ मई, १९३२

चि० कुसुम (बडी),

अब तुझे पत्र लिखे जाये या नही, यह सवाल है। परन्तु तेरा कार्ड आया है इसलिए इतना लिख रहा हूँ। जवाबकी प्रतीक्षा किये बिना धूलिया हो आये[1] तो अच्छा है। परन्तु तेरे पास समय है या नही, यह तू जान।

बापू

[पुनश्च.]

लेख[2] मे पूरी सावधानी रखना। बेगार न टालना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८३६) से।

१. धूलिया-जेलमें कैद प्यारेलालजी तथा श्री गुलजारीलाल नन्दासे मिलने।

२. देखिए "पत्र: कुसुम देसाईको", ८-४-१९३२।

५०३. पत्र : मणिबहन न० परीखको

८ मई, १९३२

चि० मणि (परीख),

मिलना हो गया, यह बहुत अच्छा हुआ। बच्चोंके साथ बात न हो सकी, पर यह जगह जेल जो ठहरी। यहाँ आखिर कितना समय लिया जा सकता है? तुम्हे कमजोरी छोड देनी चाहिए। आँखोसे आँसू नही टपकाने चाहिए। शकरलालको लिख देना कि उससे भेट न हो सकी, इसका दु.ख है पर यह तो यों ही चलेगा। बाबू मिल गया यही बहुत है, पर उसे भी लाड-प्यार नही कर सका।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९६८)से। सी० डब्ल्यू० ३२८५ से भी; सौजन्य: वनमाला म० देसाई।

५०४. पत्र : महेन्द्र वा० देसाईको

८ मई, १९३२

चि० मनु,

विलायतकी वे सभी बाते जो लिखने योग्य थी, मैं लिख चुका हूँ। पर भला मैं तेरे-जैसा वर्णन कही कर सकता हूँ? हाँ, यदि तू सुन्दर अक्षरोमें लिखने लगे तो मैं विलायतके अपने और अनुभवोको सोचकर लिखूं।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४२९)से, सौजन्य: वालजी गोविन्दजी देसाई।

५०५. पत्र : पुष्पा शं० पटेलको

८ मई, १९३२

चि० पुष्पा,

भारतमाताके गुणोंको समझकर उन्हे धीरे-धीरे अपने [जीवन] में उतारना चाहिए।

केवल एक दिनकी ही घटनाओंको याद रखा जाये तो सर चकराने लगता है। फिर बरसोंकी बातें यादं रखी जायें तो क्या हम पागल ही न हो जायें?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९८८)से। सी० डब्ल्यू० ३४ से भी; सौजन्य: पुष्पाबहन ना० नायक।

५०६. पत्र : विद्या रा० पटेलको

८ मई, १९३२

चि० विद्या,

इस बार तूने अक्षर ठीक ढंगसे लिखे हैं, यह मानना चाहिए। हर बार यदि ध्यानपूर्वक लिखे जाये, तो अक्षर सुधरेंगे ही। यह किससे बनता है, वह कैसे बनता है, ऐसे प्रश्न मैं नहीं जानता। ये प्रश्न तो प्रेमाबहन या अन्य किसीसे वहीं पूछ लेने चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४२७)से, सौजन्य: रवीन्द्र रावजीभाई पटेल।

५०७. पत्र : रैहाना तैयबजीको

८ मई, १९३२

ओ रैहाना,

वहाँ बैठी-बैठी क्या कर रही है – कैसी उस्तादनी है – अब हरफ अच्छे बनानेके लिए कापी-बुक मँगवा ली है। आजकलमें शुरू हो जायेगी। उर्दू किताब तो पढ रहा हूँ। बात यह है, लोभ बहुत और वक्त कम। खुदाके नामसे और उसीके कामके लिए सब कर रहा हूँ। वह जहाँ चाहेगा, वहाँ ले जायेगा। तुमने तो गाया है ना:

टुक नींद से अँखियाँ खोल जरा
ए गाफिल रबसे ध्यान लगा
जो काल करे वह आज तू कर
जो आज करे वह अब कर ले —

'अब कर लेने' की कोशिश हो रही है। अजाम [पर] पहुँचाना उसीके हाथ है।[1]

इससे अधिक उर्दू-पाठ नही लिखूँगा। अन्य कामोके कारण जितना चाहता हूँ, उतना समय नही दे सकता। आबूकी हवासे अब्बाजानको, तुझे और सभीको खूब लाभ हुआ होगा। क्या हमीदाको अभीतक हाजमेकी तकलीफ है? आबू कौन-कौन गये हैं। मैंने तो आबू कभी देखा ही नही।

तू सरदार काकाके डाह्याभाईको ठीक पहचानती है? अब्बाजान तो पहचानते ही हैं। उसकी पत्नी यशोदाका देहान्त हुए आज ९ दिन हो गये। एक बच्चा छोड गई है। डाह्याभाईको काफी दुःख हुआ है। वे शनिवारको मुझसे मिल गये। यदि अब्बाजानको यह खबर न हो, तो उन्हे बताना।

यदि तुम सब बडोदा पहुँच गये हो, तो अब्बाजानकी किताबोमे अमीर अलीकी लिखी 'स्पिरिट ऑफ इस्लाम' है। यह किताब सरदारके लिए भेजना। मैंने और महादेवने तो पढ ली है। सरदारने नही पढी।

हम तीनो ही मजा करते हैं। साधारण तौरपर जैसी पडती है, उससे इस बार गर्मी कही अधिक है।

सोहेला आबू आई थी? या आई है? कमाल तो दिनोंदिन बडा हो रहा होगा। उसे खूब प्यार करना।

तुम सभीको हम तीनोकी ओरसे जो चलते हो – सलाम, आदाब, वन्देमातरम्, दुआ, आशीर्वाद और अब्बाजानको मेरे भुर्र्र्र्।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६४३) से।

१. यहाँतक पत्र उर्दूमें है।

५०८. सफाई, सचाई, पवित्रता, स्वच्छता[1]

९ मई, १९३२

धीरू जो मगनचरखा लाया था, उसपर आज मैंने सन्तोषजनक प्रारम्भिक काबू पा लिया है। अतः वल्लभभाईकी तीखी आँखोने उसके ऊपर लगा हुआ मकड़ीका जाला देखकर उसका जो मजाक किया, उसपर मेरा ध्यान गया। मणिबहन के अत्यधिक सुघड़ होनेका मूल कारण भी मैंने इस बातमे पाया। जिस लिफाफेमे मैं आश्रमकी डाक बन्द किया करता हूँ, वह सरदारकी कुशलताका एक नमूना है। जिसने इन लिफाफोको न देखा हो, वह देख ले। उनमे सुघडपनके साथ भारी किफायतशारी भी है। यह बता देना चाहिए कि यहाँकी डाकके लिए बहुत लम्बे लिफाफेकी जरूरत नही होती, इसलिए वे एक लिफाफेमे से दो बना लेते हैं। जो बादामी कागज पैकेट आदिमे आता है, वह भी काममे लिया जाता है और उसमें से लिफाफोके लिए कागज निकल आता है।

यह तो हुई प्रस्तावना। वल्लभभाईकी आलोचनापर मैंने ध्यान दिया; पर मै तब इस चरखेसे काम लेनेके लिए अधीर हो रहा था। डाक्टर कहा ही करते थे कि बायें हाथसे चरखेका चक्र भी न घुमाओ। मैंने सोचा अगर उसे पाँवसे चलाऊँ तो चरखे के काममे शायद एक दिनकी भी नागा न हो। इसलिए उसपर जल्दी काबू पा लेनेकी धुनमे मैंने वह जाला लगा रहने दिया। आज दाहिने हाथसे काम करनेकी हिम्मत हुई तब चरखेकी सफाईपर ध्यान दिया और एकके बजाय सात जगह जाला देखा। धूल तो जमी ही थी। पीतलके मोढ़ियेपर तेल और धूलका मरहम-जैसा मोटा कीट जमा हुआ था। पिढ़ईपर भी खासा मैल था। यह क्षन्तव्य नही माना जाना चाहिए। चरखा दरिद्रनारायणका चक्र है; यह उनकी पूजाका मुख्य साधन है। इसपर मैल चढने देकर हम दरिद्रनारायणका अनादर करते हैं। सामान्यतः मन्दिर, मस्जिद, गिरजा, आदि स्थानोकी सफाई रखी जाती है। हम तो मानते हैं कि सारा ससार मन्दिर है। यहाँ एक भी कोना ऐसा नही है जहाँ ईश्वर न हो। इसलिए हमारे मतसे तो शयनगृह, भोजनगृह, पुस्तकालय, पाखाना — सभी मन्दिर हैं और मन्दिरकी तरह साफ-सुथरे रहने चाहिए। तब फिर चरखेका तो कहना ही क्या! चरखेकी शक्तिको हम सचमुच ही मानते हो तो बच्चेसे लगाकर बूढेतक कोई भी उसे साफ रखे बिना न रहे।

बिल्लीकी सफाईके बारेमे तो मै लिख ही चुका हूँ। इस वक्त उसका अधिक अवलोकन हुआ है। कोई डेढ़ महीने पहले उसके दो बच्चे हुए। उनका रहन-सहन अलौकिक लगता है। तीनों शायद ही कभी अलग देखनेमें आते हों। जब बच्चे चाहते

1. [illegible] पत्र : नारणदास गांधीको", ४/९-५-१९३२ के साथ भेजा गया था। देखिए अगला शीर्षक।

है तब माँ दूध पिलाती है। साथ-साथ दौडते है और दूध भी पीते जाते है, यह दृश्य भव्य होता है। माँको इसमे कोई अटपटापन नही लगता। किन्तु बिल्ली सारे काम इसी तरह सबके सामने या चाहे जहाँ नही करती। बच्चे जहाँ चलने-फिरने और खेलने योग्य हुए कि माँ ने उन्हे तुरन्त शौचका नियम सिखाया। खुद एकान्तमें जाकर नरम जमीन पजोसे खोदकर गढा किया ओर बच्चोको उसके ऊपर बैठाया, फिर धूलसे मैलेको ठीक तौरसे ढककर जमीन जैसी थी वैसी कर दी। अब बच्चे रोज इसी रीतिसे निबटते है। वे भाई-बहन है। चार दिन पहले उनमे से एक जमीन खोदने लगा, पर वह कठिन थी। दूसरा मददको पहुँचा और दोनोने मिलकर जैसा चाहिए था वैसा गढा खोद लिया। शौचके बाद जमीन ढाँककर चले गये। छोटे-बडे ऐसे प्राणी जो-कुछ कर सकते है, वह हम सहज ही क्यो न करे?

ऊपर शीर्षकमे मैने एक भावको स्पष्ट करनेके लिए चार शब्दोका उपयोग किया है। हमे आत्माका बोध है, इसलिए हमारी सफाई भीतर-बाहर दोनोकी होनी चाहिए। पर अन्दरकी सफाई तो सचाई है। सचाई ही सबसे बड़ी पवित्रता, इसलिए स्वच्छता है। हम बाहरसे साफ-सुथरे हो और अन्तर मैला हो, तो या तो यह आडम्बरमात्र है या दम्भ है या विषयभोगकी निशानी है। इसलिए सयमी स्त्री-पुरुषोकी स्वच्छता यदि अन्तरकी पवित्रताका लक्षण हो, तभी योग्य है।

हमारा शरीर हमारा महामन्दिर है। हम उसमें बाहरसे कोई मैल न भरे। भीतर मनको कुविचारोसे मलिन न करे। इस शुचिताको साधनेवाला अपने हरएक काममे स्वच्छता प्रकट करेगा। यह उसके लिए स्वाभाविक वस्तु हो जानी चाहिए।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

५०९. पत्र : नारणदास गांधीको

४/९ मई, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला और उसके साथ प्रेमाबहनकी टीका भी। यह दोनो बहुत उपयोगी सिद्ध हुए है। मुझे लगता है कि तुम कुछ अधीर हो गये हो। तुम्हारा सबसे बडा गुण मै यह मानता हूँ कि तुम अपनी शक्तिसे ज्यादा काम हाथमे नही लेते हो। जो लेते हो उसे अच्छी तरह करते हो और मानसिक शान्तिका त्याग नही करते। एक ही व्यक्तिमे इन तीनोका समावेश कम देखनेमे आता है। मुझे लगता है कि तुममे यह दिखाई देता है। उतावलीमे यह गुण खो न जाये, इसका पूरी तरह ध्यान रखना जरूरी है। सभी व्यक्ति हरेक काम नही कर सकते। हम देखते है कि थोडे मनुष्य ही सभी कुछ कर पाते है, ज्यादातर लोग तो कुछ काम ही कर सकते है। तुम बहुत-से काम कर सकते हो, इतना ही काफी है। स्वास्थ्य

और मानसिक शान्ति तथा आनन्द बनाये रखनेके लिए चाहे जितनी जिम्मेदारी उठाओ। उसमे मै हस्तक्षेप करूँगा, ऐसा नही है। किन्तु अधीर होनेपर व्यक्ति यह मर्यादा भूल जाता है। मगनलाल भूल गया था और उसे इसकी पूरी-पूरी कीमत देनी पडी। हम उसके उदाहरणसे सीखे। प्रेमाबहन तो मानती है कि तुमने इतना ज्यादा बोझ उठा रखा है कि स्वास्थ्य इसे ज्यादा समयतक बर्दाश्त नही कर सकता।[1] लगता है कि कुसुम भी ऐसा ही मानती है। इस सबपर विचार करके जो परिवर्तन ठीक लगे सो कर डालो। दूसरेके विषयमे तुमसे कही कुछ उतावली हो गई हो तो उसे सुधार लेना। मुझे लगता है कि इन नियमोका पालन किया जाना चाहिए।

१. जो मनमे आये सो करनेके लिए एक घटेका समय मिलना ही चाहिए। नित्यका कोई नियत काम करनेमे इसका उपयोग न किया जाये।

२ प्रार्थनाके समय हमने एक मिनिटका समय मौनके लिए रखा है। इसे पाँच मिनिट कर देना चाहिए। एक व्यक्ति आँखे खुली रखे और पाँच मिनिट पूरे होनेके बाद धीरे-से घटा बजाये।

३. आवश्यक मजदूरीके काम करते हुए जो समय बचे, उसीमे से कताई आदिके लिए समय निकालो। आवश्यक मजदूरीके काम, जैसे रसोई, पाखाना सफाई, दुग्धालय, खेती और अपने नहाने-धोनेके काम किये बिना छुटकारा ही नही है। ये काम अच्छी तरह हो, इसकी व्यवस्था की जानी चाहिए।

४. एक कामसे दूसरा काम हाथमे लेनेके बीच पर्याप्त समय देना चाहिए।

५. ऐसा प्रबन्ध करनेमे मजदूरोकी आवश्यकता हो तो आवश्यक सख्यामे मजदूर रखने ही चाहिए। पर मजदूर रखकर भी हमे उन्हे मजदूरकी तरह नही मानना है। उनके खान-पानका ठीक प्रबन्ध हो, इसकी हमे पूरी व्यवस्था करनी चाहिए। और उन्हे धीरे-धीरे आश्रम-नियमोकी ओर आकर्षित करना चाहिए। हम उन्हे ये नियम शुरूसे ही समझा दे।

६. प्रवृत्तियोको कम करके मजदूरोके बिना ही काम चला सके तो यह सर्वोत्तम रहेगा।

क. छोटे-बडे सभी लोगोको नौ बजते ही सोनेके लिए चला जाना चाहिए। बारह वर्षसे कम आयुके बालकोको आठ बजे सो जाना चाहिए। वहाँके अनुभवके आधारपर इसमे सुधार आदि करते रहना। इस विषयमे मै यहाँ विचार भले ही करता हूँ और तुमको भी विचार करनेके लिए कहता हूँ, तो भी उसमे से जितनेपर अमल हो सके, उतनेपर ही करवाना है। मनमाने ढगसे रहनेकी अनुमति तो हम मजदूरोको नही दे सकते। मै ऐसा मानता हूँ कि वे वेतन लेते हुए भी आश्रमवासी है।

कुसुमके साथ काफी बाते कर ली है, इसलिए अब यहाँ और कुछ नही लिखता। इस बार गिरधारी मिल गया। मणिबहन पारेख भी आई थी। मुझे धीरूका स्वास्थ्य ठीक नही लगता। डॉक्टर शर्माकी पुस्तक मिल गई है। शब्दकोश भी मिल

१. देखिए "पत्र : प्रेमाबहन कटकको", ७-५-१९३२।

गया है। छक्कडदासका सूत बहुत बढिया है; एकदम रेशम-जैसा लगता है। देखता हूँ कि उसने इस विषयमे बहुत ध्यान रखा है। अक तो २० से ज्यादा नही होगा, ऐसा महादेव मानता है। तो भी वीस अकका सूत-सा और मजबूत हो तो मै इमे ४० अकके कमजोर और मोटे-पतले सूतसे बहुत ज्यादा अच्छा मानता हूँ।

अच्छा हुआ नीमू आ गई। उसकी माँ क्या वहाँ रहेगी? रहे तो अच्छा है। नीमू हर सप्ताह पत्र लिखे। उस हालतमे रामदासके पास भेजने योग्य खबर भी लिख सकती है।

जमनाको बम्बई भागना ही चाहिए। मैथ्यूका दाँत किसने निकाला था? मुझे लगता है कि वह चाहे तो अपने पिताके घर हो आये। सम्भव है, किसी दिन वह विकसित हो उठे। वह भला है, नम्र है और उसमे अच्छा करनेकी इच्छा तो बहुत है।

गगाबहनको फिर हीगका चूर्ण और 'चैयार्ज' जितना पहले भेजा था उतना ही और चाहिए। मै इसके सम्बन्धमें लिख[1] ही चुका हूँ। महादेववाला पार्सल मिल गया है। जेठालालवाला पैकेट[2] तो खो ही गया दिखाई देता है। उसमे क्या-क्या था? रसीदपर किसके हस्ताक्षर है?

जेलसे बाहर जानेवाले कैदियोको हथकडियाँ पहनानेका नियम हो और पहनाई जाये तो उसका विरोध न करके आनन्दपूर्वक उन्हे पहनना स्वीकार कर लेना चाहिए। शुरूसे ही मेरा यही विचार है। प्रिटोरियामे जब मुझे गवाही देनेको [जेलसे] कचहरी भेजा गया था, तब हथकडियाँ पहनाई थी। मुझे तो यह अच्छा लगा था। क्योकि मनमे ऐसा विचार नही था कि मै दूसरे कैदियोसे अच्छा हूँ, और किसी भी दिन दूसरे कैदियोसे भिन्न व्यवहारकी इच्छा भी नही थी। आज भी नही है। कैदियोके प्रति किये जानेवाले व्यवहारमे सुधार होना चाहिए, यह अलग प्रश्न है। और बहुत करके इसे बाहरसे हल किया जाना चाहिए। जेलमे रहनेवाले कैदी तो जेलके कठिन-से-कठिन नियमका पालन करके ही नियमोमे सुधार कर सकते है। इसमे एक ही अपवाद है, अच्छी तरहसे देखे तो अपवाद भी नही है, और वह यह कि जिसमे कैदीका अपमान हो, ऐसी कोई बात कदापि सहन न की जाये। किन्तु नियमोमे अपमानका स्थान है ही नही। कह सकते है कि साधारण तौरपर मेरा यही विचार है। कातनेका आग्रह वही व्यक्ति कर सकता है जिसने सघर्षसे पूर्व नित्य कताई करनेकी प्रतिज्ञा की हो। इतना तो निश्चित ही है। इस विषयमें इससे ज्यादा नही लिखा जा सकता। पार्वतीके सम्बन्धमे मै लिख चुका हूँ। चम्पाको डेढ सौ रुपया भेजकर अच्छा किया। इस विषयमे हम बहुत आग्रह नही कर सकते। रुई अभीतक नही मिली। उसकी जल्दी भी नही है, क्योकि लेडी विट्ठलदासके पाससे चार रतल मिल गई है।

१. देखिए पृष्ठ ३७४।
२. इसमें अनन्तपुरके खादी-केन्द्रकी रिपोर्ट थी।

९ मई, १९३२

रुई मिल गई है। पपीता अच्छा था। रोटी भी अच्छी थी। रुई भेजनेमे खर्च बहुत ज्यादा पडा। पर कई बार ऐसा हो जाता है। बादामका साँचा दूसरे दिन ही काममे आया। बहुत मेहनत बची। इस बार सफाईके बारेमे लिखा है।[1] वह बहुत ध्यान देन लायक है। धीरु इतनी गन्दी दशामे चरखा कैसे लाया? तोतारामजी का कोई ऐसा काम हो जो गंगादेवी करती रही हो और जिसे बहने कर सकती हो तो मालूम करना और उसे किसी बहनको सौप देना। उनकी खुराककी आवश्यकताओका ध्यान तो रखते ही हो न? जमनाको बम्बई जल्दी पहुँच जाना चाहिए। ३८ पत्रोकी सूची साथ ही है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२२५ से भी, सौजन्य: नारणदास गांधी।

५१०. पत्र: रैहाना तैयबजीको

९ मई, १९३२

बिस्मिल्लाह

चिरंजीवी रैहाना,

यह सब देखकर तुम्हारे हँसना नही; याद रखो कि मैं काफी बुक लिख रहा हूँ। जिस तरह बच्चे लिखते है ठीक उसी तरह मैं भी कोशिश कर रहा हूँ। थककर यह लिख रहा था इतनेमे तुम्हारा खत जिसकी इन्तजारीमे था, आ गया। अब्बाजान और अम्माजान बडे चालाक हैं, वे जानते हैं कि मेरी राय उनसे मिलती आती है, इससे फरमाते है कि तुम्हारे जैसा मैं कहूँ ऐसा करना। ऐसा गोलमाल कर तुम्हारी आजादी छीन ली। और यह भोली पागल लडकी बूढोके पंजोमे। अब देखें क्या होता है। आखिर तुम-हम भले ऐसोके पंजेमे फँस जाये। तुमको आबू जानेसे कुछ फायदा हुआ नही लगता।[2]

आजके लिए इतना काफी है न? ऐसे अक्षर लिखनेमे भी बहुत समय लगता है। तुझे ईश्वरने भजन गाना सिखाया है। उन्हे गाया कर और बडोकी जितनी सेवा कर सके, उतनी करनेके बाद सन्तुष्ट रह। सन्तोष भी एक स्वतन्त्र सेवा है। पाशाभाईका लेख भेजना। पाशाभाई चाहे तो अमेरिका जाये। हरएक कदम सोच-समझकर उठाये, इतना ही काफी है। फिर तू उसे सलाह देनेवाली वहाँ है ही। हमीदा जाये तो फौरन पत्र लिखनेके लिए कहना। रोहिणीके पत्रकी मुझे आशा थी।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. पत्र का यह अनुच्छेद उर्दूमें है।

कमाल मियाँको बहुत-सी दुआएँ। बहुत . [1] आशा लगाये हूँ कि किसी दिन दो-चार तमाचे जड पाऊँगा। सफेद दाढीको मेरा भुर्रर्र्। सबसे कहना हम रोज याद करते हैं। कोई-न-कोई बात तो निकल ही आती है। हसरतकी गजलकी तरह है। याद न करनेकी इच्छा होनेपर भी याद आ जाती है। कोई बात याद रखनेकी इच्छा होते हुए भी याद नही रहती। कोई बात भुलानेपर भी भूलती नही। खुदा कितना खराब है। हमारी मनकी बात कभी होने नही देता। गजल गुजरातीमे लिख डाली, यह ठीक किया।

बापूकी दुआएँ

[पुनश्च :]

इस तरह लिफाफे बनाकर देशकी दौलत बढाना सरदार काका का खास काम हो गया है, क्या मैंने यह लिखा है?

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६४२)से।

५११. पत्र : तोताराम सनाढ्यको

९ मई, १९३२

भाई तोतारामजी,

गगादेवी जाने[2]से तुमने दुःख नहिं माना सुनकर मुझे बहोत आनद हुआ। दुःख माने तो स्वार्थका ही हो सकता था। गगादेवी तो दुःखसे मुक्त हुई और उनकी तो सद्‌गति हि है। हम सब तुमको धन्यवाद देते हैं। छगनलाल और गगाबहेन दुःख प्रदर्शित करते हैं। छगनलाल अपने लडकोके लिए गगादेवीने जो कुछ किया उसका स्मरण करके दुःख मनाता है।

मेरे नजदिक गगादेवी त्यागकी मूर्ति थी और उनके त्यागमे वैराग था। इस लिये वह स्थायी था। हम सबके लिए अनुकरणीय था। तुमारेमे तटस्थ रहनेकी शक्ति मैंने पाइ है। यदि मेरे मंतव्यमे कोई अतिशयता है तो बतलाईये। यदि मेरा मतव्य ठीक हो तो गगादेवीके पुण्य स्मरणोका सग्रह सक्षेपमे करके मुझे भेज दिजीये।

बापु

मूलकी फोटो-नकल (जी० एन० २५३१) से।

१. साधन-सूत्रके अनुसार।
२. देखिए "तार: गगाबहन वैद्यको", ६-५-१९३२।

५१२. पत्र : रामचन्द्र ना० खरेको

१० मई, १९३२

चि० रामभाऊ,

तू अब अपनी जवाबदारियोंको ठीक ढगसे उठाता जान पडता है। जिस हाथमें चोट लगी है उसे पूरा आराम देना। मगनचरखेपर अब मेरा हाथ ठीक बैठ गया है। सभ्यताकी पहली सीढी सत्य है।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २९२) से; सौजन्य · लक्ष्मीबहन ना० खरे।

५१३. पत्र : विद्या रा० पटेलको

१० मई, १९३२

चि० विद्या,

हमें किसी वहममें नही पडना चाहिए। बाल कटानेकी इच्छा हो तो कटा लेने चाहिए। कटा ले, तो भार हलका होगा, समय बचेगा, मैल निकलेगा। पर बाल रखना है तो रखे। यदि सब इस कारण रीछ कहने लगे तो चिन्ता नही, यह तो विनोद ही हुआ।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४४३) से; सौजन्य : रवीन्द्र रावजीभाई पटेल।

५१४. एक पत्र

१० मई, १९३२

कर्त्तव्यका निश्चय करते समय बहुत-से प्रश्न उठ सकते है। परन्तु 'गीता'का निरीक्षण करते वक्त तो इतना ही विचार करना है कि प्रश्न करनेवालेका प्रश्न क्या था? प्रश्नसे बाहर जाकर जो शिक्षक उत्तर देने लगे, वह अनाडी कहा जायेगा, क्योंकि पूछनेवालेका ध्यान तो अपने सवालमें ही रहेगा, और दूसरा कुछ सुननेके लिए वह तैयार नही होगा। उसमें योग्यता न हो तो उसे अरुचि हो जायेगी। और जिस तरह अनाजका पौधा आस-पास उगे हुए घास-पातमें दब जाता है, वैसे ही उस सवालके जवाबकी इधर-उधरके विवादमें दब जानेकी सम्भावना रहती है। इस दृष्टिसे कृष्णका जवाब परिपूर्ण है। और जब पहला अध्याय छोडकर हम दूसरेमें प्रवेश करते

है, तो उसमें से खालिस अहिंसा ही टपकती है। कृष्णको पूर्ण अवतार मानकर या मनवा कर हमें यह आशा नही रखनी चाहिए कि जैसे किसी शब्दकोशमें शब्दोंका अर्थ मिल जाता है, वैसे ही हमारे मनमें जो-जो प्रश्न उठें उनका अर्थ उनके वचनोंसे सीधा मिल जायेगा। इस तरह मिल भी जाये, तो उससे नुकसान ही होगा। फिर तो मनुष्यके लिए आगे बढनेकी बात ही नही रह जाती, खोज करनेकी गुंजाइश ही बाकी नही रहती। उसकी बुद्धि कुंठित हो जाती है। इसलिए मनुष्योंको अपने-अपने समयकी समस्याएँ खुद ही बडे प्रयत्नसे और तपश्चर्या करके हल करनी पडेगी। इसलिए अभी हमारे सामने युद्ध आदिके प्रश्नको लेकर जो कठिनाइयाँ आती हैं, उनका निराकरण हम 'गीता' जैसे सस्कारी ग्रन्थमें पाये जानेवाले सिद्धान्तोकी मददसे करते हैं। सच पूछा जाये तो ऐसी मदद भी बहुत थोडी ही मिल सकती है। असली सहायता तपश्चर्यासे होनेवाले अनुभवसे ही मिलती है। आयुर्वेदमें औषधियोंके अनेक गुण बताये गये हैं। रास्ता बतानेके लिए हम उन औषधियों और उनके गुणोंको जानें, यह ठीक है। मगर वे औषधियाँ अनुभवकी कसौटीपर खरी न उतरें तो हमारा ज्ञान बेकार है। इतना ही नही, वह भार भी बन सकता है। ठीक इसी तरह हमें जिन्दगीके बडे सवाल भी हल करने हैं। अब इस विषयमें और कोई बात पूछनेको रही हो तो पूछ लेना।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ १४६–७।

५१५. पत्र : देवदास गांधीको

११ मई, १९३२

चि० देवदास,

पहली तारीखका लिखा तेरा पत्र कल १०को मिला। यहाँ तो पडा नही रहा। मेरी दृष्टिसे इतने दिनोंका समय कैदीके लिए कुछ भी महत्त्व नही रखता। उसके समयका मूल्य ही क्या? १/१२ रुपया प्रति घंटा, क्योंकि एक कैदीके पीछे कुल मिलाकर १३ रुपया खर्च होता है, ऐसी मेरी मान्यता है। मेरे दुर्बल हाथ तो, मुझे लगता है, वृद्धावस्थाकी निशानी हैं। ऐसा कुछ-न-कुछ कई लोगोंको हो जाता है न? यह कमजोरी तो जब मैं दूध लेता था तब भी थी, इस बातको याद रखना चाहिए। यदि ऐसा न होता तो मैं ही घबराकर फिर दूध लेना शुरू कर देता। मेरा ऐसा कौन-सा प्रयोग है जिसका अन्तमें अनिष्ट परिणाम हुआ हो? केवल पिछले एक प्रयोगका[1] मुझे स्मरण है अर्थात्, गोपालरावका। उस प्रयोग को करनेमें मैंने जल्दबाजीकी और उसे छोडनेमें परिणामकी बडी देर राह देखता रहा।

१. आशय सन् १९२९ में किये गये अनपके भोजनके प्रयोगोंसे है; देखिए खण्ड ४१।

उसमे एकके-वाद-एक सभी गिरते गये। फिर भी मैं लगा रहा। आर्थिक दृष्टि से वह प्रयोग अच्छा था। गोपालरावको तो वड़ी श्रद्धा थी। उसको छोड़कर अन्य प्रयोगोके वारेमे मेरा खयाल ऐसा है कि उनसे मुझे शारीरिक और आत्मिक लाभ हुआ है। इस वार मैं सावधान हूँ। मेरा दुराग्रह नही है। वाहर निकलनेपर तो कदाचित् दूध लेना ही पडेगा। अत. [यह प्रयोग] यहाँ चलाया जा सके, तभी जारी रखना है। मेरा वजन वना है, इसलिए मेरी तवीयतके वारेमे चिन्ताका कारण जरा भी नही है।

तुमने जिन उर्दू-पुस्तकोका जिक्र किया है, वे जव आ जायेगी, जरूर पढूँगा। इस वार उर्दूको मैं वहुत देरसे ही हाथमे लेनेवाला था। दूसरा वहुत-कुछ पढ जाना था। किन्तु चूँकि रैहाना अपने पत्रोमे थोड़ी-थोडी उर्दू लिखा करती थी, अत. मुझे लगा कि मैं भी उसका जवाव उर्दूमें ही लिखूँ तो ठीक होगा। यो करते हुए मैंने उसे अपनी उर्दू-शिक्षिका ही करार दे दिया और कहा कि वह प्रति सप्ताह मेरी लिखावटकी गलतियाँ सुधार कर भेजे। पर इतनेसे ही मुझे सन्तोष कैसे मिलता। अतः जो उर्दू-पाठचपुस्तके जेलमे थी, वे ली और उन्हे पढना शुरू किया। मेरे अक्षर तो वहुत ही खराव है, अत. अव एक कापी-वुक और ट्रेसिंग पेपर लिया है। अव देखता हूँ कि उसके सहारे कितना सीख पाता हूँ। एक तरफ यह उर्दू है और दूसरी तरफ मगनचरखा है। प्रभुदासका मन रखनेके लिए और उसकी शक्ति देखनेकी दृष्टिसे इसका प्रयोग तो करना ही था। इस वीच वाये हाथको पूरा आराम देनेका डॉक्टरने आग्रह किया। यह तभी सम्भव था जव दाहिने हाथसे तार खीचूँ और पैरसे चरखा चलाऊँ। यो मगनचरखेके पीछे परेशान हूँ। पैरसे चरखा चलाना और दाहिने हाथसे तार खीचना कठिन लग रहा है। पर अन्ततोगत्वा विजय तो प्राप्त होगी ही। वीचमें जरूर ऐसा लगा था कि मैंने इसपर कावू पा लिया है, किन्तु पुनः वह जाता रहा। आज फिर लगता है कि कुछ जम रहा है, पर यह समय वहुत खा लेता है। तीसरी ओर रस्किन हैं। चौथी तरफ अर्थशास्त्रका अभ्यास प्रारम्भ किया था; पर उसे अभी एक तरफ धर दिया है। पाँचवी ओर मैथिलीशरणका 'साकेत' है, जिसे ध्यानपूर्वक पढनेकी इच्छा है। एक वार तो मैं और महादेव पढ़ गये है। वल्लभभाईने भी पढा है। पुस्तक उत्तम लगती है। तू भी वहाँ लेकर पढ़ना, अच्छी लगेगी। तुझे तो यह सरल प्रतीत होगी। 'कल्याण' कार्यालयसे न मिल सके तो मैं भिजवा दूँ। और छठा कार्य है आकाश-दर्शनका; इसमें तो मैं वरावर डूवा हुआ हूँ। प्रायः रोज ही कुछ-न-कुछ पढ़ लेता हूँ। और रातमें [तारोका] ठीक परिचय पा लेता हूँ। मुझे तो यही आश्चर्य होता है कि मैं इसमें पहलेसे ही क्यो नही डूवा। इच्छा तो सदासे वनी रहती थी, पर इतनी प्रवल नही थी कि इसे तत्परतापूर्वक कर ही लेना चाहिए। अव तो मुझे लगता है कि आकाश-निवासियोका परिचय जितना-कुछ सघ सके, कर ही लेना चाहिए। और आत्म-सन्तोष के लिए जितना पर्याप्त हो उतना परिचय तो करोड़ो मनुष्य विना किसी प्रकारका कष्ट उठाये प्राप्त करके उर्ध्वगामी वन सकते हैं। आत्मिक दृष्टिसे, इस परिचयसे

व्यक्तिको सहज ही हृदयका आनन्द मिलता है और उसमे भक्ति-रसकी वृद्धि होती है। यह बात सब लोगोके विषयमें खरी उतरती हो या नही, यह मैं नही जानता, पर मुझपर इसका ऐसा ही असर हुआ है इसलिए मैं इसमें लगा हुआ हूँ। तुझसे तो रात्रिमे आकाश-दर्शनका कार्य बिलकुल ही नही बन पडता होगा। कितने बजे बन्द कर दिये जाते हो? हम तीनो तो खुले आकाशके नीचे सोते है। सामने ही शुक्र जगमगाता रहता है। दाहिनी ओर सप्तर्षि, बायी ओर स्वस्तिक और सिरपर सिंह गरजता होता है और गुरु भी ठीक मस्तकपर ही होता है। मैं हसन निजामीका 'कवण चरित' पढ गया हूँ। इसकी जैसी छाप तुझपर पडी है, वैसी मुझपर नही। जब मैंने इसे पढा, तब तो इसके प्रति मेरे मनमें कोई भ्रम नही था। ऐसा होते हुए भी मुझे लगा कि इसके लिखनेमे [लेखकका] हेतु निर्मल नही है। इसकी भाषा तो सुन्दर है ही। पर भाषाकी दृष्टिसे तो अन्य उर्दू-पुस्तके भी बहुत है। कठिन शब्दोका विचार न किया जाये तो शिबलीकी भाषा कोई साधारण थोडे ही है। अप्टन सिंकलेअरका 'वेट परेड' तुझे जरूर अच्छा लगेगा। अन्य किताबे भी आश्रममे पडी ही है। दो पुस्तके मैंने मँगाई है। बाकी तो सभी वही है। पुस्तकोके खो जानेके सम्बन्धमे महादेवका खयाल क्या है, वह इसमे मिल सकेगा। चरखेके सम्बन्धमें 'नकार'को सहज ही मत मान लेना। मीठी लडाई लडते जाना। आरोग्य-सम्बन्धी पुस्तक आनेपर देख लूँगा। दिल्लीसे महादेवको लिखा गया पत्र उसे नही मिला। लक्ष्मीके पत्र नियमित रूपसे आते रहते है और मैं उसी प्रकार नियमपूर्वक लिखता रहता हूँ।

'तेरी दृष्टिसे' तो महादेव दुर्गाको पत्र लिखेगा तब लिखेगा, पर इस पत्रमे वह इतना लिखवाना चाहता है पुस्तके खो देनेका जो दोषारोपण उसने तुझपर किया था वह तो सन् १९३० मे जो अस्सीके लग-भग पुस्तके जेलके फाटकसे गुम हो गई थी, उन्हीको लेकर था। उन्हे कोई लौटा गया, यह तो लौटानेवालेकी भलमनसाहत मानी जायेगी, परन्तु उसकी भलमनसाहतके कारण हमारी लापरवाही कम नही हो जाती। तेरे-जैसा साथी मिलता — जैसा कि पहले दो बार मिल चुका था — तो महादेवको विशेष आनन्द मिलता। कभी-कभी रसोई बनाते समय उसे लखनऊमें तेरे साथ रसोई बनानेके दिन याद आ जाते है और साथ ही तुम्हारा स्मरण भी। पीजते समय तो वह तुम्हारी याद रोज ही करता है (क्योकि तुम उसे सहयोग देते थे)। जब कुछ अच्छा-सा पढनेके लिए मिल जाता है तब तो वह तुम्हे अवश्य याद करता है (यद्यपि सुबह कातना और पीजना मिलाकर चार-पाँच घंटे लग जाते है और फिर मेरे साथ भी दो घंटे बिताता है, फिर विस्तारपूर्वक दैनन्दिनी भी लिखता है, उसमे भी समय लगता है, अतः पढनेकी दृष्टिसे अधिक समय नही मिल पाता। बाकी, पुस्तके तो उसके पास भी ढेर पडी है)। विलायतके प्रसंगमे भी याद करता है, प्रार्थनाके समय गाते हुए, सायंकाल सोडा पीते हुए और इसी तरहके अन्य प्रसंगोपर भी याद करता रहता है। तुमने 'गीता रहस्य'[1] हिन्दीमें पढा, तो मराठीमे क्यो नही पढ़ गये? शिबली यदि पूरा पढ सको तो उसमे से सार रूपमें

१. बाल गंगाधर तिलक-द्वारा रचित।

गंगास्वरूपके जीवन-प्रसंगोको लेकर गुजरातीमे एक सुन्दर पुस्तक तैयार की जा सकती है। काका, नरहरि, मणि, प्रभुदास, इन चारोको बेलगाँवमे काफी तकलीफ उठानी पड़ी, पर अब सब-कुछ व्यवस्थित होता जा रहा है। अब तो सभीके साथ पत्र-व्यवहारका सम्बन्ध जुड़ गया है; (यद्यपि जैसा तुम्हारे साथ जुड़ा है, वैसा नही) पर यह है तो निरी गाजरकी पुंगी।[1] 'टाइम्स'के अलावा अखबार यहाँ 'लीडर'. 'क्रॉनिकल', 'हिन्दू', 'ट्रिब्यून' आते हैं। महादेवके पास इन्हे पढनेको अधिक समय नही रहता। इस सम्बन्धने उसकी उदासीनतामे तुम परिचित हो, पर कतरने वह बराबर काटता-चिपकाता है। (हम दोनोको पढकर ठीक-ठीक सुनानेवाले तो सरदार हैं)। डाकका बोझ भी काफी बढ़ता जा रहा है, यही कहा जायेगा। आश्रमके अलावा बाहरकी डाक (यानी, विलायत और अमेरिकाकी भी) पर्याप्त आती है। रोमाँ रोलाँने अपने एक अमेरिकी मित्रको उनके साथके हमारे निवासके बारेमे एक बहुत ही मनोरंजक पत्र लिखा है। वह यहाँ छपा है। महादेवकी चिपकायी हुई कतरनोकी फाईमे तुम्हे बहुत-कुछ मिल सकेगा। इसीमे कामके पत्रोकी नकले भी रहती ही हैं। जमनालालजी, प्यारेलाल, विनोबा, मणिलाल कोठारी — ये सब धूलियामे आनन्दसे हैं। मथुरादास और किशोरलाल नासिकमे; रामदास, छगनलाल, सुरेन्द्र, आदिकी मण्डली यहाँ; कान्ति आदि लड़के वीसापुरमे; बाको छोड़कर आश्रमकी सारी बहनें प्राय. यहाँ हैं — उनके साथ भी (पत्र-द्वारा) ठीक-ठीक सम्बन्ध बना है। सरदारके डाह्याभाईका घर भंग[2] हो गया, इसकी तुम्हे खबर मिली या नही। बेचारी यशोदा तो मुक्त हो गई, यही कहना ठीक होगा, क्योकि जीवन उसके लिए मृत्युके समान ही था।

इस पत्रका लिफाफा वल्लभभाईने बनाया है। इस प्रकार हम पाई-पाईकी बचत करते हैं। हम सभीके आशीर्वाद तो सदा ही हैं, यो समझना।

श्रीयुत देवदास गांधी
'ए' श्रेणी कैदी
जिला-जेल
गोरखपुर, यू. पी.

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०१६) से।

५१६. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

११ मई, १९३२

बालको और बालिकाओ,

तुम्हारा पत्र बहुत दिनोके बाद आया है। तुमने जो काम हाथमें लिया है, उसे छोड़ना नही। इस कामको अपनी शिक्षा समझना।

१. अभिप्राय ऐसी वस्तुसे है जो चाहे जब धोखा दे सकती है।

२. श्री डाह्याभाईकी पत्नी यशोदाका देहान्त हो गया था।

हम सबको अपना मित्र मानकर क्यो न चले? विशेष मित्रतामे कटुता भी हो जाती है। किन्तु सभीको मित्र माने तो हमारा जीवन हर समय आनन्दपूर्ण रहेगा।

सवाद आदिकी तैयारीके लिए उद्योगके समयसे वक्त निकालना पडे तो तुम्हारे बिना काम चल सकता है या नही, इसका विचार करना। किसानो और चरवाहोके लडके जैसा करते है, वैसा हम भी करे। सवादके लिए अक्षर-ज्ञानके समयसे थोडा समय क्यो न निकाल लो। इसपर विचार करना और लिखना।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

५१७. पत्र : महेन्द्र वा० देसाईको

११ मई, १९३२

चि० मनु,

इस बारके तेरे अक्षर ठीक है। वजन और बढना चाहिए। तू कात रहा है, यह ठीक है। कितने तार?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४३०) से, सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई।

५१८. पत्र : पद्माको

११ मई, १९३२

चि० पद्मा,

तेरा पत्र मिला। जो तूने लिखा, वही रामभाऊ और धीरूने लिखा है। जब हाथ काम नही देता है तब मैं चक्रको पाँवसे घुमाता हूँ। पूनियाँ बहुत खराब है इसलिए मेरी गति सौ तारसे ज्यादा नही होती। अच्छी पूनियाँ मिलनेपर १५० तो हो ही जायेगी।

पेटके बारेमे जो सरोजिनीको लिखा है, उसी तरह करना। इसके साथ-साथ रोज सुबह एक गिलास गरम पानी १० ग्रेन सोडा डालकर पी जाया करना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१३३) से। सी० डब्ल्यू० ३४८५ मे भी; सौजन्य : प्रभुदास गाधी।

५१९. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

११/१२ मई, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरे वजन और खुराकके बारेमें इसलिए पूछा[1] कि मुझे तेरे स्वास्थ्यके बारेमें शका हुई। ज्यादा-से-ज्यादा वजन कितना था? सब्जियोंमें क्या वहाँ टमाटर या पालक आदि बिलकुल नही पैदा होते? सलाद बोना था, उसका क्या हुआ? सलाद या मेथी तू खुद ही एक छोटी क्यारीमे बो सकती है। वे थोडे ही दिनमे आ जाते हैं। कोई-न-कोई हरे पत्तोकी सब्जी तो होनी ही चाहिए। इन्हे कच्चा ले तो बहुत थोडेमें काम चल जाता है, इसलिए वो लेना ही ठीक रहता है। टमाटर बारहो महीने क्यो नही होते, यह मैं नही जानता। पूछकर मालूम करना।

धुरन्धरसे मैं तुरन्त मिला। और अब भी उसके हाल मालूम करता रहता हूँ। क्योकि कूचमे उसका अच्छा परिचय हुआ था। फिर तेरी खातिर भी उसके जीवनमें रस लेता हूँ, क्योकि तेरे जीवनमे लेता हूँ। यह व्यक्तिगत प्रेम-विशेषका उदाहरण नही है, बल्कि अहिंसाका है। अगर किसी खास व्यक्तिके लिए ही प्रेम हो और दूसरेके प्रति द्वेष, या दूसरेके प्रति प्रेम हो ही न सके, तो वह प्रेम-विशेष है। मुझमें ऐसा प्रेम-विशेष नही है, ऐसा मैं मानता हूँ। तेरे लिए मैं जो करता हूँ वह तेरी जरूरतको समझकर, तू मुझसे आशा रखती है, इसलिए; और मेरी अपनी गरजसे भी। क्योकि मैं तुझसे बहुत आशा रखता हूँ। इसमे तू व्यवहार-बुद्धि देखे तो मैं उससे इनकार नही करूँगा। मैं इसे अहिंसक स्वभाव मानता हूँ।

उर्दू-पुस्तकोकी बात तू भूली नही होगी।

आश्रमसे सब एक ही साथ जानेको तैयार हो गये हो, तो मैं उसे ठीक नही मानता। लेकिन अब आश्रमको चलते इतने वर्ष हो गये हैं कि मैं उसकी चर्चा नही करूँगा। दुखडा भी नही रोऊँगा। कही कुछ गलत हो रहा है, यह समझकर जब मौका आता है तब उसे सुधारनेका प्रयत्न करता हूँ; और जो बात आसानीसे रोकी जा सके उसे रोकता हूँ। आश्रम बिलकुल खाली होता जाता हो और तू आनन्दसे रुक सकती हो, तो रुक जाना और काम करनेवाले वापस आ जाये तब जाना। लेकिन ठीक तो वही होगा जो तू और नारणदास सोचे। मुझे यहाँ बैठे-बैठे क्या मालूम?

१२ मई, १९३२

इसके साथ साप्ताहिक 'हिन्दू' से निकाला हुआ मॉन्टेसरीका लेख भी है। वह महादेवको अच्छा लगा इसलिए उसकी कतरन कटवा ली। देख लेना। कुछ ग्रहण करने-जैसा हो तो करना, नही तो जाने देना।

१. देखिए पृष्ठ ३७०-१।

सुशीलाको आनेकी इजाजत मिल गई है। इसलिए जब तू आनेवाली हो तब उसे आना हो, तो साथ ला सकती है।

तेरे किसी भी प्रश्नका उत्तर मैंने जान-बूझकर नही टाला है। क्या प्रश्न था, यह मुझे अभी भी याद नही आ रहा है। फिरसे पूछेगी तो उत्तर दूंगा।

आश्रममे दी जानेवाली शिक्षाका प्रश्न पुराना है। मै यह मानता हूँ कि छात्रावासोके साथ उसकी तुलना नही हो सकती। नारणदासपर सारा भार है। वह अपनी इच्छाके अनुसार व्यवहार कर सकता है। निर्णय करनेमे तू मदद कर सकती है। मै खुद एक नियम लागू करना चाहूँगा। बच्चोके गले हमारी बाते उतरनी चाहिए। वे जितना मजबूर होकर करेगे वह निरर्थक ही जायेगा और जोर-जबरदस्तीकी परम्परा कायम हो जायेगी। छुट्टी न रखनेकी बात बच्चोको पसन्द होनी चाहिए।

आश्रमकी पाठशालामे तूने जो-जो किया, उसका काजी मै नही बनूंगा। वहाँ बैठा होता तो जरूर छान-बीन करता, लेकिन यहाँ बैठे-बैठे कुछ नही कहूँगा। तू आत्म-निरीक्षण करनेवाली है। इसलिए जहाँ दोष होगा वहाँ आखिर तू उसे सुधार ही लेगी।

मैंने तुझे ब्रह्मज्ञान सिखाना चाहा या क्या चाहा, यह तो दैव ही जाने। लेकिन उसे तू जानती है, ऐसा कहकर ही तूने अपना अज्ञान प्रकट किया है और फिर जो दलीले दी है, वे तेरा अज्ञान सिद्ध करती है। बुद्धिसे जो ब्रह्मको जानता है वह ब्रह्मको जानता ही नही। ब्रह्मज्ञान हृदयमे होता है। ब्रह्मज्ञानमे प्रवृत्ति-मात्रका त्याग होता ही नही। बाहरसे तो ज्ञानी-अज्ञानी दोनो एक-से होते है, लेकिन दोनोकी प्रवृत्तिके हेतु उत्तर-दक्षिण-जैसे होते है। रामनाम ब्रह्मज्ञानका विरोधी नही है। वे दोनो एक हो सकते है। जो ब्रह्मज्ञानी रामनामसे दूर भागता है, वह अज्ञान-कूपमे पडा हुआ है और धोखा खा रहा है। जो मनुष्य ओठोसे रामनाम बोलता है, वह ओठोको सुखाता है और समयका खून करता है। ब्रह्मज्ञान और मेरी शारीरिक उपस्थितिका अच्छा लगना — ये दो विरोधी वस्तुएँ ही हो, ऐसा जरूरी नही है। लेकिन मेरी अनुपस्थिति यदि कर्त्तव्य-परायणताको कम करे, तो वह ब्रह्मज्ञान नही, मोह है। मुझे ब्रह्मज्ञान है, ऐसा कहनेवालेको बहुत सम्भव है ब्रह्मज्ञान न हो। यह मूक ज्ञान है — स्वय-प्रकाश है। सूर्यको अपने प्रकाशका प्रमाण अपने मुँहसे बोलकर नही देना पड़ता। प्रकाश है, ऐसा हम देख सकते है। यही बात ब्रह्मज्ञानके बारेमे है।

मै जब ब्रिटिश शासनको ठीक मानता था, तब मुझे ऐसा लगता था कि इससे इस देशको अन्तमे लाभ ही होगा और इसके हेतु शुभ है। लेकिन इस प्रश्नमे ज्यादा गहरा नही उतरा जा सकता।

अमेरिकामे स्त्री-पुरुष-व्यवहारके बारेमे जो साहित्य छपता है, वह मुझे पसन्द नही है।

बापू

[पुनश्च.]

इस बारेमे मै लिखना जरूर चाहता हूँ। बच्चे प्रश्न पूछे तब उन्हे सीधा जवाब देना चाहिए। सिनेमाके बारेमे मै नही जानता। नाटकके लिए स्थान है।

ईश्वर-प्राप्तिके लिए मुझे तो अनासक्ति ही पसन्द आई है। उसमे सब-कुछ आ जाता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२८५) से। सी० डब्ल्यू० ६७३३ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कटक।

५२०. पत्र: ई० ई० डॉयलको

१२ मई, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

मैंने अपने ४ तारीखके पत्र[1] मे जो पूछ-ताछ की थी, उस सिलसिलेमे तुरन्त जवाब भेज देनेके लिए मैं हृदयसे आपका आभारी हूँ। काका कालेलकरकी खुराकमे ३ औंस घी शामिल कर देनेसे, कह सकते है, उनके शरीरको जो जरूरत थी, वह पूरी हो जाती है। आपके पत्रमे जो आश्वासन दिये गये है, उनसे उन मित्रोकी चिन्तासे मुझे काफी राहत मिली है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

बम्बई-सरकार, गृह विभाग, आई० जी० पी० फाइल स० ९।

५२१. पत्र: पुरुषोत्तम गांधीको[2]

१२ मई, १९३२

तेरा पत्र मिला। बहुत सुन्दर है। 'जैन दर्शनमे शुद्ध न्याय[3] पर जोर है' इस वाक्यके बारेमे जरा गलतफहमी हुई है। 'शुद्ध न्याय' का अर्थ शुद्ध नीति और शुद्ध निर्णय हो सकता है। और आम तौरपर हम इस शब्दका यही अर्थ समझते है। मगर मैंने इस मानीमे इस्तेमाल नही किया है। मेरा मतलब यह कहनेका था कि जैन दर्शनमे 'तर्क' पर ज्यादा जोर दिया जाता है। लेकिन 'तर्क' से कभी-कभी उल्टे निर्णय हो जाते है और भयकर परिणाम निकल आते है। इसमे दोष तर्कका नही

१. देखिए पृष्ठ ३८२।

२. पुरुषोत्तमने लिखा था कि जैन धर्मके शुद्ध न्यायके अनुसार दयाको भी राग ही समझा जाता है फिर उसका रूप कितना ही सात्विक क्यों न हो। इसलिए आपने दयासे प्रेरित होकर बछड़ेके साथ जो हिंसा की है, वह कोई वीतराग मनुष्य नहीं करेगा, अर्थात् वह राग-रहित होनेका लक्षण नही है।

३. देखिए पृष्ठ ३१६-७।

है, मगर शुद्ध निर्णयपर पहुँचनेके लिए जो-जो सामग्री प्राप्त होनी चाहिए, वह हमेशा प्राप्त नही होती। फिर, यह भी नही होता कि लिखने या बोलनेवाला खास शब्दका खास अर्थमे इस्तेमाल करे, तो पढने या सुननेवाला भी वही अर्थ समझे। इसलिए हृदयको यानी भक्ति, श्रद्धा और अनुभवजन्य ज्ञानको आगे रखा गया है। तर्क केवल बुद्धिका विषय है। हृदयको जो चीज सिद्ध हो गई है, वहाँ तर्क यानी बुद्धि नही पहुँच सकती, यह बिलकुल जरूरी नही है। लेकिन इसके विपरीत यदि किसी बातको बुद्धि मान ले, मगर वह हृदयमे न उतरे, तो त्याज्य हो जाती है। मैंने यह जो कहा है, उसे स्पष्ट करनेके लिए तू अपने-आप अनेक उदाहरण गढ सकेगा। मैंने अभी जिस अर्थमे 'न्याय' शब्दका इस्तेमाल किया है, उस अर्थमे यह कभी साध्य वस्तु नही हो सकती। न्याय और निष्काम कर्मयोग दोनो साधन है। न्याय बुद्धिका विषय है, निष्काम कर्मयोग हृदयका। बुद्धिसे हम निष्कामको नही पहुँच सकते।

अब तेरे प्रश्नपर आता हूँ। दया और अहिंसा अलग चीजें नही हैं। दया अहिंसाकी विरोधी नही है। और विरोधी हो तो वह दया नही है। दयाको अहिंसाका मूर्तस्वरूप मान सकते हैं। 'दयाहीन वीतराग पुरुष' यह प्रयोग बिलकुल गलत है। वीतराग पुरुष दयाका सागर होना चाहिए। और जहाँ करोडोके प्रति दयाकी बात है, वहाँ यह कहना कि ऐसी दया सात्त्विक होनेपर भी रागरहित नही है, दयाका अर्थ न समझना या दयाका नया अर्थ करना है। आम तौरपर हम दयाका वही अर्थ करते हैं जिसमे तुलसीदासजी ने 'दया' शब्द इस्तेमाल किया है। तुलसीदासजी का अर्थ नीचेके दोहेमे साफ जाहिर है :

दया धर्मका मूल है, पाप (देह) मूल अभिमान।

यहाँ दया सिर्फ अहिंसाके मानीमे ही है। अहिंसा अशरीरी आत्मामे ही सम्भव है। मगर जब आत्मा शरीर धारण करती है, तब उसमे अहिंसा दयाके रूपमें मूर्तिमान होती है। इस दृष्टिसे देखनेपर बछड़ेपर की गई क्रिया शुद्ध अहिंसाका मूर्त रूप[1] थी। आत्मा खुद कष्ट सहन करे, यह उसका स्वभाव ही है। लेकिन दूसरेसे कष्ट सहन कराना आत्माके स्वभावसे उल्टी बात हो गई। अगर बछडेके दु:खसे मुझे होनेवाले दु:खको दूर करनेके लिए मैंने उसे मरवाया होता तो वह अहिंसा नही होती, मगर बछडेको होनेवाला दु:ख दूर करना अहिंसा थी। अहिंसाके मूलमे ही दूसरोको होनेवाला दु:ख सहन न करनेकी बात है। इसीसे दया पैदा होती है, वीरता प्रगट होती है और अहिंसाके साथ लगे हुए जितने गुण हैं, वे सभी देखनेमे आते है। दूसरोको होनेवाला दु:ख देखते रहनेकी बात कहना उल्टा तर्क करना है। और यह भी निरपवाद सत्य नही है कि मनुष्यको जीवनमे होनेवाले दु:खोमे मरणदु:ख अधिक होता है। मेरे खयालसे हमने ही मौतको इतनी भयकर चीज बना डाला है। जगली माने जानेवाले लोगोमे मौतका इतना डर नही होता। लडाकू जातियोमे भी यह डर कम ही है। और पश्चिममे तो आज ऐसा सम्प्रदाय बन रहा है जो दु:ख पाकर जीनेसे मरना ही पसन्द करेगा। मौतका जो बहुत ज्यादा भय मान लिया गया है,

१. देखिए खण्ड ३७।

यह मुझे तो अज्ञान या शुष्क ज्ञानकी निशानी लगती है। और इस मान्यतासे अहिंसाने हममें और हमसे भी ज्यादा जैनोमें वक्र रूप धारण कर लिया है। और इससे सच्ची अहिंसाका लग-भग लोप हो गया है। क्रोधके आवेगमें आकर कुएँमें गिरनेवाली स्त्री रस्सा मिलनेपर भले ही उसका सहारा ले ले। मगर जो, किसी भी खयालसे सही, निश्चय करके कुएँमें गिरती है, उसे रस्सेका सहारा मिले तो भी वह उसका तिरस्कार ही करेगी। जापानियोकी 'हाराकिरी' इसका प्रसिद्ध उदाहरण है। 'हाराकिरी' ज्ञानमूलक है या अज्ञानमूलक, यहाँ यह प्रश्न प्रस्तुत नही है। यहाँ तो मैं इतना ही बता रहा हूँ कि ऐसी बेशुमार मिसाले है, जब इन्सान जीनेसे मरना ज्यादा पसन्द करता है। और पश्चिममें अपग होकर दुःख पानेवाले जानवरोको देहमुक्त करनेका जो रिवाज है, उसके पीछे यही खयाल रहता है कि पशुओको मौतका डर कम होता है। और एक खास हदसे ज्यादा दु:ख पडे तो वे मरना पसन्द करेगे। ऐसा हो सकता है कि यह खयाल सच्चा न हो। इसलिए यह समझकर बरताव करना हमारा धर्म है कि पशुको भी मनुष्यकी तरह ही अपने प्राण प्यारे है।

अगर यहाँतक बात तेरे गले उतरी हो, तो समाजकी दृष्टि या समाजके धर्मका बहुत विचार करनेकी बात नही रह जाती। जहाँ लोगोकी वृत्ति अहिंसाकी तरफ हो, वहाँ बछड़ेके उदाहरणके दुरुपयोगकी कम सम्भावना है। जहाँ अहिंसावृत्ति नही है, वहाँ पशुहिंसा तो हुआ ही करती है। इसलिए मेरे-जैसोकी मिसालसे उसमे कुछ बढती होना सम्भव नही है। बछडेके शरीरका नाश करनेमे परिणामके पूर्ण ज्ञानकी जरूरत नही थी। अगर बछड़ेकी मौत किसी दूसरी तरह किसी भी समय आनेवाली न होती, तो जरूर यह बात सोचने लायक थी। यानी, यह स्थिति होती कि मेरे सिवा बछडेके शरीरका अन्त और कोई कर ही नही सकता, तो बादके परिणामकी पहले से पूरी जानकारी होना बेशक जरूरी था। यहाँ तो बछडा और हम सब जीव रोज ही देहान्तको साथ लिये फिरते है। इसलिए इसमें सबसे बडी बात तो इतनी ही रह जाती है कि यह देह थोडे दिन या महीने या साल ज्यादा बनी रहे। यह सब यहाँ अयुक्त नही है, क्योकि हेतु बिलकुल नि:स्वार्थ है और बछडेका ही सुख देखनेकी बात है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि यदि कही कोई विचार-दोष हुआ भी हो, तो भी बछडेके लिए ऐसा कोई खराब नतीजा नही निकला जो किसी-न-किसी दिन न निकलता[1]। बात जबतक समझमे न आये तबतक बार-बार पूछते रहना। विषय समझने लायक है, समझा जा सकता है और एकबार समझमें आ जाये तो उसमे से अनेक फलितार्थ अर्थ निष्पन्न किये जा सकते है।

इसमे सन्देह नही कि इस विचारधारामे कितनी ही प्रचलित मान्यताओपर प्रहार होता है। मगर मैं मानता हूँ कि हममें यानी हिन्दूधर्ममें इतना ज्यादा कायरपन और इसलिए इतना ज्यादा आलस्य आ गया है कि अहिंसाका सूक्ष्म और मूल रूप भुला दिया गया है और वह सिर्फ तुच्छ जीवदयामें समा गया है, जबकि मूल रूपमें अहिंसा अन्तरकी अत्यन्त प्रचड भावना है और वह कई तरहके परोपकारी

१. अनुच्छेदका शेष भाग सी० डब्ल्यू० की नकलसे लिया गया है।

कामोंकी शक्लमे प्रगट होती है। अगर यह एक मनुष्यमे भी पूरी तरह प्रगट हो, तो उसका तेज सूर्यसे भी बडा होगा। लेकिन आज ऐसा कहाँ है?[1]

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-१, पृष्ठ १५०-३। सी० डब्ल्यू० ९११२ भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

५२२. पत्र : मीराबहनको

१३ मई, १९३२

चि० मीरा,

इस आशासे कि यह पत्र तुम्हे सोमवारको या उससे पहले मिल जाये, मैं तुम्हारे आज अचानक मिले पत्रका उत्तर अभी दे रहा हूँ।

फाउटेनपेनके बिना तुम्हारा काम चल जाये तो अच्छा है। लेकिन हमारा लक्ष्य तो सम्यक् वृत्ति होना चाहिए। उससे स्थायी और भारी परिवर्तन हो जाते है। मूल कारण स्वामित्वकी कामना है। मूल कारणपर सूक्ष्म दृष्टि रखनेके साथ-साथ तफसीलमे अलग-अलग वस्तुओका त्याग किया जाना चाहिए। ऐसे मनुष्यकी कल्पना की जा सकती है जिसके पास कुछ नही है, पर जिसने वृत्तिसे गरीबी नही अपनाई है। कारण, वह सम्पत्तिवालोसे ईर्ष्या करता है। उसके पास कुछ नही है, परन्तु इसका उसे दु ख है। दूसरा व्यक्ति ऐसा मिल सकता है जिसके पास सोनेका पादपीठ हो और जिसे वह गरम राखसे बचनेके लिए काममे लाता हो। मगर वह दूसरे ही क्षण उसे गरीबोकी खातिर बेच डालता है और इस त्यागसे उसे प्रसन्नता होती है। यह तुम्हारे कामकी टीका नही है, बल्कि इसलिए लिखा है कि अगर इसपर अमल करना जरूरी या सम्भव हो, तो कर लो।

तुम जितनी जल्दी आ सको, आ जाना और जो कोई भी आना चाहे और जिसे आनेकी इजाजत हो, उसे भी अपने साथ ले आना। प्यारे अली और नूरबानू आ सकते है। अभी दामोदरदास नही आ सकता क्योंकि उसका नाम विचाराधीन

१. महादेव देसाई लिखते है कि यह लिखवाते समय तुलसीदासके दोहेके पाठपर भी काफी चर्चा हो गई। बापूने कहा: "'पापमूल' पाठ मैंने सुना है और 'देहमूल' भी सुना है। और मुझे दूसरा पाठ ज्यादा अच्छा लगता है"। उत्तरमें मैंने कहा: देहका मूल अभिमान है, इसके बदले शायद यहाँ यह विचार है कि धर्मका मूल दया और पाप अर्थात् अधर्मका मूल अभिमान है। बापू बोले: "इसमें देहमूल अभिमानका अर्थ इस तरह है जैसे दया धर्मका मूल है उस तरह देह अभिमानका मूल होनेके कारण दयाकी विरोधी है। परन्तु देहको पूरी तरह मिटा देना यही शुद्ध दया है। ऐसी दया तबतक न छोड़ें जबतक तनमें प्राण है। सेवा करते हुए या करने जाते हुए देहका पूर्ण त्याग शुद्धतम दया है। यह बात अनुभव-सिद्ध है।" मैंने कहा कि प्रस्तुत वाक्यसे यह अर्थ नहीं निकलता और साधारण मनुष्य भी शायद इस सूक्ष्म भेदको न समझ पाये जबकि अधर्मका मूल अभिमान है, वह स्पष्ट समझ सकता है। अन्तमें निर्णय यह हुआ कि पत्रमें 'दया धर्मका मूल है' इतना ही लिख देना काफी है।

है। तुमको प्यारे अलीके घर जाना चाहिए और अमीनाके बच्चो और तिलकसे मिलना चाहिए। यदि तिलक आना चाहे तो अवश्य आ सकता है। यहाँ तगदस्तीका सवाल उपस्थित है; लेकिन अगर अपनी इच्छाको वह रोक नही सकता तो मै उसके मामलेमे इस बातको उठाना नही चाहूँगा।

तुम्हारी बाये हाथकी लिखावट मुझसे बेशक ज्यादा स्थिर है। थोडे ही समयमे तुम बाये हाथसे उतना ही अच्छा लिखने लगोगी जितना दाये हाथसे लिखती हो।

मुझे खुशी है कि सोफिया तुम्हारे साथ है। मै उससे मिला हूँ। प्रार्थनामें इतने हृदयसे तुम्हारा साथ देना उसके अनुरूप है। उसे मेरा स्नेह देना। उसके खयालसे मेरा मन तो यहाँतक जाता है कि उसे तुम्हारा जितना साथ मिलेगा, उससे कही ज्यादा मिलता। यदि कभी कोई ऐसा महीना हो जब उसे किसी खास व्यक्तिको न लिखना पडे तो वह मुझे लिखे। मुझे निश्चय है कि ऐसा नही हो सकता। लेकिन कौन कह सकता है?

मगनचक्रने मुझे तग तो किया, मगर मै उसपर काबू पा रहा हूँ। मूँगफली छोड दी। वल्लभभाई और महादेवने मुझे डरा दिया और मै उस धमकीमे आ गया। मेरा वजन बढकर फिर १०५½ हो गया है।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२२१) से, सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९६८७ से भी।

५२३. अद्भुत त्याग[1]

१५ मई, १९३२

शालाओकी सामान्य पाठ्यपुस्तकोसे भी हमे कई बार अचूक उपदेश मिल जाते है। इन दिनो मै उर्दूकी रीडरे पढ रहा हूँ। उनमे कोई-कोई पाठ बहुत सुन्दर दिखाई देते है। ऐसे एक पाठका असर मुझपर तो जबर्दस्त हुआ है। दूसरोपर भी वैसा ही हो सकता है। अत. उसका सार यहाँ दिये देता हूँ।

पैगम्बर साहबके देहान्तके बाद कुछ ही बरसोमे अरबो और रूमियो (रोमनो) के बीच महासग्राम हुआ। उसमे दोनो पक्षके हजारो योद्धा खेत रहे, बहुत-से जख्मी भी हुए। शाम होनेपर आम तौरसे लडाई भी बन्द हो जाती थी। एक दिन जब इस तरह लडाई बन्द हुई तब अरब-सेनामे एक अरब अपने चाचाके बेटेको ढूँढने निकला कि उसकी लाश मिल जाये तो दफनाये और जिन्दा मिले तो सेवा करे। शायद वह पानीके लिए तडप रहा हो, यह सोचकर इस भाईने अपने साथ लोटा-भर पानी भी ले लिया।

१. यह सम्भवतः "पत्र : नारणदास गांधीको", १३/१५-५-१९३२ के साथ भेजा गया था। देखिए अगला शीर्षक।

तडपते घायल सिपाहियोंके बीच वह दीपक लिए उसे ढूंढता चला जा रहा था। उसने अपने भाईको खोज लिया और तव सचमुच ही वह पानीकी रट लगाये था। जख्मोसे खून वह रहा था। उसके बचनेकी बहुत ही थोडी आशा थी। भाईने पानीका लोटा उसके पास रखा कि किसी दूसरे घायलकी 'पानी-पानी' की पुकार सुनाई दी। उस दयालु सिपाहीने अपने भाईसे कहा, "पहले उस घायलको पानी पिला आओ, मुझे फिर पिलाना।" जिस ओरसे आवाज आ रही थी, भाई उस ओर तेजीसे कदम बढाकर पहुँचा।

यह जख्मी कोई बहुत बडा सरदार था। उक्त अरब उसको पानी पिलाने और वह सरदार पीनेको ही था कि इतनेमे तीसरी दिशासे पानीकी पुकार आई। यह सरदार भी पहले सिपाही-जैसा ही दयालु व्यक्ति था। अत उसने बडी कठिनाईसे कुछ बोलकर और कुछ इशारेसे यह समझाया कि पहले जहाँसे पुकार आई है वहाँ जाकर पानी पिला आओ। नि:श्वास छोडते हुए वह भाई वायुवेगसे दौडकर वहाँ पहुँचा जहाँसे आर्त्तनाद आ रहा था, किन्तु तबतक वह घायल सिपाही आखिरी साँस खीच चुका था; उसकी आँखे मुँद गई थी। समयपर उसतक पानी नही पहुँच सका, इसलिए अब वह भाई उक्त जख्मी सरदार जहाँ पडा था, झपटकर वहाँ पहुँचा। पर देखता क्या है कि उसकी आँखे भी मुँद चुकी है। दुखभरे हृदयसे खुदाकी बंदगी करता हुआ वह अपने भाईके पास पहुँचा तो उसकी नाडी भी बन्द पाई; उसके प्राण भी निकल चुके थे।

यो तीन घायलोमें से किसीने भी पानी न पाया; पर पहले दो अपने नाम अमर करके चले गये। इतिहासके पन्नोमे ऐसे निर्मल त्यागके दृष्टान्त बहुतेरे मिलते है कि जिनका वर्णन जोरदार कलमसे किया गया हो तो उसे पढकर हम दो बूँद आँसू गिरा देते है, पर ऊपर जो अद्‌भुत दृष्टान्त दिया है, उसके देनेका हेतु यह है कि उक्त वीर पुरुषो-जैसा त्याग हममे भी आये और जब हमारी परीक्षाका समय आये तब दूसरेको पानी पिलाकर पिये, दूसरेको जिलाकर जिये और दूसरेको जिलानेमें खुद मरना पडे तो हँसते-हँसते कूच कर जायें।

मुझे ऐसा जान पडता है कि पानीकी तडपसे अधिक तडप एकमात्र हवाकी है। हवाके बिना तो आदमी एक क्षण भी जीवित नही रह सकता। इसीसे सम्पूर्ण जगत हवासे घिरा हुआ जान पडता है। फिर भी, कभी ऐसा वक्त भी आ जाता है जब आलमारी-जैसी किसी छोटी कोठरीके अन्दर बहुत-से आदमी ठूँस दिये गये हो, एक ही सुराखसे थोडी-सी हवा आ रही हो, उसे जो पा सके वही जिये, बाकी लोग दम घुटकर मर जाये। हम भगवानसे प्रार्थना करे कि ऐसा समय आये तो हम उस सुराखकी हवा दूसरेको लेने दे।

हवाके बाद पानीकी आवश्यकता आती है। पानीके प्यालेके लिए मनुष्योके एक-दूसरेसे लडने-झगडनेकी बात सुननेमे आई है। हम यह इच्छा करे कि ऐसे मौकेपर उक्त बहादुर अरबोका त्याग हममे आये। पर ऐसी अग्नि-परीक्षा तो किसी एककी ही होती है। तथापि, हम सबकी रोज सामान्य परीक्षा तो हुआ ही करती है। हम

सबको अपने-आपसे पूछना चाहिए कि जब-जब कोई ऐसा अवसर आता है, तब-तब क्या हम अपने साथियो, पडोसियोके सुखके विचारसे उन्हे आगे करके खुद पीछे रहते है? न रहते हो तो समझो हम गिर गये, हमने अहिंसाका पहला पाठ नही सीखा।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से।

५२४. पत्र : नारणदास गांधीको

[१३/१५ मई, १९३२][1]

चि० नारणदास,

इस बारके तुम्हारे दो बडे लिफाफे मिले। १६ अकका सूत सस्ता पडेगा और २० का महँगा, यह मै समझ गया। किन्तु फिर भी कुल मिलाकर बीस नम्बरका सूत ही सस्ता पडेगा। क्योकि उस स्थितिमे हमे कातते हुए सदा सावधान रहना जरूरी है। उसमे तकुए आदि सब अच्छे होने चाहिए। मै सस्तेका अर्थ तात्कालिक दृष्टिसे अथवा केवल आर्थिक दृष्टिसे ही नही लगाता। यहाँ सस्तेका जो अर्थ मैने लगाया है, वह आध्यात्मिक है। इसलिए यदि तुम्हे इस कथनके विरोधमे और कोई तथ्य दिखाई न देता हो तो २० नम्बरका आग्रह रखनेको कहना और स्वय भी ऐसा ही आग्रह रखना। इसके सिवा, मैने जो अन्य आनुषगिक शर्ते भेजी है, उनका भी पालन कराना। परिणामस्वरूप, फिलहाल उत्पादन कम होता हुआ जान पडेगा। किन्तु इसकी चिन्ता मत करना। मैने एक बात कही थी — शायद तुम्हे याद हो कि हमे सभी प्रकारकी मजदूरीकी दर एक ही लगानी चाहिए; अर्थात्, जो एक घटे कातता है, जो एक घंटे पीजता है, एक घटे बुनता है या बढईका काम करता है या लिखा-पढी करता है, या खेत सँभालता है — उन सबकी प्रतिघटा मजदूरी एक-सी ही होनी चाहिए। इसके सिवा मैने अपने हिसाबके विचारसे मजदूरी प्रतिघटा एक आना सुझाई थी। इसके अनुसार दस वर्षके ऊपरका प्रत्येक व्यक्ति, जो खाट न पकड़े हो, यदि औसतन आठ घंटे काम करे तो मै आश्रमको आत्मनिर्भर गिनता हूँ। फिलहाल इसके अनुसार आर्थिक दृष्टिसे हानि भले ही दिखाई दे, किन्तु अन्तमे आर्थिक दृष्टिसे भी इस हिसाबको ठीक उतरना ही चाहिए। यह हिसाब प्रस्तुत करते हुए इतना तो मान ही लिया गया है कि हरेक व्यक्ति प्रामाणिक है। प्रत्येकको चाहिए कि वह अपने एक-एक घटे समयका प्रामाणिक उपयोग करे। और हमे इस बातकी कसौटीके रूपमें यह देख लेना चाहिए कि उसने एक घटेमे प्रत्येक व्यक्ति-द्वारा अपेक्षित कामको सफाईसे किया है कि नही। मेरा अभिप्राय यह नही है कि दूसरे प्रकारका जो हिसाब रखा जाता है वह न रखा जाये। इस प्रकारके हिसाबके लिए किसी बडी लिखा-पढ़ीकी जरूरत नही है। हरेकके नामके सामने कोई अक लिख दिया जाये अर्थात्, किसीके सामने एक, तो किसीके सामने दो। यह अक उसके कामके घटे सूचित करेगा।

१. बापुना पत्रो–९: श्री नारणदास गांधीने, भाग–१, पृष्ठ ३६८ से।

और ये अंक उनके नामके सामने तभी लिखे जायेंगे जब हमारे मापदण्डके अनुसार उनका काम ठीक उतरेगा। इसे आध्यात्मिक दृष्टिका हिसाब कहता हूँ। इस प्रकारके काम करते हुए हम अन्न, दूध, आदिकी जितनी भी उपज कर सके, वह आत्मनिर्भर होने-जैसी होगी। इसके साथ इसमे कल्पना यह भी है कि मजदूरको आश्रमवासीकी तरह होना चाहिए। साथ ही जो शाक-भाजी, फल, दूध, इत्यादि हम आश्रममे पैदा कर पाये, हमे उतनेसे सन्तुष्ट हो जाना चाहिए। ये सारी बातें मेरे मनमे आज ही पैदा हुई हो, सो नही है। ये आश्रमके आरम्भसे ही चलती आ रही हैं। सम्भव है, मैंने तुम्हारे साथ इस विषयकी भरपूर चर्चा न की हो। मगनलालके साथ तो बार-बार की थी। फिर भी आजतक यह बात अधिकाशत मनोरथके रूपमें ही रही है। राष्ट्रीय सप्ताहके सूत्र-सत्रके दरमियान जो विचार उत्पन्न हुए, उनकी धारा चल रही है और मै उसे तुम्हारी ओर प्रवाहित करता चला जा रहा हूँ। इसका यह अर्थ कदापि नही है कि तुम्हे आज ही इनमे से प्रत्येक बातपर अमल कर डालना है। तुम समर्थ हो इसलिए मनमे जो नये-नये विचार आते है, उन्हे सामने रखते हुए सकोच नही करता। मै किसी भी प्रकारसे तुम्हारी स्वतन्त्र विचारबुद्धिको भ्रमित नही करना चाहता और न यही चाहता हूँ कि तुम किसी प्रकारकी चिन्तामे पड जाओ। कई लोग ऐसे स्वभावके होते है कि उनके सामने कोई भी नया विचार रखा कि वे आतुर हो जाते है, उसपर अमल कर बैठते है। जब अमल नही हो पाता तो परेशान हो जाते है और अपनेको दीन और दुनिया दोनोसे गया मान लेते है। तुम्हारे स्वभावमें ऐसी कोई बात नहीं है, ऐसा मैं मानता हूँ और इसीलिए अपनी नई-नई तरगे तुम्हारे सामने फेकता रहता हूँ। जब तुम्हे लगे कि बहुत हो गया तब तुम तुरन्त इशारा कर देना और मै चुप हो जाऊँगा। यहाँ बैठकर मै काममे तो कोई मदद कर नही सकता। मर्यादामे रहकर सोचनेमे मदद कर सकता हूँ। यह मदद भी तभी पहुँच सकती है जब तुम उन विचारोको समझकर, आत्मसात करके उनकी उपयोगिताको अनुभवकी कसौटीपर कसते रहो। किन्तु यदि ये विचार बुद्धिपर भारस्वरूप हो जाये तो इन्हे निरर्थक ही गिनना चाहिए।

अब मै थोडी देरके लिए फिर बीस अककी बातपर आता हूँ। यह सोचना सब तरहसे ठीक नही है कि सोलह अकके सूतका बना कपड़ा, बीस अकके सूतके बने कपडेके मुकाबलेमे ज्यादा टिकता है। यदि रूई बीस नम्बरके योग्य हो, ठीक पीजी गयी हो, और ठीक मजबूत बीस नम्बरका सूत निकल सका हो, उसे काफी घना बुना गया हो तो अवश्य ही सोलह नम्बरके सूतसे बने हुए कपडेकी अपेक्षा वह अधिक टिकेगा। आज सोलह नम्बरके सूतसे बना हुआ कपडा अधिक टिकता है, इसका केवल इतना ही अर्थ है कि हमारे सोलह और बीस नम्बरके काते हुए सूतका कस ठीक नही है। दोनो ही कच्चे है। और उसमें भी स्वाभाविक रूपसे सोलह अकका सूत उतना कच्चा नही है, क्योकि उसमे घटिया कपाससे भी काम चल जाता है और इसलिए ऐसा लगता है कि उससे बना हुआ कपडा बीस

नम्बरवाले कपडेसे अधिक टिकता है। यदि हम अपनी इस मान्यतासे चिपके रहेंगे तो उससे इस प्रकारका भ्रम पैदा होगा कि सोलह नम्बरसे बना हुआ कपडा अधिक मजबूत होता है। और यदि बीस नम्बरके विषयमें मेरा हिसाब सही हो तो उक्त मान्यता घटिया कामको प्रोत्साहन देनेवाली कही जायेगी। हम जिस हदतक अधिक बारीक सूत कातनेमें समर्थ होंगे उस हदतक गरीब व्यक्तिकी सेवा होगी, क्योकि इस तरह खादीकी प्रतिष्ठा बढेगी।

लोगोके सामने हम यह सिद्ध कर सकेंगे कि बुनने योग्य बारीक सूत आसानीसे पैदा किया जा सकता है। मै तो फिलहाल मगनचरखेमे अपना सारा ध्यान लगाये हुए हूँ, किन्तु महादेव छक्कडदासकी पूनियोपर प्रयोग कर रहा है। उसने चरखेके मोढियामे कुछ परिवर्तन किये है। इन परिवर्तनोके ही कारण इन्ही पूनियोसे बिना अतिरिक्त श्रमके छत्तीस नम्बरसे भी ऊपरका सूत उसने काता है। पहले बीस निकलता था फिर पच्चीस अब छत्तीस। ये परिवर्तन किस प्रकार हुए सो मैंने कल लक्ष्मीदासके नाम लिखे पत्रमे विस्तारसे बताया है। उस पत्रको मँगा लेना। महादेवकी गतिमे अवश्य कुछ कमी हुई है। पच्चीस अकके समय गति ३०० तारकी थी। ३२ के समय २४० और ३६ के समय २१० हो गई। यह कमी मुझे किसी भी रूपमे आघात पहुँचानेवाली नही लगती। जब महादेव किसी विशेष अकपर स्थिर हो जायेगा तब थोडी-बहुत गति तो बढनेवाली है ही। मेरे कहनेका मतलब इतना ही है कि बारीक नम्बरके सूतपर जानेका अर्थ सार्वजनिक दृष्टिसे लाभदायक ही होगा। मगनलालकी पुण्य-तिथि, जान पडता है, तुमने बहुत उचित रूपमे मनाई।

पण्डितजी, लक्ष्मीबाई, यशवन्तप्रसाद, मथुरी मिल कर गये। जो लोग आये थे उनमे मणिबहन सबसे बडी थी इसलिए मैंने हरिलालके नाम पत्र उसे सौप दिया। सौपते हुए पूछा तो मालूम हुआ कि सभी साथ ही पहुँचेंगे। पत्र हाथो-हाथ यह मानकर भेजा कि इस प्रकार वह डाकसे पहले पहुँचेगा। लाचार हूँ। हरिलालका दूसरा पत्र भी मिला है। मुझे तो दोनो पत्रोमे केवल उद्दण्डता और बेशर्मी ही दिखाई देती है। यह बलीपर जो दोषारोपण करता है, मुझे तो उसमे वे दोष दिखाई नही देते। इसके सिवा वह मनुके लिए माँके समान रही है, इसलिए मनुके पाससे हटा देना मनुके प्रति अत्याचार होगा। फिर भी जो तथ्य तुम्हारे सामने आ सकते है, वे तथ्य यहाँ मेरे सामने नही आ सकते, इसलिए मेरे विचारोको जानकर तुम्हे जहाँ जो निर्णय देना हो उसीके अनुसार करना।

मेरे हाथके बारेमें चिन्ताका कारण नही है। दर्द होता है किन्तु काम करते समय ही, दूसरे समय दर्द नही होता। जब ऐसा लगेगा कि दूध लेनेसे लाभ होता है तो मै दूध अवश्य लूँगा। दर्द तो उन दिनो भी था जब मै दूध लेता था।

देखता हूँ, रतिलालका भार पूरी तरह तुमपर आ गया है। चम्पाके दो पत्र मिले है। किसी बातसे दुखी मालूम होती है। जैसी जो सान्त्वना देने योग्य हो, सो देना। चम्पा लिखती है कि उसका छोटा भाई आश्रममे रहना चाहता है। लड़का

रहने लायक हो तो रख लेना। यदि हरिहर शर्मा आ सके और रतिलालको ले जा सके तो उन्हे लिखकर देख लेना। मुझे तो भय है कि रगून जाकर भी, यदि चम्पा वहाँ न हो तो, वह वहाँ भी नही रह सकेगा। और चम्पा वहाँ नही जाना चाहती। मै मानता हूँ कि न जानेकी इस इच्छाके सवल कारण है।

रगनाथ कुलकर्णीको गुजराती-अनुवादकी अनुमति दे देना। जेठालाल गोविन्दजी के पत्रोमें अनन्तपुरका विवरण नही मिला। उनका एक पत्र अवश्य मिला है। जेलवाले कहते है कि विवरण आया तो होगा किन्तु गुम हो गया है, उसकी नकल मँगवा लेना।

बहनोके विषयमे जो शिकायते आयी है, वहुत सम्भव है, उनमे अतिशयोक्ति हो। फिर भी मै जाँच करूँगा।

जो पाँच नाम मिलनेवालोकी सूचीमे मजूर हुए है सो तुम्हे लिख भेजे थे। अब जो अन्य नाम मजूर किये गये है, वे इस प्रकार है :

इन्दु नेहरू, जहाँगीर वकील (पूनाके, इन्दुके शिक्षक) और उनकी पत्नी, हेमप्रभा देवी, रैहाना, हीरावन्ती, मनसुखलाल, छगनलाल, रमा (रणछोडभाईकी), प्रभाशकर (चम्पाके पिता), बहराम खम्भाता और उनकी पत्नी, मजुकेशा सुशीला (प्यारेलालकी बहन), सुशीला (प्रेमाबहनकी सखी), दिनकर मेहता, पुरातन बुच। इन लोगोको सूचित करना तुम्हारे लिए जरूरी नही है। पुरातन वहाँ आता हो तो कह सकते हो कि जब उसकी इच्छा हो आ जाये। यो तो यह सूची तुम्हारी जानकारीके लिए भेजी है। कोई दूसरा आनेकी इच्छा रखता हो और तुम्हारे ध्यानमें ऐसा कोई नाम हो जो सरकार-द्वारा निश्चित मर्यादामे आ जाता है, तो नाम भेज देना।

महावीरका पत्र आया है, उसमे उसने लिखा है कि सवकी तवीयत ठीक है, इसलिए उन्हे कुछ और महीने रहने दें। मुझे लगता है कि रहने देना ही ठीक है। इनका खर्च निश्चित कर देना ठीक होगा। दार्जिलिंगमें ये लोग कोई काम कर सकें तो अच्छा। तुम्हे कोई काम सूझे तो सूचित करना। तुमने लिखा तो था, किन्तु मै भूल गया हूँ कि हर महीने कितना खर्च आता है। मुझे लगता है कि मैत्रीको वहाँ ब्याह दे तो ठीक हो। उसकी उम्र विवाहके योग्य तो हो ही गई है। इन लोगोका इरादा तो था ही कि खड्गवहादुरसे विवाह कर दे। किन्तु मेरा खयाल है कि खड्गबहादुर विवाह नही करना चाहता। इस वारेमे मैने सीधे मैत्रीको लिखा है। वह पढ लेना। अन्तमे यदि ये लोग वहाँ वस जायें और महावीर कमाने लगे तो वह भी वाछनीय है। यदि इस विषयमे तुमने कोई विचार किया हो अथवा अब करो तो लिखना।

रामदासका कुछ पैसा किसी वैकमे है। रामदास कहता है कि वह पैसा वहाँ रहने दिया जाये। मैने सुना है कि विद्यापीठके स्नातक गोपालदासको कोई वडी चोट[1] आई है। इस विषयमे पता लगाकर तथ्य सूचित करना। यदि वह लिख सकता हो

१. गोपालदास जीवाभाई पटेल; इन्हें दिल्लीमें कांग्रेसकी एक सभामें पुलिसकी लाठीसे सख्त चोट आई थी।

तो लिखे। चन्द्रशंकरसे कहना कि मगनभाई द्वारा लिखी 'मीमांसा'[1] रजिस्ट्रीसे भेजे। उसकी तबीयत कैसी रहती है, यह भी लिखे।

मैंने बा के नाम जो पत्र भेजा था, वह पहुँचा या नही? मेरे पास बा का कोई पत्र नही आया। हरिलालके विषयमे तुमने जमनादासका पत्र पढ़ लिया होगा? मुझे तो ऐसा लगता है कि हरिलालने तो धोखा दिया है। मुझे तो बहुत लोगोने लिखा है कि वह सारी मर्यादाओका उल्लंघन कर चुका है। हरिदास गांधी[2] साधारणतः ठीक है। उसकी सार-सँभाल ठीक ही हो रही है। किन्तु उसका रोग मानसिक है। क्या उसके पिता उससे मिलते है? कमला कहाँ है?

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२२६ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

५२५. पत्र: मानशंकर ज० त्रिवेदीको

१५ मई, १९३२

चि० मनु,

तेरी चिट्ठी मिली। मेरी दृष्टिसे वहाँ[3] जानेमे तेरा सबसे बड़ा लाभ तो शरीरकी दृष्टिसे है। इसके सिवा तुझे बहुत-से मीठे-कड़वे अनुभव मिलेगे। वैसे भी डाक्टरीमे जबर्दस्त कुशलता प्राप्त की जा सके तो अच्छा ही है। किन्तु उसे हासिल करनेमें न शरीर बिगाड़ना चाहिए, न अन्य अनुभवोकी उपेक्षा करनी चाहिए। जर्मन तो सीखनी ही पड़ेगी, इसीलिए उसे इस हदतक ले जाना जिससे कि जर्मन-साहित्य भली-भाँति समझ सके। वहाँ अपनी अर्थात् हिन्दुस्तानीकी कीर्ति तो फैलाते ही रहना। वाल्स[4] की चिट्ठी अभी-अभी मिली। उसने तेरे विषयमे लिखा है। मुझे यह तथा जिमरमैन दोनो भले आदमी लगे।

क्या वहाँ अपने यहाँके लोगोसे मिलना-जुलना होता है?

हम तीनो सकुशल हैं। सरदार तथा महादेवके आशीर्वाद भी लो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १००५) से

१. मगनभाई देसाई-द्वारा लिखित सत्याग्रहकी मीमांसा नामक प्रबन्ध जिसके आधारपर उन्हें विद्यापीठकी ओरसे 'समाज-विद्या-पारंगत'की पदवी दी गई थी।

२. एक कैदी जो साबरमतीसे यरवदा-जेल भेज दिये गये थे।

३. जर्मनी।

४. कार्लाइल वाल्स।

५२६. पत्र : महावीर गिरिको

१५ मई, १९३२

चि० महावीर,

तेरा पत्र मिला। मेरा क्यो नही मिलता, यह समझ नही पाता। आगेसे आश्रमकी मार्फत ही लिखूँगा। तुम सब भी ऐसा ही करना। खर्च तो भेज दिया गया होगा। कालिमपाँगका इरादा छोड देना। तुम सबकी तबीयत ठीक ही रहे तो फिलहाल जहाँ-का-तहाँ बना रहना ठीक है। तुम सभी लोगोको कोई-न-कोई काम करना चाहिए। दिन किस तरह बिताते हो? क्या तुम सब ठीक-ठीक दैनन्दिनी लिखते हो?

मैत्रीकी चिट्ठी क्यो नही आई? कृष्णमय्या देवीकी तबीयत अच्छी हो गई? तुम सब किसके साथ रह रहे हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२३५) से।

५२७. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

१५ मई, १९३२

चि० परशुराम,

दैनन्दिनीमे जितना लिख सकते हो उतना लिखो। गुह्यतम विचार भी लिखो। हमारे पास छुपाने योग्य कोई चीज नही होनी चाहिए। इसलिए कोई पढेगा, इसकी चिन्ता मत करो और इसीलिए दूसरोके दोष या विश्वासमे कही गई बाते उसमे न लिखी जाये। दैनन्दिनी पढनेका अधिकार तो मत्री या उसके किसी प्रतिनिधिको हो सकता है; फिर भी उसे किसीसे छुपाकर नही रखना है।

तकलीका अभ्यास कदापि न छोडना। भले ही रोज आधा घटा ही क्यो न दे पाओ। सुगढता हासिल हुई या नही?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४९८) से। सी० डब्ल्यू० ४९७५ से भी; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा।

५२८. पत्र : पद्माको

१५ मई, १९३२

चि० पद्मा,

तूने पूछा था, इसीलिए मैंने आते रहनेको लिखा था। लेकिन अगर तेरी इच्छा वहाँ रुके रहनेकी है तो मैं क्या कह सकता हूँ। सीतलासहायके आनेपर उससे मुझे लिखनेके लिए कहना।

मगनचक्र चलाता हूँ। तूने जो सुझाव दिया था वह बहुत काम नही आया। मेरी कठिनाइयोका हल उससे नही निकला।

जहाँ चाहिए, चक्र वहाँ न रुके तो फिर उसे हाथसे उस स्थानपर लाना पडता है। मै तो एक ही हाथ काममे ला सकता हूँ। दाहिनेकी कोहनी दुखती है, इसलिए वह बेकाम है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१४१) से। सी० डब्ल्यू० ३४९३ से भी; सौजन्य . प्रभुदास गाधी।

५२९. पत्र : सुशीलाबहन गांधीको

१५ मई, १९३२

चि० सुशीला,

तू सरासर चालाक है। आज रवाना हो जानेका पत्र लिखनेके बाद तू मेरे पत्रकी राह देख ही कैसे सकती है। इसके बाद चिट्ठी न आये तो शिकायत कर सकती है। तूने सीताके विचारसे वहाँ रुक जानेका विचार किया, यह मुझे ठीक लगा। मेरे मनमे भी उसके और तेरे विचारसे पशोपेश तो होता ही था। तू वहाँ किस तरहकी मदद करती है, पूरे दिनके कार्यक्रमकी तफसील लिखना। तुझे सग तो अब ठीक ही मिल गया होगा। प्रागजी से विस्तारके साथ लिखनेको कहना। पार्वती कैसी रहती है? तुम लोग साथ-साथ रहते हो या अलग-अलग?

हम तीनो मजेमे है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

यह चिट्ठी जिस लिफाफेमें रखी है, वह सरदारका बनाया हुआ है। पार्सलो आदिके जो कागज बच रहते है, उनका इन्हे बनानेमे उपयोग कर लेते हैं।

उन्नत देशमे रहनेवाले तुम लोगोकी नजरमें गरीब देशकी ऐसी भेट शायद ही न जँचे, लेकिन हम क्या कर सकते हैं। क्या हम तुम्हारे महल देखकर अपनी झोपड़ियाँ गिरा बैठे।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७८८) से

५३०. पत्र : भाऊ पानसेको

१५ मई, १९३२

चि० भाऊ,

तुमारा खत मिला। विनोबाका १ अ० पर प्रवचन भी मिला। ऐसे हि दूसरा भेजते रहो।

तकलीकी नयी पद्धति सब सीख लेवे तो बहोत अच्छा होगा। किस किसने सीख लिया। तुमारी प्रकृति अच्छी रहती होगी।

बापु

मूलकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७२७) से। सी० डब्ल्यू० ४४७० से भी; सौजन्य : भाऊ पानसे।

५३१. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१५ मई, १९३२
(जी० एन० ६७२७)

भाई घनश्यामदास,

आपका पत्र मुझे कल मिला। ग्वालहेरसे लिखा हुआ पत्रका उत्तर मैंने शीघ्र ही भेजा था। पता ग्वाल्हेर दिया था। इस सबबसे शायद न मिला हो। मेरे थोड़े पत्र गुम हुए हैं सही। मालवीजीका उत्साह और उनका आशावाद दोनो अनुकरणीय हैं। हम सब मजेमें हैं। मेरा खुराक अब तक तो वही है। और वजन भी करीब करीब कायम हैं। रामेश्वरदास अच्छे होंगे।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७८९८ से, सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला।

५३२. पत्र : मैथिलीशरण गुप्तको[1]

१५ मई, १९३२

भाई मैथिलीशरणजी,

आपका पत्र मिला शब्दकोष भी मिला। और आपकी टिप्पणीके साथ साकेत की एक और प्रति भी मिल गई। टिप्पणीसे मुझको बहुत साहाह्य मिलेगी। हिंदी शब्दसागर भेजनेका मैं आपको कष्ट नही दुगा। सभव है कि कल्याण कार्यालयसे शब्दसागर आ जायगा। ऐसे भी आपकी टिप्पणी और शब्दकोषसे मेरा निर्वाह भली-भांति हो जायगा। साकेतके बारेमें जो-कुछ लिखा पढी हुई है उसे इस समय प्रकट नही कर सकते हैं। आजकल जो पत्र लिखनेकी मुझको इजाजत मिलती है उसमे एक प्रकारकी मर्यादा भी मानी जाती है कि मेरे पत्र प्रकट नही होंगे जहांतक मैं कैदमें हूं। और कुछ समयतक यह लिखा पढी अप्रकट रहनेसे कोई हानि होने वाली नही है। "साकेत" मे भरी हुई शक्ति ही "साकेत" को आगे ले जायगी। आपके प्रेमका अनुभव श्री महादेवको मिला था उसका सब वर्णन उससे सुनकर मुझे बड़ा आनन्द हुआ।

आपका,
मोहनदास

सी० डब्ल्यू० ९४५७ से; सौजन्य: भारत कला भवन, वाराणसी।

५३३. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

१५ मई, १९३२

चि० ब्रजकिसन,

तुमारा खत मिला है। मैंने पहेले पत्रका लबा उत्तर दिया था। सब प्रश्नोका उसमे उत्तर था। लेकिन उस बारेमें तुमने कुछ उल्लेख नहीं किया है उससे मालुम होता है तुम्हे न मिला हो। हम सब अच्छी तरह है। वहां सब भाईयोको सलाम, बं० मा० व० कहो। तुमारा शरीर अच्छा रहता होगा। बाकी तुमारा खत आनेपर।

बापूके आशीर्वाद

मूलकी फोटो-नकल (जी० एन० २३९२) से।

१. उनके पत्र (सी० डब्ल्यू० ९४५८) के उत्तरमें, जिसमें उन्होंने गांधीजी से हुए इस पत्र-व्यवहारको साकेत के पाठकोंके लाभके लिए प्रकाशित करनेका सुझाव दिया था।

५३४. पत्र : बबलभाई मेहताको

१६ मई, १९३२

चि० बबलभाई,

तुम अबतक २० अकका सूत कातने लगे होगे। 'गीता'का नित्य पाठ नीरस लगता है, क्योकि उसपर मनन नही होता होगा। यह हमे रोज रास्ता दिखानेवाली माता है, ऐसा समझकर पढोगे तो नीरस नही लगेगी। पाठ करनेके बाद रोज एक मिनट उसपर विचार कर लिया करना। रोज कुछ-न-कुछ नया मिलेगा। केवल सम्पूर्ण मनुष्यको उसमे कुछ नही मिलेगा। किन्तु जो नित्य कुछ-न-कुछ दोष कर जाता है, उसे तो ऐसा ही लगेगा कि यह 'गीता-माता' उद्धार करनेवाली है और वह नित्य पाठसे थकेगा नही।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४५१) से।

५३५. पत्र : जमनादास गांधीको

१६ मई, १९३२

चि० जमनादास,

बहुत दिनोके बाद तेरा पत्र मिला। हरिलालके जुल्मकी कथा तो मैंने सुन ही ली थी। मगर मैं चाहता था कि यह बात तुमसे जान लूँ। आनदलालने मुझे लिखा था, मैंने उसपर किसी तरहका भरोसा नहीं किया। हरिलालके दोषोके बारेमें मैंने मौन धारण कर लिया है, यह तू किस आधारपर कहता है? मैंने कभी कुछ नही ढका। कोई उसे कुछ देता है, तो मैं उसपर भी अपनी नापसन्दगी जाहिर करता हूँ। तू इससे अधिक क्या चाहता या सुझाता है? मैंने उसे यह लिखा अवश्य था कि मेरा विश्वास है कि उसे पश्चात्ताप होगा[1]। कई लोगोके बारेमे ऐसा हुआ है। जबतक आदमी जीवित है, तबतक हमे उसके सुधरनेकी आशा रखनी चाहिए।

शालाके विषयमे तफसीलसे लिखना। तू अपना आत्मविश्वास मत खोना, लिया हुआ काम मत छोडना। तेरे स्वास्थ्य सुधरनेकी कुंजी भी मैं तो वही देखता हूँ। वहाँका वातावरण कैसा है? राज्य-शासन ठीक चल रहा है या नही? प्रजा सुखी है?

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४४४) से।

१. देखिए पृष्ठ ३६१।

५३६. एक पत्र

१६ मई, १९३२

मन चचल हो तो भी प्रार्थना जारी रखो। एकान्तमे बैठकर आसनबद्ध होकर विचारोका निग्रह करनेपर भी अगर वे आते रहे तो भी प्रार्थना पूरी करो। मन धीरे-धीरे ठिकानेपर आ जायेगा। 'गीता' ही कहती है कि मन चचल है, किन्तु सिखाती यह है कि उसपर धैर्यपूर्वक काबू हो जाता है। 'हार हम कभी नही माने, जान भले ही जावे।'

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९११४)से; सौजन्य: नारणदास गाधी।

५३७. पत्र: खुशालचन्द गांधीको

१६ मई, १९३२

आदरणीय भाईसाहबकी सेवामें,

आपने तो, लगता है, चमत्कार ही कर दिया। पत्रोसे तो सब आशा ही छोड़ दी थी। किन्तु अब जो पत्र आ रहे है, उनसे मैने यही आशा बाँधी है कि अभी हम इसी देहके रहते मिलेगे। लिख सके तो लिखिए, नही तो लिखवा दीजिए।

महादेव मेरे साथ हैं।

आपको हम दोनोके दण्डवत् प्रणाम।

मोहनदास

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१. खुशालचन्द जीवनजी गांधी, नारणदासके पिता।

५३८. पत्र : जमनावहन गांधीको

१६ मई, १९३२

चि० जमना,

वही तवीयत सुधर जाये तो फिर क्या चाहिए?

कुसुम पूछकर नही गई, यह बडी गलती है। उसका ध्यान इस तरफ खीचा या नही? कई वार लडकियोके मनमे कुछ नही होता, सरल भावसे नियमका उल्लघन कर जाती हैं। हमारी शिक्षाका यह कच्चापन मैं स्वीकार करता हूँ।

वड़ी वहने सव छोटी लडकियो और लडकोको अपना मानकर उनके प्रति वरतें तो वे वहुत उन्नति करे।

वापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८५३) से, सौजन्य: नारणदास गाधी।

५३९. पत्र : कुसुम देसाईको

१६ मई, १९३२

चि० कुसुम (वडी),

पत्र वहुत अधूरा है। फुरसत मिलनेपर मैं सवाल तैयार कर दूंगा। तू उनके जवाव देगी तो मैं जो वन सकेगा करूँगा। यह हो जानेके वाद कागज यहाँ मगवाऊँगा। अभी जल्दी तो है नही। वात मुझे फुरसत मिलनेपर लिखनेकी ही है।

मैंने तुझे वोलकर जो पत्र लिखवाये, तू उन्हीकी चर्चा कर रही है न? यदि यही है तो किसी दिन जव लिखवाये गये पत्रोका सग्रह प्रकाशित होगा तो उसमे तुझसे लिखवाये गये ये पत्र भी आ जायेगे। क्या अलग प्रकाशित करनेमे कोई खास हेतु है?

तू जून मासतक निश्चित जगहपर न चली जाये और पहले हफ्तेमें यहाँ आये तो महादेवसे भी मिल लेना। प्यारेलालका क्या हुआ? सुशीला मुझसे मिलना चाहे तो मिल सकती है।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८३७) से।

५४०. पत्र : फूलचन्द बापूजी शाहको

१६ मई, १९३२

भाईश्री फूलचन्द,

तुम्हारा पत्र पाकर हम सबको बहुत खुशी हुई। हमे ऐसी बातोपर दु:ख नही करना है।[1] कैदी है इसलिए जितना पानी पीनेके लिए दे उतना पिये। ऐसा भी समय था जब कैदीको पत्र नही लिखने देते थे, न पूरा खाना देते थे और न पढ़ने देते थे। उन्हे चौबीसो घंटे बेडियाँ पहनाते थे और पुआलपर सुलाते थे। इसलिए हमे तो जो-कुछ मिले उसे ईश्वरका अनुग्रह माने। अपमान हो तो उसके लिए प्राण दे दे, किन्तु देह-दु:खको तो सहन करना ही है।

तुम सब वहाँ सुखसे हो, यह जानकर हम लोगोको प्रसन्नता हुई। फिर सुख-दु:ख तो मानसिक स्थिति है। तुम और मामा नियमोका पालन करते हो और करवाते हो, स्वच्छताका ध्यान रखा है — यह सब तुम्हे शोभा देता है।

मै आशा करता हूँ कि वहाँ सब भाई अपने समयका अच्छे-से-अच्छा उपयोग करते होगे। ऐसा एकान्त और इतना अवकाश बार-बार नही मिलते। पढनेको कुछ मिले तो पढो, विचार करनेका समय तो मिलता ही है। और ऐसे अनेक दूसरे काम है जिनमें से कुछ-न-कुछ तो हाथमे ले सकते हो। हम सब एक गम्भीर भूल करते है। वह यह कि सरकारी समय या वस्तु मानो हमारी नही है, ऐसा मानकर हम उसे बरबाद कर देते है। थोड़ा विचार करनेपर हमें तुरन्त समझमें आ जायेगा कि सारी सरकारी वस्तुएँ या सारा सरकारी समय प्रजाका है। वे सरकारके अधिकारमे है, इस कारण उन्हे नष्ट होने दे तो कह सकते है कि हमने प्रजाका धन और प्रजाका समय नष्ट किया। इसलिए हमारे हाथमें जो आये उसका हम सदुपयोग करे। जेलमें हम जो-कुछ बनाते है, वह भी प्रजाके धनमें वृद्धि करना है। विदेशी सरकार है उससे भी इस विचारसारिणीमें कोई अन्तर नही पडता। इससे आगे कुछ कहूँ तो वह राजनीतिकी बात हो जायेगी, और कैदी होनेके नाते हम राजनीतिकी चर्चा नही कर सकते। इसलिए यह बात यही समाप्त करता हूँ। वहाँ मेरे जान-पहचानवाले और कौन-कौन व्यक्ति है, यह लिखना या जिसकी पत्र लिखनेकी पारी आई हो, वह लिख दे? क्या दीवान मास्टर और आश्रमका माधवलाल वहाँ है?

कह सकते है कि हम तीनो जने तो मौज कर रहे है। खाने-पीनेमें जितना अकुश हम स्वयं रखे उतना ही है। और इसी तरह सोना, बैठना, कातना, पीजना सब ठीक-ठीक चल रहा है। पढते तो है ही? अखबार भी ठीक मिल जाते है।

१. यह वाक्य महादेवभाईनी डायरी, भाग-१, पृष्ठ १५६ में प्रकाशित पत्रांशसे उद्धृत किया गया है। वीसापुर-जेलसे गांधीजी को लिखे फूलचन्द बापूजी के पत्रकी १३ पंक्तियाँ अधिकारियोंने काट दी थीं।

पुस्तकें तो रोज ही कोई-न-कोई भेजता रहता है। प्रार्थना नियमपूर्वक चलती है। यही हमारा कार्यक्रम है।

सबको हमारे यथायोग्य।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४४५) से; सौजन्य. चन्द्रकान्त फूलचन्द शाह।

५४१. पत्र : विद्या रा० पटेलको

१६ मई, १९३२

चि० विद्या,

तू अच्छी तरह ध्यान लगाकर कातेगी तो बीस अकका सूत जरूर कात पायेगी।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४२८) से, सौजन्य : रवीन्द्र रावजीभाई पटेल।

५४२. पत्र : विमल किशोर मेहरोत्राको

१६ मई, १९३२

चि० विमल,

अबकी बार तुमारा खत अच्छा है। ऐसा हि लिखा करो। खेलते खेलते सबको हिंदी सीखा दो। महीन कातनेकी कोशीश करो।

बापू

मूलकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४९९) से। सी० डब्ल्यू० ४९७६ से भी; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा।

५४३. एक पत्र

१६ मई, १९३२

भाई,

यज्ञसे माँगना।

आचार्य वह जो अपने सदाचारसे हमें सदाचारी बनावे सच्चा व्यक्तित्व अपनेको शून्यवत् बनानेमें है।

जीवनका रहस्य निष्काम सेवा है। सबसे ऊँचा आदर्श है कि हम वीतराग बनें।

अन्तर्बाह्य नियमोंका निश्चय प्रायः ऋषि-मुनियोंने अपने अनुभवसे किया है।

ऋषि वह जिसने आत्मानुभव किया है। काम्य कर्मके त्यागको 'गीता' सन्यास कहती है।

पुरुष वह जो अपने देहका राजा बना है। सौन्दर्य आतरिक वस्तु होनेसे उसका प्रत्यक्ष दर्शन नही हो सकता।

सब प्रश्नोके उत्तर दिये गये हैं।

बापू

सी० डब्ल्यू० ९१२२ से; सौजन्य : नारणदास गाधी।

५४४. एक पत्र[1]

१७ मई, १९३२

किसी भी उथल-पुथलसे हीन जीवन बहुत ही नीरस चीज बन जायेगी। ऐसी अपेक्षा ही न रखें। इसलिए, जीवनके सारे विक्षोभोको सह लेना ही समझदारी है। यह 'रामायण' से मिलनेवाली बहुमूल्य शिक्षाओमें से एक है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-१, पृष्ठ १५८।

१. प्रश्नकर्ताने गाधीजी से अपने पत्रमें पूछा था क क्या उन्होंने ऐसा कोई व्यक्ति देखा है जो कभी अशान्त न होता हो।

५४५. पत्र : निर्मला बी० मशरूवालाको

१७ मई, १९३२

चि० निर्मला,

तूने पत्र लिखा, यह बहुत अच्छा किया। अब लिखते रहना और किशोरलाल और गोमतीके समाचार देते रहना। क्या तू कभी उनसे मिलने जाती है? लिखना, गोमती इन दिनो खुराकमें क्या-क्या लेती है। वहाँ उसके साथ कौन-कौन हैं? किशोरलालके साथियोकी तो मुझे खबर है। मैंने मजुको तो लिखा है कि उसे अस्पताल नही छोडना चाहिए। यह जवाबदारी उसने स्वेच्छासे ली थी। मेरा ऐसा मत है कि अब यह बिना किसी सबल कारणके नही छोडी जा सकती। नाथजी क्या कहते हैं? तुम सब लोग क्या सोचते हो? हम तीनोकी तबीयत ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २६६१) से, सौजन्य कनुभाई नानाभाई मशरूवाला।

५४६. पत्र : कैदी बहनोंको

१७ मई, १९३२

ईश्वरके दर्शन आँखसे नही होते। ईश्वरका शरीर नही है, इसलिए उसके दर्शन श्रद्धासे ही होते हैं। हमारे दिलमें जब किसी भी तरहके विकारी विचार न हो, किसी भी प्रकारका भय न रहे और नित्य प्रसन्नता रहे, तब यह जाहिर होता है कि हृदयमें भगवान निवास करते हैं। वे तो सदा वहाँ हैं ही, मगर हम उन्हें नही देखते, क्योकि हममें श्रद्धा नही है। और इसलिए हमें कई तरहके सकट उठाने पड़ते हैं। सच्ची श्रद्धा उत्पन्न हो जानेपर बाहरसे लगनेवाले सकट भी ऐसी श्रद्धावालेको सकट नही लगते। ऊपर जो लिखा, वह तारादेवी बाजपेयीपर लागू होता है। प्राणायाम ऐसा और इतना करना चाहिए जिससे शरीरको कही भी कष्ट न हो। हठयोगके प्राणायामका मुझे कुछ भी अनुभव नही है। इसलिए इस मामलेमें मैं उन्हें रास्ता नही दिखा सकता। ऐसे प्राणायामकी जरूरत भी नही है। भगवान शारीरिक क्रियाओसे नही मिलता। भगवानसे मिलनेके लिए भावना चाहिए और इस भावनाके अनुसार आचरण चाहिए। प्राणायाम वगैरह क्रियाओसे शरीरकी शुद्धि होती है और उससे थोडी-बहुत शान्ति मिलती है। इनका इससे ज्यादा उपयोग नही है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ १५७–८।

५४६. पत्र : ई० ई० डॉयलको

[१८][1] मई, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

मेजर भण्डारीने आज मुझे बताया कि उन्हे निर्देश दिया गया है कि यदि मीराबाई (स्लेड) मुझसे मिलना चाहे तो वे उन्हे रोक दे। हुआ ऐसा कि कल आर्थररोड-जेलसे रिहा कर दिये जानेपर वे आज मुझसे मिलने आईं। यदि उन्हे सरकार पहले ही सूचित कर देती कि उन्हे मुझसे मिलनेकी इजाजत नही दी जायेगी तो शिष्टता होती। लेकिन शायद यह एक छोटी-सी बात है। मेरे लिए सबसे अधिक महत्त्वकी बात जो है वह यह कि आश्रमके किसी भी व्यक्तिको अभीतक मुझसे मिलनेकी मनाही नही की गई है, तब केवल एक मीराबाईको ही क्यो रोका जाये। मैं हमेशा ही ऐसा समझता रहा हूँ और आभारी रहा हूँ कि सरकारने अव्यक्तरूपसे न केवल इस तथ्यको स्वीकार किया है कि मीराबाई आश्रमकी अन्तेवासिनी हैं बल्कि आश्रमके किसी भी अन्तेवासीसे, यदि यह सम्भव हो सकता है तो, मेरे कही ज्यादा नजदीक है। मैं यह स्पष्ट कर दूँ कि उन्हे मौजूदा राजनैतिक आन्दोलनमे सक्रिय भाग न लेने और जान-बूझकर जेल न जानेकी कड़ी हिदायत है। उनका काम खादीका रचनात्मक आन्दोलन चलाने और विदेशोमें मित्रोको मौजूदा राजनैतिक घटनाओकी सूचना देनेतक सीमित है। यदि ये काम भी निर्योग्यताएँ है तो शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति बचता है जिससे मैं मिल सकूँ।

इसलिए, यदि मैं मीराबाईसे नही मिल सकता तो मैं नही समझता कि अन्य मिलनेवालोसे मुलाकातकी इजाजतका और लाभ उठाना मेरे लिए कहाँतक उचित होगा। यह कहनेकी जरूरत नही कि मैं मीराबाईसे या किसी भी अन्य मिलनेवालेसे राजनीतिपर चर्चा नही करता। यदि ऐसा करना सम्भव होता तो भी मुझे जेलके अन्दरसे आन्दोलनका सचालन करनेकी रंचमात्र भी इच्छा नही है। सभी मुलाकातें सुपरिंटेंडेंटकी उपस्थितिमे होती हैं। इसलिए यदि सरकारको मेरी या मीराबाईकी भावनाओका जरा भी खयाल है तो मैं आशा करता हूँ कि वह अपने निर्णयपर पुन: विचार करेगी और उन्हे पहलेकी तरह मुझसे मिलनेके लिए आनेकी अनुमति प्रदान करेगी।

१. देखिए अगला शीर्षक। साधन-सूत्रमें पत्रके डाकमें छोड़नेकी तिथि '१९' है; देखिए "दैनन्दिनी, १९३२" में '१९ मई' की प्रविष्टि।

क्या आप कृपया यह पत्र सरकारके सामने रखेंगे और शीघ्र निर्णयका अनुरोध करेंगे?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स: होम डिपार्टमेन्ट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (२), भाग-१, पृष्ठ ९५।

५४८. पत्र : मीराबहनको

१८/१९ मई, १९३२

चि० मीरा,

मुझे एकाएक यह जानकर दुःख हुआ कि तुम मुझसे नहीं मिल सकोगी।[1] मुझे पहला विचार तो यही आया कि अगर मैं तुमसे न मिल सकूँ, तो किसीसे भी कतई न मिलूँ। लेकिन मैंने संयम रखा और दूसरोंसे मिला। मैंने सरकारको लिखा[2] है कि वह अपने निर्णयपर पुनर्विचार करे। मेरा खयाल है कि वह ऐसा न करे तो मुझे और लोगोंसे मिलना बन्द कर ही देना चाहिए। मैंने सरकारसे अपने पत्रमें लग-भग ऐसा कह भी दिया है। उसके पास मनाहीका कोई उचित कारण हो तो दूसरी बात है। मिलनेकी इजाजत मिलनेतक तुम्हें पत्र लिखते रहना चाहिए। आशा है, इस अप्रत्याशित निर्णयका तुम्हारी तबीयतपर खराब असर नहीं हुआ होगा। शेष फिर।

बम्बईकी घटनाएँ[3] हृदयविदारक हैं। ईश्वरेच्छा बलीयसी।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च.]

१९ [मई], [१९३२]

जब मैंने यह पत्र सुपरिन्टेन्डेन्टको दिया, तो उन्होंने मुझसे कहा कि वे तुम्हारा पत्र मेरे पास भिजवा रहे हैं। वह अभी मिला है। इस समय मैं और कुछ नहीं लिखूँगा। असलमें यह आघात-जैसी[4] कोई चीज नहीं है। अपनेको ईश्वरके हवाले

१. मीराबहन अपनी रिहाईके बाद अन्य लोगोंके साथ बापूसे मिलने गई थीं। जेल-अधिकारियोंने दूसरोंको तो बापूसे मिलने दिया, किन्तु मीराबहनको जेलके फाटकके बाहर ही रखा।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. हिन्दू-मुस्लिम दंगे।

४. आशय फाटकके भीतर न आने देनेसे है।

कर देनेके बाद आघातकी गुंजाइश ही कहाँ रह जाती है? इसलिए कष्ट सहनेमे खुशी मानो।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२२२) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९६८८ से भी।

५४९. पत्र : नारणदास गांधीको

१९ मई, १९३२

चि० नारणदास,

मीराबहनको तो भेट करनेकी अनुमति नही मिली। अब मेरे सामने यह प्रश्न है कि मैं मुलाकाते लूँ या नही। मैंने सरकारको पत्र तो लिखा है और इसमे मैंने यह बात लगभग स्पष्ट कर दी है कि यदि इसपर पुनर्विचार न किया गया तो दूसरोसे मिलनेकी बात मेरे लिए गम्भीर प्रश्न बन जायेगी। इसलिए अगर प्रेमाबहन, सुशीला और तुम मिलने आना चाहो तो जल्दी आना। तब शायद मैं मिल सकूँ। इस बीच अगर अस्वीकृतिका पत्र आ गया तो मैं तुम्हे शायद न आनेके लिए तार दूँगा। तुम चाहो तो मगलवारको आ सकते हो।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२२७ से भी; सौजन्य : नारणदास गाधी।

५५०. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१९ मई, १९३२

चि० प्रेमा,

यद्यपि अगले सप्ताह तेरे मिलने आनेकी सम्भावना है, फिर भी पत्रका उत्तर दे देना ही ठीक है। इसके सिवा, कलकी घटना बताती है कि मेरा मिलना हमेशा अनिश्चित ही माना जाना चाहिए।

वाली बहुत अच्छी निकली। ऐसा लगता है कि इसका यश आश्रम नही ले सकता। मालूम होता है, वह ऐसी ही आई थी।

आश्रममे पली हुई लडकियाँ इतनी दुर्बल दीखती है, यह एक पहेली ही है। मैं इसे सुलझा नही सका हूँ। मेरे पास इसके लिए अनुमान है। लेकिन जबतक मैं इसके लिए अच्छा आधार न बता सकूँ, तबतक इसकी चर्चाको मैं निरर्थक

मानता हूँ। हमसे हो सके तो हम कारणकी खोज करे। लेकिन यह याद रखना चाहिए कि ये लडकियाँ बाहर जाकर अच्छी ही हो जाती है, ऐसा नियम नही है।

नारणदासका ध्यान रखनेका अर्थ है कि जब वह शक्तिसे ज्यादा बोझा उठाये' तब उसे सावधान करना और मुझे भी सावधान कर देना। अपने वचनोमें मैंने कही भी व्यामिश्रता नही देखी। अगर हो तो वह अनजाने और भाषापर मेरे बहुत कम अधिकारके कारण हुई होगी। मेरे वचन छोटे होनेके कारण उनमे अध्याहार तो होते ही हैं; लेकिन जैसे भूमितिमे होते हैं, वैसे ही।

जो लडकियाँ अंग्रेजी सीखना चाहती है, उन्होने अगर हिन्दी और संस्कृतपर ध्यान दिया हो और गुजराती अच्छी कर ली हो तो वे जरूर सीखे। सिखानेकी सुविधापर तो यह आधारित है ही। लेकिन वह सुविधा हमारे पास होनी चाहिए।

निश्चेष्ट व्यायामका मेरा अर्थ तू शायद नही समझी। मनुष्य स्वयं करे वह निश्चेष्ट नही कहलाता। यह व्यायाम बीमारके लिए है। मैं बीमार होऊँ, मेरी आँतोको व्यायाम देना हो और कोई उनकी मालिश करे, अथवा मेरे पैरोको कमरसे समकोण बनने-जितना ऊँचा करे, फिर सीधा करे और ऐसा करता रहे और मुझे उन्हे ऊँचा-नीचा करनेकी जरूरत न रहे, तो वह निश्चेष्ट व्यायाम कहलायेगा। तू इसी तरह समझी है, ऐसा नही लगता।

मौन प्रार्थनामे दोनो हेतु थे। मनको आराम देनेका तो था ही। लेकिन उसके बिना मनको अन्तर्मुख करना भी कठिन था। जब भी हम किसी एक कामको छोडकर दूसरा हाथमे ले, हमे ऐसा लगना चाहिए कि हमारे पास पर्याप्त अवकाश है। हममे अधीरता, अशान्ति नही होनी चाहिए। इसीमें से तटस्थता आती है।

मेरे अन्दर एकाग्रता होनी ही चाहिए। लेकिन मुझे सन्तोष दे सके उतनी नही है। उसके लिए मैं प्रयत्नशील हूँ, लेकिन अधीर नही हूँ।

बच्चोको सारी प्रार्थनामे रस न आता हो तो उनके लिए कोई अलग प्रार्थना रखी जा सकती है, जैसा कि प्रभुदासने किया था। बच्चे श्रद्धा और शान्तिसे बैठ सकें तो उसे मैं अच्छा मानूँगा।

१६ वर्षोसे यही प्रार्थना होती रही है, यह स्तुति नही है। यह वस्तुस्थिति है। कहनेका हेतु यह नही है कि इतने वर्षोसे सब लोग प्रार्थनामे आये हैं। बहुत-सी असुविधाओं और आलोचनाओके बीच आश्रम इसी प्रार्थनासे चिपका रहा है और उसमे से बहुतोने शान्तिका अनुभव किया है। बहुत सबल कारणोके बिना उसका त्याग या उसमे परिवर्तन नही किया जा सकता, इतना ही कहनेका हेतु था।

बहनोकी प्रार्थना शामको ठीक नही रहेगी। शामका समय वाचन वगैरहमे भी दिया जाता है।

तूने अपने विषयमे जो लिखा, वह ठीक है। तेरी बुद्धि और तेरे हृदयको जो सच्चा लगे वैसा ही तुझे करना है। मुझे जल्दी नही है। मैं तो, जो मुझे उचित लगता है,

१. देखिए पृष्ठ ३९१-२।

कह देता हूँ। उस चीजको मैं जबरदस्ती तेरे गले नहीं उतार सकता। मैं मित्रकी आवश्यकता ही पूरी कर सकता हूँ। मेरे लम्बे अनुभवोंका बड़े-से-बड़ा दावा हो सकता है। लेकिन उनमें से एकका भी प्रतिबिम्ब तेरे हृदयपर न पड़े, तो मेरे हजारों अनुभव तेरे लिए निरर्थक हैं। आश्रमके बारेमें मेरा एक दावा है। वह आनेवालेको पंख देता है; फिर वह जहाँ चाहे उड़ सकता है। वह स्वेच्छासे रहे तो रह सकता है; न रहे तो भी आश्रमने अपने एक धर्मका पालन किया। ऐसा ही हुआ है, यह बहुतोंके बारेमें सिद्ध किया जा सकता है। स्त्रियोंके बारेमें अधिक किया जा सकता है। ऐसी लड़कियाँ आश्रममें आ चुकी हैं जिनमें जरा भी उमंग, उत्साह नहीं था। आज वे अपनेको स्वतंत्र मानती हैं, और हैं। ऐसी लड़कियाँ गुलबदन, उमिया, विद्यावती, रूखी, इत्यादि हैं। व्यक्ति-प्रेमका मैं हमेशा विरोध नहीं करता। वह विश्वप्रेमका, प्रभुप्रेमका विरोधी नहीं होना चाहिए। बा के प्रति मुझे आज जो प्रेम है वह प्रभुप्रेममें समाया हुआ है। मैं विषयी था तब वह प्रभुके प्रेमका विरोधी था, इसलिए त्याज्य था।

तेरा वजन घटा, इसकी मुझे चिन्ता नहीं है, बशर्ते कि दूसरी तरह तेरा शरीर ठीक हो। सुशीला आ सकती है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२८६) से। सी० डब्ल्यू० ६७३४ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक।

५५१. एक पत्र[1]

१९ मई, १९३२

. . .[2] जो दो विशेष सुविधाएँ भोग रही है, वे उसपर दबाव डालकर नहीं छुड़वाई जा सकती। उसे खुद ही इस बारेमें दिली उत्साह न हो, तबतक ये चीजें नहीं छुड़वाई जा सकती। मेरा उदाहरण लेते हो, वह ठीक भी है और ठीक नहीं भी है। ठीक इसलिए कि जबतक मैं कार्यक्षेत्रमें मौजूद हूँ, तबतक मेरा उदाहरण दिया ही जायेगा और बुद्धि-भेद पैदा होगा ही। क्योंकि कई कारणोंसे जो बरताव मैं औरोंसे चाहता हूँ, वह आजकल अपने जीवनसे प्रत्यक्ष नहीं कर सकता।

१. *महादेवभाईकी डायरी*, भाग-१ में यह पत्र जिसे लिखा गया था, उसका नाम 'एस' दिया हुआ है। प्रश्नकर्त्ताने गांधीजी से पूछा था कि जिन सुविधाओंका आप उपभोग करते हैं, दूसरोंको उनका त्याग करनेकी सलाह कैसे दे सकते हैं; हम किसी बीमार या मरणासन्न व्यक्तिको देखकर दुखी क्यों होते हैं; यदि वह बच जाता है तो हम ईश्वरको धन्यवाद क्यों देते हैं; जब मणिलाल ठीक हो गये थे तो आपने ईश्वरका आभार क्यों माना था। मानव-जीवनकी आयु-सीमा क्या है, आदि-आदि।

२. साधन-सूत्रके अनुसार नाम छोड़ दिया गया है।

मै जानता हूँ कि मेरे नेतृत्वमे इतनी खामी है। मेरा उदाहरण देना इसलिए ठीक नही है कि मेरी स्थिति दूसरे साथियोसे भिन्न हो गई है। उसका एक कारण मेरी शारीरिक कमजोरी, दूसरा कारण महात्माका पद और तीसरा कारण मेरी विशेष परिस्थिति है। मै 'सी' श्रेणीमे होऊँ, तो भी मेरी खुराक दूसरी ही होगी। उसका कारण मेरा शरीर और मेरा व्रत है। यह बात कुछ हदतक हर कैदीपर लागू होती है। यह अलग सवाल है कि जितनी जल्दी खुराककी सुविधाएँ मुझे मिल जाती है, उतनी दूसरोको नही मिल सकती। मै हर तीसरे महीनेके बजाय हर हफ्ते मुलाकाते करता हूँ और पत्र लिखनेकी तो लग-भग कोई भी मर्यादा नही है। इस बारेमे मैने अपने मनको यो समझा लिया है कि मेरा कोई निजी मित्र नही है और सगे-सम्बन्धियोसे मै उन्हे सगा मानकर मिलता नही। मै मिलता हूँ तो उससे नैतिक काम निकलता है। मै लिखता हूँ तो उसका भी उद्देश्य यही है। भीतर-ही-भीतर इसमे कोई भोग होगा तो वह मै जानता नही। होनेकी सम्भावना कम ही है, क्योकि पत्र लिखना या मिलना बन्द हो जाये तो मुझे आघात नही पहुँचेगा। सन् १९३० मे मेरी शर्त मंजूर नही हुई, तो मैने मिलना बन्द कर दिया था।[1] सन् १९२२ में पत्र लिखना बन्द कर दिया था।[2] इसके सिवा मुझे जो अलग रखा जाता है, वह भी एक कारण है। इस कारण यदि मुझसे तुलना की जाये तो ठीक नही होगा। मगर जिसे यह बात स्वयसिद्ध न लगती हो, उसे दलील देकर समझाना मै ठीक नही समझता। जिसे बाहरसे बन्दोबस्त होनेके कारण 'ए' श्रेणी मिली हो और जिसे अपने आप 'ए' श्रेणी मिली हो, उन दोनोके बीच थोडा फर्क तो जरूर है। लेकिन वह भेद करनेमे कोई सार नही है। आदर्श तो बेशक यही है कि श्रेणियाँ होनी ही नही चाहिए; और जिनका वर्गीकरण किया गया हो, उन्हे ऊँचे कहलानेवाले वर्गको छोड देना चाहिए। इस आदर्शकी रक्षा जब अभी बहुत ही कम लोग करते है, तब . . .[3] -जैसी लड़कीपर जरा भी जोर डालनेकी इच्छा नही होती। वह बहुत विचारवान है। अपने-आप जितना सयम रखनेकी उसकी शक्ति होगी, उतना वह जरूर रखती ही होगी।

मणिलालके लिए मैने प्रार्थना की, वह ज्ञानसूचक नही थी, मगर पिताके प्रेमकी सूचक थी। प्रार्थना तो एक यही शोभा देती है – 'ईश्वरको जो ठीक लगे सो करे।' यह प्रश्न उठ सकता है कि ऐसी प्रार्थना करनेका अर्थ क्या? इसका जवाब यह है कि प्रार्थनाका स्थूल अर्थ नही करना चाहिए। हमारे हृदयमें बसनेवाले ईश्वरकी हस्ती के बारेमे हम जाग्रत है और मोहसे छूटनेके लिए घडी-भर ईश्वरको अपनेसे अलग समझकर उससे प्रार्थना करते है यानी, मन हमें जहाँ खीच ले जाता है, वहाँ हम जाना नही चाहते। मगर ईश्वर हमसे भिन्न हो, तो हमारा स्वामी होनेके कारण वह हमें जहाँ खीचकर ले जायेगा, वही हमे जाना है। हम नही जानते कि जीनेमें

१. देखिए खण्ड ४३, पृष्ठ ४५५ और ४५७।

२. देखिए खण्ड २३, पृष्ठ १४८।

३. साधन-सूत्रके अनुसार नाम छोड दिया गया है।

भला है या मरनेमे। इसलिए न तो जीकर खुश हो और न मरनेसे डरे। यह समझकर कि दोनो एक-से हैं, हम तटस्थ रहे। यह आदर्श है। वहाँतक पहुँचनेमे देर लगती है, शायद ही कोई पहुँच सकता है। इसलिए हम आदर्शको कभी न छोडे और ज्यो-ज्यो उसकी कठिनाई हमे महसूस होती जाये, त्यो-त्यो हम अपना प्रयत्न बढाते जाये।

पूर्णायु १०० वर्षसे भी ज्यादा हो सकती है। मगर कितने ही वर्ष हो तो भी काल-चक्र अनन्त है और उसमे मनुष्यके एक आयुष्यकी गिनती एक बिन्दुका करोडवाँ भाग भी नही है। इसके लिए मोह क्या या हिसाब क्या? और हम हिसाब लगाये भी तो वह किसी भी तरह निश्चयात्मक नही हो सकता। अनुमानसे इतना कहा जा सकता है कि ज्यादा-से-ज्यादा उम्र कितनी हो। वैसे तो हम तन्दुरुस्त बच्चोको भी मरते देखते हैं। यह भी नही कहा जा सकता कि विषयी दीर्घायु नही हो सकता। अधिक-से-अधिक यह कह सकते हैं कि जिनका जीवन शुरूसे ही सादा होगा और विषय-रहित होगा, वे ज्यादातर दीर्घजीवी होगे। मगर जो आदमी सिर्फ दीर्घजीवी बननेके लिए ही विषयोपर काबू करता है, उसके लिए यही कहा जायेगा कि उसने चूहेके लिए पहाड खोदनेका काम किया। विषयोको हमे जीतना है आत्माको पहचाननेके लिए। विषयोको जीतनेकी कोशिशमे शरीर ज्यादा दिन रहनेके बजाय थोडे दिन रहे, तो वैसा होने देना चाहिए। शरीरका नीरोगी या दीर्घायु होना विषय-रहित होनेका छोटे-से-छोटा परिणाम है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १६२–४।

५५२. पत्र : बबलभाई मेहताको

२० मई, १९३२

चि० बबलभाई,

पूर्वजोको खुश रखनेके लिए ऐसा काम जिसमे अनीति न हो, करनेमे शोभा है। ऊँचे स्वरमे सामुदायिक प्रार्थना करना धर्म नही है। इसलिए इस बातपर सत्याग्रह नही किया जा सकता। जेलमे अँगुलियोकी छाप देनेमे मानभगकी कोई बात नही है। छाप लेनेका भागने न भागनेकी बातसे कोई सम्बन्ध नही है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४५२) से। सी० डब्ल्यू० ९११५ से भी; सौजन्य : नारणदास गाधी।

५५३. एक पत्र

२० मई, १९३२

तुम्हारे कार्यका कोई तात्कालिक परिणाम भले ही न दिखाई दे, उससे तनिक भी निराश नही होना चाहिए। शुभ हेतुसे, निःस्वार्थ भावसे तथा ईश्वरार्पणकी इच्छासे की गई सेवा कभी निष्फल नही होती। इतना विश्वास रखकर हमे एकाग्र चित्तसे हाथमे लिये गये काममे जुटे रहना चाहिए। ऐसी घटनाएँ भी हम जानते है जहाँ कई बार मनुष्योने अपना सारा जीवन शुभ कार्योमे लगा दिया है और उस कामका परिणाम बादमे ही दिखाई दिया है। उत्कल-जैसे हताश, गरीब प्रदेशमे, जहाँ कई लोग सेवाके बहाने आकर उसे लूट गये हो, हम-जैसे चार-छ · वर्ष काम करे और कोई परिणाम न दिखाई दे, तो इसमे कोई विचित्रता नही माननी चाहिए। इतने कम समयमे कुछ परिणाम दिखाई दे जाये तो उसे आश्चर्यकी बात माननी चाहिए। किन्तु तुम तो कुछ-न-कुछ परिणाम भी देख पा रहे हो। तुम्हारा सेवा-क्षेत्र वही है, आत्म-दर्शनका स्थान भी वही है, यह समझकर तुम और तुम्हारे साथी जुटे रहना। तुम सबके स्वास्थ्यके बारेमे खबर अच्छी है, इससे प्रसन्नता होती है। जैसे-जैसे वहाँकी जलवायु अनुकूल पडेगी और मन प्रफुल्लित रहने लगेगा, वैसे-वैसे उसका शुभ प्रभाव शरीरपर भी होगा।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९११६)से; सौजन्य : नारणदास गाधी।

५५४. एक पत्र

२० मई, १९३२

इधर-उधरका विचार न करके सिर्फ जीवमात्रके कल्याणका ही विचार करना। ज्यो-ज्यो इस विषयमे ज्यादा चिन्तन करोगे त्यो-त्यो शान्ति बढती जायेगी।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९११३)से, सौजन्य · नारणदास गाधी।

५५५. पत्र : जमनाबहन गांधीको

२० मई, १९३२

चि० जमना,

कुसुमकी वुद्धि अभी भी वच्चोकी-सी है। कई वार वच्चे अनुभवकी ठोकर लगनेपर ही सीखते है। यदि वह अभी राणावाव जाकर आराम करे तो ठीक हो जायेगी।

तुम्हारा स्वास्थ्य न सुधरे तो तुम्हे भी वाहर हो आना चाहिए।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८५४)से। सौजन्य : नारणदास गाधी।

५५६. पत्र : पुष्पा शं० पटेलको

२० मई, १९३२

चि० पुष्पा,

तेरे अक्षर अव सुधरने लगे है। नन्हे वच्चोको प्रार्थनासे सीधे विस्तरपर जाना चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९८९)से। (सी० डब्ल्यू० ३५)से भी; सौजन्य : पुष्पा ना० नायक।

५५७. पत्र : प्रभुदास गांधीको

२० मई, १९३२

तेरे चरखेमे मै जो रस ले रहा हूँ वह तू अपनी आँखो देख ले, तो तुझे इतना आनन्द हो कि तेरा खून एक-दो सेर तुरन्त बढ जाये। हाथको जब कुछ भी नही हुआ था, तभी तेरे चरखेका प्रयोग करनेका सकल्प कर चुका था। अब तो जबर्दस्तीका पुण्य करना पड रहा है। या तो कातना छूटे या इसी चरखेपर कते। इसलिए जैसे आफतमे फँसनेपर मनुष्यको नई बाते सूझा करती है वैसे ही इस वक्त आफतमे फँसनेके कारण मै चरखेपर पाई हुई गति बढानेकी युक्तियाँ खोजा करूँगा। इस बीच तू छूट जाये और उस वक्त मै मुलाकाते करता होऊँ, तो मुझसे मिल जाना और कुछ नई बात हो तो सिखा जाना।

"मत्पर." यानी सत्यपरायण। "चरणपद्मे मम चित्त निष्पदित करो हे", इसमे चरणपद्मका अर्थ है सत्यनारायणका चरणकमल—यह शब्द इस्तेमाल करके भक्तने सत्यको मूर्त्तिमान बना दिया है।[1] सत्य तो अमूर्त है। इसलिए सब लोग अपनेको ठीक लगे, वैसी सत्यकी मूर्तिकी कल्पना कर ले। यह समझ लेनेके बाद असंख्य मनुष्य असख्य मूर्तियोकी कल्पना कर सकते है। जबतक ये सब कल्पनाएँ ही रहेगी, तबतक सच्ची ही है, क्योकि इस मूर्तिसे मनुष्यको अपने लिए जो-कुछ चाहिए, सो मिल जाता है। असलमें तो विष्णु, महेश्वर, ब्रह्मा, भगवान, ईश्वर— ये सब नाम बिना अर्थके या अधूरे अर्थवाले है। सत्य ही पूरे अर्थवाला नाम है। कोई यह कहे कि मै भगवानके लिए मरूँगा, तो इसका अर्थ वह खुद नही समझा सकता और सुननेवाला भी शायद ही समझेगा। मै सत्यके लिए मरूँगा, यह कहनेवाला खुद समझता है और बहुत-कुछ सुननेवाला भी समझ सकेगा। तू यह पूछता है कि रामका अर्थ क्या? इसका अर्थ मै समझाऊँ और उसका तू जाप करे, यह लगभग निरर्थक है। मगर तू जिसे भजना चाहता है वह राम है, यह समझकर रामनाम जपेगा तभी वह तेरे लिए कामधेनु हो सकता है। ऐसे सकल्पके साथ तू जप, फिर भले ही तोतेकी तरह ही रटता हो। तेरे जपके पीछे सकल्प है, तोतेके पीछे सकल्प नही है। यह बडा फर्क है, यहाँतक कि सकल्पके कारण तू तर सकता है। तोता सकल्प-रहित होनेके कारण थककर अपनी रटन छोड देगा या मालिकके लिए करता होगा तो अपना रोजका खाना-पीना लेकर चुप हो जायेगा। इस दृष्टिसे तुझे किसी प्रतीककी जरूरत नही और इसीलिए तुलसीदासने रामसे रामके नामकी महिमा ज्यादा बताई है। यानी, यह बताया कि रामका अर्थके साथ

१. प्रभुदासने पूछा था कि गीतामें 'मामेकं शरणं व्रज' आता है, 'मत्पर:' आता है, उसमें 'मत्पर:' का क्या अर्थ है? और आप ईश्वरका अर्थ सत्य बताते हैं, तो मनुष्य सत्यका प्रतीक क्या बनाये? रामनाम जपे, मगर राम कौन?

कोई सम्बन्ध नही। अर्थ तो भक्त अपनी भक्तिके अनुसार बादमे पैदा कर लेगा। यही तो इस तरहके जपकी खूबी है। नही तो यह कहना साबित ही नही हो सकता कि जड़-से-जड मनुष्यमें भी चेतनता आ सकती है। शर्त एक ही है कि नामका जप किसीको दिखानेके लिए न हो, किसीको धोखा देनेके लिए न हो। मैंने बताया, उस ढगसे संकल्प और श्रद्धाके साथ जपना चाहिए। इसमे मुझे कोई शका नही कि इस तरह जपते हुए जो आदमी थकता नही, उस आदमीके लिए वह कल्पतरु हो जाता है। जिन्हे धीरज है वे सब अपने लिए इसे सिद्ध कर सकते है। पहले-पहल किसीका दिनो और किसीका वर्षोतक इस जपके समय मन भटका करेगा, बेचैन रहेगा, और नीद आयेगी और इससे भी ज्यादा दु:खद परिणाम आयेगा। तो भी जो आदमी जपता ही रहेगा, उसे यह जप जरूर फल देगा — इसमे सन्देह नही है। चरखे-जैसी स्थूल वस्तु भी हमें तग किये बिना हाथ नही आती; इससे मुश्किल दूसरी चीजे इससे भी ज्यादा कष्टके बाद सिद्ध होती हैं। तब फिर जो उत्तम वस्तुको पाना चाहता है, वह दी हुई दवाका लम्बे अर्सेतक धीरजके साथ सेवन न करे और निराश होकर बैठा रहे, उसके लिए क्या कहा जाये। मेरा खयाल है कि इतनेमे तेरे सब सवालोका जवाब आ जाता है। क्योकि इस तरह लिखनेके बाद तेरे लिए पूछनेको कुछ भी नही रह जाता। श्रद्धा दृढ हो जाये तो चलते-फिरते, खाते-पीते, सोते-उठते यही रटना लगा और हारनेका नाम न ले। भले ही सारा जन्म इसीमे बीत जाये। यह करता रह और इस बारेमे जरा भी शका न कर कि तुझे दिन-दिन अधिक शान्ति मिलेगी।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ १६४–६।

५५८. पत्र: छगनलाल गांधीको

२० मई, १९३२

चि० छगनलाल,

इसके साथ प्रभुदासका एक पत्र रख रहा हूँ। उसकी आध्यात्मिक शकाओंके समाधान उत्तरमें[1] लिख दिये हैं। अल्मोड़ाकी जमीनके बारेमे लिखा है कि परिस्थिति ऐसी नही है कि इस समय कोई जिम्मेदार आदमी वहाँ रह सके। पंतजी[2] भी नही है; इसलिए जमीन खरीदनेका खयाल छोड़ दिया गया है। मगनचक्र चला रहा हूँ और लगभग चार दिनोसे उसपर हाथ जम भी गया है। इस विषयमे प्रभुदासको विस्तारसे लिखा है। इससे उसे खुशी होगी। यह भी लिखा है कि छूटनेपर, अगर

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. गोविन्दवल्लभ पंत।

मैं मुलाकातें लेता होऊँ, वह आकर मिल जाये। देवीदत्तकी वहन लक्ष्मीके वारेमें लिखा है कि जो उचित होगा, करूँगा। शेष सभी वातोंका जवाव तुम्हें देना है। उसकी तवीयत अच्छी है और फिलहाल किसी तरहकी तकलीफ है, ऐसा तो नहीं लगता। चौमासा जव डटकर बैठ जायेगा, लगता है, तव वह जगह वदलना चाहेगा। उसका पत्र अधिकारियोंने कई जगह काट दिया है, उस कटे-छँटेपरसे यह मेरा अनुमान ही है। किन्तु वदलीकी माँग नहीं की जा सकती। यहाँसे तो वह नहीं ही की जायेगी। डॉ० तलवलकरको ठीक लगे और वे चाहें तो ऐसा सुझाव रख सकते हैं। प्रभुदासको भय है, वह भय मुझे नहीं है, किन्तु कुछ कहा नहीं जा सकता। रोगी जव खुद भयभीत हो तो यह भयभीत रहना ही भयको उपस्थित कर देता है।

खुशालभाईके वारेमें मिले हुए पत्रोंसे मेरा अनुमान है कि कुछ समयके लिए उन्हें नया जन्म मिल गया है। हम तीनों सकुशल हैं।

वापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० जी० ३७) से।

५५९. पत्र : दूधीबहन वा० देसाईको

२१ मई, १९३२

चि० दूधीवहन,

मावो[1] अवतक विलकुल अच्छा हो चुका होगा। वालजीको मेरी तरफसे लिखो कि वह जो खुराक आवश्यक है, माँगे। कदापि नहीं मिलेगी, ऐसा तो नहीं है। बीमारीके कारणसे 'सी' श्रेणीके लोगोंको भी दूध आदि मिलता है। नानूको[2] पढ़नेके वारेमें लिख रहा हूँ।

तुम्हें गंगादेवीकी सेवाका अवसर मिला, यह अच्छा हुआ। यह वहन तो मरकर अमर हो गई।

मुझे पत्र लिखती रहना।

वापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४३१) से, सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई।

१. व २. सुदर्शन देसाई और विमलचन्द्र देसाई, दोनों दूधीवहनके पुत्र।

५६०. पत्र : रैहाना तैयबजीको

२१ मई, १९३२

चि० रैहाना,

तुम्हारा खत मिला, तहमीना बहनको[1] हम सबकी तरफसे हमदर्दी भेजो। जनम के साथ मरन खुदाने रखा है। इसलिए हम एकसे खुश न हो और दूसरेसे नाखुश न हो। सबके दो बाजू, माने, दोनो एक ही चीज हैं। जानके मोहमें हम मौतको अलग व बुरा मानते हैं। हसरतकी गजल दो बार पढ़ चुका। अच्छी तरह समझनेके लिए और पढूँगा।[2]

आज इतने सवकसे सन्तोष मान लेना। सरकडेकी कलमसे लिखा है और अक्षर ठीक करनेके विचारसे धीरे-धीरे लिखा है; इसलिए देर लगती है। तेरे सवालका जवाब रह ही गया; उसके लिए माफ करना। मुझे कुछ ऐसा खयाल था कि मैं जवाब दे चुका हूँ। इसमें शक नही कि तेरा धर्म अम्माजानके पास रहना ही है। यह तेरी साधना है, तेरी सेवा है। इसलिए तूने जो बात पसन्द की, वह मुझे पसन्द आई। तू उससे सदा प्रसन्न रहना। तुम सबको आबूकी हवासे फायदा हुआ होगा। अब्बाजान नाचते है या नही? वहाँ तो फिरसे जवान हो गये होंगे। बम्बईके पागलपनके बाद हमने नाच-गान भुला दिया है। मैं समझ ही नही पाता कि आदमी इन्सानियत रखकर धर्मके नामपर लड़ कैसे सकता है। किन्तु मैं मनको और कलमको रोकता हूँ। अभी तो जहरका प्याला पी रहा हूँ।

किताब, जब बडौदा जाओ, तब भेजना।

अब्बाजान और अम्माजानको हम सबके खूब-खूब सलाम और वन्देमातरम्।

हमीदाके छूटनेका वक्त कब आ रहा है?

बापूके आशीर्वाद और तमाम दुआए

[पुनश्च:]

सुना है, शनिवारको हमीदा छूट गई। क्या यह खबर ठीक है? अगर ठीक है तो वह मुझे सब हाल लिखे।[3]

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६४४) से।

१. तहमीना खम्भाता।

२. यहाँतक पत्र उर्दूमें है।

३. पत्रका पुन· लिखा अंश भी उर्दूमें है, यह २३ मई को लिखा गया था; देखिए "दैनन्दिनी, १९३२", में '२३ मई' की प्रविष्टि।

५६१. पत्र : विमलचन्द्र वा० देसाईको

२१ मई, १९३२

चि० नानु,

इस बार तेरा पत्र नही आया। तू अब मन लगाकर पढना कब शुरू करेगा। बच्चे तो जैसे खेलते है उसी तरह पढते भी है। हमारे यहाँ जेलमे तो बिल्लीके बच्चे भी पढ़ते है। उनकी माँ उन्हे पढ़ाती है। सो कैसे, यह तो मैंने किसी दूसरे पत्रमे[1] लिखा है, उसे सुन लेना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५७५६) से; सौजन्य वालजी गोविन्दजी देसाई।

५६२. बिल्ली – एक शिक्षिका[2]

२२ मई, १९३२

यहाँकी बिल्लीके सफाई-पसन्द[3] होनेके बारेमे तो मैं लिख चुका हूँ। उसको और उसके बच्चोको देखकर मुझे ऐसा दिखाई देता है कि बिल्ली आदर्श शिक्षिका है। बिल्लीके बच्चोंको जो-कुछ सीखना चाहिए, वह यह माता बिना किसी परेशानीके और बिना मुँहसे एक शब्द बोले सिखा देती है। तरीका निहायत आसान है। वह जो सिखाना चाहती है, उसे खुद उनके सामने करके दिखाती है। बच्चे भी वैसा करने लगते हैं। इस तरह वे दौडना, पेडपर चढना, सभलकर उतरना, शिकार करना, अपने शरीरको चाटकर साफ कर लेना सीख गये। माँ जितना जानती है, उतना बच्चे देखते-देखते सीख गये हैं।

माँ बच्चोको अक्सर बेकार भटकनेके लिए नही छोडती। उसका प्रेम मनुष्यके प्रेम-जैसा ही दिखाई देता है। वह बच्चोको बगलमे लेकर सोती है। जब वे दूध पीना चाहते है, तब खुद लेट जाती है और उन्हे दूध पीने देती है। कोई शिकार

१. देखिए अगला शीर्षक।

२. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", १९/२३-५-१९३२ के साथ भेजा गया था। देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", १९/२३-५-१९३२।

३. देखिए "सफाई, सच्चाई, पवित्रता, स्वच्छता", पृष्ठ ४००-१।

किया हो तो उसे बच्चोके पास ले आती है। वल्लभभाई रोज इनको दूध पिलाते है। छोटो-सी रकाबीमे तीनो दूध पीते हैं। अक्सर माँ देखा करती है, पर खुद उसमे से हिस्सा नही बटाती। वह बच्चोके साथ बच्चोकी तरह क्रीडा करती है, कुश्ती लडती है।

इससे मैंने यह सार निकाला कि हम बच्चोको शिक्षा देना चाहते हैं तो जो बात उनसे कराना चाहते हो, वह खुद करनी चाहिए। बच्चोमे अनुकरणकी भारी शक्ति होती है। मुँहसे कहा हुआ वे कम समझेगे। हम उन्हे सत्य सिखाना चाहते हो तो खुद हमे बहुत सावधानीसे सत्यका पालन करना चाहिए। अपरिग्रह सिखाना हो तो हमे परिग्रह त्याग देना होगा। जो बात नीतिके विषयमे है, वह शारीरिक कार्योके विषयमे भी है।

इस रीतिसे विचार करते हुए हम जल्दी ही यह देख सकते है कि आज जिस रीतिसे शिक्षा दी जाती है, उसमे पैसे और समयके व्ययके परिमाणमे फल नगण्य मिलता है। फिर हम यह भी देख सकते हैं कि बडी उम्रके सभी व्यक्तियोका स्थान शिक्षकका है। हम अपने इस स्थानके साथ न्याय नही करते। हम अपने इस कर्त्तव्य पर उचित ध्यान नही देते और इससे शिक्षा सरल न रहकर, एक टेढी चीज बन गई है।

बिल्ली आदि पशुओमे बुद्धि नही है या कहिए, मनुष्य-जैसी बुद्धि नही है। तब वे जो करते हैं, उससे हमे तो बहुत आगे जाना चाहिए, पर इसके लिए पहले, भावी सन्तानकी नीतिके रक्षक होनेके नाते, हमे खुद उसका पालन करना होगा। जिस बातको हम चाहते हो कि आनेवाली सन्तान सीखे, उसे खुद भी यथाशक्ति सीखना चाहिए।

आश्रममे जो लोग शिक्षक और शिक्षिका है, वे इस दृष्टिसे विचार करने लगे और जहाँ अमल करना उचित हो वहाँ करने लगे, इसी उद्देश्यसे यह लेख लिखा है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से।

५६३. पत्र : एस्थर मेननको

२२ मई, १९३२

रानी बिटिया,

तुम जो-कुछ कर रही हो, मैं वह सब समझता हूँ। केवल, तुम्हे व्यर्थकी चिन्तामे पडनेसे बचना चाहिए। यदि हम अपने आपको उसकी इच्छाका निमित्त-मात्र बना ले तो चिन्ताके क्षण हमारे पास फटके ही नही।

हाँ, यह ठीक है कि बिना झझावातके निस्तरगता और अशान्तिके बिना शान्ति प्राप्त नही होती। शान्तिमे अशान्ति अन्तर्निहित है। अशान्ति न हो तो शान्ति क्या चीज है, यह हम जान ही न सके। जीवन इस अशान्तिके विरुद्ध एक शाश्वत सघर्ष है, चाहे वह अशान्ति भीतरकी हो या बाहरकी। अशान्तिके बीच शान्ति महसूस करनेकी जरूरत इसीलिए है।

इस बार पूनामें गर्मी रही है। वैसे, सामान्यत. पूनामे कभी इतनी गर्मी नही होती। लेकिन अब बरसात होने लगी है और हमे सुन्दर सूर्यास्त तथा चिडियोके मीठे सगीतका आनन्द मिल रहा है।

क्या तुम उस मरीजके[1] पास फिर गई थी?

मैंने तुम्हे बताया था कि महादेव मेरे साथ है। वह नित्य पाँच घटे कातता और पीजता है। अब वह बहुत बारीक सूत कातता है। अपने हाथोकी कमजोरीके कारण मैं ज्यादा कताई नही कर पाता। आशा है कि तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक चल रहा होगा।

हम सबकी ओरसे प्यार और बच्चोको चुम्बन।

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (स. ११०)से; सौजन्य : भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार। **माई डियर चाइल्ड**, पृष्ठ ९० से भी।

१. एक अपाहिज लड़की; देखिए "पत्र : एस्थर मेननको", २१-१-१९३२।

५६४. पत्र : नान और टाँगाई मेननको[1]

२२ मई, १९३२

प्रिय नान और टागाई,

मुझे तुम्हारा मधुर पत्र मिला।

देखता हूँ कि तुम चिड़ियोसे दोस्ती जमा रहे हो। हमने एक बिल्ली और उसके बच्चोसे दोस्ती जमाई है। मैं उसे बहन कहता हूँ। उसका अपने बच्चोके प्रति प्रेम देखकर आनन्द होता है। वह उनको सारी बाते खुद करके सिखाती है।

ईश्वर तुम्हे खुश रखे।

चुम्बनो सहित,

बापू

[अंग्रेजीसे]

माई डियर चाइल्ड, पृष्ठ ११७।

५६५. पत्र : प्रफुल्लचन्द्र रायको[2]

२२ मई, १९३२

आप जो काम कर रहे हैं, वह कठिन है। मगर हमारे यहाँके लोगोकी मदद करनेका उपाय यही है। सबको राहत पहुँचानेके लिए चरखे-जैसी और कोई चीज नही है।

जबतक आप सेवाकी दौडमे जवानोको भी हरा देते है, कठिनाईकी घडियोमे भी कमरेको अपनी हँसीसे गुजा देते हैं, और जब नवयुवक निराश होने लगते है तब उनमे आशाका सचार कर देते हैं, तबतक आपका बुढापा आनेकी बात करना कोई अर्थ नही रखता।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ १६९-७०।

१. एस्थर मेननके बच्चे।

२. वैज्ञानिक एव शिक्षाशास्त्री डॉ० प्रफुल्लचन्द्र राय, जो आचार्य रायके नामसे प्रख्यात थे। देखिए "श्रद्धाञ्जलि: प्रफुल्लचन्द्र रायको", २४-५-१९३२ भी।

५६६. पत्र : अरुणदास गुप्तको[1]

२२ मई, १९३२

माँ[2] कहती है कि तू बीमार है और फिर भी पढने और काम करनेका हठ करता है। क्या तू आराम लेकर शरीरको पुन स्वस्थ होनेका मौका नही देगा? वैसे तो मरना और जीना एक ही सिक्केके दो पहलू है और हम जितने आनन्दसे जीते है, उतने ही आनन्दसे हमे मरना चाहिए, फिर भी जबतक जीवन है तबतक शरीरको उसका प्राप्य हमे देना ही चाहिए। यह तो हमारे लिए ईश्वरकी दी हुई धरोहर है और हमे इसकी उचित देखभाल करनी चाहिए। तू लिख सके तो मुझे लिखना। भगवान तुझे सुखी रखे।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ १६८।

५६७. पत्र : कुसुम देसाईको

२२ मई, १९३२

चि० कुसुम (बडी),

प्यारेलालके सवालका जवाब मैंने दिया था, वह तूने उसे पहुँचा दिया था? प्यारेलालको मेरी तरफसे कुछ मिला है, ऐसा नही दीखता।

तेरे नाम लिखे पत्र[3] छपवाने ही चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८३८)से।

१. सतीशचन्द्र दासगुप्तका पुत्र।

२. हेमप्रभा देवी।

३. कुसुमबहनके नाम उनके पतिके पत्र।

५६८. एक पत्र

२२ मई, १९३२

चि०,

मोहके प्रेरक हम है। हममे दो शक्तियाँ वास करती है–दैवी और आसुरी, पाण्डव और कौरव। आसुरी शक्ति मोहको जन्म देती है। मिट्टीके महादेवमे मन लगानेके बदले सच्चे महादेवमे क्यो न लगाये? अथवा मिट्टीसे चेतनकी ओर बढे। पेडके तनेको पकडे रहे तो डाल भी उसीमे आ जाती है। डालको पकडनेपर डालके साथ हम भी टूटते हैं। अपने सम्बन्धियोको याद करना पाप नही है। किन्तु हमे अपने सम्बन्धियोकी व्याख्यामे पराये लोगोका समावेश भी करना है। अपने-परायेका भेद करते हुए हम अनेक दु:ख मोल लेते है। दोनो एक ही है, यह जान ले तो वियोग या मृत्युका दु:ख नही रहता। इसे भारी या कठिन ज्ञान मानकर डरना नही। यह बात समझमे आने लायक है। इससे प्रेम कम नही होता, बल्कि और बढता है। अच्छी तरहसे देखे तो हम जाने-अनजाने अपने 'स्व'का विस्तार करते ही जाते है। यदि इस अमूल्य नियमको अच्छी तरह समझ ले तो इसके बहुत बडे परिणाम होते है।

यह सब लिखा है, इसमे से जो समझ आये उतना लेकर बाकी छोड देना। जो नियम भोजनपर लागू होता है, वही यहाँ भी लागू होता है।

आशा करता हूँ, जलवायु-परिवर्तनसे लाभ होगा।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९११७)से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

५६९. पत्र: शारदाबहन चि० शाहको

२२ मई, १९३२

चि० शारदा,

पाँच मिनटके मौनका भी बहुत अर्थ होता है। उससे आराम भी मिलता है। यदि आश्रमकी बिल्ली यहाँ-वहाँ गन्दा करती फिरती है तो समझना चाहिए कि उसने हमसे बुरी आदत ले ली है। यहाँकी बिल्लीपर किसी मनुष्यका कुप्रभाव नही है।[1]

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९४७)से; सौजन्य: शारदाबहन गो० चोखावाला।

१. देखिए पृष्ठ ४००-१ और ४४९-५०।

५७०. पत्र : नारणदास गांधीको

१९/२३ मई, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारी डाक बुधवारको सवेरे मिली। यदि हरिलालपर मेरे द्वारा कोई अन्याय होता लगे तो लिखना। हरिलालके नाम मेरा पत्र[1] पढकर तुमने क्या सोचा, इस विषयमे कुछ नही लिखा, इसलिए मैंने यह लिखा है। मेरी तीन शर्तोको मानकर जितना कर सकते हो करो। मेरी ओरसे उसमे कोई आपत्ति नही होगी।

पाँच मिनटके मौनका कोई विशेष परिणाम देखनेमे आया हो तो लिखना।

लेडी विट्ठलदास, मैथ्यू और मणिबहन मुझसे मिलकर गई। मीराबहनको तो मनाही हो गई है। उसे इससे बडा आघात लगा है। मुझे लगता है कि यदि मीरा बहनके लिए द्वार न खोले जाये तो मुझे किसी दूसरेसे भी मिलना नही चाहिए। मैंने (लगभग) इस अभिप्रायका पत्र[2] भी सरकारको लिख दिया है। इसलिए कदाचित अब लोगोसे मिलनेके लिए अगला एक हफ्ता ही बच गया। यह भी निश्चयपूर्वक तो नही कहा जा सकता, क्योकि यदि बीचमें ही अस्वीकृति-सूचक जवाब आ जाये तो मिलना तभीसे बन्द कर दिया जायेगा। इसलिए मैं एक पोस्टकार्ड तुम्हे लिख देना चाहता हूँ। समयसे मिले तो रविवारतक वह तुम्हे मिल जाना चाहिए और यदि न मिले तथा मेरी तरफसे न आनेका तार भी न पहुँचे तो तुम जल्दी आकर मिल जाओ। यह कदाचित ठीक रहेगा। किन्तु तुम्हे मिलनेकी आवश्यकता महसूस हो, तो। यह बात प्रेमाबहन और सुशीलापर भी लागू होती है।

मजदूरोका तम्बाकू छुडवाना कठिन काम है, हो सके तो बहुत अच्छा है। यदि मजबूरीके डरसे या किसी और जरूरतको सोचकर वे इसे स्वीकार कर ले और फिर पीते रहे तो यह बहुत बुरी बात होगी। कोई तम्बाकू पीता हो और दूसरी बातोमे भला हो तो वह उस बुरे आदमीसे अच्छा है जो तम्बाकू नही पीता। तम्बाकू पीनेवाले आदमी और तम्बाकू न पीनेवाले बुरे आदमीमे पहला दूसरेसे बहुत अच्छा है; इसलिए बाह्याचारका ध्यान रखनेके साथ-साथ मजदूरोके अन्तराचारका विचार भी यथासम्भव करना।

धीरू और कुसुम राणवाव गये, यह बहुत अच्छा हुआ। अब उन्हे वहाँसे बहुत जल्दी मत लौटने देना। जो आश्रम-जीवनको समझ गये है और जिन्हे उससे स्नेह हो गया है, वे आश्रमको साथ लेकर घूमते है, ऐसा कहा जा सकता है। यदि कुसुम और धीरू-जैसे लोग, जिन्होने वर्षो आश्रममे बिता दिये है, बाहर आश्रमके नियमोका

१. यह उपलब्ध नही है। फिर भी देखिए "पत्र : हरिलालको", २७-४-१९३२।

२. देखिए "पत्र ई० ई० डॉयलको" १९-५-१९३२।

पालन न कर सके तो उनका आश्रममे रहना लगभग व्यर्थ गिना जायेगा। आश्रम-जीवनके रहस्यको समझनेवाला व्यक्ति तो जहाँ रहेगा, वही सेवा कर सकेगा। सेवाका क्षेत्र व्यापक है, अवसर भी व्यापक है, इसलिए इन भाई-बहनोको अधीर होनेकी कोई जरूरत नही है। राणावावका पानी माफिक आ जाये और तवीयत सुधर जाये तो वे वहाँ तबतक बने रहे जबतक कि बिलकुल अच्छे न हो जाये।

प्यारे अली, नूरबानो और तिलकम नही आये। मैथ्यूके साथ तुमने यदि कुछ सन्देश भेजे थे तो ऐसा समझो कि वे उसीतक रह गये, क्योकि मैथ्यू अधिक बात-चीत नही कर पाया।

मुझे अभीतक बा का पत्र नही मिला है। सम्भव है, वे वहाँसे भेजे ही न गये हो। कोई यहाँ रोक लेता है, ऐसा नही लगता। यदि तुममे से कोई सुपरिंटेंडेंटसे पूछताछ कर सकता हो तो देखना कि वे भेजे गये है या नही। बा तो यह बात पूछ ही सकती है।

२० मई, १९३२

क्या अभीतक छारा लोग आश्रमके पास रहते है? यदि रहते है तो क्या उनसे कोई सम्बन्ध बनाया है? क्या उनकी ओरसे कोई दिक्कतें पेश की जाती है? वहाँ चौकीदारी रखी जाती है, इसका क्या अर्थ है? चौकीदारी कितने घटे की जाती है? यह काम कौन-कौन करते है? डॉक्टरके बगलेपर कौन रहता है? ज्योतिर्भवनमें कौन रहता है? छगनलालका पत्र इसके साथ है। उसके साथ मेरे नाम लिखा प्रभुदासका पत्र भी है। इन दोनोको पढ जाना। इसमे लक्ष्मीके विषयमे लिखा है। यदि बालकृष्ण उसे वर्धामें रखनेके लिए तैयार हो तो वह वहाँ जा सकती है। यदि बालकृष्ण न तैयार हो या लडकीकी इच्छा साबरमतीमे रहनेकी हो और यदि तुम्हे कोई आपत्ति न लगे तो उसे वहाँ रख लेना[1]। तुम न रख सको और बालकृष्ण जवाबदारी लेनेको तैयार न हो, तो देवीदत्तको तदनुसार सूचित कर देना और प्रभुदासको भी।

कह सकते है कि मगनचक्रपर मैंने अब काबू पा लिया है। आज लगभग ढाई घटेमें १८३ तार निकले। सूत १६ नम्बरका होगा। रामजीभाईवाली पूनियोमे काफी कचरा है नही तो, सम्भव है, अधिक तार निकल सके। अभी कठिनाई महसूस तो करता हूँ। चक्रको कई बार हाथसे ठीक जगहपर लाना पडता है। इसे दोष ही गिना जाता होगा। पैंडल कर्कश आवाज करता है। केशुको यह बता देना। यदि वह कोई सुझाव रखना चाहे तो रखे।

२२ मई, १९३२

यदि तुमने तोतारामजी-द्वारा भेजे गये गगादेवीके सस्मरण अथवा उनका भावार्थ अबतक आश्रमवासियोको न सुनाया हो तो सुना देना उचित होगा।

१. देखिए पृष्ठ ४४७ भी।

२३ मई, १९३२

आज पचास मिनटमें ८९ तार निकले। सूतका अंक भी २० है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

५७१. पत्र : एलिजाबेथ एफ० हॉवर्डको[1]

२३ मई, १९३२

प्रिय बहन,

आपका पत्र पाकर मुझे खुशी हुई। हमने आपके यहाँ[2] जो अत्यन्त सुखद और शान्तिमय समय बिताया, वह मुझे बहुत ही अच्छी तरहसे याद है। उन चन्द घंटोंमें और पतझड़की ऋतुमें भी मैंने जो-कुछ देखा, उससे वसन्त कालमें 'एपिंग फारेस्ट' की शोभाके विषयमें आप जो-कुछ कहती हैं, उसकी मैं आसानीसे कल्पना कर सकता हूँ।

मेरा उन मित्रोंसे मिल न सकना, जो हाल ही में परिस्थितिका अध्ययन करने भारत आये थे, मेरे लिए एक खेदकी बात रही। कृपया श्री बार्टलेटको मेरा अभिवादन कहिए और उन्हें बताइए कि कविकी अपीलके सहित जैसे ही उनका पत्र मुझे मिला था, मैंने उन्हें अपना जवाब[3] भेजा था। वह उन तक केन्द्रीय सरकारके जरिए ही जा सकता था। मैं नहीं जानता कि वह उनके पास भेजा गया या नहीं। निश्चय ही मैं उसमें कही बातें यहाँ दुहरा नहीं सकता।

जॉर्ज फॉक्सके लेखोंके उद्धरणोंके लिए आपको धन्यवाद।

कृपया अपनी माताजी को मेरा अभिवादन कहें। आशा करता हूँ कि वे सौ वर्ष पूरे करेंगी। आप अपने लिए भी मेरी ऐसी ही शुभ कामना स्वीकार कीजिए। हाँ, देसाई मेरे साथ हैं और चाहते हैं कि आपको उनकी याद दिला दूँ।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६२) से।

१. जी० एन० रजिस्टरके अनुसार।

२. गांधीजी एलिजाबेथ एफ० हॉवर्डसे आर्डमोर बुकहर्स्ट हिल, लन्दनमें सितम्बर २०, १९३१ को मिले थे।

३. देखिए "पत्र : पर्सी बार्टलेटको" ९-५-१९३२।

५७२. पत्र : मनु गांधीको

२३ मई, १९३२

चि० मनुडी,

तेरी चिट्ठी मिली। तेरे बारेमे खबर तो मुझे मिलती ही रहती थी। मैंने तेरे लिए बहुत-से चित्र इकट्ठे कर रखे हैं। पिछली बार भी किये थे किन्तु तुझसे मिलना सधा ही नही कि तुझे दे सकता। उनमे से कुछ बच गये हैं; उन्हीमे जोड़ता रहता हूँ। किसी दिन तुझे मिलेगे। जितनी देरसे मिले, उतनी बड़ी किस्मत कही जायेगी ना? तू गहने नही पहनती, यह ठीक है। बाल झड़ गये तो कोई चिन्ताकी बात नही है। फिर आ जायेगे। शोभा बालोमे नही है। ऐसा हो तो उन्हे ऊपरसे लगाकर भी शोभित हो सकते हैं। शोभा तो अन्तरके गुणोमे है। बात ऐसी न हो तो कॉच या मोमकी पुतलियोसे हम प्रसन्न रहे और शरीरमे से जीवके चले जानेके बाद भी उसे मढकर रख छोडे। हम ऐसा नही करते, इसका यही मतलब हुआ कि जो-कुछ है, वह जीवमे है और जीवकी शोभा तो उसके गुणोमे ही होती है न? कोई इतना समझे तो शरीर आत्माके विकासका साधन है, वह यह भी समझ जाये।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

इसमें जो लिखा, सो तू समझी या नही, मुझे लिखना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५१३) से; सौजन्य: मनुबहन मशरूवाला।

५७३. पत्र : बनारसीलाल और रुक्मिणी बजाजको

२३ मई, १९३२

चि० रुक्मिणी,

यह तुम दोनो[1] के लिए है, ऐसा मानना। तेरी चिट्ठी मिली है। बाबा अच्छा हो गया, यह सन्तोष हुआ। किसी तरह घूमने जा सके तो अच्छा हो।

रामेश्वरदासके[2] पत्रसे पता चलता है कि वे बड़ी परेशानीमे हैं। कारण, बनारसी मुझसे ज्यादा अच्छी तरह समझ सकता है। अगर कुछ कर सकता है तो करे।

१. पत्रके पतेपर भी रुक्मिणी देवी और उनके पति बनारसीलाल दोनोंका नाम लिखा था।

२. बनारसीलालके पिता।

गगादेवीके कुछ सस्मरण मुझे भेजे गये है। उसका जीवन बहुत पवित्र और परोपकार-परायण था। वहाँ 'आश्रम पत्रिका' क्यो नही पहुँचती? शायद तू मँगाती नही है।

डाह्याभाईकी यशोदाके देहान्तकी भी शायद तुझे खबर हो। अखबार वगैरह पढती है?

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती रुक्मिणी देवी और श्रीयुत बनारसीदास[1]
२३/९६ पचगगा
काशी, बनारस, यू० पी०

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१३९) से।

५७४. पत्र : हनुमानप्रसाद पोद्दारको[2]

२३ मई, १९३२

ऐसी कोई अवधि मुझे याद नही जब ईश्वरके लिए मेरी श्रद्धा खास तौरपर बढ गई हो। एक समय श्रद्धा नही थी, लेकिन धर्म-विचार और चिन्तनसे आने लगी और तबसे बढती ही गई है। ज्यो-ज्यो यह ज्ञान बढता गया कि ईश्वरका विशेष निवास हृदयमे है, त्यो-त्यो श्रद्धा बढती गई। मगर ये सवाल तुम किसलिए पूछ रहे हो? क्या आगे चलकर 'कल्याण' मे छापनेके लिए? तो यह बेकार है। और अगर खुद अपने लिए पूछते हो, तो मुझे कहना चाहिए कि इस मामलेमे पराया अनुभव काम नही देता। ईश्वरके प्रति श्रद्धाके साथ लगातार प्रयत्नसे ही श्रद्धा बढ़ती है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ १७०।

१. गाधीजी ने भूलसे यह नाम लिख दिया था, यहाँ बनारसीलाल होना चाहिए था।

२. महादेव देसाई लिखते है: "हनुमानप्रसाद पोद्दारने बापूसे पूछा था कि क्या उनके जीवनमें ऐसी कुछ विशेष घटनाएँ घटी है जिनसे उनका ईश्वरपर विश्वास दृढ हुआ है"। (**महादेवभाईनी डायरी**, भाग–१, पृष्ठ १७०)

५७५. पत्र : अभयदेव शर्माको

२३ मई, १९३२

भाई अभय,

आपके पत्रकी मैं रोज प्रतीक्षा करता था इतनेमे कल आया और वैदिक विनयकी दो प्रति मिली। एक पहले भी आइ थी। मैं अवश्य पढुंगा और वादमे कुछ कहने जैसा होगा तो लिखुंगा। आपके अचार्य होनेमे अच्छा लगता है वुरा भी लगता है। किन्तु सहज प्राप्त धर्म है इसलिये मेरा विश्वास है कि यह ठीक हि है। आपके हाथसे इस मार्गसे कुछ वड़ी सेवा होगी। जयदेव कहा है? दयाके खतोंमे उस लड़कीका मेरे पर वहोत प्रभाव पडा है। उसमे सच्ची सेविका वननेके लक्षण दिखाई देते हैं।

रामदेवजीका शरीर अच्छा है? विद्यावती कैसे हैं?

वापूके आशीर्वाद

श्री अभय आचार्य
गुरुकुल कागड़ी
डिस्ट्रिक्ट सहारनपुर

सी० डब्ल्यू० ९६६१ से।

५७६. श्रद्धांजलि : प्रफुल्लचन्द्र रायको[1]

२४ मई, १९३२

आचार्य रायको जाननेका सौभाग्य मुझे पहली वार उस समय मिला जब १९०१ में गोखले उनके पडोसी थे और मैं गोखलेकी देख-रेखमें काम कर रहा था। यह विश्वास करना कि सादी भारतीय पोशाकमें और विलकुल ही सादे ढगसे रहनेवाला वह व्यक्ति कोई महान वैज्ञानिक और प्रोफेसर हो सकता है, कठिन था। हालाँकि तव भी वे आजकी तरह ही महान थे। और जब मैंने सुना कि अपने राजसी वेतनमें से वे केवल कुछ ही रुपये अपने लिए रखते हैं और बाकी सार्वजनिक उपयोगमें और विशेषरूपसे गरीव विद्यार्थियोंकी मददमें लगा देते हैं, तव तो आश्चर्यसे मेरी साँस ही रुक गई। तीन वर्षोंमें भारतके इस महान और अच्छे सेवकमें कोई

१. उनकी सत्तरवीं वर्षगाँठपर।

अन्तर नही आया है। आचार्य रायने हमारे सामने अथक सेवा, उत्साह और आशावादिताका जो उदाहरण रखा है, उसपर हमारा गर्व करना उचित ही होगा।

मो० क० गाधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स : होम डिपार्टमेन्ट, स्पेशल ब्रांच, फाइल स० ८०० (४०) (३), भाग-१।

५७७. पत्र : सत्यचरण लॉ को

२४ मई, १९३२

प्रिय मित्र,

आचार्य रायकी सत्तरवी वर्षगाठके सम्बन्धमे आपकी गश्ती चिट्ठी मिली है। मै इसके साथ अपनी विनम्र श्रद्धाजलि भेज रहा हूँ। आशा है, अधिकारियो-द्वारा इसे आपके हाथोतक पहुँचनेकी अनुमति मिल जायेगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

डॉ० सत्यचरण लॉ
सचिव
आचार्य राय जन्मोत्सव समिति
कलकत्ता

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स : होम डिपार्टमेन्ट, स्पेशल ब्रांच, फाइल स० ८०० (४०) (३), भाग-१।

५७८. पत्र : मूलचन्द पारेखको

२४ मई, १९३२

हरिजन समितिका प्रस्ताव मुझे भयानक लगा। यहाँ बैठे-बैठे तो क्या बता सकता हूँ? मगर क्या समितिके सदस्योके जीते-जी एक भी पाठशाला बन्द हो सकती है? खुद बिक जाये, खुदका घर-बार बिक जाये और पाठशाला चलाये, तब उसका नाम समिति है। इसलिए हारनेके बजाय आशावादी बनो, और जब तुम अपनेको बेचनेके लिए तैयार हो जाओगे, तब समितिको जरूरी खर्च देकर लोग तुम्हे खरीद लेगे। इस बारेमे भले ही तुम्हे शका हो, मुझे हरगिज नही है। भोजा भगतकी कविता याद है न कि 'भक्ति शीश तणु साटु आगल वसमी छे वाटु।'[1]

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १७१।

५७९. पत्र : एक बहनको

२४ मई, १९३२

बच्चे बड़ हो जाये, तभी उनके विवाह होने चाहिए। एक-दूसरेको पसन्द करे और माँ-बापकी भी सम्मति हो, ऐसे विवाह होने चाहिए। इसलिए उनमे कही भी कृत्रिम प्रतिबन्ध नही आता। मगर मेरी पसन्द कोई पूछे तो विधर्मियोके बीच विवाह होना मैं जोखिमभरा प्रयोग मानता हूँ। क्योकि दोनो ही अपने-अपने धर्मको मानने और उसका पालन करनेवाले हो, तो दोनोके बीच दिक्कते पैदा होनेकी सम्भावना रहती है। इस दृष्टिसे मैं उस भाटियाबहनकी शादी जोखिमभरी समझता हूँ। यह नही समझता कि वह धर्म-विरुद्ध है। दोनोके बीचका प्रेम निर्मल हो, भाटियाबहन अपने धर्मका पालन कर सके और वह मुसलमान भाई अपने धर्मका, और फिर खाने-पीनेके बारेमे दोनोके विचार मिलते हो, तो मेरा दिल ऐसे विवाहका विरोध नही कर सकता। मगर, जैसे मैं उपजातियोका नाश चाहनेके कारण जातिसे बाहर शादी पसन्द करता हूँ, उसी तरह धर्मके बाहर विवाह पसन्द नही करता। उसके विरोधमे आन्दोलन भी नही करूँगा। यह सारी बात सब स्त्री-पुरुषोको अपने-अपने लिए सोच लेने-जैसी है। इसमे एक ही कानून नही चल सकता।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ १७१।

१. भक्ति सिरका सौदा है। आगे राह कठिन है।

५८०. पत्र : के० नटराजनको

२५ मई, १९३२

मैंने जब यह कहा था कि तान्त्रिक सिद्धियोंके दुरुपयोगके विषयमें लिखते हुए तुम्हें ज्यादा कड़ा होना चाहिए था[1], तब मैंने उस विशेषणका प्रयोग ठीक उसी अर्थमें किया था जिसमें मैं उसका प्रयोग मानी हुई बुराइयोंके बारेमें करता हूँ। मेरा खयाल है कि दुष्ट मनुष्यको तो हम क्षमा करें, मगर उसकी दुष्टताको धिक्कारनेमें जरा भी रियायत न करें। अगर हमने किसी चीजको बुरा मान लिया है तो जबतक हमारा यह खयाल कायम रहे, तबतक उस बुरी बातकी साफ-साफ शब्दोंमें निन्दा करना सौम्य स्वभावसे असंगत नहीं है। और यदि आगे चलकर हमें ऐसा मालूम पड़े कि हमारा वह खयाल गलत था, तो उसपर भी अफसोस करनेका कोई कारण नहीं। क्योंकि पूर्ण सत्यके पास पहुँचनेकी कोशिशमें हमें समय-समयपर सापेक्ष सत्यसे सन्तोष करके काम चलाना पड़ेगा। इस सापेक्ष सत्यको हम उस समय तो पूर्ण सत्य-जैसा ही मानकर चलेंगे। यह आसानीसे साबित किया जा सकता है कि हममें यदि इस तरहका विश्वास न हो तो हम प्रगति नहीं कर सकते। अलबत्ता, जहाँ हमें अपनी बातकी सचाईपर अपने दिलमें जरा भी शक होगा, वहाँ हमारी भाषा सावधानीकी होगी और निश्चयात्मक नहीं होगी। मौजूदा मामलेमें प्रयोग करनेवालेका हेतु कितना ही अच्छा हो, तो भी मेरी रायमें उसके प्रदर्शनोंका समर्थन नहीं किया जा सकता। फिर, ऐसे प्रदर्शनोंमें हाजिर रहनेका क्या परिणाम होगा, इस बारेमें सोचनेकी प्रेक्षकोंने जो जरा भी तकलीफ नहीं उठाई, इसके पक्षमें भी कुछ कहना सम्भव नहीं है। मगर इस बातको और विस्तार नहीं दूँगा। मैंने सोचा कि तुमने अपने पत्रमें[2] जो सफाई दी है, चूँकि मैं उससे सहमत नहीं हो सकता, इसलिए तुम्हारे विचारके लिए मैं अपनी दलील तुम्हारे सामने रख दूँ।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १७७।

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है, इसी विषयपर पहलेके एक पत्रके लिए देखिए पृष्ठ ३५६।

२. पत्र इस प्रकार था : "तान्त्रिक सिद्धियोंके बारेमें मेरा वह अनुच्छेद जिसके बारेमें आपको लगता है कि उसे ज्यादा कड़ा होना चाहिए था, सचेत करनेवाला तो था; लेकिन लगता है कि मुझे कड़ा लिखनेमें, विशेषकर लोगोंकी आलोचना करते समय, बिलकुल रुचि नहीं रह गई है और मैं उसका ढंग भी भूल गया हूँ। मैं जब कड़ी चोट करनेके इरादेसे कलम उठाता हूँ तो दूसरे व्यक्तिकी तस्वीर मेरी आँखोंके सामने खड़ी हो जाती है और वह ऐसा कहती लगती है : 'तुम नहीं जानते कि मुझे अपने बारेमें क्या कहना है। मेरे भी अपने सिद्धान्त हैं, चाहे वे मेरे आचरणसे कितने ही अस्पष्ट रूपमें व्यक्त क्यों न हो रहे हों। मुझे उसी तरह परखो जैसे कि तुम अपनेको परखते।' मैं अपने निर्णयानुसार सभी विशेषणोंको जहरकी तरह बचा जाता हूँ और जो-कुछ भी कहता हूँ, उसमें सर्वथा व्यक्ति

५८१. पत्र : छगनलाल जोशीको[1]

२५ मई, १९३२

यहाँ पानी ले जानेवालेकी न स्तुतिका सवाल है, न निन्दाका। मगर विचार करके देखोगे तो मालूम हो जायेगा कि पानी पिलानेकी बात पानी ले जानेवालेके हाथमे थी ही नही। यहाँपर यह सवाल भी मुख्य नही है कि पानी तीनोके लिए काफी था या नही। मगर पहले दो सिपाहियोका आर्तनाद सुनकर उन दुखियोको पानी मिले बिना उन्होने खुद पानी पीनेसे इनकार कर दिया। ऐसी हालतमे पानी ले जानेवालेके स्वधर्म छोडनेकी बात ही नही थी। ऐसा मालूम होता है कि इस दृश्यका चित्र तुम्हारे सामने खड़ा नही हुआ। प्यास ऐसी चीज है कि मनुष्य दूसरेकी परवाह नही करता और पानी मिले तो खुद पी लेता है। ये लोग तो बेचारे मौतके किनारेपर खडे थे। मगर ऐसे समय भी उन्होने अपनी उदारता नही छोडी और इस तरह अन्तकालतक ब्राह्म स्थिति रखी। पानी ले जानेवाला केवल निरुपाय था, और जहाँ प्राण निकलनेमे कुछ पल बाकी हो, वहाँ कही यह हो सकता है कि घायलो के साथ बहस की जाये? इन सब बातोपर दुबारा विचार कर लेना, और विचार करोगे तो मालूम होगा कि यह ऐतिहासिक घटना भव्य और सम्पूर्ण त्यागका दृष्टान्त है और इसमे निमित्त बननेवाले पानी ले जानेवालेकी आलोचना करनेका कुछ भी कारण नही रह जाता। ज्यादातर इतिहासमे ऐसे सम्पूर्ण दृष्टान्त नही मिलते। कुछ-न-कुछ खामी कही-न-कही रहती ही है। मगर मेरी दृष्टिसे इसमे कही खामी नही पाई जाती।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १७२–३।

निरपेक्ष रहता हूँ। यह मेरी आदत बन गई है और यह, निस्सन्देह, हर हालतमें एक अच्छी आदत है। मैं इस मामलेके सम्बन्धमें यह कहूँगा कि आखिरकार आदमी इसमें अपनी जानकी बाजी लगा देता है, ऐसा सोचकर ही मैंने यह बात तय की। रही उत्सुक भीड़की बात, तो मैं समझता हूँ कि वह ऐसे अवसरोंपर उन घटनाओंको देखकर, जो यह साबित करती है या साबित करनेका आभास देती हैं कि कम-से-कम एक आदमी परिस्थितियोंसे ऊपर उठ सकता है, नित्यकी परिस्थितियोंकी क्रूरतासे राहत महसूस करती है।"

१. छगनलाल जोशीने गांधीजी के लेख "अद्भुत त्याग" का सही अर्थ नहीं लगाया था और पूछा था "क्या पानी ले जानेवाला अपने कर्तव्य-पालनमें चूक नहीं गया? वह तो सबको पानी दे सकता था।"

५८२. पत्र : शान्तिकुमार मोरारजीको

२५ मई, १९३२

चि० शान्तिकुमार,

बहुत दिनोंके बाद तुम्हारी चिट्ठी आई। मेरा आशीर्वाद तो है ही। दीर्घायु होओ और तुम्हारे हाथसे शुद्ध सेवा बन पडे। हमारे यहाँ एक उत्तम श्लोक है, उसे याद रखो:

> विपदो नैव विपदः संपदो नैव संपदः।
> विपद्विस्मरणं विष्णोः सम्पन्नारायणस्मृतिः॥[1]

अर्थात्, दुःख सचमुचमें दुःख नहीं है और सुख उसी प्रकार सुख नहीं है। सच्चा दुःख भगवानका, सत्यका विस्मरण है और सुख सत्यनारायणका स्मरण।

माजी को मेरे प्रणाम। गोकीबहन[2] ठीक होगी। सुमतिको आशीर्वाद।

सरदारके आशीर्वाद, महादेवकी राम राम।

मुझे जो लिखना चाहो, लिखना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७९६) से; सौजन्य: शान्तिकुमार मोरारजी।

५८३. पत्र : दरबारी साधुके सम्बन्धियोंको

२५ मई, १९३२

दरबारीसे कहना कि उसे कसती[3] और सदरा[4] छोडनेकी कुछ भी जरूरत नहीं थी। और यही अच्छा है कि जब वह वापस जाये तब पहन ले। इसके पहननेमें पाप नहीं है और न अन्धविश्वास है। पहननेसे किसीका नुकसान नहीं और न पहननेसे पारसियोंको चोट पहुँचती है। इस तरह बिना कारण चोट पहुँचाना सेवकका काम नहीं होता और इससे अहिंसा खण्डित होती है। इतना काफी है कि अपने दिलमें इनके बारेमें गलत आदर न हो। इसमें जो बुतपरस्ती है, वह निकल जानी चाहिए।

१. देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ३९७।

२. शान्तिकुमार मोरारजी की चाची।

३. जनेऊ, जिसे पारसी पहनते हैं।

४. पारसियोंकी एक पोशाक।

और वह तो है भी नही। ये चीजे पारसी होनेके बाहरी निशान है। इन्हे छोड़ देना मुझे किसी तरह भी उचित नही लगता। इसके लिए जरथुस्त्रकी पुस्तके ले आनेको डाह्याभाईसे कहा है। मैंने जरथुस्त्रके वचन पढे है। बहुत वर्ष पहले 'वेदीदाद'[1] का अनुवाद पढा था। यह नीतिसे भरा हुआ है। बहुत पुराना धर्म होनेके कारण सम्भव है कि सारे पारसी-ग्रन्थ आज मौजूद न हो और इसलिए सम्भव है कि जो ज्ञान उपनिषदो वगैरहसे मिलता है, वह जरथुस्त्रके बचे हुए साहित्यसे न मिल सके। जो मिल सकता है उसे पढकर दरबारीको विचार लेना चाहिए। मगर इतना तो आज भी माना हुआ है कि जरथुस्त्रका आधार वेद है। जहाँतक मुझे याद है, 'वेदीदाद' के अनुवादकने जेद और सस्कृतके बीच बहुत साम्य बताया है। इसलिए आज जो चीज पारसी-धर्मग्रन्थोमे न पाई जाये, उस कमीको वेदो और उपनिषदोसे पूरा कर लेनेमे पारसी-धर्म या पारसीपनको कुछ भी बट्टा नही लगता। असलमे तो अपने धर्मपर कायम रहते हुए किसी भी दूसरे धर्ममे जो विशेषता दिखे, उसे ले लेनेका हमारा अधिकार है। इतना ही नही, ऐसा करना हमारा धर्म है। दूसरे धर्मोंसे कुछ भी न लिया जा सके, इसीका नाम धर्मान्धता है; और उसे दरबारी और हम सब पार कर चुके है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १७३।

५८४. पत्र : भुस्कुटेको[2]

२५ मई, १९३२

जगतका कोई कर्ता नही है, इसका क्या अर्थ हो सकता है? हम कैसे कह सकते है कि कोई कर्ता नही है? मेरे कथनका इसमे कुछ अनर्थ-सा प्रतीत होता है। मैंने तो कहा है कि सत्य ही ईश्वर है। इसलिए ऐसा मानो कि वही कर्ता है। परतु यहाँ कर्ताका जो अर्थ हम करते है ऐसा नही है। इसलिए सत्य कर्ता अकर्ता दोनो है। परतु यह केवल बुद्धिवाद है। जैसा जिसके हृदयमे लगे ऐसा माननेमे इस बारेमे कोई हानि नही है। क्योकि हरेक पुरुष ईश्वरके बारेमे न सपूर्ण जानता है और न जितना जानता है वो बता सकता है। यह बात ठीक है कि कुछ भी कार्यके निर्णयके लिये मैं अपनी बुद्धिपर विश्वास नही करता हूँ। जबतक हृदयमें से आवाज न निकले, वहाँतक बुद्धिकी बातको रोक लेता हूँ।

१. अवस्ती भाषामें लिखा हुआ एक ग्रथ।

२. महादेव देसाई कहते है: "भुस्कुटेने पूछा था, गांधीजी का जब यह विश्वास है कि सत्य ही ईश्वर है और स्रष्टा कोई नही है, तो वे अन्तरात्माकी आवाजके अनुसार कैसे काम करते होंगे।"

इसको कोई गूढ शक्ति कहे या क्या कहे, वो मैं नही जानता। उस बारेमें मैंने कभी सोचा नही है, न उसका पृथक्करण किया, करनेकी आवश्यकता भी नही मालूम हुई है। बुद्धिसे पर ऐसी यह वस्तु है, इतना मुझमे विश्वास है, और ज्ञान भी है। और मेरे लिए काफी है। इससे अधिक स्पष्टीकरण मेरेसे हो ही नही सकता क्योंकि इससे अधिक मैं जानता नही हूँ।"

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १७३-४।

५८५. पत्र : मीराबहनको

[२६ मई, १९३२][1]

चि० मीरा,

मैं तुम्हारे पत्रकी बाट देख रहा था। आज मिला। तुम्हे जो आघात पहुँचा, उसे यह सोचकर स्वीकार कर लेना चाहिए कि जो अपने अन्त करणके अनुसार ही चलना चाहते है, उन सबके भाग्यमे यही लिखा होता है। मै जल्दबाजीमे कोई कदम नही उठाऊँगा। व्यक्तिगत दृष्टिभेदकी बातके अलावा, अगर मुझे यह न लगे कि तुमसे न मिल सकनेके कारण दूसरोसे भी मिलना बन्द कर देना मेरा धर्म है, तो मैं यह कदम नही उठाऊँगा। लेकिन धीरज रखकर देखे, क्या होता है?

तुलसीदासजी की 'रामायण' मेरी नजरमें महान धार्मिक गुणोसे युक्त पुस्तक है। मैंने खुद ग्रिफिथका अनुवाद[2] नही पढ़ा है, लेकिन मुझे मालूम है कि प्राप्य अनुवादोमे वही उत्तम है और मुझे प्रसन्नता है कि तुम्हे वह इतना अच्छा लगा।

तुम वहाँ लिफाफे[3] बनानेकी कोशिश न करना। जब हमारे पास समय हो, तब उसे भरनेके लिए यह एक सुन्दर साधन है। अगर तुम्हारे पास ऐसे कमजोर लोग हो जिनके पास कोई काम न हो, तो वे इस कामको करके देख सकते है। मगर तुम नही। तुम्हारे लिए यह समयका दुरुपयोग होगा।

मैं आज फिर १०५½ पौंड था। तो देख लो, चिन्ताका कोई कारण नही है।

अब मगनचक्रपर मेरा इतना काबू हो गया है कि उसे चलानेमे आनन्द आता है। मैंने ८२ मिनटमे २०२ तार यानी, फी घंटे १४७ तार निकाले। यह मेरे लिए बुरा नही है। अभी मुझे और भी ज्यादा निकाल पानेकी उम्मीद है।

१. "यरवदा डाक-मुहरकी तारीख"—मीराबहन।
२. वाल्मीकि रामायणका।
३. "उन दिनों बापू, और खासकर सरदार बापूके पत्रोंके लिए लिफाफे बनाते थे"। —मीराबहन

रोलाँ-परिवारको मेरा वन्दे लिखना और उनसे कहना कि अमेरिकी मित्रके नाम उनके पत्रको[1] मैंने बड़े चावसे पढ़ा। उसमे कोई बेजा बात नही है। ईमानदारीसे राय प्रकट करनेमे कोई बुराई हो ही कैसे सकती है?

हम सबकी ओरसे तुम सबको प्यार।

बापू

[पुनश्चः]

राधाको अलगसे कोई पत्र नही लिख रहा हूँ।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२२३) से, सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६८९ से भी।

५८६. एक पत्र

२६ मई, १९३२

छोटूभाईसे कहना कि यहाँ उसके पिताजी की बीमारीका विचार करना व्यर्थ है — तब फिर उसे लेकर चिन्ता क्यो? उसके पिताको बचानेवाले तो हम सबके महान पिता है। जब उसने सेवासे मुक्ति दे दी है तब फिर सोचनेको कुछ नही बचता। अशान्त होना दोष है। इस दोषसे हममे से कोई भी एकदम मुक्त नही रह सकता। किन्तु हम कर्त्ता-हर्ता नही है, यह बात जैसे-जैसे मनमे दृढ़ होती जाती है, वैसे-वैसे अधिकाधिक शान्ति मिलती जाती है।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९१२१) से; सौजन्य: नारणदास गाधी।

५८७. पत्र: घनश्यामदास बिड़लाको

२६ मई, १९३२

भाई घनश्यामदास,

आपका पत्र मिल गया। जो पत्र ग्वालियर भेजा वह कुछ लबासा रहा। इतना तो स्मरण है लेकिन उसमे क्या क्या लिखा था उसका स्मरण नही है। तीन शिफ्टके बारेमे मजदूर लोगोकी क्या दृष्टि है और उससे उन लोगोको कितना आर्थिक और नैतिक लाभ होता है देखना चाहिए। आर्थिक लाभ और नैतिक हानि होवे तो भी मुझको तीन शिफ्ट अच्छे नही लगेंगे। मजदूरोकी आँखोसे देखनेका मेरे पास कोई सामान नही है इसलिये ऐसा समजा जाय कि मै तटस्थ हूं। इतनी ही आशा रखता हूं कि मजदूरोकी दृष्टिका खयाल रखकर यह परिवर्तन किया गया है। मुझको दो पुस्तक मिल गये है। दो पुस्तकका अर्थ तो यह है ना कि एक पैम्फलेट और दूसरा आपके व्याख्यानका प्रूफ? यह दोनो मिले है। अबतक मै उसे पढ नही सका क्योकि

१. इस पत्रके लिए, जिसमें गांधीजी और रोमाँ रोलाँकी भेंटका वर्णन था, देखिए खण्ड ४८, परिशिष्ट–२।

दूसरा व्यवसाय जो हाथोमें है उसमेसे समय नही बचा सका हू। बाये हाथमें तकलीफके कारण पैरोसे चलानेके चर्खेसे कातनेकी कोशिशमे मुझको काफी समय देना पडा और कुछ उर्दु अभ्यासमे मन लग गया है। अब संभव है कि थोडा वक्त मैं बचा सकुंगा उसमें ये दोनो चीज पढ लुगा। आशावाद और भोलापनमे भेद करता हू। पडितजीमे[1] दोनो है। दृष्टिमर्यादापर निराशाके चिन्ह होते हुए भी और उसे जानते हुए भी जो आशा रखता है वह आशावादी है। यह गुण पडितजीमे काफी मात्रामें है। आशाकी बाते कोई कह देवे और उसपर विश्वास लाना वह भोलेपन है। यह भी पडितजीमें है। उसे मैं त्याज्य समजता हू। पडितजी महान व्यक्ति है इसलिये उनको ऐसे भोलेपनसे हानि नही हुई है। इसलिये हमारे ऐसे भोलापनका अनुकरण कभी नही करना चाहिये। आशावाद अतर्नाद पर निर्भर है। भोलापन बाह्य बातो पर निर्भर है।

विदेशगमनके बारेमे अभिप्राय देनेको मुझको कोई अधिकार नही है। सामान्यतया इस बारेमें मेरे खयाल जाहिर है।

मेरा खुराक अब तक वही कायम है। वजन भी कायम है।

बापूके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७९०० से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला।

५८८. पत्र : कृष्णचन्द्रको

२६ मई, १९३२

भाई कृष्णचंद्र,

आपका खत मिला। जो मनुष्य ईश्वरपर विश्वास करता है वह ज्योतिषीके पास कभी नही जायगा। इसलिये उन लोगोको भविष्य बतानेके मुताबिक हम कोई भी कार्य कर बैठे वह मेरी दृष्टिसे बिलकुल अच्छा नही है। मैंने तो बहुत ही दफे देखा है कि उन लोगोने जो कहा है उससे उलटा बना है और ऐसे भी ज्योतिषी लोग जो भले रहते हैं वे कबूल करते हैं कि वे भविष्य बताते है उसका अर्थ इतना हि है कि ऐसा बननेका संभव है। इसलिये पुरुषार्थको काफी जगह है इसमें कोई सदेह नही है। गी० ३–३३ का अर्थ स्पष्ट है। जो चीज बदल नही सकते है वह स्वभाव है जैसे कि अंग्रेजीमे कहावत है चीता अपनी खालकी विचित्रता बदल नही सकता। जो खालके लिये सही है वह भीतरके लिये भी सही है। इसी कारण हम अनुभव करते हैं कि वह मनुष्य बहुत प्रयत्न करते हुए भी जो चीज स्वभाव बन गई है उसे नहिं बदल सकते है खजूर मुनक्का ईके अभावमें गुल ले सकते है लेकिन खजूर मुनक्का जितना लाभकारी कभी नही हो सकता है। मात्रा बताना मुश्किल है प्रत्येक मनुष्यको अपनी लिये अनुभव करके देख लेना अच्छा है।

मोहनदास गांधी

मूलकी फोटो-नकल (एस० जी० ३८) से; जी० एन० ४२६१ से भी।

१. पण्डित मदनमोहन मालवीय।

५८९. पत्र : वेरियर एल्विनको

[२७][1] मई, १९३२

प्रिय वेरियर,

'मांगो और तुम्हे मिलेगा'की फिर एक बार परीक्षा हो गई। तुम्हारा प्यारा पत्र आज यहाँ आया है। मैंने पाँचके बाद उसे पढा और आज शुक्रवार होनेके कारण मेरी तरफसे किसी इशारेके बिना महादेवने तुम्हारे सद्भाव-सम्बन्धी सुझावको, 'लीड काइन्डली लाइट'का बहुत सुन्दर गुजराती अनुवाद गाकर क्रियान्वित किया। शामकी प्रार्थनामें भजन गानेका काम हमेशा ही महादेवका होता है। समय लगभग सात बजकर चालीसका होगा। प्रार्थना साढे सात शुरू होती है और 'गीता'के द्वितीय अध्यायके अन्तिम १९ श्लोकोसे शुरू होती है। उसके बाद राम-धुन होती है और उसके बाद भजन। मैंने जैसे ही आपका सुझाव पढ़ा, उसके अनुमोदनमें कोई सकोच नही किया; लेकिन कौन-सा गीत चुना जाये, उसपर विचार कर रहा था। मेरे मनमे अंग्रेजीका पाठ गानेकी ही बात थी और इसलिए चुनावकी गुंजाइश कम थी। या तो 'लीड काइन्डली लाइट' या 'व्हेन आई सर्वे द वन्डरस क्रास' या 'टेक माई लाइफ ऐंड लेट इट बी' गाया जा सकता था। कारण यह है कि मैं खुद भी अपने अन्य प्रिय गीतोंमें से कोई और ठीक-से नही गा सकता; अलबत्ता, ऐसा नही है कि इन तीन गीतोंको मैं बिल्कुल ठीक ही गा लेता हूँ। लेकिन मैं उन्हे लगभग वैसा ही गा सकता हूँ जैसा मैंने उन्हें सुना है। महादेव अंग्रेजी गीतोकी धुनोका आदी नही है; लेकिन 'लीड काइन्डली लाइट'का गुजराती अनुवाद गानेकी बात सोचकर उसने चुनाव और गानेकी समस्या हल कर दी। न्यूमैनके इस गीतको चुनना एक दृष्टिसे विशेष उपयुक्त है। जोहानिसबर्गमे स्वर्गीय रेव० डोकके घरमे आलिव डोकने मुझे, जब मुझे शारीरिक कष्ट था, यही गीत सुनाया था। इसलिए आप यह मान सकते है कि हर शुक्रवारकी शामको सात बजकर चालीसपर हम यहाँ यह गीत इस एहसासके साथ गायेंगे कि भले ही अन्य मित्र इस सुझावको मानें या न मानें, कम-से-कम तुम जहाँ-कही भी होगे, हमारा साथ दे रहे होगे। फिलहाल इसके बारेमें समाचारपत्रोमे कोई चर्चा नही होनी चाहिए। मै नही जानता कि सरकार इसे पसन्द करेगी या नही और कैदीकी हैसियतमें रहते हुए मैं एक भी ऐसा काम, जिसे वह ठीक न समझे, तबतक नही करना चाहूँगा जबतक कि किसी महत्त्वपूर्ण मामलेमें उससे सीधी लडाई ही जरूरी न हो जाये। मै नारणदाससे शुक्रवारको यह भजन आश्रमकी प्रार्थनामें गानेको कहूँगा, गर्मीके महीनोमें वहाँ प्रार्थना हमेशा साढ़े सात बजे शुरू होती है।

१. शुक्रवारके उल्लेखसे, जो २७ मईका था। परन्तु साधन-सूत्रमें '२६ मई' है।

हाँ, और नही तो केवल बूढी माँ और एल्डियकी खातिर, कुछ महीनोके लिए इग्लैड जानेका तुम्हारा विचार मैं बहुत पसन्द करता हूँ। वैसे भी अपने स्वास्थ्यके लिए तुमको जलवायु परिवर्तनकी जरूरत तो है ही। और जब तुम्हारा जाना जरूरी है, तो तुम जितनी जल्दी रवाना हो जाओ उतना ही बेहतर होगा।

माँ और एल्डियका ग्राम्य भारत अथवा किसी अन्य भारत आनेका विचार मैं पसन्द नही करता। उनका मन भले ही इसे चाहता हो, लेकिन उनके शरीरको यह माफिक नही आयेगा। इस मामलेमे स्वय तुम्हारा उदाहरण भी बहुत अच्छा सिद्ध नही हुआ है; फिर उनपर भारतमे बसनेका बोझ डालना बुद्धिमानी नही होगी। यदि वे, तुमसे या किसी औरसे किसी भी प्रकार प्रेरित हुए बिना अन्तरात्मासे ऐसी स्पष्ट पुकार महसूस करे तो वह अवश्य एक बिलकुल ही अलग बात होगी। लेकिन उस हालतमे किसीकी राय लेने या माननेका कोई सवाल ही नही उठता। ऐसा पहले कई लोगोके विषयमे हुआ ही है। उस प्रकारके मामलेमें आत्मा शरीरपर हावी हो जाती है।

शामरावके बीमार रहनेकी बात सुनना मुझे बिलकुल अच्छा नही लगता। उसे अपने-आपपर शर्म आनी चाहिए। दरिद्रनारायणके सच्चे सेवकके अनुरूप जीवन जीनेकी कला उसे अवश्य सीखनी चाहिए।

प्लाटिनससे जो उद्धरण[१] तुमने दिये है, वे बहुत ही लुभावने और सुन्दर है। पहला हर जमानेपर लागू होता है; दूसरेमे आधुनिक विचारधारावाले लोग छिद्रान्वेषण करेगे। खुद मुझे लेखकका अर्थ समझनेमें कोई कठिनाई नही है।

तुम्हारी और शामरावकी अनुपस्थितिमे करजियाकी देखभाल कौन करेगा? हम सबकी ओरसे तुम्हारे मेजबानो-सहित तुम सबको स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स' होम डिपार्टमेन्ट, स्पेशल, ब्राच, फाइल स० ८०० (४०) (३), भाग–१, पृष्ठ २३३।

५९०. देवदास गांधीको लिखे पत्रका अंश

२७ मई, १९३२

देवदास गांधीको लिखे लम्बे पत्रमें बापूने आश्रमके सचिव नारणदास गांधीकी बहुत प्रशंसा करते हुए लिखा कि उसने अपनी दृढ़ता, धैर्य, साहस, त्याग और विवेकसे उन्हे आश्रम-सम्बन्धी समस्त चिन्तासे मुक्त कर दिया . . .। उर्दूके अध्ययनके सम्बन्धमें बापूने देवदास गांधीको लिखा :

हरएक पाठमालामे ऐतिहासिक भाग होता है। इसमे कुछ पैगम्बर और उनके जमाने और कुछ उन मुसलमान बादशाहोसे सम्बन्धित होता है, जो भारतमें हुए है।

१. उद्धरणों तथा उन परकी चर्चाके लिए देखिए दि डायरी ऑफ महादेव देसाई, भाग–१, पृष्ठ १३३-५।

ये जिस दृष्टिकोणसे लिखे गये हैं, उसे मेरे विचारसे सभीको समझ लेना चाहिए। उर्दूके अध्ययनका महत्त्व मैं अधिकाधिक देख रहा हूँ। किसी भाषाकी लिपि सीख लेनेसे उसमें चिट्ठी-पत्री तो लिखी ही जा सकती है, साथ ही इससे भी ज्यादा और सच्चा लाभ यह है कि उससे हम भाषापर ज्यादा काबू पा जाते हैं और मिलने-वाले पत्र पढ़नेमें और समझनेमें भी मदद मिलती है। मैं यह मानता हूँ कि हमें मुसलमान साथियोंके साथ उर्दूमें पत्र-व्यवहार करना चाहिए। उन्हें अंग्रेजीमें ही लिखना पड़े, तो हिन्दी किसी दिन भी राष्ट्रीय भाषा नहीं बन सकती। इसलिए मेरे खयालसे तो उर्दूमें लिखनेकी शक्ति हमारे मानसिक बलके लिए जरूरी है।

फिर रैहाना तैयबजी को पत्र लिखनेके लिए किस तरह उर्दू लिखना शुरू हुआ, इसका इतिहास बताते हुए लिखा :

मुसलमानोंके साथ शुद्ध सम्बन्ध स्थापित करनेके ये अहिंसक और सूक्ष्म उपाय हैं।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १८१-२।

५९१. पत्र : अमतुस्सलामको

२८ मई, १९३२

प्रिय अमतुल,

मैंने तुम्हारे दोनों पत्र पढ़ लिये हैं। तुम्हारी उर्दू-लिखावट मेरे लिए काफी साफ नहीं है। मैंने पत्रपर लगभग एक घंटा लगाया और केवल उसका सार ही समझ सका। देखता हूँ कि यह तुम्हारे अंग्रेजी पत्रका भावानुवाद ही है। यदि तुम अपना दिमाग शान्त और स्थिर रख सको तो मैं समझता हूँ कि तुम्हें फिलहाल परिवारके साथ रहना चाहिए और तब आश्रम जाना चाहिए। यदि तुम्हें लगे कि अपने लोगोंके साथ रहते हुए तुम्हारे मनका शान्त रह सकना असम्भव है तो तुम्हें नूरबानूके साथ रहना चाहिए।

क्या इससे तुम्हारे सभी सवालोंका जवाब मिल जाता है? यदि नहीं तो फिर लिखो और अंग्रेजीमें लिखो। अंशतः उर्दूमें भी लिखो।

मैं डॉ० शर्माको लिखूँगा।

तुम्हारे आ सकनेकी मुझे खुशी हुई। तुम्हें अपना खोया हुआ वजन फिर हासिल करना चाहिए।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २५०) से।

५९२. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

२८ मई, १९३२

चि० पण्डितजी,

स्व० पण्डितजीके[1] प्रति कर्त्तव्यकी दृष्टिसे शिष्योपर कोई वन्धन होनेकी वात पर मुझे सन्देह है। किन्तु तुम सवको ऐसा लगा इसलिए तुम्हारा कुछ-न-कुछ करना आवश्यक ही हो गया, ऐसा कह सकते है।

लक्ष्मीबहनको जब वहाँसे ही कोई आये तव पत्र लिखवा भेजना। या फिर नारणदास लिखे। मुझे कई वार बिलकुल अन्तमे ही खवर लगती है।

रामभाऊ अव ठीक हो गया होगा। यह सच है, जो घोडेपर चढता है, वह गिरता भी है।

अस्पृश्यताको मै पूरी तरह धार्मिक दृष्टिकोणसे ही देखता हूँ। इसलिए अलग निर्वाचन-मण्डल कदापि नही वनना चाहिए। और अगर उनके स्थान सुरक्षित करना कायदेमें आ जाता है तो उससे सवर्ण हिन्दुओकी परीक्षा नही होती और वह अपने कियेका प्रायश्चित्त भी नही कहा जा सकता। 'अस्पृश्य' के साथ सौदेवाजी नही करनी है। उनके मनमे जो सन्देह है, वह निकलना चाहिए। अभी वात समझमें न आई हो तो फिर पूछना। भूल-चूकसे भी ये विचार प्रकाशित न होने पाये।

मुलाकाते बन्द कर दी जायें, यह भी सम्भव है।

वापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २२७)से, सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

५९३. पत्र : रामचन्द्र ना० खरेको

२८ मई, १९३२

चि० रामभाऊ,

हड्डीपर जरव आ गई, इसकी चिन्ता मत करना। व्यायाम करनेवाले सभी लोगोको ऐसी अकस्मात् चोटे आ जाती है। अब तो हड्डी ठीक वैठ गई होगी।

तेरे जवाबसे मुझे ठीक मदद मिली है। उस तरह चलानेसे चक्रको हाथ लगाकर रोकना मुमकिन हो गया है। युक्ति समझ गया हूँ, उसपर अभी पूरा अधिकार नही कर पाया हूँ।

१. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर।

तेरी गुजरातीमें अभीतक गलतियाँ होती हैं। उन्हें, और अक्षरोंको सुधारना। वजन जितना था फिर उतना हो गया, इसके लिए धन्यवाद।

जब कोई अधिकार मिले तो यह समझना चाहिए कि अधिक सेवा करने और नम्र बननेका अवसर मिला है।

जिसे सचमुच आवश्यकता हो, दान उसे ही दिया जाना चाहिए। और ठीक समयपर दिये जानेपर ही वह योग्य होता है; और देनेका अभिमान रखे बिना दिया गया हो तो 'दिया', ऐसा कहलायेगा।

अहिंसा अर्थात्, अपने स्वार्थके लिए किसीको दुःख न देना, मनकी ऐसी वृत्ति और ऐसा आचरण अहिंसा कहलाती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २९३)से, सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे।

५९४. लक्ष्मी जेराजाणीको

२८ मई, १९३२

चि० लक्ष्मी (बोरिवली)[1]

अगर छोटा कागज काट-कसरके विचारसे ही काममें लाया गया हो और अगर सभीको तू इसी तरह पर्चियोंपर लिखती है तो तेरा ऐसा करना ठीक है।

काका को छाजन कैसे हो गई? इस समय उनके पास कौन है?

गंगाबहनको हर हफ्ते पत्र लिखता हूँ।

स्याहीसे लिखते हुए गलती हो जाये तो उसे जरूर काट देना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८११)से, सौजन्य: पुरुषोत्तम दा० सरैया।

१. बम्बईके एक उपनगर।

५९५. पत्र: शारदाबहन चि० शाहको

२८ मई, १९३२

चि० शारदा,

बीमारी तेरा पीछा ही नहीं छोड़ती, यह क्या बात है? सत्यकी जय होती है, इसका यह अर्थ नहीं किया जा सकता कि हम जब चाहें तभी उसे जय मिलनी चाहिए। इसके सिवा यह भी नहीं कहा जा सकता कि हम जिसे सत्य मान रहे हैं, वही सत्य है। इसलिए हमें ऐसा ही कहना चाहिए, 'हमने जो सोचा है, यदि वह सत्य होगा तो उसकी अवश्य जय होगी'।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९११)से; सौजन्य: शारदाबहन गो० चोखावाला।

५९६. पत्र: एस्थर मेननको

२९ मई, १९३२

रानी बिटिया,

यह मेरे मौनका समय है। तुम्हारा लम्बा-सा पत्र, जो मेरे लिए कोई खास लम्बा नहीं है, मिला है। पिछली बार मैं तुम्हें यह बताना भूल गया कि मुझे तुम्हारी भेजी हुई पुस्तक मिल गई है। मैं जितनी जल्दी हो सकेगा उसे पढ़ूँगा। पहलेसे ही हर मिनट किसी कामके लिए नियत होता है। इसलिए पढ़नेको कुछ भी नया या करनेको कोई नया काम सामने आता है तो जबतक वह इतने अधिक महत्त्वका नहीं लगता कि उसके लिए चल रहे कामको रोकना जरूरी हो, उसे अपनी पारी आनेका इन्तजार करना पड़ता है।

भावना तो हृदयकी होती है। यदि हम हृदयको शुद्ध न रखें तो भावना हमें गलत रास्तेपर ले जा सकती है। हृदय शुद्ध रखना घर तथा घरकी हर चीजको साफ रखने-जैसा है। हृदय वह स्रोत है जिससे भगवानका ज्ञान मिलता है। यदि स्रोत ही दूषित हो तो अन्य हर उपाय व्यर्थ है। और यदि उसका विशुद्ध होना निश्चित हो तो किसी अन्य चीजकी जरूरत नहीं है।

यह पत्र दाहिने हाथसे लिखा है; क्योंकि बायाँ हाथ दाहिनेसे भी बदतर हो गया है। चिन्ता करनेकी कोई बात नहीं है। केवल उसे पूरा आराम मिलना चाहिए। इसलिए मैं ऐसे चरखेसे कातता हूँ जिसमें पैडिल है और दाहिने हाथसे सूत निकालता हूँ।

हम तीन हैं; और सब अच्छे हैं।

हमारी सबकी तरफ़से स्नेह। बच्चोंको चुम्बन।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सं० १११) से; सौजन्य : भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार। माई डियर चाइल्ड, पृष्ठ ९१ से भी।

५९७. पत्र : गोसीबहन कैप्टेनको

२९ मई, १९३२

तुम्हारे खतसे खुशी हुई। जालभाई मुझे लिखनेका कष्ट करे, ऐसी आशा मैं नहीं करता। यह तो परिचारिकाओंका, तुम्हारा, काम है। बीमार तो खाता है, सोता है, शिकायतें करता है और बौस जमाता है। पिछली दो बातें न करे तो उसे देवता कहना चाहिए। मैं आशा रखता हूँ कि बादमें बैसाखी नहीं रखनी पड़ेगी।

दूसरोंके लिए पुस्तकें चुननेमें मैं बिलकुल निकम्मा हूँ, तुम्हारे लिए भी; हालाँकि तुम मेरे इतने नजदीक हो। असलमें पढ़ने लायक पुस्तक तो जीवनकी पुस्तक है, और उसे तो तुम थोड़ा-बहुत पढ़ ही रही हो। फिर किताबें तो, जिनके पास कोई सेवाका काम न हो, उनके मनोरंजनकी चीज हैं। कोई सोच सकता है कि कम-से-कम यहाँ पढ़नेको बहुत समय मिलता होगा। मगर कातने और कामकी तैयारीकी पढ़ाईके बाद विनोदके लिए पढ़नेका समय ही नहीं मिलता। लेकिन मुझे अपना व्याख्यान बन्द करना चाहिए।

तुम्हारी तबीयत तो अच्छी है? नरगिसबहनका सिरदर्द बन्द हुआ? उनके बारेमें सरकारका जवाब आया है कि मैं उनसे नहीं मिल सकता। सरकार जरूर यह सोचती होगी कि वे राजनीतिक मामलोंमें सक्रिय भाग लेती हैं या उन्हें राजनीतिकी छूत लगी हुई है।

अब मेरे बायें हाथसे काम न करनेकी बारी है। बुढ़ापा बहुत जोरसे द्वारपर खटखटा रहा है?[1]

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ १८५-६।

१. साधन-सूत्रमें ये दो पंक्तियाँ गुजरातीमें हैं।

५९८. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२९ मई, १९३२

चि० प्रेमा,

इस बार तेरा पत्र नहीं आया, फिर भी मैं लिख रहा हूँ। क्योंकि इस पत्रके आश्रम पहुँचनेतक तू भी वहाँ पहुँच चुकी होगी। और सम्भवत. मेरे पत्रकी आशा रखेगी।

तुम सब मिलकर गयी, यह ठीक हुआ। बातें तो करनेके लिए हो ही क्या सकती थी? और थोड़े समयमें हो भी क्या सकती थी? सुशीलाको मैंने जान-बूझकर खास समय नहीं दिया। क्योंकि जितना बने उतना समय तुझे, अम्तुलको और शारदाको देना था। सुशीलाको कोई खास बात तो शायद पूछनी ही नहीं थी?

लड़के और लड़कियाँ मुझे जो पत्र लिखते हैं, उनमें ऊटपटाँग सवाल पूछते हैं; और मुझे डर है कि वे भी सिर्फ पूछनेके लिए ही पूछते हैं। उन्हें एक बार अच्छी तरह समझाना। पत्र लिखनेकी कला भी कुछ अंशतक सीखनी जरूरी है।

तू यात्राके अनुभव लिखेगी, ऐसी आशा रखता हूँ।

क्या तू धुरन्धरसे मिली थी? और किसीसे मिली?

वजन तो बढ़ाया ही होगा?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२८७)से। सी० डब्ल्यू० ६७३५ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक।

५९९. पत्र : वेणीलाल गांधीको

२९ मई, १९३२

चि० वेणीलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा कष्ट ऐसा ही था जिसमें शक्ति लौटनेमें देरी अनिवार्य है। धीरज रखकर शक्ति पानेकी कोशिश करो। यह नया जन्म पाने-जैसा हुआ। इसका अधिक-से-अधिक सदुपयोग करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९१७)से, सौजन्य: वेणीलाल गांधी।

६००. पत्र : दाऊदभाईको

२१ मई, १९३२

तुम्हारा पत्र अच्छा आया। बुरे विचारों और वृत्तियोंके खिलाफ शेरकी तरह जूझना। जूझना हमारा धर्म है। जीत होना ईश्वरके हाथ है। हमारा सन्तोष जूझनेमें ही है। हमारा जूझना सच्चा होना चाहिए। सत्संगमें रहना। उसके लिए सद्वाचन चाहिए। बम्बई-जैसे शहरमें सद्वाचन ही सत्संग है। और मेरे खयालसे बहन नूरबानूका दर्शन भी सत्संग ही है। वह निहायत नेक और पवित्र औरत है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १८७।

६०१. पत्र : मगनलाल प्रा० मेहताको[1]

२१ मई, १९३२

वेनिससे तेरा पत्र मिला है। जहाजमें समय कैसे बिताया, रास्तेमें क्या-क्या देखा, क्या खर्च किया, वगैरह बातें लिखे, तो मुझे तेरी वर्णन करनेकी शक्ति, सादगी और तेरे विचारोंका पता चलेगा। . . .[2] घूमने-फिरनेके व्यायामको अपनाकर शरीर खूब मजबूत बना लेना। जो काम खुद कर सके, वह दूसरेसे न कराना। जहाँ पैदल जा सके, वहाँ सवारीका इस्तेमाल न करना। शरीरमें गर्मी अँगीठीके पास बैठकर न लाना, कसरतसे लाना। . . .[3]

डॉक्टरको पत्र नियमित रूपसे लिखना। उन्हें हिसाब भेजना। यह याद रखना कि माँ-बाप अपने बच्चोंके पत्रोंसे कभी अघाते नहीं हैं। तेरी छोटी-से-छोटी खबर भी आयेगी, तो उन्हें अच्छी लगेगी। डॉक्टरकी नजर तुझपर है, उन्हें सन्तोष देना।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १८६-७।

---

१. डॉ० प्राणजीवनदास मेहताका कनिष्ठ पुत्र।

२. और ३. साधन-सूत्रके अनुसार।

६०२. पत्र : भाऊ पानसेको

२९ मई, १९३२

चि० भाउ,[1]

तुम्हारा पत्र मिला। विनोबाके प्रवचनमे से जितना आसानीसे भेज सकते हैं इतना हि भेजो। यदि शक्य है तो श्याहिसे लिखो। विनोबा बोलते थे ऐसे तुमने लिखे कि विनोबाने हि लिख रखे थे? तकली शिक्षा अच्छी हो रही है। आश्रममें सब सीख लेवे तो बहोत ठीक होगा।

मौनकी एक मिनिट थी उसकी पाच करनेका अर्थ यह था कि सबको ज्यादा शाति[2] मिले। ऐसा प्रतीत होता था कि सब विव्हलचित रहते थे। यदि सब सद्-भावसे मौन रखेंगे तो अतर्ध्यान होनेमे बहोत सहाय मिलेगी।

जीवित लोगोकी मूर्तिका ध्यान अच्छी बात नहि है। जिसका ध्यान करे उसमें पूर्णताका आरोपण होता है, होना चाहिए। जीवितोमे किसीको पूर्ण न कहे जाय। रामायणादिमे जो चित्र आते हैं वे अच्छे नहि होते है। किंतु मूर्तिकी आवश्यकता क्यो? ईश्वर निराकार निर्गुण है। उसका ध्यान क्यो न करे? यदि यह अशक्य है तो आकारका ध्यान किया जाय। अथवा अपनी कल्पनाकी मूर्तिका। गीता माताका हि ध्यान क्यो नहि? उसे कामधेनुकी उपमा दी है। इस धेनुका ध्यान किया जाय, और इसमे बहोत अर्थ पाये जाते है। कैसे भी हो जीवितोकी मूर्तिका ध्यान हानिकर हो सकता है इसलिए त्याज्य समजो।

रामेश्वरजीसे लिखो मैंने तीन चार पत्र उनको लिखे हैं। विनोबाने चक्की पीसनेका आरभ किया और जमनालालजीने २० रतल गमाया यह खबर कृष्णदासने दी थी।

बद्ध कोषके लिये इतने उपचार हैं। सब साथ चल सकते हैं।

(१) प्रात.कालमे गरम पानी नमक और लिंबु पीना, नमकके बदल गुड या मध हो सकता है।

(२) रात्रीको पेट पर मिट्टीकी पुल्टीस बाधकर सोना।

(३) थोड़े दिन दालका त्याग करना।

ऐसे तीन दिन करनेसे अच्छा न हो तो तीन दिन तक केवल पानीमे उबाली हुइ भाजी हि खाना। गरम गरम खा जाना। जिसको तादलजा कहते हैं वह भाजी उत्तम। उसके साथ लिंबु और नमक ले सकते हैं।

बापुके आशीर्वाद

मूलकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७२९) से। सी० डब्ल्यू० ४४७२ से भी; सौजन्य: भाऊ पानसे।

१. विनोबाजी के साथी कार्यकर्ता।

२. देखिए "पत्र: नारणदास गाधीको", ४/९-५-१९३२।

६०३. मृत्यु-बोध[1]

३० मई, १९३२

आश्रममें अबतक मुझे नीचे लिखी मौतोंकी बात याद है:

फकीरी, व्रजलाल, मगनलाल, गीता, मेघजी, वसन्त, इमाम साहब, गंगादेवी (इन सबकी तारीखें लिख रखना अच्छा होगा)।

फकीरीकी मौत तो जैसी हुई, उसे आश्रमके लिए शोभनीय नहीं कहा जा सकता। आश्रम तब नया ही था। फकीरीपर आश्रमके संस्कार न पड़े थे। फिर भी फकीरी बहादुर लड़का था। मेरी उक्त टीकाका अभिप्राय यह है कि वह अपने खाऊपनकी बलि हो गया। उसकी मृत्यु मेरी परीक्षा थी। मुझे ऐसा याद है कि मैं आखिरी दिन सारी रात उसके पास ही बैठा रहा। सवेरे मुझे गुरुकुल जानेके लिए ट्रेन पकड़नी थी। उसे अरथीपर सुलाकर, पत्थरका कलेजा करके मैंने स्टेशनका रास्ता लिया। फकीरीके पिताने फकीरी और उसके तीन भाइयोंको यह समझकर मुझे सौंपा था कि मैं फकीरी और दूसरोंके बीच भेद न करूँगा। फकीरी गया तो उसके तीन भाइयोंको भी मैं खो बैठा।

व्रजलाल बड़ी उम्रमें, शुद्ध सेवाभावसे आश्रममें आये थे और सेवा करते हुए ही मृत्युका आलिंगन करके अमर हो गये और आश्रमकी कीर्तिको बढ़ाया। एक लड़केका घड़ा कुएँसे निकालते हुए डोरमें फँसकर फिसल गये और उनके प्राण छूट गये।

गीता शान्तिसे 'गीता' का पाठ सुनती हुई चली गई। मेघजी नटखट लड़का माना जाता था; पर बीमारीमें उसने अद्भुत शान्ति रखी। बच्चे अक्सर बीमारीमें बहुत हैरान होते हैं और पास रहनेवालोंको हैरान करते हैं। मेघजी को लगभग आदर्श रोगी कह सकते हैं। वसन्तने बिलकुल सेवा ली ही नहीं। प्राणघातक चेचकने एक या दो दिनमें ही उसके प्राण ले लिये। वसन्तकी मृत्यु पण्डितजी और लक्ष्मीबहनकी कठिन परीक्षा थी; उसमें वे पास हुए।

मगनलालके विषयमें क्या कहूँ? हम आश्रममें हुई मौतोंकी ही गिनती कर रहे हैं, इसलिए मगनलालका नाम यहाँ नहीं होना चाहिए। पर यह नाम कैसे छोड़ा जा सकता है? उन्होंने आश्रमके लिए जन्म लिया था। सोना जैसे अग्निमें तपता है वैसे मगनलाल सेवाग्निमें तपे और कसौटीपर सौ-फीसदी खरे उतरकर दुनियासे कूच कर गये। आश्रममें जो कोई भी है, वह मगनलालकी सेवाका साक्षी है।

इमाम साहबका अकेला ही मुसलमान कुटुम्ब अनन्य भक्तिसे आश्रममें बसा। उन्होंने अपनी मृत्युसे हमारे और मुसलमानोंके बीच अटूट गाँठ बाँध दी है। इमाम साहब अपने-आपको इस्लामका प्रतिनिधि मानते थे और इसी रूपमें आश्रममें आये।

१. यह "पत्र: नारणदास गांधीको", २६/३०-५-१९३२ के साथ भेजा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

(यहाँ अमीनाके दो बच्चे याद आते हैं। वे बहुत छोटे थे, इसलिए उनके बारेमें कोई कहने लायक बात नहीं। उनकी मृत्यु हमें सयमकी आवश्यकताका पाठ अवश्य पढ़ाती है।)

गगादेवीका चेहरा अब भी मेरी आँखोके सामने घूमता रहता है, उनकी बोलीकी भनक कानोमे पडती है। उनकी बातोका स्मरण मुझे आता ही रहता है। उनके जीवनसे हम सबको और बहनोको खास तौरसे बहुत सबक सीखने हैं। वह लगभग निरक्षर होनेपर भी ज्ञानी थी। हवा-पानी बदलनेके लिए जाने लायक होनेपर भी स्वेच्छासे इसके लिए अन्ततक इनकार करती रहनेवाली वे अकेली ही थीं। जो बच्चे उन्हे मिले, उनकी सँभाल उन्होने अपने बच्चे मानकर की। वे किसी दिन किसीके साथ झगडी हो या किसीपर क्रोधित हुई हो, इसकी जानकारी मुझे नही है। उनको जीनेका उल्लास न था, मरनेका भय न था—उन्होंने हँसते हुए मृत्युको गले लगाया। उन्होने मरनेकी कला हस्तगत कर ली थी। जैसे जीनेकी कला है, वैसे ही मरनेकी भी कला है।

मैंने इन सभी मृत्युओका स्मरण अपनेको जगाये रखनेके लिए किया है। पृथ्वी इस विश्व-मण्डलमें एक कण-जैसी है। उस कणके ऊपर हम देह-रूपमे तुच्छ कण हैं। हम एक बिलमे रहनेवाली चीटियोको गिननेमे असमर्थ हैं। चीटीसे छोटे कीटाणुओको तो हम देख भी नही सकते। विराट पुरुषके सामने तो हम इन अदृश्य कीटाणुओंसे भी अधिक छोटे हैं। इससे इस देहको जो क्षणभगुर कहा है, वह अक्षरश. सत्य है। उसका मोह क्या? उसके लिए एक भी प्राणीको हम क्यो दुःख दे? कांच से भी कमजोर—जरा-सी चोटसे टूट जानेवाली—देहको बनाये रखनेके लिए इतना उपद्रव क्यो मचाये? मौतके मानी हैं इस देहसे जीवका उड जाना। मौतका डर किसलिए? उस क्षणको दूर रखनेके लिए यह महाप्रपच क्यो? इन बातोपर बार-बार विचार करके छोटे-बडे सब दिलसे मौतका डर निकाल दे और देहमे रहकर, जबतक वह रहे तबतक, सेवाके कार्यमे उसे प्रयुक्त करे। ऐसी तैयारी करनेकी शक्ति हममे आये, इसके लिए नित्य 'गीता' के दूसरे अध्यायके अन्तिम उन्नीस श्लोकोका हमें पाठ करना चाहिए। उनका पाठ दिलसे हो तो जो चाहिए, वह उसमें मौजूद है।

[पुनश्च :]

यह लेख लिखा जा चुकनेके बाद महादेवने फातिमा, काकी[1] और बालजी की माताजी के मरणकी याद दिलाई; पर जो निष्कर्ष निकालना चाहता था, उसमे इसमे कोई फर्क नही पडता। इसलिए यह लेख जैसा है, वैसा ही रहने देता हूँ। इन शेप तीनो मौतोके बारेमे जो-कुछ मैंने सुना है, वह सब पुण्य स्मरण ही है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से।

१. काका कालेलकरकी पत्नी।

६०४. पत्र : नारणदास गांधीको

२९/३० मई, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा बडा लिफाफा मिलनेके पहले प्रेमाबहन, सुशीला, अमतुलबहन, शारदा, नूरबानू और प्यारे अली मिलकर गये। अगर कभी बहुत लोग आना चाहे तो पाँचकी जगह छ. और साततक व्यक्ति भी भेजे जा सकते है। आम तौरपर पाँचपर दृढ रहना ठीक है। इसी बार छ हो गये थे और अमीनाके बच्चे तो थे ही। फिर भी मैंने तुम्हे जो सख्या सूचित की है, उसपर दृढ रहना अच्छा होगा जिससे कभी किसीको बुरा लगनेकी गुँजाइश न रहे। वल्लभभाईने तो यह देखकर कि पाँचकी सख्या पूरी हो गई है, तुम्हारा नाम काट दिया था। यदि इसी कारण तुम न आये हो अथवा आना जरूरी नही था, इसलिए नही आये हो तो यह ठीक ही है। मुमकिन है, यह सब लिखना निरर्थक भी हो। मीराबहनके विषयमे अभीतक निर्णय नही आया। फिर भी यदि अस्वीकृति आ जाये तो मिलना बन्द ही समझना चाहिए।

लक्ष्मीदेवी, जो यहाँ जेलमे है, आश्रममे चश्मा छोड आई है। यह बात उन्होने मेरे द्वारा लिखवाकर भेजी है। मिल जाये तो किसीके साथ भेज देना। अगर कोई आनेवाला न हो तो डाकसे भेज देना। उसीके साथ २० तोला हीगकी गोलियाँ भी भेज देना। 'बा का पत्र सीधा भेज दिया गया'—इसका यही अर्थ है न कि सुपरिंटेंडेंटकी मारफत? यदि यही अर्थ हो तो वहाँ तलाश करवाना। तुम यहाँ जो डाक भेजते हो, उनमे लिफाफेके दो सिरोमे से एक सिरेपर ही टिकट लगाते हो। जबतक दूसरे सिरेपर भी न लगाओ, तबतक काम नही चलता। इसलिए अच्छा यही होगा कि दोनो सिरोपर टिकटे लगाई जाये या फिर दूसरे सिरेपर मुहर लगा दी जाये। दोमे से जो ठीक लगे वही करना।

प्रति घटा एक आना देनेकी बातके विषयमे तुम वहाँ चर्चा भले ही करो, किन्तु स्वय अपने अनुभवके विचारसे यदि एक बहीखाता स्वतन्त्र रूपसे रख लो तो इससे बहुत मदद मिलेगी। फिलहाल जो बहीखाता रहता है, वह तो रहेगा ही। यह तो एक अतिरिक्त वस्तु होगी। यदि अपनी बात मैं ठीक-से समझा सका होऊँ तो इसमे लिखा-पढीके योग्य बहुत ही कम होगा। अर्थात्, कामके बहुत बढनेकी गुजाइश नही है और हमे यह भी मालूम हो जायेगा कि सचमुच मेरे कथनमे कोई तथ्य है अथवा नही। यदि एक महीनेका हिसाब मिलानेपर यह मालूम पडे कि सचमुच जो खर्च होता है उसमे, और मैंने जो हिसाब रखनेकी रीति बताई है, उसके आधारपर आनेवाले खर्चमे बहुत अन्तर है और अगर हम यह समझे कि यह अन्तर कभी समाप्त नही किया जा सकता और हमारा यह समझना ठीक सिद्ध हो, तो

मेरा मन कुछ दूसरी ही तरहसे सोचने लगेगा। मेरा ऐसा विश्वास है कि इस तरह हिसाब रखनेसे ऐसे परिणाम दिखेंगे जो हमें आश्चर्यचकित कर देंगे। कई बार हम अपने आलस्यके कारण बडे अज्ञानमे पडे रह जाते है, ऐसा मैंने अनुभव किया है और इसकी सम्भावना अधिक है कि अगर हम इस तरह हिसाव लिखकर देखें तो हमने जो झूठी कल्पनाएँ की होगी, वे दूर हो सकेगी। हम इसके आधारपर अपनी भूल सुधार सकेंगे। इसलिए फिलहाल तो मैं यही मानता हूँ कि मेरी विचार-सरणीमे भूल नही है और इसका परिणाम सुन्दर होगा। हमारे मनमें इस भ्रमके उत्पन्न होनेका मेरी समझमे यह कारण है कि सैकडो वर्षोसे प्रत्येक धन्धेकी मजदूरी अलग-अलग आँकी जाती है और हिसाव लगानेकी इसी पद्धतिको ठीक समझा जाता है।

क्या तुमने हरिलालका वह पत्र देखा था जो इस बार आया था? वह ठीक-ठीक अक्षरतक नही लिख सका। काँपते हुए हाथसे पत्र लिखा है अर्थात्, या तो वह अत्यन्त आवेशमें लिखा गया है अथवा शरावके नशेमे। भाषामे तो आवेग और उद्दण्डताके सिवाय और कुछ है ही नही। सामान्य व्याकरणकी ओर भी ध्यान नही दिया है। शब्द अधूरे छोड दिये है और हस्ताक्षर भी पूरे नही किये। मेरा खयाल है कि अब हम इसे भूल जाये। ईश्वरकी इच्छा होगी तो सुधरेगा। इसकी आँख खोलनेके विचारसे भी यह आवश्यक है कि यह हम सवके अभिप्रायको स्पष्ट रीतिसे समझ ले। तुमने लिखा है, हरिलालके नामके 'दोनों' पत्र मिल गये। जो पत्र हमने गुम हो गया माना था[1] क्या वह मिल गया? यदि मिला हो तो क्या तुमने उसकी मुहर वगैरहकी जाँच की?

बिजली लगवानेसे हाथके दर्दमे कोई लाभ हुआ नही लगता। शुरुमे एक-दो दिन ऐसा लगा कि शायद कुछ लाभ हो जायेगा। किन्तु फिलहाल परेशानी दाये हाथको लेकर नही, वाये हाथकी कोहनीको लेकर है। डॉक्टर इसमे बिजली नही लगा रहा है। रेडियमका इलाज करनेकी वात सोच रहा है। मैं मगनचरखा चलाते हुए बाये हाथको किसी भी प्रकारका काम कदापि नही देता, फिर इस विषयमे चिन्ताका कोई कारण नही है। अभीतक जो तकलीफ है, वह हाथसे काम लेते समय ही होती है अन्यथा दर्द विल्कुल नही होता। खम्भाताको हड्डीके विशेषज्ञके रूपमें वुलवानेके बारेमें जो हो जाये, वही ठीक है। यो उसके लिए मजूरी तो आ गई है। किन्तु यदि मीराबहनके विषयमें मजूरी नही मिलती तो इस मजूरीका उपयोग नही हो सकता। मुझे ऐसा कुछ ध्यान था कि पहलेके मजूर-शुदा पाँच नाम मैंने तुम्हे भेज दिये थे। उनमे से तीन तो तुम्हे मालूम हो ही गये है, वाकीके दो है — त्रिवेदी और लेडी ठाकरसी। यदि जयन्तीप्रसादकी कन्याको तुम सँभाल सको तो वहुत अच्छी बात है। दाँडी-कूचमे मेरे ऊपर ऐसी छाप पडी थी कि जयन्तीप्रसाद नियमोका पालन करनेकी दिशामे प्रयत्नशील है।

१. ई० ई० डॉयलके नाम अपने ७ मई, १९३२ के पत्रमें गांधीजी ने २८ अप्रैलके अपने एक पत्रका उल्लेख किया है जो उन्होंने आश्रममें अपने पुत्रको भेजा था किन्तु जो उसके पास पहुँचा नहीं था। यहाँ शायद संकेत उसी पत्रकी ओर है।

चिमनलाल और शारदा ठिकानेपर आते ही नहीं हैं, यह बात दुःखदायी है। तत्काल इस विषयमें जो विचार सूझ रहे हैं, उनको यही लिखे दे रहा हूँ। अलग पत्र नहीं लिखूँगा। यही उनके नाम लिखा है, वे ऐसा मान लें। शिवाजी की तबीयत नरम-गरम रहती थी। उसने, जितना तत्सम्बन्धी साहित्य मिल सका, उसे पढा और खान-पान तथा व्यायामके उपचारोंका सहारा लेकर वह अपने शरीरको ठिकानेपर ले आया। चिमनलालको भी कुछ ऐसा ही करके देखना चाहिए। शिवाजी ने जैसा किया, वे दोनों भी ऐसा ही करें, कहनेका यह उद्देश्य नहीं। किन्तु चिमनलाल आश्रममें पर्याप्त रहा है, उसने विचार भी किया है, मेरे प्रयोग भी देखे हैं, इसलिए सम्भव है कि वह अपने शरीरको माफिक आनेवाली चीज खोज निकाले। इसमें विचित्र कुछ नहीं है। आश्रममें इस विषयकी बहुत-सी पुस्तकें हैं। सूर्य-किरण-चिकित्सा (क्रमोपैथी) से सम्बन्धित एक छोटी पुस्तक भी अवश्य है। इसका प्रयोग तो बहुत सरल है। जिस डॉक्टर[1] ने अमतुलबहनका इलाज किया था, वह इसका बहुत उपयोग करता है। हलके आसनोंका असर भी हो सकता है। थोडा समय निकालकर इनके विषयमें पढ जाना चाहिए। मेरी समझमें डॉक्टरके इलाजकी अपेक्षा यह अधिक अच्छे और सात्विक उपाय हैं। यह तो हम रोज ही देखते हैं कि डॉक्टरी इलाज भी अनेकोंपर लागू नहीं होता। यह सारा शास्त्र ही अत्यन्त अधूरा है। और बहुत कुछ तो अनुमानपर आधारित है। चूँकि हर शरीरकी प्रकृति अलग-अलग होती है, इसलिए सबपर लागू होनेवाला कोई एक इलाज है ही नहीं, ऐसा कहनेमें अति-शयोक्ति नहीं है। शारदाके विषयमें मेरा यह खयाल है कि हम उपाय जानते हैं किन्तु फिर भी उनका उपयोग नहीं किया। इसमें शारदाकी त्रुटि भी रही होगी। उसे आहिस्तासे समझाकर इलाजकी दिशामें प्रोत्साहित करना चाहिए।

मैं मानता हूँ कि जमनाका राणावाव जाना अच्छा हुआ और पुरुषोत्तम साथ थे इसलिए उसके विषयमें चिन्ताका कोई कारण नहीं बचता। पारनेरकरका मामला बडा उलझा हुआ है। जो हो सके सो करना। टाइटसके नाम मेरा पत्र पढ लेना। वहाँकी गर्मीके सामने यहाँकी गर्मी हँसकर उड़ा देने योग्य ही कही जायेगी। इसलिए हमारी बाहरी और भीतरी दोनों ही प्रकारकी तपश्चर्या मिथ्या है। तुम्हारी तपश्चर्या ईर्ष्या करने योग्य है। तुम इसमें उत्तीर्ण हो सकोगे, ऐसी आशा है और यही आशीर्वाद भी।

यदि मेरे पत्रोंका हिन्दीमें नियमपूर्वक अनुवाद न किया जाता हो तो इसको एक पक्का नियम ही बनवा देना; भले ही गुजराती न समझनेवाले दो-तीन लोग ही क्यों न हों। यदि वे लोग अनुवाद न माँगें तो बात अलग है।

३० मई, १९३२

सावित्रीबहन अर्थात्, श्रीमती स्टेडेनैथको मैंने पत्र लिखा था, उसने जो पता दिया था, उसी पतेपर। किन्तु डाकखानेसे वापस आ गया है। उसे तुम्हारे पास भेज रहा हूँ। लिफाफा भी साथमें है। यदि तुम्हारे पास उनका अधिक विस्तृत पता

१. डॉ० हीरालाल शर्मा।

हो तो ठीक पता लिखकर इस पत्रको रजिस्ट्रीसे भेज देना। वह अवश्य ही मेरे पत्रका रास्ता देख रही होगी। जवाब न मिलनेसे दुःखी हो रही होगी। मिल जाये तो मुझे उसका विस्तृत पता लिख भेजना।

फादर एल्विनने सुझाया है कि हम यहाँ हर शुक्रवारको एक निश्चित ईसाई भजन गायें और उसी समय उसी दिन हर हफ्ते उनके ईसाई मित्र भी वही भजन गायेंगे। इस तरह हार्दिक सहयोग विकसित हो सकेगा। यह सुझाव पिछले शुक्रवारको जब उनका पत्र मिला, तभीसे महादेवने स्वीकार कर लिया और इस पत्रके उत्तरस्वरूप ही 'प्रेमल ज्योति'[1] गाया। अर्थात्, यही भजन निश्चित हुआ है। पण्डितजी से सलाह लेकर, यदि वे पसन्द करें तो वहाँ भी हर शुक्रवारको शामकी प्रार्थनाके समय इसे गाना। तुम देख पाओगे कि अब मैंने दाहिने हाथसे लिखना शुरू कर दिया है। यहाँके डॉक्टरोंका निश्चित मत है कि मुझे बायें हाथकी कोहनीको पूरा आराम देना चाहिए। यदि ऐसा नहीं किया तो दर्द धीरे-धीरे बढ़ेगा। इसलिए मैंने बायें हाथसे लिखना भी छोड़ दिया है। एक-दो दिनमें पूरा हाथपर प्लस्तर बाँध दिया जायेगा। वैसे यह पढ़कर चिन्ता करनेका कोई कारण नहीं है। क्योंकि अभीतक इस हाथकी कोहिनीके पास काम लिये बिना दर्द नहीं हुआ। वर्षाके पहले छप्पर सुधारनेके विचारसे ही पट्टी बाँधी जायेगी। डॉक्टरोंको पूरा विश्वास है कि इसका खुराकसे सम्बन्ध नहीं है। इस तरहका दर्द कई बार टेनिस खेलनेवालोंको भी हो जाता है और डॉक्टरोंका खयाल है कि मैं अनेक वर्षोंसे कातते रहनेके कारण टेनिस खेलनेवालोंकी अपेक्षा इस हाथकी कोहनीसे अधिक काम ले चुका हूँ। इसलिए अब उसे ये लोग पूरा आराम देना जरूरी मानते हैं।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८८२९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. देखिए "पत्र : वेरियर एल्विनको", २७-५-१९३२।

६०५. पत्र : गुलचेन लम्सडनको[1]

३० मई, १९३२

प्रिय बहन,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मुझे अच्छी तरहसे याद है कि सर हेनरी लॉरेंस १९२२ या २३ मे इस जेलको देखने आये थे और उनका यह खयाल सही है कि तब मै अपना समय मुख्यत 'डिक्लाइन एण्ड फाल ऑफ दि रोमन एम्पायर' पढने या चरखा कातनेमे बिताता था। यह भी सच है कि उन्होने मुझे काफी खुश पाया था। लेकिन यहाँ कोई 'सुन्दर बगीचा' न तो तब था, और न अब है। हाँ, आसपास कुछ लम्बे पेड थे, जो अब भी हैं। एक साधारण हिन्दुस्तानी जेलकी सीखचोवाली सपाट कोठरियाँ ही इसके कमरे हैं। कोठरियोकी दृष्टिसे इनमे हवा और प्रकाशकी ठीक व्यवस्था है। इसलिए जहाँतक आसपासके दृश्यका सम्बन्ध है, ऐसी कोई बात नही कि मेरी याददाश्त मुझे धोखा दे रही हो। कारण, यह लिखते समय मेरे आसपास ठीक वही दृश्य है, जो सर हेनरीके मुझसे मिलनेके समय था। इसलिए सर हेनरीने जो वर्णन किया है उसका यदि तुम्हारे ऊपर ऐसा प्रभाव पडा हो कि यह कोई परी-लोक है तो वह निश्चय ही भ्रमोत्पादक है। आखिर खुशी तो एक मानसिक अवस्था है; और जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मै एक युगसे कठिन जीवनका अभ्यस्त हो चुका हूँ। इसलिए मैंने अपनी खुशीको आसपासके हालातसे अलग रखना सीख लिया है।

हृदयसे आपका
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५२७) से, सौजन्य: श्रीमती ह्यू लम्सडन, कनाडा।

१. नाम **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-१, पृष्ठ १८९ के अनुसार।

६०६. पत्र : ए० आर० तिजारेको

३० मई, १९३२

प्रिय तिजारे,

मुझे अभी आपका पत्र मिला। पिछले जिस पत्रका आपने उल्लेख किया है, वह मुझे मिला ही नही। मै उसी वक्त तुरन्त उसका जवाब देता। सरदार वल्लभभाईको भी, जो यह पत्र लिखाते समय उपस्थित है और जिन्होने मेरा सारा पत्र-व्यवहार देखा है, ऐसी कुछ याद नही कि आपका कोई भी पत्र आया हो। जो भी हो, मै वियनामे किसीको नही जानता। मै वहाँ कभी नही गया। लेकिन मुझे कोई सन्देह नही कि जब आप विशेषज्ञको अपनी पूरी कहानी बतायेंगे तो वह आपका इलाज उसी तरह करेगा जैसा कि उसने ऐसे रोगियोंका पहले किया होगा। यदि इसका कोई लाभ हो तो तिलक विद्यालय, नागपुरका प्रधानाचार्य होनेके सबूतके तौर पर आप इस पत्रका उपयोग कर सकते है। मै आशा करता हूँ कि आपको वहाँके इलाजसे लाभ होगा। मुझे खुशी है कि विट्ठलभाईके स्वास्थ्यमे सुधार हो रहा है। कृपया उन्हे मेरा प्रणाम कहिए।

हृदयसे आपका
मो० क० गांधी

ए० आर० तिजारे
(प्रिंसिपल, तिलक विद्यालय, नागपुर)
द्वारा पेंशन बी० फेफर
विलहेम एक्सनर्गेस २८
वियेन ९, आस्ट्रिया

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्सट्रेक्ट्स, होम डिपार्टमेन्ट, स्पेशल ब्रांच, फाईल सं० ८०० (४०) (३), भाग-१, पृष्ठ २४१।

६०७. एक पत्र[1]

३० मई, १९३२

मेरी रायके अनुसार एकता यान्त्रिक उपायोसे स्थापित नही होगी, उसके लिए तो लोक नेताओके हृदय और रवैयेमें परिवर्तन होना चाहिए। मैं धर्मको मनुष्यकी अनेक प्रवृत्तियोमे से एक नही मानता। हर काम धर्म-वृत्तिसे भी हो सकता है और अधर्म-वृत्तिसे भी। इसलिए मेरे लिए धार्मिक कामोको हाथमे लेनेके लिए राजनीतिक काम छोडनेकी बात है ही नही। मेरा तो प्रत्येक काम, छोटी-से-छोटी प्रवृत्ति भी, उसीसे नियन्त्रित होती है जिसे मैं अपना धर्म मानता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग–१, पृष्ठ १८९।

६०८. पत्र : कुसुम देसाईको

३० मई, १९३२

चि० कुसुम (बड़ी),

अच्छा हुआ तू मिल आई। प्यारेलाल मेरे उत्तरके लिए अधीर हो गया था। मैंने यहाँसे एक कार्ड सीधा लिखा है। महादेव बादमें लिखता रहेगा। अब क्या करनेका विचार है, यह लिखना। प्यारेलालको पत्र लिखनेवाली हो तो बता देना कि रामकृष्ण और विवेकानन्दकी पुस्तकें[2] अभी पढ़ रहा हूँ। पढ़ लेनेपर रामेश्वरदास[3]को भेज दूंगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८३९) से।

१. पत्र प्रापकने गांधीजीको राजनीतिसे संन्यास लेने और इस्लाम, ईसाईधर्म और बौद्धधर्मके जो समान मूल सत्य हैं, उनका प्रचार करनेको कहा था।

२. संभवतः रोमाँ रोलाँ-द्वारा लिखित; देखिए "दैनन्दिनी, १९३२" के अन्तर्गत २२ और २३ मईकी प्रविष्टियाँ।

३. धूलियाके रामेश्वरदास पोद्दार।

६०९. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

३० मई, १९३२

भाई रामेश्वरदास,

तुम्हारा पत्र मिला है। उसके पहले लिखा गया मेरा वह पत्र जो मैंने आश्रमकी मारफत भेजा था, मिल गया होगा। कातनेके व्रतपर दृढ रहना। जबतक मन दृढ न हो जाये, तबतक अब एक भी नया व्रत मत लेना। किन्तु जो व्रत ले चुके हो और जो आजतक निभ रहे हैं, उनपर दृढतासे अमल करते रहना। जो व्यक्ति किसी एक छोटे कहे जानेवाले व्रतपर चाहे जितनी कठिनाइयोंके रहते हुए भी दृढ बना रह सकता है, उसके लिए वही व्रत अन्तमें पतवार बन जाता है। माँ और भौजाई यदि प्रेमपूर्वक समझानेसे समझ जाये तो ठीक है, नही तो उनके विरोधको शान्त रहकर सहन करना। उनके साथ किसी प्रकारकी जबर्दस्ती नही होनी चाहिए। बच्चेको गुरुकुल कांगडी भेज सको तो अच्छा। वहाँ उसे हिन्दी, सस्कृत और अग्रेजी सिखाई जायेगी। हाईस्कूलमें जो विषय पढाये जाते है, लगभग वे सभी वहाँ उसे सीखनेको मिलेगे। गुरुकुल जानेसे इनकार करे तो फिर शान्तिनिकेतन चला जाये। वहाँ जाना हो तो बगला सीखनी चाहिए; वहाँ भी न जाना चाहे तो काशी विद्यापीठमें प्रवेश ले ले। घर रहकर विद्याभ्यास नही हो पायेगा। उसे हाईस्कूलसे अलग कर लेनेके बाद फिरसे वही भेजने लगना योग्य नही कहा जा सकता और उसकी पढ़ाई अस्तव्यस्त हो जाये, यह भी उचित नही है। इसलिए ऊपरके तीन स्थानोमे से कोई एक ठीक रहेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८१) से।

६१०. एक पत्र[1]

३० मई, १९३२

मेरी राय यह है और डॉक्टर भी यही मानते हैं कि किसी भी स्त्रीपर केवल बलात्कार होना सम्भव नही है। मरनेके लिए तैयार न होनेके कारण स्त्री अन्तमें अत्याचारीके वशमें आ जाती है। मगर जिसने मौतका डर बिलकुल छोड़ दिया है, वह बलात्कार होनेके पहले ही मर मिटेगी। यह लिखना आसान है, करना कठिन है; इसलिए हमें यह मानना शोभा ही देगा कि जो स्त्री खुशीसे अत्याचारीके वशमे नही हुई, उसपर बलात्कार ही हुआ है। ऐसी स्त्रीको गर्भ रह जाये तो वह गर्भपात हरगिज न करे। जिसपर बलात्कार हुआ है, वह किसी भी तरह निन्दाके

१. दि डायरी ऑफ महादेव देसाई, भाग-१, में प्रेषितीके नामका संक्षेप "एस" दिया गया है।

लायक है ही नही। वह तो दयाकी ही पात्र है। जो स्त्री अपनेपर हुए बलात्कारको भी छुपाना चाहती है, उसे किस बातका अधिकार है — गर्भपातका अधिकार है या नही—यह कौन कह सकता है? इस तरह भयभीत हुई स्त्री अधिकार न होनेपर भी अधिकार मान बैठेगी और जो जीमे आयेगा, करेगी। बलात्कार हो जानेके बाद स्त्रीको आत्महत्या करनेका बिलकुल अधिकार नही है, आत्महत्या करनेकी कोई जरूरत भी नही है।

मेरे जो जवाब तुम्हे मिले या मै दूसरोको लिखूँ, वे जेलसे लिखे होनेके कारण प्रकाशित नही होने चाहिए। मै यहाँसे जो अनेक पत्र लिखता हूँ, वे प्रकाशित होते रहे तो यह बिलकुल ही अशोभनीय बात है। सरकार शायद इस तरह पत्रोका प्रकाशित होना बर्दाश्त कर भी ले, मगर सत्याग्रही इस तरहकी छूट नही ले सकता। सत्याग्रहीको कितनी ही मर्यादाओका अपने-आप पालन करना होता है। यह वैसी ही मर्यादा है। मेरे विचारोको सुनने या अपनानेके लिए दुनिया अधीर नही है। हो तो भी ऐसे समय धीरज रखनेकी जरूरत है। मै खुद अपनी रायकी इतनी बड़ी कीमत नही लगाता हूँ। हरएक रायके लिए यह भी नही कहा जा सकता कि आज दी हुई राय कल मै बदलूंगा नही। तुम्हारे-जैसोको निजी राय दूँ, इसमे मुझे हर्ज मालूम नही होता। मै मान लेता हूँ कि मेरे स्वभाव और मेरी खामियो वगैरहको ध्यानमे रखकर मै जो राय दूंगा, उसकी तुम्हारे-जैसे तुलना कर लेगे।

अब तुम्हारे सवालोको लेता हूँ। तुम्हारे कितने ही सवाल न पूछने लायक होते है। जिज्ञासुको जिसपर श्रद्धा हो, उससे तात्विक निर्णय कम-से-कम माँगने चाहिए। काल्पनिक शकाओका निवारण कभी न कराना चाहिए। अपनेको कोई कदम उठाना हो और उसके बारेमें शक हो, तो उसपर सवाल जरूर पूछा जा सकता है। किसी घटनाके बारेमे पूछना हो, तो उस वक्त उस घटनाका हाल बताना चाहिए। उस घटनासे कोई सार्वजनिक प्रश्न कभी नही बनाना चाहिए, क्योकि इस तरह प्रश्न बनाते समय असली चीजमे से कुछ-न-कुछ रह जानेकी सम्भावना है। इसलिए सार्वजनिक प्रश्नका उत्तर घटना विशेषपर लागू करनेमे जोखिम है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृष्ठ १८८-९।

६११. दैनन्दिनी, १९३२[1]

४ जनवरी, सोमवार, यरवदा[2]

चरखेपर १९० तार। सुबहके तीन बजे पुलिसने आकर गिरफ्तार कर लिया। भजन गाकर विदा हुए। एल्विन,[3] प्रिवा, मिल्स, आदि थे। इसी अवसरपर वल्लभभाईको भी पकड लिया। जेल एक साथ गये और साथ ही रखे गये। कह सकता हूँ कि दिनमे आराम किया। स्टीमरसे उतरनेके बाद आज पहली बार घूम सका। विल ड्यूरेन्टकी पुस्तक[4] शुरू की। आज कोई ताजा फल नही खाया। दो सेर दूध पिया।

५ जनवरी, मंगलवार

चरखेपर १७२ तार। आज भी अच्छी तरह आराम किया। मुलाकात आदिके बारेमे हमारी क्या इच्छा है, इस विषयमे एक टिप्पणी[5] सिर्फ इन्स्पेक्टर जनरलकी जानकारीके लिए भेजी। ड्यूरेन्टकी पुस्तक चल रही है।

६ जनवरी, बुधवार

चरखेपर १९६ तार। मेजर मार्टिन मिलने आये। आज 'टाइम्स ऑफ इंडिया' मिला। ड्यूरेन्टकी पुस्तक पूरी की। क्रोजियरकी पुस्तक[6] शुरू की। अभी थकावट है। वजन लिया गया, मेरा १०५½ [पौंड] सरदारका १४७।

७ जनवरी, गुरुवार

चरखेपर १९७ तार। क्रोजियरकी पुस्तक पूरी की। ब्रेल्सफोर्ड[7]की [पुस्तक] शुरू की। अभी अच्छी तरह आरामकी जरूरत। आज पपीता लिया। कलसे टमाटर लेना शुरू।

८ जनवरी, शुक्रवार

चरखेपर १९५ तार। सर मुहम्मद शफीके देहान्तके बारेमे लेडी शफीको तार। सातवलेकरने 'पुरुषार्थ'[8] भेजी। गुजराती पुस्तक आई।

१. इसके पूर्वके अंशके लिए देखिए खण्ड ४८।
२. २६ जनवरी, १९३२ से गांधीजी ने यरवदा-जेलको यरवदा-मन्दिर कहना शुरू किया था।
३. वेरियर एल्विन।
४. दि केस फॉर इंडिया।
५. दैनन्दिनीमें उल्लिखित यह टिप्पणी और कतिपय अन्य पत्र अप्राप्य हैं।
६. ए थर्ड टु गांधी।
७. रैबेल इंडिया।
८. मराठी भाषाकी एक पत्रिका।

९ जनवरी, शनिवार

चरखेपर २१२ तार। आज ब्रेल्सफोर्डकी 'रैबेल इंडिया' पूरी की। त्रिवेदी[1] के यहाँसे फल और शाककी दो टोकरियाँ आईं।

१० जनवरी, रविवार

चरखेपर १९० तार। महमुदअली अल हज सालमीनकी पुस्तक 'इमाम हुसैन' कल शुरू की। आज समाप्त की। अब उसकी 'खलीफा अली' . . . पुस्तक पढ़ रहा हूँ। आज तीन बजे मौन शुरू किया। अभी ज्यादा कातने या ज्यादा काम करने योग्य शक्ति नहीं आई। सोये रहना अच्छा लगता है। आज दिनमें तीन बार सोया। त्रिवेदीके भेजे नारंगी और अंगूर खाये।

११ जनवरी, सोमवार

चरखेपर १६३ तार। आज थोड़ी डाक आई। उसमें मीरा. काशीनाथ, कलावती और प्रभावतीके पत्र हैं। अय्यर नामक वकीलने स्काउट-सम्बन्धी पुस्तक भेजी है।

१२ जनवरी, मंगलवार

चरखेपर २०६ तार। आज फिर पत्र और पुस्तकें आईं। पत्र लिखनेकी अनुमति मिली। नारणदास, बा, मीरा. राबा, अमीना. आदिको लिखा।[2] प्रभावती और काशीनाथको भी लिखा।

१३ जनवरी, बुधवार

चरखेपर १८५ तार। कमिश्नर क्लेटन मिलने आये। प्रभावतीका पत्र मिला। नारणदासको पत्र लिखा, साथ महालक्ष्मी आदि और चन्द्रशंकर तथा हेमप्रभादेवीको पोस्टकार्ड भेजे। डाह्याभाई वल्लभभाईसे मिल गया। आज खजूर मँगाई।

१४ जनवरी, गुरुवार

चरखेपर १८५ तार। जो पत्र कल वाइसरायको लिखना शुरू किया था आज पूरा किया। कल [खलीफा] अलीकी जीवनी पढ़कर पूरी की। आज होरकी चौथी सील[3] शुरू की। आश्रमसे पूनियाँ, चप्पल, धुनकी आई। सैम्युअल होरको पत्र भी लिखा। आज वजन लिया गया। मेरा उतना ही निकला। सरदारका ३ रतल कम हो गया।

१५ जनवरी, शुक्रवार

चरखेपर १९४ तार। मेजरको वाइसराय और होरके लिए पत्र दिए। होरकी पुस्तक समाप्त होनेवाली है। आज डाह्याभाई फिर सरदारके लिए डॉक्टरको लेकर आया।

१. पूना कृषि विद्यालयके रूपशंकर पीताम्बरदास त्रिवेदी।

२. नारणदास गांधीको पत्र लिखे जानेका उल्लेख १२ जनवरीकी दैनन्दिनीमें किया गया है; किन्तु उन्हें लिखे गये इस पत्रपर ११ जनवरी अंकित है। देखिए पृष्ठ ४।

३. दि फोर्थ सील।

१६ जनवरी, शनिवार

चरखेपर १६३ तार। कुमारप्पाकी मातरकी [ताल्लुकाकी] जाँच-सम्बन्धी पुस्तक[1] आई। आज 'क्रॉनिकल' मिला। दूसरे कई पत्र भी आये। होरकी पुस्तक समाप्त की। मैक्डॉनल्ड[2] की [पुस्तक] शुरू की।

१७ जनवरी, रविवार

चरखेपर १९६ तार। आज ठीकसे पढ़ सका। त्रिवेदीके यहाँसे फिर फल और शाक-सब्जीकी दो टोकरियाँ आईं।

१८ जनवरी, सोमवार

चरखेपर १६६ तार। पत्र — आश्रमकी डाकमें — नारणदास, खुशालभाई, चम्पा, प्राणजीवन, अब्बास, पारनेरकर, सुरेन्द्र, बालकृष्ण, छोटेलाल, दुर्गा, रतिलाल, भणसाली, वसुमती, पद्मा, वालजी, प्रभुदास, रामदास, मीरा, छोटालाल गावी (महुआ), मगनलाल शामजी, उर्मिला देवी, अब्दुल मजीद (वारावकी), रहाना, कमला नेहरू, निर्मला जोशी, हकीम अब्दुल लतीफ (दसुया) सुरबाला देसाई (सूरत), प्रोफेसर त्रिवेदीके। मैक्डॉनल्डकी पुस्तक पूरी की।

१९ जनवरी, मंगलवार

चरखेपर २२८ तार। आज समाचारपत्र, मुलाकातो, आदिके सम्बन्धमें खबर आ गई। सन्तोषजनक मान सकते हैं। प्यारेलाल आदिके पत्र आये। लेडी ठाकरसीने फल भेजे। मातर ताल्लुकाकी जाँच-सम्बन्धी पुस्तक कल शुरू की।

२० जनवरी, बुधवार

चरखेपर १७३ तार। आज कलक्टर मिलने आये। समाचारपत्र भेजनेके बारेमें। 'ट्रिब्यून,' 'लीडर' और 'हिन्दू' को पत्र लिखे। कुमारप्पाकी पुस्तक, रामनाथनकी पुस्तिका और हेकी 'इंडियन बाइबिल्स' पूरी की। रस्किनकी 'सेंट जार्जेज गिल्ड' शुरू की।

२१ जनवरी, गुरुवार

चरखेपर २०५ तार। आज आश्रमसे डाक आई। काशीनाथका भी पत्र आया। स्टेनली जोन्सने अपनी नई पुस्तक भेजी। कल और आज पत्र लिखे — लेस्टर, हॉपकिन्सन, सर जॉर्ज बर्न्ज, नारणदास, (कुसुम, प्यारेलाल, मैत्री, महावीर,) एस्थर मैनन, रेंच, मेरी लॉडरको। आज रस्किनकी गिल्ड-सम्बन्धी पुस्तक पूरी की। शाह[3] की 'फैडरल फाइनेन्स' शुरू की।

१. जे० सी० कुमारप्पाकी पुस्तक सर्वे ऑफ मातर ताल्लुका।
२. ट्रैवॅलॉग।
३. के० टी० शाह।

२२ जनवरी, शुक्रवार

चरखेपर २३१ तार। कलके पत्र डाकमे डालनेके लिए दे दिये। इसके अतिरिक्त रामानन्द बाबू, 'क्रॉनिकल,' मेरी पीटरसनको भी पत्र लिखे। कर्नल स्टीलने हम दोनोकी जाँच की।

२३ जनवरी, शनिवार

चरखेपर १५३ तार। आज दूध नही लिया। फिर फलकी टोकरी आयी। कल सर फ्रेडरिक साइक्सको पत्र लिखा। आज मेजरको दिया। दिनमे थोडे-से पत्र आश्रमको लिखे। आज हेमप्रभादेवी आदिके पत्र मिले। रैहानाका भी।

२४ जनवरी, रविवार

चरखेपर १६० तार। आज सुबह क्रेसवेल मिलने आये। आज फिर दूध नही लिया। दोपहरको काफी पत्र आश्रमको लिखे।

२५ जनवरी, सोमवार

चरखेपर २०१ तार। आश्रमकी डाक पूरी की। उसमे ६१ पत्र और १४ वे अध्यायपर प्रवचन। दूसरे पत्रोमे प्रभावती, रैहाना, हेमप्रभा, कगाणी सुन्दरम और विश्वनाथ थाणोरकरको पत्र है। फिर बहुत-सी पुस्तके आई उनमे इगरसोलके भाषण है। जोशिया[1] को इन पुस्तकोकी पहुँच लिखी।

२६ जनवरी, मंगलवार

चरखेपर २११ तार। कलके पत्र डाकमे डालनेके लिए दिये। आज दूध लिया। खजूर मँगाई। 'पुरुषार्थ' का गीता-अक आया। एमर्सनके पत्रका मसविदा तैयार किया। यह इतना लम्बा हो गया और इतना इसमे तल्लीन हो गया कि सातका घटा नही सुना, इससे प्रार्थनामे आधे घटेकी देरी हो गई। विच्छनचरण पटनायक, काशीनाथ, एडिथ स्कॉट, होप तथा नारणदासको पत्र लिखे। १४ वाँ अध्याय उसके पत्रके साथ भेजना भूल गया। 'इजिप्टका नाश'[2] शुरूकी।

२७ जनवरी, बुधवार

चरखेपर १९० तार। कलके पत्र सुपरिटेंडेटको दिये। आज प्रोफेसर शाहको एक पत्र लिखा। वह भी उनको दे दिया। मीरा, प्यारे अली, नूरबानू और राधा आये। 'हिन्दू' और 'लीडर' आ गये। आश्रमकी डाक आई। गिरि-कुटुम्बके बारेमे नारणदासको पोस्टकार्ड लिखा। काफी पत्र लिखे।

२८ जनवरी, गुरुवार

चरखेपर १७२ तार। एमर्सन और नारणदासके पत्र सुपरिटेडेटको दिये। पत्र लिखे। 'लीडर' आ गया।

१. डॉ. जोशिया ओल्डफील्ड, वेजिटेरियनके सम्पादक, 'वेजवाटर वेजिटेरियन सोसायटी' के अध्यक्ष, जिसकी स्थापना गांधीजी ने इंग्लैंडमें अपने अध्ययन-कालमें की थी; देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ ५०-१।

२. रुइन ऑफ ईजिप्ट।

२९ जनवरी, शुक्रवार

चरखेपर १७९ तार। आज 'ट्रिब्यून' आया। और किताबे आई। नारणदास और प्रभावतीके पत्र आये। एरी[1] को बम्बई जानेका हुक्म मिला। होरकी पुस्तक साथ ले जानेके लिए कहा। कुछ पत्र लिखे। अब भी नीद खूब आती है।

३० जनवरी, शनिवार

चरखेपर तार। १६८ अभीतक काफी नीदकी जरूरत बनी है। दिनमें बहुत-से पत्र लिखे।

३१ जनवरी, रविवार

चरखेपर २०७ (दो सौ सात) तार। 'इजिप्टका नाश' पुस्तक पूरी की। हेजकी पुस्तक[2] शुरू की। विलायतसे कई पत्र आये। उनमे एस्थरका पत्र भी था।

१ फरवरी, सोमवार

चरखेपर २३५ तार। आज पत्र लिखे और [भेजनेके लिए] तैयार किये। आश्रमके लिफाफेमे मणिलाल (धीरू, मगल, गुलाब), चिन्तामणि, 'हिन्दू,' कालीबाबू, प्रभावती, कमला नेहरू, चन्द्रहास, केशवराम दवे (और उसकी बहनो), एमा हार्कर, खुशाल शाह, स्वामी चिदात्मानन्द, वीरेन्द्रनाथ, हरिराम मोहनदास, प्रभाकर, बिहारीलाल, कान्तिलाल त्रिवेदीको पत्र। शाहने पाँच पुस्तके भेजी। और डाक आई, उसमे दक्षिण आफ्रिकासे मणिलालका पत्र था। क्वीन वीसापुर गया। डाह्याभाई सरदारसे मिलने आया।

२ फरवरी, मंगलवार

चरखेपर १६४ तार। लेडी विट्ठलदासको फल न भेजनेके बारेमे लिखा। सुपरिंटेंडेटको डाकमे डालनेके लिए दूसरे पत्र दिये। ए० ई० की 'कैंडिल ऑफ दि विजन' पूरी की। किन्लेकी 'मनी' शुरू की। जोन विडिकिस, गर्ट्रूड केलर, डी वेलेरा, रेवरेन्ड डब्ल्यू हेज, प्रोफेसर हॉइलैड, कार्ला, सारमानीको पत्र लिखे।

३ फरवरी, बुधवार

चरखेपर १५२ तार। आज तार इतने कम क्यो हुए समझ नही पाया। पूनियोकी सख्या तो ठीक थी। कल लिखे हुए पत्र सुपरिंटेंडेटको डाकमे डालनेके लिए दिये। मजिस्ट्रेट मिलने आया। वजन लिया। वल्लभभाईका १४४ ½ पौड, मेरा १०७। श्री भूपतिनाथका चरित्र पढा। दोपहरको लेडी विट्ठलदास, प्रो० त्रिवेदी, दामोदर और विद्या मिलने आये। मीराने तलेके लिए चमडा और शहद भेजा। रामदास, छगनलाल जोशी, सुरेन्द्र, सोमभाई-सहित १९० लोग साबरमतीसे आये। मणि,

१. साधन-सूत्रमें स्पष्ट नहीं है।

२. द बुक ऑफ दि काउ।

लीलावती, नन्दूबहन, आदि बहने आईं। उन्हे बेलगाँव भेज दिया गया। आश्रमकी डाक आई।

४ फरवरी, गुरुवार

चरखेपर २१० तार। कुछ पत्र आश्रम लिखे। मीराको अलग पत्र लिखा। लेडी ठाकरसीने शहदकी दो बोतले भेजी।

५ फरवरी, शुक्रवार

चरखेपर २१० तार। सुपरिटेडेटसे अन्य कैदी साथियोसे मिलनेके सम्बन्धमे बात की। उसे पत्र लिखा। 'मॉडर्न रिव्यू' आ गया। सुपरिटेडेटने कल कोहनीकी मालिशके लिए तेल दिया।

६ फरवरी, शनिवार

चरखेपर २४४ तार। आज जकाउल्लाकी जीवनी[1] शुरू की। आश्रम पत्र लिखे। इसके अतिरिक्त मेरी बार, करीमनगर, रामानन्द बाबूको भी पत्र लिखे।

७ फरवरी, रविवार

चरखेपर १८० तार। 'गीता'के १६वे अध्यायका सार लिखा। बगालके गवर्नरपर एक बालिका[2]-द्वारा हमलेका समाचार पढ़कर दु:ख हुआ। ईश्वर-सम्बन्धी भाषणका अनुवाद किया।

८ फरवरी, सोमवार

चरखेपर २४१ तार। पत्र लिखे — अजना देवी, ललिता, बुकेन, अगाथा हेरिसन, जेनकॉफ, डेविस, नागरदास, एस्थर, रैहाना, खन्डेलवाल, अम्बिकाईमक्कमको, आमश्रको — ३६। किन्लेकी 'मनी' पूरी की। शाहका ६० वर्षका आर्थिक इतिहास[3] पूरा किया। आज दूध नही लिया। बादामकी लुगदी ली।

९ फरवरी, मंगलवार (रमजान ईद)

चरखेपर १९२ तार। कल लिखे हुए पत्र डाकमे भेजनेके लिए दिये। ईद होनेके कारण मेजर नही आया। प्रभुदासके पकड़े जानेका समाचार मिला।

१० फरवरी, बुधवार

चरखेपर १८५ तार। आज पूंजाभाई, जूठाभाई, शकर, अमीना और कान्ति मिलने आये। आश्रमसे डाक आई। कान्ति कई पुस्तके दे गया है। उनमें पडितजी की भेजी हुई बर्वेका 'संगीतशास्त्र' भी है। बम्बईके गवर्नरका पत्र आया। आज वजन लेनेपर मेरा १०५$\frac{3}{4}$ [पौंड] और वल्लभभाईका १४१$\frac{1}{2}$।

१. सी० एफ० एन्ड्रयूज-द्वारा लिखित जकाउल्ला ऑफ दिल्ली।

२. देखिए पृष्ठ ७३।

३. सिक्स्टी ईयर्स ऑफ इकॉनॉमिक एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ इंडिया।

११ फरवरी, गुरुवार (वसंत पंचमी)

चरखेपर १७० तार। लीलावती मुंशीका पत्र आया। पत्र — मीरा, मनु त्रिवेदी, नारणदास, लीलावती मुंशीको।

१२ फरवरी, शुक्रवार

चरखेपर १८३ तार। कलके पत्र भेजे। आज आश्रमकी डाक जारी रखी। काफी पत्र लिखे।

१३ फरवरी, शनिवार

चरखेपर २०७ तार। प्रोफेसर ग्लेन क्लार्कने अपनी पुस्तकें भेजी। एक-दो दूसरी पुस्तकें भी आईं। आज दोपहरको भी आश्रमकी डाक लिखी। मेजरने खून आनेके कारण वल्लभभाईके पाखानेकी जाँच की।

१४ फरवरी, रविवार

चरखेपर २०१ तार। दोपहरको पत्र लिखे। शामको १७ वे अध्यायका अनुवाद किया।

१५ फरवरी, सोमवार

चरखेपर २१७ तार। डाकमे ६८ पत्र। नारणदासको आश्रमके लिए पत्र और १७ वाँ अध्याय और इसके अतिरिक्त वेस्ट, नरसी प्रेमजी, जीवराज मेहता, फिलिप हार्टोग, के० टी० शाह, छगनलाल, मेहताब भाई, गर्टूड केलर, रसिकलाल चुनीलाल, वेलशी रणशी, हरिलाल गोविन्दजी, मगनलाल मेहता, निर्मला पड्याको पत्र।

१६ फरवरी, मंगलवार

चरखेपर १८९ तार। आज मेजर मार्टिन मिलने आये। दूसरे कैदियोसे मिलनेके बारेमें चर्चा हुई। परिणामस्वरूप दूसरा पत्र लिखा। कलका पत्र अधिकारीको दिया। टैगोरकी दी गई 'पुष्पाजलि'[1] पुस्तक मिली। ए० ग्रे[2]की जीवनी मिली। महाराजा बीकानेरको तार। पत्र लिखे — नारणदास, झवेरचन्द, चाकेचाके[3], हनुमानप्रसाद, गौसीबहन, रामानन्द बाबू, श्रीमती गेईलको।

१७ फरवरी, बुधवार

चरखेपर १७१ तार। कल लिखे हुए पत्र अधिकारीको दिये। आज मीरा, वालजी और लीलावती मिलने आये। थोडी बहसके बाद मिलानेपर राजी हुये। मीरा कल गिरफ्तार होगी। वालजी आकाश-दर्शनकी पुस्तक लाया। तीन पत्र लाया। लेडी ठाकरसीने शहद और पपीते भेजे। मीरा साबुनका चूरा और बादाम लाई।

१. गोल्डन बुक ऑफ टैगोर।
२ और ३. शब्द स्पष्ट नहीं हैं

१८ फरवरी, गुरुवार

चरखेपर १६० तार। आज लक्ष्मीदासका भेजा हुआ 'गाडीव' आया। एन्ड्रयूजका पत्र मिला। मुझे लोग मिलने आते हैं, इसके विषयमें पूछताछ हो रही है। आश्रमसे डाक आई। आश्रमके पत्र लिखने शुरू किये। आज वजन लिया गया। वल्लभभाईका १४२ [पौंड] मेरा १०६ हो गया। लक्ष्मीदास और दामोदरदासको पत्र लिखे।

१९ फरवरी, शुक्रवार

चरखेपर १५० तार। कलके दो पत्र डाकमें डालनेके लिए आज दिये। डाह्याभाई वल्लभभाईसे मिलने आया। मैथिलीशरणने चार पुस्तकें भेजीं। विलायत जानेके बारेमें मगनका तार आया। आश्रमके पत्र लिखे।

२० फरवरी, शनिवार

चरखेपर २०५ तार। जिला मजिस्ट्रेट मिलने आये। पत्र लिखे। सुपरिंटेंडेंटके साथ ईशुके बारेमें बातचीत की। किसीने मुसोलिनीके विषयमें पुस्तक भेजी है।

२१ फरवरी, रविवार

चरखेपर १६० तार। अट्ठारवें अध्यायका भावार्थ पूरा किया। कह सकता हूँ कि आश्रमकी डाक लगभग पूरी हो गई। आज पाँचवीं चीजमें लौकीका शाक लिया। ओढ़नेका कपड़ा बदला। पुराना बहुत फट गया था।

२२ फरवरी, सोमवार

चरखेपर १६० तार। जी० एन० गोखलेने[1] धर्मशास्त्रपर लिखी अपनी पुस्तक भेजी। नारणदासको 'गीता'के भावार्थके अतिरिक्त आश्रमके ३२ पत्र हो गये। दूसरे पत्रोंमें घनश्यामदास, कमला नेहरू, रानी विद्यावती, मैथिलीशरण, जेराजाणी, रामेश्वरलाल बजाज और रैहानाको। शाहकी पुस्तक 'सिक्सटी इयर्स ऑफ इकॉनामिक एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ इंडिया' पूरी की। मैथिलीशरणकी 'पंचवटी' पूरी की। 'साकेत' शुरू।

२३ फरवरी, मंगलवार

चरखेपर १८३ तार। ईशुको एक रातके लिए भेजा है। मुलाकातोंके सम्बन्धमें अधिकारीसे बातचीत की। कलके पत्र भेजे।

२४ फरवरी, बुधवार

चरखेपर १५९ तार। सिविल सर्जनने स्वास्थ्यकी जाँच की। आश्रमकी डाक आई। पत्र लिखना शुरू किया।

१. गंगाधर नीलकंठ गोखले।

२५ फरवरी, गुरुवार

चरखेपर २२२ तार। सर सैम्युअलका पत्र आया। मीराका भी आया। आज यशवन्तप्रसाद, जीवनलाल, लेडी विट्ठलदास मुलाकातके लिए आनेवाले थे, किन्तु अधिकारीकी आपत्तिके कारण नहीं आये। मीरा, हरजीवन, ववलभाई और रणछोड़भाई कुँवरजीके मामाको पत्र लिखे, आश्रमके पत्र तो लिखे ही।

सालमीनकी मुसोलिनी-सम्बन्धी पुस्तक कल शुरू की। कल 'साकेत' पूरी की।

२६ फरवरी, शुक्रवार

चरखेपर १७६ तार। आश्रमको पत्र लिखे। कलके पत्र अधिकारीको दिये। आज २४ पोस्टकार्ड आये हैं। कल्याण प्रेससे हिन्दीकी पुस्तकें आईं।

२७ फरवरी, शनिवार

चरखेपर १९५ तार। डाह्याभाई आया। मैं भी मिला। अमेरिकासे हेनरी जॉर्ज[1] [की जीवनी] आदि पुस्तकें आईं। कुछ पत्र भी आये। बा को पोस्टकार्ड लिखा और भेजा। आश्रमको पत्र लिखे।

२८ फरवरी, रविवार

चरखेपर २०६ तार। आज रोटी ली। मुँहमें छाले पड जानेके कारण टमाटर छोड दिये। आश्रम[वासियों]को तथा कुछ दूसरे पत्र लिखे। सर फजलीको और सर सैम्युअल होरको पत्र लिखे।

२९ फरवरी, सोमवार

चरखेपर १६३ तार। कलके दो पत्र अधिकारीको दिये। आज मुंशीका और दूसरे पत्र आये। पत्र लिखे: लीलावती (मुंशी), हेमप्रभा, एस्थर, जेसी जोन्स, सुमंगल, लक्ष्मीदास, पुरुषोत्तम, मगनलाल प्राणजीवन, भगवानजी अनूपचन्द, मूलचन्द पारेख, कनु मुंशी, माधवदास गोकुलदास, नारणदासको; और इनके अतिरिक्त आश्रमके ४२ पत्र और सुकरातके मृत्यु-सम्बन्धी विचार।

१ मार्च, मंगलवार

चरखेपर १५३ तार। मुसोलिनी-सम्बन्धी पुस्तक पूरी की। डिलाइल बर्नकी 'डेमोक्रेसी' शुरू की। कलकी डाक अधिकारीको दी। घनश्यामदासकी भेजी खजूर आ गई। पत्र लिखे: राधा, रूखी, बनारसी, परशुराम, टहल रामानी, महुलीकर, दिनकर मेहता, त्रिवेदी, लेडी विट्ठलदासको।

२ मार्च, बुधवार

चरखेपर १६३ तार। लेडी रामनाथनने अपनी पुस्तक 'रामायण' भेजी; अय्यरने एक्सचेंज-सम्बन्धी, और साठेने नीति-सम्बन्धी पुस्तक भेजी। तीनोको पोस्टकार्ड

१. एक अमेरिकन अर्थशास्त्री।

लिखे। खुशालभाईकी बीमारीके सम्बन्धमें नारणदासका पत्र। आज 'बालगीता'[१] शुरू की।

३ मार्च, गुरुवार

चरखेपर २१७ तार। बा और शान्ता मिलने आईं। लेडी ठाकरसीने फल भेजे। दिनकर शहद और खजूर दे गया। आश्रमकी डाक आई। आश्रमको पत्र लिखे, कलके पोस्टकार्ड डाकमें भेजे और खुशालभाईको तार।

४ मार्च, शुक्रवार

चरखेपर २०५ तार। कुछ पुस्तकें आईं। सर जॉर्ज वर्न्स और घनश्यामदासके पत्र। वर्धासे सन्तरे आये। आश्रमको पत्र लिखे। डाह्याभाई और यशोदा आये थे।

५ मार्च, शनिवार

चरखेपर १६० तार। आजकी पाँच अटियोंमें तीन तार कम होनेकी सम्भावना है। बाहरके लोगोंसे मुलाकातके सम्बन्धमें आज सरकारी हुक्म आ गया। नारणदासको पत्र लिखा। बाकी पत्र आश्रमको लिखे।

६ मार्च, रविवार

चरखेपर १९५ तार। इन दिनों बादाम लेने छोड दिये थे, आज फिर लिये। मुलाकातके सम्बन्धमें मेजर भण्डारीको पत्र लिखा। नारणदासका पत्र डाकके लिए दे दिया। 'डेमोक्रेसी' कल पूरी की। अप्टन सिंक्लेयरकी पुस्तक 'वैट परेड' शुरू की।

७ मार्च, सोमवार

चरखेपर १८० तार। आश्रमको ३७ पत्र, इमाम साहबके सस्मरण और बिडला, क्वीन, कुसुम, श्रीमती विलियम डोनॉल्डसन, अप्टन सिंक्लेयर, ईश्वरभाईको पत्र लिखे।

८ मार्च, मंगलवार

चरखेपर १९६ तार। आज चरखेमें कमानका दूसरा सुधार कराया। लक्ष्मीदास, रैहाना, मनमोहन, आदिके पत्र आये। पत्र लिखे: रैहाना, मनमोहन, लक्ष्मी और रामचन्द्र, गर्ट्रूड कैलर्शीग, अगाथा हेरिसन, औब्रे मनी, रामगोपाल मोहता, नागरदास, कांतिलाल शाह, रामबिहारीलाल, लक्ष्मीदासको।

९ मार्च, बुधवार

चरखेपर २१५ तार। आज मेरा वजन १०५.५ निकला। वल्लभभाईका १३९। कलके पत्र डाकके लिए दिये। रामदास मिल गया है। अस्पृश्योंके सम्बन्धमें मतदाताओंकी अलग सूची बने तो क्या कर्त्तव्य है, आज इस सम्बन्धमें चर्चा की। सर सैम्युअल होरके पत्रका मसविदा भी तैयार किया। आश्रमकी डाक आई।

१. किन्तु गांधीजी ने उस समय "इमाम साहबके संस्मरण" लिखे; देखिए पृष्ठ १७५-६, और [illegible]८-१०; देखिए "पत्र: काका कालेलकरको", पृष्ठ १७७ भी।

१० मार्च, गुरुवार

चरखेपर १८९ तार। आज पुराना चरखा इस्तेमाल किया। बहुत समय लगा। मेजर एमर्सनका पत्र लाया। जयसुखलाल आदि मिलने आयेंगे। त्रिवेदीके यहाँसे अंगूर आये। महादेव आया। सर सैम्युअलके पत्रमें सुधार किया।

११ मार्च, शुक्रवार

चरखेपर १६० तार। आज मेजरने महादेवका पैर देखा। सर सैम्युअलको पत्र भेजा — गवर्नरकी मारफत। वल्लभभाईने पत्र रोकनेको नहीं कहा लेकिन पत्र भेजनेमें अपनी सहमति देनेको भी तैयार नहीं थे। उनकी रायकी कीमत नकारात्मक। महादेवने कहा, मेरे स्वभावके अनुसार ऐसा पत्र भेजा जाना चाहिए। आश्रमके पत्र शुरू किये।

१२ मार्च, शनिवार

चरखेपर २०७ तार। डाह्याभाई मिलने आया। बर्न्सकी भेजी पुस्तक मिली। आश्रमको पत्र लिखे।

१३ मार्च, रविवार

चरखेपर २०३ तार। आश्रमको पत्र लिखे। एमर्सनको पत्र लिखा।

१४ मार्च, सोमवार

चरखेपर १८५ तार। आश्रमको ४१ पत्र, इसके अतिरिक्त एक नारणदासको इमाम साहबके संस्मरण और सर जॉर्ज बर्न्स, शान्ति मेहता, भानुमती, राधा, बनारसी, रूखी, एवलिन रैंच, कीलन को पत्र लिखे।

१५ मार्च, मंगलवार

चरखेपर १५५ तार। आज काशी, जमना, मोती, लक्ष्मी, ललिताबहन, जयसुखलाल, दुर्गा, बबलो, प्रबोध मिलने आये। मार्टिनको पत्र लिखा कि हरिदास आदिसे मिलनेके बारेमें शुक्रवारतक जवाब मिल जाना चाहिए। आज त्रिवेदीके यहाँसे फल आये। 'वैट परेड' पूरी की। कार्पेन्टरकी 'एडम्स पीक टु एलीफेन्टा' शुरू की। हेमप्रभा, एलेक्जेंडर गैरी और दिनकररावको पत्र लिखे।

१६ मार्च, बुधवार

चरखेपर १८५ तार। हरिदासके सम्बन्धमें मेजर मार्टिनका उत्तर आ गया। इवन्स और रोजरकी ओरसे इंडिया ऑफिससे जवाब आया।[1] पत्र लिखाये: शाह, मूलचन्द पारेख, ओरिएन्टल यूक्लिपटस कम्पनी, चम्पकलाल, सैयद मुस्तफा हुसेन, नेपोलियन, पृथुराज शकरसागरको। कलके पत्र डाकके लिए दे दिये।

१. भारतमें आनेके पश्चात् गांधीजी-द्वारा भेजे गये उपहारकी प्राप्तिके विषयमें सम्भवत यह जवाब था। देखिए पृष्ठ ५, पाद टिप्पणी २।

१७ मार्च, गुरुवार

चरखेपर २२१ तार। कलके पत्र दे दिये। आश्रमकी डाक आई। धीरूका पत्र मिला।

१८ मार्च, शुक्रवार

चरखेपर १६० तार। कैदियोसे मुलाकातके सम्बन्धमे निर्णय आ गया है। चम्पाका दुःखद पत्र आया। आश्रमके पत्र शुरू किये। नारणदास, पेटावल[1] और हरजीवनको पत्र लिखे।

१९ मार्च, शनिवार

चरखेपर १६२ तार। कलके पत्र डाकमे डालनेके लिए दिये। जोशी, नरसिंहभाई और हरिदाससे मिला। हरिदासको खजूर भेजी। स्टोक्सकी पुस्तक मिली। बहनोसे मिलनेके बदले फिलहाल पत्र लिखकर ही सन्तोष कर लेना कबूल किया।

२० मार्च, रविवार

चरखेपर १९५ तार। 'एडम्स पीक टु एलीफेन्टा' पूरी की। 'अनघ' पूरी की। आश्रमकी डाक लिखी।

२१ मार्च, सोमवार

चरखेपर २०७ तार। आश्रमको पत्र, गगाबहनको पत्र। छगनलालको 'फेडरल फाइनेन्स', 'मनी' और 'सिक्स्टी इयर्स ऑफ इकॉनामिक एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ इडिया' भेजी। स्टोक्सकी 'सत्यकाम'[2] शुरू की।

२२ मार्च, मंगलवार

चरखेपर २२० तार। आश्रमको चार और पत्र और एक विट्ठलदासको लिखा। ये डाकके लिए दिये। शाहने इजिप्टके सम्बन्धमे पुस्तक भेजी। किसीने 'ज्ञानेश्वरी' भेजी। पत्र लिखे . लेस्टर देवी, एरिस्टार्ची, मुथु, दिनकर, मैटलर, अगाथा, हेमप्रभा, मदनमोहन, हीरालाल, हनुमानप्रसाद, जेठालालको।

२३ मार्च, बुधवार

चरखेपर १७० तार। कलके पत्र और आज जयकरको लिखा हुआ पत्र डाकमें डालनेके लिए दिया। गगाबहन मिलने आई। जेलकी बहनोने उपवास शुरू किया है। इस सम्बन्धमे मेजरके साथ जरा तेज बातचीत हुई। हरिदासको खजूर भेजी। आश्रमकी डाक आई।

१. कैप्टेन जे० डब्ल्यू० पेटावल।

२. सत्यकाम या ट्रू डिजायर्स।

दैनन्दिनी, १९३२

२४ मार्च, गुरुवार

चरखेपर १५९ तार। आश्रमकी डाक शुरू की। मेजर मार्टिन, रैहाना और डॉक्टर नॉरवुडके पत्रोका मसविदा तैयार किया। 'फॉर्स क्लेविगेरा'[1] मिली। बहनोंके उपवास छोड़नेका समाचार मिला।

२५ मार्च, शुक्रवार

चरखेपर १७७ तार। एडिथ स्कॉट, मेजर मार्टिन, रैहाना, एवलिन रेंच, हॉरेस और डॉक्टर नॉरवुडके पत्र डाकमे डालनेके लिए दिये। आश्रमको पत्र लिखे। स्टोक्सकी पुस्तक पूरी की। 'फॉर्स' शुरू की। आज बादाम और खजूर मँगाई।

२६ मार्च, शनिवार

चरखेपर २१४ तार। मेजरने समाचार दिया है कि कैदी साथियोको पत्र लिख सकता हूँ। इसलिए मीरा, मणि, जमनालाल, देवदासको पत्र लिखे और भेजे। धीरजलाल बैंकरके देहान्तके सम्बन्धमें शंकरलालको तार दिया। गंगाबहनका पत्र मिला। उसे पूनियाँ भेजी। विट्ठलदासकी भेजी खजूर आई। लेडी विट्ठलदासके यहाँसे शहद और पपीता। आज पुराने बादाम समाप्त किये। रामेश्वरका भेजा हुआ रोलाँ-लिखित विवेकानन्द और रामकृष्णका जीवन-चरित्र मिला। दूसरी पुस्तकें भी आईं।

२७ मार्च, रविवार

चरखेपर १८१ तार। आश्रमको पत्र। और शंकरलालका तार आया। उसे तथा लीलावती, एमर्सन, राघवनको पत्र। आत्मकथा [बच्चोंके लिए] प्रूफ।

२८ मार्च, सोमवार

चरखेपर १७७ तार। कलके पत्र आये। कैदियोको खजूर देनेको लेकर उथल-पुथल। आश्रमकी डाक लिखी। उसमे रस्किनके विषयमे लिखा। तारामती, नरसिंहभाईकी विमला, अमतुलको लिखा।

२९ मार्च, मंगलवार

चरखेपर २०८ तार। सर्जनने जाँच की। खजूरके सम्बन्धमे मेजरको समझाया। आश्रमकी डाक आदि आई।

३० मार्च, बुधवार

चरखेपर १७४ तार। मेजरको मुलाकातोके सम्बन्धमे पत्र लिखा। हरजीवन और 'शारदा मिलने आये। मथुरादासका पत्र आया। 'बाल आत्मकथा'का प्रूफ पूरा किया।

३१ मार्च, गुरुवार

चरखेपर १६३ तार। मथुरादासको पत्र लिखा। जयकरका पत्र मिला। आश्रमकी डाक शुरू की। बकरीका दूध मँगाना बन्द किया।

१. रस्किनकी।

१ अप्रैल, शुक्रवार

चरखेपर १८४ तार। आज कुरेशी और दो महाराष्ट्रीय भाइयोसे दो घंटे मुलाकात हुई। दो सेर बादाम आ गये।

२ अप्रैल, शनिवार

चरखेपर २०१ तार। डाह्याभाई मिलने आया। जालके सम्बन्धमे नरगिसको तार। आश्रमको पत्र लिखे। लेस्टर आदिके पत्र आये।

३ अप्रैल, रविवार

चरखेपर १९० तार। आश्रमको पत्र लिखे, लिखाए। कुछ अमेरिकावासियो को लिखाये।

४ अप्रैल, सोमवार

चरखेपर १८६ तार। डाकके लिए दिये: कमला नेहरू, जयकर, राधा, कनु देसाई, जमुदानी, चतुर्भुज शर्मा, आश्रमको लिखे ५२ पत्र। इसके अतिरिक्त नारणदासको और 'रशियाकी एक साध्वी'[1] लेख, लोवन, रेवरेड स्कडर, हैनर्सा, प्रभावती, जेराजाणी, रैहाना [पाशाभाई], सावित्री, स्टेडेनथ,[2] शभुशकर, रेवरेड स्माइलीको पत्र लिखे।

५ अप्रैल, मंगलवार

चरखेपर १८२ तार। कलके पत्रोंके अतिरिक्त शाह और एल्विनको पत्र दिये। पत्र लिखाए: मैथिलीशरण, घनश्यामदास, गडालाल, एन्ड्रयूज, त्यागी और गोपाल-दासको। आश्रमका इतिहास शुरू किया। सतराम आदिकी भेजी हुई पुस्तके आईं।

६ अप्रैल, बुधवार

चरखेपर १९२ तार। कलके पत्र डाकके लिए दिये। उनमे दुर्गाको एक पोस्टकार्ड भी डाल दिया। आज उपवास था। आज बैठनेके लिए गद्दी बनवाई। लेडी ठाकरसीके यहाँसे शहद आया। 'फॉर्स'का पहला भाग समाप्त किया। नरसिंहभाईके पत्र, 'समर्पण' और 'बुद्ध महावीर' पूरी की। 'फॉर्स'का दूसरा भाग शुरू किया।

७ अप्रैल, गुरुवार

चरखेपर १९८ तार। लक्ष्मणराव काणेको पत्र लिखा। आश्रमकी डाक शुरू की। क्रेसवेलने आकाश-दर्शनपर दो पुस्तकें भेजी। आर्मीनियासे दरी आई। तीन सेर बादाम आए। मीराका पत्र आया। जयकरकी भेजी हुई वेदान्त-सम्बन्धी पुस्तक आई। नानाभाईका पत्र आया। नानाभाई भट्ट, करतार सिंह और बडी एडिथ रॉबर्ट्स[3]को पत्र लिखाये।

१. महादेव देसाईकी ए सेंटली वुमन ऑफ रशिया। देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", ३-४-१९३२।

२. फ्रांसिस्का स्टैंडेनथ।

३. आर्मिनियावासी, जिन्होंने दरी भेजी थी।

८ अप्रैल, शुक्रवार

चरखेपर २३४ तार। कलके पत्र डाकके लिए दिये। मेजर मेहता मिलने आये। जमनालाल, एस्थर, नरगिसके पत्र आये। आश्रमकी डाक लिखी। हनुमानप्रसाद, रामेश्वर, हंगरीके पादरी और अम्बालाल मोदीको पत्र लिखाये।

९ अप्रैल, शनिवार

चरखेपर २३५ तार। डाह्याभाई मिलने आया। हीरालालकी ओरसे आकाश-दर्शनकी पुस्तक लाया। हीरालालका पत्र आया। मेजर मेहताने हाथकी जाँच की। महादेवके पैरकी जाँच की। दोनोपर आयोडीन लगाई। थोडे पत्र लिखवाये।[1]

१० अप्रैल, रविवार

चरखेपर २३७ तार। आश्रमको पत्र लिखे। मंगल सिंह, भाईलाल, दिनकर, नागेश्वर प्रसाद, चारुबाबू, इन्द्रप्रसाद, जमनालाल, ब्रजकृष्णको पत्र लिखवाये।

११ अप्रैल, सोमवार

चरखेपर ३८३ तार (१९४+१८९=३८३)। आज लगातार कातकर ३७५ तार पूरे किये। आजतक एक दिन छोड़कर अटी पूरी होती थी। आज और कल रोज एक-एक पूरी हो गई। जहाँतक हो सके इतना रोज कातनेका विचार है। सर सैम्युअलका कारवाँ-सम्बन्धी मेरे पत्रका जवाब आया[2]। आश्रमकी डाक पूरी की। कलके पत्र सुपरिटेंडेंटको दिये। कमला नेहरूके लिए तार दिया है। वह आई० जी० के पास जायेगा। आश्रमको आकाश-दर्शनपर लिखा है।

१२ अप्रैल, मंगलवार

चरखेपर (१८६+१८७)=३७३। कोष्ठकमे दिये गए पहले अक आज गिने गए तारोंके है। दूसरे अंक तकुएपर लपेटे आजके तारोके है। आश्रमकी डाक दे दी। २८ पत्र थे। गगाबहन और छगनलालको पत्र वल्लभभाईसे लिखवाये। शंकरलाल मारवाड़ीको पोस्टकार्ड लिखा। ये भी एक साथ मेजरको दे दिये। दोपहरको पत्र लिखे: खम्भाता, नरगिस, नारणदास, ललिता सुबैया, शान्ति मेहता, शकरभाई मेजर मार्टिन तथा हीरालालको।

१. साधन-सूत्रमें यहाँ पाण्डव गीताका यह श्लोक है:

नाथ योनिसहस्रेषु येषु येषु व्रजाम्यहम्।
तेषु तेष्वचलाभक्तिरच्युतास्तु सदा त्वयि।
या प्रीतिरविवेकानां विषयेष्वनपायिनी।
त्वामनुस्मरतः सा मे हृदयान्मापसर्पतु।

२. सर सैम्युअल होरने २८ जनवरी, १९३२को आकाशवाणीसे प्रसारित अपने वक्तव्यमें कहा था: “हमारी नीति सरल, सीधी और सहानुभूतिपूर्ण है। वह एक प्रगतिमुखी किन्तु दृढतासे युक्त नीति है। . . . कुत्ते भौंकते रहते हैं किन्तु कारवाँ आगे बढ़ता जाता है।”

१३ अप्रैल, बुधवार

चरखेपर (१८८+२०७)=३९५ तार। आज सवेरे हीरालाल, रामधारी, लक्ष्मी राजा, धीरू रेवाशंकरको पत्र लिखे। गंगाबहन और छगनलालको आकाश-दर्शनकी नकल और पत्र। ये और कलके पत्र मेजरको दिये। आज उपवास है तो भी वजन १०४५ निकला। पिछले बुधवारको १०३५ निकला था। आश्रमकी डाक आई।

१४ अप्रैल, गुरुवार

चरखेपर १६८+२१७=३८५ तार। राधिका, एस्थर और हेमप्रभा देवीके पत्र डाकमें डालनेके लिए दिये। आज मोहनलाल, मणिभाई और धुरन्धरसे मिला। शंकरराव देव उपवास कर रहा है। उससे मिला। वह नहीं माना। बली, मनु, कुँवरजी, कुसुम मिल गये हैं।

१५ अप्रैल, शुक्रवार

चरखेपर १५८+२४८=४०६ तार। रणजीतका तार आया। देवको पत्र लिखा। देवके पास महादेवको भेजा। उसने उपवास छोड दिया। खगेन्द्रप्रिय बरुआको खादीकी पहुँच लिखी। तीन सेर बादाम आये। पुराने अभी समाप्त नहीं हुए।

१६ अप्रैल, शनिवार

चरखेपर १२७+२८२=४०९ तार। मेजर पॉल मिलने आये। डाह्याभाई मिलने आया। खम्भाताका पत्र आया। हीरालालका और दूसरे पत्र भी आये।

१७ अप्रैल, रविवार

चरखेपर ९३ तार। आज चरखा बायें हाथसे चलाया। काफी परिश्रम करना पडा। लेकिन तार रोज अधिक हो जाया करते थे, इस कारण अटी पूरी हो सकी। बायें हाथसे चक्र चलाकर दाहिने हाथसे तार खींचनेमें उद्देश्य बायें हाथकी दुखती कोहनीको आराम देना है। आज मेजर मेहताने दोनों हाथोंमें बिजली लगाई। खम्भाता, महावीर, हीरालाल और शंकरभाईको पोस्टकार्ड लिखवाये।

१८ अप्रैल, सोमवार

चरखेपर ८५ तार बायें हाथसे। आश्रमको पत्र लिखे। आज नये बादाम शुरू किये। आज ग्यारह बजेतक काम किया। कलके पत्र और एक पिछला पत्र डाकके लिए दिया।

१९ अप्रैल, मंगलवार

चरखेपर ८५ तार बायें हाथसे। आश्रमके ३९ पत्र तथा 'आकाश-दर्शन' और नारणदासका पत्र दिया। नानाभाईके यहाँसे सौ-एक पुस्तकें आई। सरकारने आश्रमसे बाहरके व्यक्तियोंसे मुलाकातके सम्बन्धमें पाँच लोगोंके लिए अनुमति भेजी है, और त्रिवेदी जब मुझे जरूरत हो। छगनलाल, रामदासके पत्र। रामदासको जवाब। बिजलीका उपचार चालू है।

२० अप्रैल, बुधवार

चरखेपर ११२ तार। आश्रमके पत्र आये। गगावहन और छगनलाल जोशी तथा सुरेन्द्रको पत्र लिखे। मेजरको दिये। आश्रमकी डाक आई। घनश्यामदास, नानाभाईको पत्र लिखाये। नारणदास, चतुर्भुजको पत्र लिखवाये। सुमगल और कान्ताको पत्र भेजे।

२१ अप्रैल, गुरुवार

चरखेपर ९२ + ३३ तार। कर्नल डॉयलको दो पत्र काका कालेलकर आदिके विषयमे और मुलाकातोके विषयमे। लेडी ठाकरसीको रुईके वारेमे। नानाभाई, घनश्यामदास, नागरदास, चतुर्भुजको पत्र भेजे।

२२ अप्रैल, शुक्रवार

चरखेपर १८२ तार। काती हुई १७ तारीखतककी २८ अटियोको बाँधा। बाये हाथसे एक अटी आज उतारी। रैहाना, मगनलाल, प्राणजीवन, बा, मीठूवहन और कान्तिके पत्र डाकमे भेजे। मैथिलीशरण, वेरियर, मणि, काकाके पत्र मिले।

२३ अप्रैल, शनिवार

चरखेपर १३५ तार। पत्र — मणि, नरहरि, प्रभुदास, अमेडिया, खम्भाताको। डाह्याभाई मिलने आया। शिवाजी ने और हीरालाल ने खगोल-सम्बन्धी पुस्तकें भेजी। पाशाभाईने फोर्डकी एक किताब भेजी। दूसरी उर्दू रीडर समाप्त की।

२४ अप्रैल, रविवार

चरखेपर २७ + १४१ = १६८ तार। काफी सारे पत्र लिखे। पहले वचे हुए लगभग सारे पत्र पूरे कर लिये है। उर्दूकी तीसरी रीडर शुरू की। हीथकी खगोल सम्बन्धी पुस्तक शुरू की।

२५ अप्रैल, सोमवार

चरखेपर १७१ तार। पत्र — तारामती, देवदास, कुँवरजी, हरजीवन, जानकीवहन, बिन्देश्वरीप्रसाद, सत्येन्द्रनाथ गागुली, चन्द्रशकर, एल्विन, ब्रजभूषण चौधरी, शारदा कोटक, रामानन्द, लक्ष्मीदास, सुशीला नायर, राधा, वैदेहीशरण, मथुरादासको। नैयरके पाससे बुद्ध-सम्बन्धी पुस्तकें आई।

२६ अप्रैल, मंगलवार

चरखेपर ६३+९३=१५६ तार। आश्रमको लिखे पत्रोमे 'लेखा-जोखा रखनेकी आवश्यकता' लेख, मैथिलीशरण, दास्ताने, हीरालाल (शकर), हेमप्रभा, शकरलालको पत्र। आज नया मजिस्ट्रेट मिलने आया। खम्भाताकी भेजी हुई मालिश-सम्बन्धी पुस्तकें मिली। आश्रमकी डाक आई।

२७ अप्रैल, बुधवार

चरखेपर १८२ तार। पत्र — मॉड रॉयडन, डॉक्टर नैयर, 'अपना साबू', डायर, डॉयल, नटराजनको। वल्लभभाईने नाकका विशेषज्ञ डॉक्टर भेजनेके लिए मेजरको पत्र लिखा। मैने भी लिखा। आज मिल्सका पत्र आया।

२८ अप्रैल, गुरुवार

चरखेपर १००+१०१=२०१ तार। नारणदास और हरिलालके पत्र डाकमे भेजे। त्रिवेणी मिल गया है। वल्लभभाईने भोजनके समयमे परिवर्तन किया जिससे वे तीन बार कुछ खा सके। मगनलालका पत्र आया।

२९ अप्रैल, शुक्रवार

चरखेपर २०३ तार। पत्र — मगनलाल प्राणजीवनदास, पोलक, नारणदास, दिनकर मेहता, सन्तोकको। गगाबहनको लम्बा पत्र लिखा। उसे बहुत-सी किताबे भेजी। आज रामदास, तिलक विद्यालयके शिक्षक और गोकुलदास तलाटीके साथ दो घटे बैठा। सैम्युअल होर और पर्सी बार्टलैटके पत्र मिले। आज भीमजी के बादाम समाप्त हो गये। तीन रतल कल आये है। कल शुरू होगे। अप्टन सिंक्लेयर लिखित उनका जीवन-वृत्तान्त आया।

३० अप्रैल, शनिवार

चरखेपर ७१+१२६=१९७ तार। डाह्याभाई मिलने आया। उर्दूकी एक कापीबुक आई। नये बादाम शुरू।

१ मई, रविवार

चरखेपर २०८ तार। कल बर्नार्डका पत्र और फ्रांसिस एडमकी कविताएँ मिली। पत्र लिखे, लिखाये।

२ मई, सोमवार

चरखेपर ४१+१९६=२३७ तार। यशोदाके देहान्तका तार आया। होर और सेन्कीके पत्र डाकके लिए दिये।

३ मई, मंगलवार

चरखेपर १७९+१६=१९५ तार। आश्रमके लिए ४३ पत्र। उनमें सप्ताहका सार[1], प्रभावती, डाह्याभाई, बर्नार्ड, भागीरथी शिरोडकरको पत्र। आश्रमकी डाक आई। परीख दशरथलालका भेजा हुआ शहद मिला।

१. राष्ट्रीय सप्ताहका सार।

४ मई, बुधवार

चरखेपर २३९ तार। पत्र — मथुरादास, नूरबानू, लक्ष्मीदास, मजुकेगा, डॉयल, अगाथा, तारामती, कमला (भड़ौच), सुरवाला, मिल्स, लक्ष्मीदेवी, कमु, हेमप्रभा, वार्टलेट, रामदासको। मणि परीख और शकरलाल परीख महादेवसे मिलने आये। आश्रमसे कई पुस्तके और पूनियाँ आईं, धोती आई। त्रिवेदीने धोतियाँ भेजी।

५ मई, गुरुवार

चरखेपर १२० + ८० = २०० तार। पत्र — शारदा, नरसिंहन, लक्ष्मी, शकरलाल, छगनलालको पुस्तके, गगावहनको 'आकाश-दर्शन', मराठी 'पुरुषार्थ,' भजनावली और गीता अक और अनसूयावहनको पत्र। मणि परीख, वनमाला, मोहन, कुसुम, गिरधारी मिलने आये। कपडे, फल आदि लाये। मगनचरखा आया। आज वादाम समाप्त हो गये।

६ मई, शुक्रवार

मगनचरखेपर २४ तार। पत्र — वॉल्स, दामजी, दशरथलाल, शकर, नानाभाई (अकोला), इब्राहिमजीको। गगादेवीका देहान्त। आज मगनचरखा चलाया। चलानेमे कठिनाई हुई। आज मूँगफली खाई। जेलके सम्बन्धमे सरोजिनीका पत्र।

७ मई, शनिवार

मगनचरखेपर ५६ तार। पत्र — हनुमानप्रसाद, चन्दूलाल पटेल, प्रोफेसर नायक, नारणदास, मीरा, कर्नल डॉयलको (काकाके वारेमे और गुम होनेवाले पत्रोके वारेमे)। गगाबहन, सरोजिनी नायडू, छगनलाल जोशीको पत्र। डाह्याभाई मिलने आया। 'अपना साबू' आया। हीरालालने खगोलपर मुकर्जीकी पुस्तक भेजी। आज शायद पहली वार कुल्ला करते समय गलेसे खून आया। इसके छातीसे आनेकी तो सम्भावना नही है।

८ मई, रविवार

मगनचरखेपर ७१ तार। आश्रमको पत्र। मूँगफली समाप्त हो गई।

९ मई, सोमवार

चरखेपर ५९ + ३६ = ९५ तार। ये तार वाये और दाये दोनो हाथोसे काते। नये वादाम शुरू। पत्र — अप्टन सिक्लेयर, वनारसी, हीरालाल, हरजीवन, एवलिन रेंचको। आश्रमकी डाक लगभग पूरी कर दी। गंगावहन और छगनलालके पत्र आये। काँटावालाके यहाँसे चरखा, 'गीता' पर मोदीकी पुस्तक आई। 'अपना सावू' आज समाप्त।

१० मई, मंगलवार

चरखेपर १०२ तार। आज दायें हाथसे चरखा चला ही नहीं पाया। लगभग पाँच घंटे काम किया। पत्र — आश्रमको ३८, उनमें सफाई-सम्बन्धी लेख, रैहानाको पत्र। इमामसाहब कृत नबीसाहबका जीवन[1] पढ़ रहा हूँ।

११ मई, बुधवार

चरखेपर १३१ तार। आज दायें हाथसे ठीक काम हो पाया। पत्र — गंगाबहन और बिहारीलाल काँटावालाको। सुपरिंटेंडेंटके साथ वल्लभभाईके लिए डॉक्टर बुलानेके सम्बन्धमें जरा तेज बातचीत। काका आदिके सम्बन्धमें डॉयलका पत्र। शारदाबहनका पत्र। विनयचन्द्रजी की पुस्तकें। आज वजन १०५५ पौंड हुआ। वल्लभभाईका १४०.५, महादेवका १४७.५।

१२ मई, गुरुवार

चरखेपर १२६ तार, सब दाहिने हाथसे। पत्र — डॉयल, भीखाभाई, देवदास, लक्ष्मीदास, प्यारे अलीको। पण्डितजी, लक्ष्मीबहन, मथुरी और यशवन्तप्रसाद मिलने आये। नारणदासका पत्रोंका दूसरा पुलिन्दा आया।

१३ मई, शुक्रवार

चरखेपर ९० तार। आज कताईको अढाई घंटे भी नहीं दे सका। पत्र — मीरा और शारदाबहनको। सुरेन्द्र, पटवर्धन और रखडे दो घंटेसे भी ज्यादा समयतक बैठे। अप्टन सिंक्लेयरकी पुस्तकें और गोंडलसे भी पुस्तकें आईं। रोलाँकी 'रामकृष्ण' शुरू की।

१४ मई, शनिवार

चरखेपर ९७ तार। अच्छी तरह थक गया। पत्र — छगनलाल जोशी, चन्दुलालको। डाह्याभाई मिलने आया। त्रिवेदीके यहाँसे पुस्तकें आईं।

१५ मई, रविवार

चरखेपर ७८ तार। आश्रमको पत्र लिखे।

१६ मई, सोमवार

चरखेपर ९० तार। पत्र — सुशीला (फीनिक्स), त्रिवेदी, मीराको। फूलचन्दका पत्र आया। और डाक आई।

1. सीरत-अन-नबी

१७ मई, मंगलवार

चरखेपर ११५ तार। आश्रमको ४५ पत्र, उनमे त्याग-सम्बन्धी लेख, मैथिली-शरण, नटराजन, प्रतापराय मोदी, बिड़ला, फूलचन्द बापूजीको पत्र। आज काफी पत्र लिखवाये।

१८ मई, बुधवार

चरखेपर १६५ तार। पैर और हाथसे कातनेकी आदत होती जा रही है। पत्र—रामेश्वर बजाज, बिन्देश्वरी, त्रिवेदी, नानाभाई मेहता, राधा, नरसिंहन, ललिता, निर्मला मशरूवाला, बारदा उकिल, बलदेवप्रसाद, राममोहन राय (बैजवाडा) को। लेडी ठाकरसी, मणि और मैथ्यू मिलने आये। मीरासे मिलनेकी मजूरी नही मिली। आज और बादाम आये।

१९ मई, गुरुवार

चरखेपर १६८ तार। पत्र—कर्नल डॉयल और मीराबहनको। आज नये बादाम शुरू।

२० मई, शुक्रवार

चरखेपर १८३ तार। अब चरखेपर ठीक हाथ चला ऐसा मान सकते है। पत्र—सुमगल प्रकाश, तिलक, मीठूबहन, पेटिट, रणछोडजी, शास्त्री, नारणदास, गोविन्दभाई चावडा, कैलाशनाथ काटजू, कमला नेहरूको।

२१ मई, शनिवार

चरखेपर २०९ तार। पत्र—नरगिस, दिनकरको। विपिन बाबके सम्बन्धमे तार। डाह्याभाई और मणि मिलकर गये।

२२ मई, रविवार

चरखेपर १९३ तार। पत्र—काफी चिट्ठियाँ लिख पाया। रोलाँकी 'रामकृष्ण' समाप्त हो गई।

२३ मई, सोमवार

चरखेपर २०३ तार। पत्र—तारामती मथुरादास, रैहाना, प्रभुदास, डॉक्टर राय, हेमप्रभा, एस्थर, देवीचन्द्र, नारायण पण्ड्या, रामानन्दन, गर्ट्रूड कैलर, शारदा कोटकको। 'विवेकानन्द' पढना शुरू किया। आश्रम आदिको पत्र लिखे।

२४ मई, मंगलवार

चरखेपर २०४ तार। ३९ पत्र आश्रमको, उनमे 'बिल्ली—एक शिक्षिका' लेख, मिस एलिजाबेथ हॉवर्ड, जयप्रकाश, मॉड चीजमेन, जेठालाल गोविन्दजी, नानकचन्द, रुखीको पत्र।

२५ मई, बुधवार

चरखेपर २०२ तार। पत्र — गंगाबहन, लक्ष्मीदास, अभय, मूलचन्दभाई, सत्यचरण ला को।[1]

२६ मई, गुरुवार

चरखेपर २१० तार। निरंजनलाल, सिद्धनाथ पंत, मीरा, शान्तिकुमार, नटराजन, परचुरे शास्त्री, म्यूरियल, अगाथा हैरिसन, देवी वेस्टको पत्र। कल प्यारे अली, नूरबानू, शारदा, अमतुल, प्रेमा और सुशीला मिलने आये थे। छक्कड़दासकी भेजी पूनियाँ आईं। त्रिवेदीके यहाँसे 'विचार सागर', 'पंचदशी', 'तिलक पंचांग' आया। प्यारे अली शहद और आम लाया।

२७ मई, शुक्रवार

चरखेपर २१७ तार। पत्र — कृष्णचन्द्र अग्रवाल, प्यारेलालको। आज महादेव मैलार, मगनभाई और खड़ेसे मिला। मैथिलीशरणकी पुस्तकें आईं। घनश्यामदास, देवदास, एल्विन, आदिके पत्र।

२८ मई, शनिवार

चरखेपर २०५ तार। पत्र — सुखलाल, घनश्यामदास, एल्विन, देवदास, बा को। लीलावतीको चरखा भेजा। डाह्याभाई और मणि मिलने आये। मेजर पॉल मिलने आया। नये बादाम आ गये। मोडरका खगोल समाप्त, हिन्दू खगोल शुरू।

२९ मई, रविवार

चरखेपर २०० तार। आजसे बायें हाथ [में दर्द] के कारण कपड़े धोना बन्द किया।

३० मई, सोमवार

चरखेपर २११ तार। पत्र — मगनलाल मेहता, अमतुल, दाउदभाई, तिलकम, राजा, लक्ष्मी, करसनदास, गोसीबहन और एस्थर।

३१ मई, मंगलवार

चरखेपर २२० तार। पत्र — ३६ पत्र आश्रमको, उनमें 'मृत्युबोध' लेख, हरजीवन, गुलचेन लम्सडन, तिजारे, सुमंगल, एरिस्टार्ची, न्यूहैम, रैनविक। आज नये बादाम शुरू। रोलाँकी 'विवेकानन्द' समाप्त। आश्रमकी डाक आई।

मूल गुजराती (एस० एन० १९३३७) से।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

वेरियर एल्विन द्वारा गांधीजी की गिरफ्तारीका वर्णन[1]

गाधीजी मणि भुवनमे ठहरे हुए थे। उन्होने हम लोगोको अपने साथ वही ठहरनेकी दावत दी। शहरमे वडी सनसनी थी। वाइसरायने काग्रेसका शान्ति-प्रस्ताव अन्तिम रूपसे ठुकरा दिया था। नेहरू जेल पहुँच ही चुके थे, अन्य राष्ट्रीय नताओकी गिरफ्तारी किसी भी क्षण आशकित थी।

लेकिन मणि भुवन पहुँचकर जब हम ऊपर छतपर गये तो वडा विचित्र लगा — वहाँ वातावरणमे अनुपम शान्ति थी, न शहर-जैसी भीड़-भाड़ और न सनसनी खलवली ही। छतपर बहुत ही अच्छा लग रहा था। वौने-से तम्वू खडे कर दिये गये थे, जहाँ-तहाँ खजूर और अन्य पौधे दिख रहे थे। कम-से-कम सौ व्यक्ति तो वहाँ जुड ही सकते थे। थोडी ठडक थी और आकाशमे तारे देखे जा सकते थे। वापू शान्त मुद्रामे वैठे चरखा कात रहे थे। उनका मौन-दिवस आरम्भ हो चुका था। मै उनसे एकतरफा वात चलाता रहा। उन्होने अपने प्रश्न और उत्तर एक पुरजेपर लिख दिये थे, जो अब भी मेरे पास मौजूद है। मैंने शुरूमे शायद यही पूछा होगा: मेरे लायक कोई काम?

उन्होने लिखा:

इसीलिए मैंने आपको वुलाया है। मेरे दिमागमे जो-कुछ चल रहा है, मैंने महादेवको वतला दिया है। आनेपर वह वतलायेगा, या फिर मै ही सक्षेपमे लिख दूंगा कि आपसे क्या अपेक्षा है।

आपका स्वास्थ्य कैसा चल रहा है?

वह [महादेव[2]] आता ही होगा। मै अभी जो लिख रहा हूँ, इसके पूरा होते-होते यदि वह नही आया, तो मुझे जो कहना है वह मै लिख कर दे दूंगा।

क्या आप यही सोते है? यदि सोते है, तो क्या आपके विस्तर वगैरह लग चुके है?

इसके बाद शामराव और मै एक छोटे-से तम्वूमे आराम करने चले आये। बापू हमसे लगभग तीन गजकी दूरीपर लेट गये। तीसके करीव और लोग छतपर कैनवासके शामियाने तले लेटे थे। श्रीमती गाधी और मीरावहनने हम लोगोको

१. देखिए पृष्ठ २।

२. साधन-सूत्रके अनुसार।

खजूर, गिरीवाले मेवे और फलोंका बहुत ही तृप्तिकर भोजन कराया। लेकिन नींद मुझे नहीं आई। जैसा मैंने उसी समय लिखा था: "मुझे लगा कि मुझे चौकन्ना रहना चाहिए और मैं अपने ऊपर एक-पर-एक फैली उन अनूठी तारावलियोंको घंटों देखता रहा। बापू मेरी ही बगलमें लेटे थे — परमेश्वरके हाथों अपने आपको सौंपकर, शिशु-सहज निद्रामें निमग्न! मेरे मनमें ईसाकी वह गम्भीर छवि कौंध गई जब आँखोंमें संकल्प और अपार धैर्य लिये वे यरुशलम जा रहे थे; और मुझे लगा जैसे सभी प्रकारके अन्यायों अत्याचारोंपर खिंची एक चमचमाती तलवारकी भाँति, ईसाकी आत्माको शताब्दियोंके पार संचरण करते मैं साक्षात् देख रहा हूँ। हमारे इन अत्यन्त प्रिय निद्रा-निमग्न मित्रों — वीर, शुद्धात्मा, निष्ठावान मित्रों — में प्रेमकी वही भावना मुखर और अदमनीय थी।

आखिरकार मैं बापूकी बगलमें ही फर्शपर जल्दी-जल्दीमें लगाये अपने बिस्तर पर, शामराव और बर्नार्डके बीच लेटा रहा और गहरी नींदमें डूब गया। जैसे कोई सपना आता है — एकाएक हलचल हुई और खुसफुसाहट. "पुलिस आ गई।"

हम चौंके, और मैंने जो दृश्य देखा उसे मैं कभी भूल नहीं सकूँगा — बापूके बिस्तरके पैताने पूरी वर्दीमें लकदक एक पुलिस कमिश्नर और नींद-भरी आँखें मलते हुए बापू — थोड़ी उलझनमें, कुछ बुढाए-से, कुछ नाजुक-से और चेहरेपर नींदकी खुमारी लिये थोड़े दयनीय-से दिखते बापू।

'मिस्टर गांधी, आपको गिरफ्तार करना मेरा फर्ज है।'

स्वागतभरी, एक सलोनी मुस्कान बापूके चेहरेपर खिल उठी, और अब वे तरुण तथा सबल दिख रहे थे, आत्म-विश्वाससे भरे-पूरे। उन्होंने इशारेसे बतलाया कि उनका मौन चल रहा है।

कमिश्नर मुस्कराया और बड़ी शिष्टतासे बोला: "मैं चाहता हूँ कि आप आधे घंटेमें तैयार हो लें।"

तीन बजकर पाँच मिनट हुए थे। बापूने अपनी घड़ीपर नजर डाली। कमिश्नर बोल उठा, 'ओ, वही आपकी मशहूर घड़ी', और दोनों ठठाकर हँस पड़े। बापूने एक पेंसिल उठाई और लिख दिया. "मैं आधे घंटेमें आपके साथ चलनेको तैयार हो जाऊँगा।"

कमिश्नरने बापूके कन्धेपर अपना हाथ इतने स्नेहसे रखा कि मुझे लगा जैसे गले मिल रहा हो; बादमें मेरी समझमें आया कि वह गिरफ्तारीका औपचारिक संकेत था। फिर बापूने अपने दाँत साफ किये और थोड़ी देरके लिए अन्दर चले गये। दरवाजेपर पहरा था। हम जितने लोग छतपर थे, सब एक घेरा बना कर बैठ गये। मैंने बाहर सड़कपर नजर दौड़ाई। वहाँ कुछ लोग पूरी रात चौकसी लगा रहे थे और एक छोटी-मोटी भीड़, बहुत ही शान्त तथा संयत भीड़, जमा हो गई थी, लेकिन पुलिसने कोई खास एहतियात नहीं बरता था।

बापू तैयार होकर आये तो हम लोगोंके बीच प्रार्थनाके लिए बैठ गये। हम सबने समवेत स्वरमें भजन गाया. "वैष्णवजन तो तेने कहिये . . .।" फिर बापू

ने पैंसिल और कागज लेकर कुछ सन्देश और अपने अनुयायियोंके लिए कुछ अनुदेश लिखे और एक पत्र सरदार वल्लभभाईको लिखा, जो इस प्रकार था :[1] . . .

इसके बाद उन्होंने एक छोटा-सा पुरजा लिखकर मुझे दे दिया।[2] . . .

बापू फिर विदा लेने खड़े हुए। अनोखा था वह दृश्य : दरवाजेपर पुलिस थी, मीराबहन और देवदास बँधा हुआ सामान लिये जल्दी-जल्दी इधरसे-उधर आ-जा रहे थे। बापू अपने मित्रोंसे घिरे खड़े थे, जिनमें से कईकी आँखें गीली थीं। श्रीमती गांधीके आँसू गालोंसे नीचे ढुलक रहे थे, वे पूछ रही थीं : 'आप मुझे अपने साथ नहीं ले चल सकते ?' सबने बारी-बारीसे उनके चरण छुए और मैंने जब उनको अलविदा कहा तो उन्होंने मुस्कराते हुए मेरा कान मसल दिया। वे बहुत ही प्रसन्न मुद्रामें थे. जैसे जेल नहीं बल्कि किसी मेले-ठेलेमें जा रहे हों।

फिर वे सीढ़ियाँ उतर चले और सब उनके पीछे-पीछे चले। शामराव और मैं छतसे देखते रहे। वह छोटी-सी आकृति कारमें प्रविष्ट हुई और भीड़ उसके चारों ओर उमड़ आई। भारतकी अहिंसाकी बलिहारी कि वहाँ मुट्ठी-भर पुलिसवाले ही थे और वे किसी भी भय या खतरेके बिना उस भीडके बीच मौजूद रह सके। उसी समय खबर आई कि कांग्रेसके अध्यक्ष सरदार वल्लभभाई भी गिरफ्तार कर लिये गये हैं। और भारतकी उस मूर्तिमत आत्माको लेकर वह कार जब अंधेरी सुनसान सड़कोंकी ओर चल पड़ी तो भीड़ तितर-बितर हो गई।

[अंग्रेजीसे]

ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेरियर एल्विन, पृष्ठ ६५-८

१. देखिए पृष्ठ २।

२. देखिए पृष्ठ २।

परिशिष्ट २

आर० एम० मैक्सवेलका पत्र[1]

गोपनीय

सख्या एस० डी० ३१०

गृह विभाग (राजनीतिक)
बॉम्बे कैसिल
१६ जनवरी, १९३२

प्रेषक

आर० एम० मैक्सवेल महोदय, सी० आई० ई०
कार्यवाहक सचिव, वम्बई सरकार
गृह विभाग

सेवामे

जेल महानिरीक्षक
वम्वई प्रेसीडेंसी

महोदय,

मुझे आपको यह सूचित करनेका आदेश मिला है कि सपरिषद् गवर्नरने सर्वश्री मोहनदास करमचन्द गाधी तथा वल्लभभाई झवेरभाई पटेल, राज्यवन्दियोको फिलहाल दी जानेवाली विशेष सुविधाओके सम्वन्धमे और समय-समयपर की जानेवाली चिकित्सीय जाँचके प्रवन्धोके वारेमे निम्नलिखित आदेश जारी किये है।

२. पत्रिकाएँ तथा समाचारपत्र: दोनो वन्दियोको निम्नलिखित पत्रिकाएँ तथा समाचारपत्र प्राप्त करनेकी अनुमति दी जाये: 'टाइम्स ऑफ इडिया', 'बॉम्वे क्रॉनिकल', 'लीडर' (इलाहावाद), 'ट्रिव्यून' (लाहौर), 'हिन्दू' (मद्रास), 'इडियन सोशल रिफॉर्मर', मॉडर्न रिव्यु', 'यग इडिया', तथा 'नवजीवन'।

३. पत्र: दोनो वन्दियोको, उनके अनुरोधके अनुरूप, सप्ताहमे एक वार अथवा एकाधिक वार, जेल-अधीक्षककी पूर्वानुमति लेकर पत्र लिखनेकी अनुमति दी जाये। वन्दियो द्वारा लिखे और प्राप्त किये गये सभी पत्र जेल-अधीक्षक द्वारा 'सेसर' किये जाये। जेलमे अनूदित न हो सकनेवाले, हिन्दुस्तानी भाषामे लिखे गये पत्रोके अनुवाद की यदि जिलाधीश अपने कार्यालयमे व्यवस्था न कर सके, तो वे सरकारके प्राच्य अनुवादकको अनुवादके वास्ते भेज दिये जाये। सभी आपत्तिजनक पत्र रोक लिये जाये। शका होनेपर सरकारसे पूछा जाये। जेल-अधीक्षक जिस पत्रको ऐसा भी माने

१ देखिए पृष्ठ १९।

कि पुलिसको उसे देखना चाहिये, उसे वे पुलिस उप-महानिरीक्षक, गुप्तचर विभाग, पूनाको भेज दे।

४. स्वास्थ्य तथा सावधिक चिकित्सीय जाँच: दोनो बन्दी जेल-अधीक्षककी चिकित्सीय देखरेखमे तो रहेगे, परन्तु पूनाका सिविल-सर्जन जेल-अधीक्षकके साथ मिलकर उनकी पूरी चिकित्सीय जाँच करे और इसके लिए बम्बई सरकारके सर्जन-जनरलके परामर्शसे यथाशीघ्र सभी आवश्यक प्रबन्ध किये जाये और जाँचकी रिपोर्ट सरकारको तुरन्त भेज दी जाये। बादमे, इन दोनो अधिकारियो द्वारा श्री गाधीकी हर महीने और श्री वल्लभभाई पटेलकी हर तीसरे महीने चिकित्सीय जाँच करानेके वास्ते इसी प्रकारके प्रबन्ध किये जाये हर जाँचकी रिपोर्टकी एक-एक नकल गवर्नर महोदयके निजी सचिवको भेजी जाये। यदि कभी दोनोमे से किसी भी बन्दीका स्वास्थ्य गिरता दिखाई पड़े या वह किसी बड़ी बीमारीका शिकार बन जाये, तो अधीक्षकको पूनाके सिविल सर्जनसे भी सलाह लेनी चाहिये।

मेरा अनुरोध है कि आप इसके पैरा २, ३ तथा ४मे दिये गये आदेशोका उतना अंश जितना कि बन्दियोसे सम्बन्धित है, अधीक्षकके जरिये उनको भिजवा दे, पर पैरा ३ मे पत्र-व्यवहारके सेसर-सम्बन्धी जो अनुदेश है, वे छोड़ दिये जाये।

मुझे यह भी अनुरोध करना है कि आप अधीक्षकका ध्यान बॉम्बे रेग्यूलेशनकी धारा ५की पहली उप-धाराकी ओर दिलाये और उनसे इस उप-धारा द्वारा अपेक्षित एक रिपोर्ट सरकारको प्रस्तुत करनेके लिये कह दे।

आपका,
आज्ञाकारी सेवक
कार्यवाहक सचिव, बम्बई सरकार
गृह विभाग

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल सख्या ८०० (४०), भाग-१

परिशिष्ट ३

सर सैम्युअल होरका पत्र[1]

१३ अप्रैल, १९३२

प्रिय श्री गाधी,

यह मै आपके ११ मार्चके पत्रके उत्तरमे लिख रहा हूँ। पहली बात मुझे यही कहनी है कि मैं पूरी तरह समझता हूँ कि 'दलित' वर्गोके लिए पृथक् निर्वाचक-मण्डलोके प्रश्नपर आपकी भावनाएँ कितनी तीव्र है। मै इतना-भर कह सकता हूँ कि हम वही निर्णय करना चाहते है जो पूरे प्रश्नके गुण-दोषोको देखते हुए, और केवल उनके आधारपर ही, सर्वोचित और आवश्यक जान पड़े। आपको मालूम ही है लॉर्ड लोथियनकी समिति अवतक अपना दौरा पूरा नही कर पाई है और वह जो निष्कर्ष निकालेगी उनके हमतक पहुँचनेमे कुछ सप्ताह तो लगेगे ही। उसका प्रतिवेदन आ जानेपर, हमको उसमे की गई सिफारिशोपर पूरी सतर्कताके साथ विचार करना पडेगा और हम तबतक कोई निर्णय नही करेगे जबतक कि समिति द्वारा प्रकट किये गये मतके साथ ही आपके तथा आपकी तरह सोचनेवालोके इतने जोरदार ढगसे व्यक्त किये गये विचारोको भी अच्छी तरह तोल नही लेगे।

मुझे पूरा यकीन है कि यदि हमारी जगह आप होते तो आप भी ठीक वही करते जो हम करने जा रहे है। आप भी समितिके प्रतिवेदनका इतजार करते, फिर पूरी सतर्कताके साथ विचार करते और फिर कोई भी अन्तिम निर्णय करनेसे पहले दोनो पक्षो द्वारा व्यक्त किये गये विचारोको खूब तोलकर देखते। मै इससे अधिक कुछ नही कह सकता। और सचमुच, मै नही समझता कि आप मुझसे इससे अधिक कुछ कहनेकी आशा करेगे।

अध्यादेशोकी बात यह है कि उनके सम्बन्धमे मै वही सब दोहरा सकता हूँ जो सार्वजनिक तथा निजी तौरपर मै पहले ही कह चुका हूँ। मुझको इसमे तनिक भी शका नही है कि व्यवस्थित सरकारकी ऐन जडोपर जान-बूझकर प्रहार किया गया था और ऐसी स्थितिमे अध्यादेशोको लागू करना नितान्त आवश्यक हो गया था। मुझे इसमे भी कोई शका नही कि भारत सरकार तथा प्रान्तीय सरकारे, दोनो ही अपनी व्यापक शक्तियोका दुरुपयोग नही कर रही है और वे हर प्रकारकी अति अथवा प्रतिहिंसक कार्यवाहीको रोकनेके लिए यथासम्भव सभी कुछ कर रही है। हम इन आपात्कालीन विधियोको केवल तबतक ही प्रभावी रखेगे जबतक कि कानून और व्यवस्थाके मूलभूत तत्त्वोको सुरक्षित रखने और आतकवादियोकी हिंसापूर्ण

१. देखिए पृष्ठ १८१-४ और ३७७-८।

कार्रवाइयोसे अपने अधिकारियो तथा समाजके अन्य वर्गोको बचानेके लिए हमें उनको प्रभावी रखना पड़ेगा, इससे अधिक बिलकुल नही।

हृदयसे आपका,

मो० क० गाधी महोदय

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १३-९-१९३२

परिशिष्ट ४

आर० वी० मार्टिन तथा आर० एम० मैक्सवेलका पत्र-व्यवहार[1]

(क) आर० वी० मार्टिनका पत्र आर० एम० मैक्सवेलको

जेल-महानिरीक्षक
बम्बई प्रेसीडेन्सी
पूना
१५ मार्च, १९३२

प्रिय मैक्सवेल,

मो० क० गाधीकी ओरसे अभी-अभी मिला एक पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ। अन्य बन्दियोसे मुलाकातके बारेमे मुझे लौटती डाकसे उत्तर भेजनेकी कृपा करे। लगता है, वे इस मामलेमे काफी क्षुब्ध होते जा रहे हैं।

उन्होने जिस बन्दीका जिक्र किया है, उसकी बीमारीके बारेमे मुझे कोई जानकारी नही है।

हृदयसे आपका,
आर० वी० मार्टिन

आर० एम० मैक्सवेल महोदय, सी० आई० ई०, एम० ए० (ऑक्सन), आई० सी० एस०, जे० पी०,
सरकारके सचिव
गृह विभाग, बम्बई

गृह सचिव।

आदेश दिये जा चुके है। कृपया देखिए कि वे तुरन्त जारी कर दें।

आर० एम० मैक्सवेल
१६/३

1. देखिए पृष्ठ २००।

(ख) आर० एम० मैक्सवेलका पत्र जेल-महानिरीक्षकको

पी० १४७, संख्या एस० डी०, २३५७　　गृह विभाग (राजनीतिक)
बॉम्बे कैसिल
१६ मार्च, १९३२

प्रेषक

आर० एम० मैक्सवेल महोदय, सी० आई० ई०, आई० सी० एस०
कार्यवाहक सचिव, बम्बई सरकार
गृह विभाग

सेवामे,
जेल-महानिरीक्षक
वम्वई प्रेसीडेसी

विषय. श्री गाधी और यरवदा जेल या उसके विस्तारित शिविर-भागके अन्य बन्दियोके बीच मुलाकाते।

महोदय,

मुझे दिनाक ४ मार्च, १९३२ के अपने पत्र सख्या एस० डी० १५६८ के ही क्रममे यह कहनेका आदेश मिला है कि श्री गाधीको मुख्य यरवदा जेल या उसके विस्तारित शिविर-भागके अन्य कैदियोसे मिलनेकी अनुमति दे दी जाये। उसकी शर्तें, जैसी आपने सुझाई थी, ये होगी:

१. एक ही समयमे अधिक-से-अधिक तीन बन्दियोसे, एक पखवाडेमे केवल एक ही बार, मुलाकातकी अनुमति दी जाये।

२. दोनोमे से कोई भी पक्ष इन मुलाकातोको यह पता लगानेका साधन न वनाये कि जेलमे अन्य बन्दियोके साथ किस तरहका बर्ताव हो रहा है या वे क्या कर रहे है। मुलाकातोमे जेलके प्रवन्ध, अनुशासन अथवा राजनीतिक विषयोपर चर्चा न की जाये।

३ मुलाकाते जल-अधीक्षकके कार्यालयमे हो।

४. मुलाकातका समय २० मिनट हो।

आपका,
आज्ञाकारी सेवक
आर० एम० मैक्सवेल
१६/३
सरकारका कार्यवाहक सचिव

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल संख्या ८०० (४०), भाग-१

परिशिष्ट ५

मीराबहनके पत्रके कुछ अंश[1]

८ अप्रैल, १९३२

मीराबहनका २४ पृष्ठोका एक पत्र मिला, जिसकी एक-एक पक्तिसे उनकी निर्मल निष्ठा छलकी पड़ती है। बापूके साथ रहने और उनकी सेवा करनेके सौभाग्य से वंचित रहनेपर वे दुःखी ही रहेगी। परन्तु बापू चाहते है कि मीराबहन अपनी इस इच्छासे मुक्ति पाये, क्योकि अन्यथा जब बापू हमारे बीच नही रहेगे तो वे अपनेको असहाय अनुभव करेगी। यह विवाद मीराबहन जबसे भारत आई है तभीसे चल रहा है। आजके पत्रमे मीराबहनने अपना हृदय ही उँडेलकर रख दिया है।

बापू, आपकी ज्यादा-से-ज्यादा सेवा कैसे की जाये, यह विचार एक क्षणको भी मेरे मनसे हटता नही है। मै सोचती हूँ, प्रार्थना करती हूँ और अपने मनको समझाती हूँ, पर मेरे अन्तःकरणमे सदा यही विचार रहता है। जब आपको हमारे पाससे हटा लिया जाता है, जैसेकि जब आपको जेल भेज दिया जाता है, तो एक अन्तःप्रेरणा मुझे आपके ध्येयकी बाह्य सेवा मे पूरी शक्तिसे जुट जानेको प्रेरित करती है। मै तब न कोई द्विविधा महसूस करती हूँ न कोई कठिनाई। और जब आप हमारे साथ होते है तो एक उतनी ही बलवती अन्तःप्रेरणा मुझे सब काम छोड़कर चुपचाप आपकी निजी सेवामे लग जानेको प्रेरित करती है। कुछ और करनेकी कोशिश करनेपर मै अपनेको दिग्भ्रान्त और व्यर्थ अनुभव करने लगती हूँ। बाह्य सेवाकी क्षमता निजी सेवाकी प्रेरणाकी पूर्तिपर निर्भर करती है। पहली दूसरीका ही प्रतिरूप है, और मुझे निरन्तर ऐसा लगता है कि इस तरहकी पूर्तिके लिए ही मुझे आपके पास लाया गया है। यह अन्तःप्रेरणा इतनी बलवती है कि मै न तो इससे कतरा सकती हूँ, न इसका सामना कर सकती हूँ और न इसपर काबू पा सकती हूँ। आपसे इस बातपर विश्वास करनेके लिए कहना कठिन है, क्योकि इसकी सच्चाईका प्रमाण तो इससे आगे और कोई दिया नही जा सकता। पर इतना मै बिलकुल अच्छी तरह जानती हूँ कि इस संघर्षके दौरान मुझमे पिछली बारसे बहुत अधिक शक्ति, क्षमता और आन्तरिक सुख-शान्ति है, क्योकि मै (आपकी पिछली रिहाईके बाद की, मानसिक सन्तापकी, छोटी-सी अवधिको छोड़कर) अपनी अन्तःप्रेरणाके अनुसार सेवा करती रही थी। जब मै यहाँ आई तब मेरा शरीर बस टूटने ही वाला था, इस बातका इस प्रश्नसे कोई सम्बन्ध नही है। वह सब तो शक्तिसे बहुत अधिक काम करनेका परिणाम था, क्योकि जब मैने देखा कि मै जल्दी ही गिरफ्तार होनेवाली हूँ, तो यह जानकर कि जल्दी ही जबर्दस्तीका विश्राम मिलनेवाला है, मै अपनी

[1] देखिए पृष्ठ २६८-७०।

शक्तिको बड़ी बेपरवाहीसे खर्च करने लगी थी। और उस समय मेरे आसपास काम भी इतना था कि आदमी बेपरवाह हो सकता था।

कौन जानता है कि यह सब भ्रम ही हो। परन्तु स्त्रीको अपनी अन्त प्रेरणा पर चलना होता है। वह उसमे तर्क-बुद्धिसे कही अधिक बलवती होती है, और उसकी पूरी शक्ति केवल तभी प्रयोगमे लाई जा सकती है और सेवामे लगाई जा सकती है जब उसकी प्रकृतिको पूरी अभिव्यक्ति मिले। आपके सिवा मुझे दुनियामे और किसी बातका खयाल नही है, चिन्ता नही है, लालसा नही है — आप ही ध्येय है, आप ही आदर्श है। इस जीवनमे उस ध्येयके लिए काम करने और जीवनोपरान्त उस आदर्शतक पहुँचनेके लिए जो ईश्वर मुझे घोर अन्धकारसे आपके आलोकित पथपर लाया है, वह निश्चय ही मेरी प्रार्थनाओका उत्तर मुझे किसी गलत अन्त. प्रेरणाके पीछे घिसटने देनेके रूपमे नही देगा। यह सब मैंने तर्कके लिए नही लिखा है, बल्कि जेलमें आनेके बादसे अपनेको समझनेका मैं जो निरन्तर प्रयास कर रही हूँ, उसका परिणाम आपको बतानेके लिए ही लिखा है।

[अंग्रेजीसे]

डायरी ऑफ महादेव देसाई, भाग-१, पृष्ठ ६२-३

परिशिष्ट ६

ई० ई० डॉयलका पत्र[1]

गोपनीय
डी० ओ० सख्या ३३२

जेल-महानिरीक्षक
बम्बई प्रेसीडेंसी
पूना
२३ अप्रैल, १९३२

प्रिय श्री,

इसी महीनेकी २२ तारीखके आपके डी० ओ० पत्रके सन्दर्भमे।

आप जिन व्यक्तियोके बारेमे जानना चाहते है, उनका ब्यौरेवार विवरण भेजनेके लिए मैंने बेलगाँव लिखा है और आशा है कि आपने जो जानकारी चाही है, मैं उसे एक सप्ताहके अन्दर-अन्दर आपको भेज सकूँगा।

यदि परिस्थिति अनुकूल रही तो मैं यथाशीघ्र बेलगाँव जानेकी सोच रहा हूँ। और तब मैं आपको खुद अपनी ही जानी-समझी जानकारी दे सकूँगा।

मेजर मार्टिनके पत्रका कोई उत्तर मुझे नही मिला। इससे मैंने कयास लगाया है कि उत्तर उनके नामसे लिखा गया होगा और अब वह उनका पीछा करता हुआ

१. देखिए पृष्ठ ३२७-८।

इंग्लैंडके रास्तेमे होगा। पर मुझे भरोसा है कि आपको अपेक्षित सारी जानकारी मुझे शीघ्र ही मिल जायेगी।

आपका,
ई० ई० डॉयल

श्री मो० क० गाधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेट, आई० जी० पी० फाइल सख्या ९

परिशिष्ट ७

ई० ई० डॉयलका पत्र[1]

१९३२ का संख्या ३५६

जेल-महानिरीक्षक
बम्बई प्रेसीडेंसी
पूना
२८ अप्रैल, १९३२

प्रिय श्री,

मुझे अपने पत्रके उत्तरमे बेलगांव सेन्ट्रल जेलके अधीक्षककी रिपोर्ट अभी-अभी मिली है। इसमे जितना मैंने मागा था, उतना ब्यौरा नही दिया गया है। इसलिए मैंने इससे आगे और अधिक स्पष्ट ब्यौरेकी एक और रिपोर्ट लौटती डाकसे भेजनेके लिए कहा है। इन चारों व्यक्तियोंका वजन जेलमें दाखिल होनेके समयसे ही गिरता रहा है। लेकिन चूंकि इसके कारण नही बतलाये गये है, इसलिए मैंने उनसे कारण लिखनेके लिए कहा है।

चारमे से तीन व्यक्तियोको निम्न प्रकारसे विशेष खुराक मिल रही है:

द० बा० कालेलकर —	डबल रोटी	१२ औंस
	दूध	२ पौंड
	गुड	२ औंस
	जैतूनका तेल	½ औंस
मणिबहन पटेल —	दूध	२ पौंड
	चावल	१ पौंड
प्रभुदास गाधी —	गेहूँकी चपाती	१ पौंड २ औंस
	दाल तथा सब्जियाँ	
	दूध	८ औंस

1. देखिए पृष्ठ ३५५।

मैं बेलगाँव सेन्ट्रल जेलसे उत्तर मिलते ही इस विषयमें आपको फिर लिखूँगा।

आपका,
ई० ई० डॉयल

श्री मो० क० गांधी
यरवदा

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी०, फाइल संख्या ९

परिशिष्ट ८

ई० ई० डॉयलका पत्र[1]

१९३२ का संख्या ३६५

जेल-महानिरीक्षक
बम्बई प्रेसीडेंसी
पूना
२ मई, १९३२

प्रिय श्री,

मुझे और अपेक्षित जानकारी मिल गई है और अब मैं आपको आश्वस्त कर सकता हूँ कि आपने अपने पत्रमें जो नाम लिखे थे, उनमें से किसी भी व्यक्तिके बारेमें आपको चिन्ता करनेका कतई कोई कारण नहीं है।

द० बा० कालेलकरका पिछला सारा चिकित्सीय विवरण बेलगाँवके चिकित्सा-अधिकारीको मालूम है। वे बड़े ध्यानसे उनके स्वास्थ्यपर नजर रखे हुए हैं और उन्होंने उनके लिए आवश्यक उपचार तथा पथ्य लिख दिया है।

पी० गांधी मलेरियासे पीड़ित होनेके कारण ९-३-१९३२ से १२-३-१९३२ तक अस्पतालमें थे, इस कारण उनके बदनमें खूनकी थोड़ी कमी हो गई है। पर इसका इलाज किया जा रहा है और वे ठीक चल रहे हैं।

मणिबहन पटेलको जब-तब कमरका गठिया होता रहा है। इसका इलाज किया गया और उनको उससे फायदा हुआ है। कब्जकी शिकायत भी उनकी पुरानी है, इसका आवश्यक उपचार रेचक औषध देकर तथा पथ्य बदलकर किया जा रहा है।

न० द्वा० परीख वजनमें थोड़ी कमी आनेके बावजूद एकदम चंगे बताये गये हैं।

१. देखिए पृष्ठ ३८२।

आशा है, इससे आपके दिमागको राहत मिल जायेगी।

आपका,
ई० ई० डॉयल

श्री मो० क० गांधी
यरवदा

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल संख्या ९

परिशिष्ट ९

रवीन्द्रनाथ ठाकुरकी अपील[1]

विश्वभारती
शान्ति निकेतन
बंगाल
२२ मार्च, १९३२

कष्ट तथा पीडाके वर्तमान वातावरणकी गहराइयोंसे यह पुकार उठी है कि आस्था तथा मैत्रीके एक नूतन युगका समारम्भ हो, क्रूरतापूर्ण राजनीति तथा कूट-नीतिके हाथों विमुख बनी जातियों तथा राष्ट्रोंके बीच मतैक्यपर आधारित साहचर्य स्थापित हो। हम भारतके लोग अपने यहाँ ऐसा आधारभूत परिवर्तन लानेको सन्नद्ध है जो उन लोगोंके साथ जिन्हें विधिका विधान हमारे निकट ले आया है, हमारे सम्बन्धोंमें समस्वरता एवं मतैक्य पैदा कर दे। हम दोनों पक्षोंकी ओरसे एक सद्भाव-पूर्ण संकेतकी राह देख रहे हैं — ऐसे संकेतकी जो स्वतःस्फूर्त हो तथा मानवताके प्रति आस्थासे भरपूर हो, जो भारत तथा इंग्लैंडके लोगोंके बीच नैतिकतापर आधारित एक संघके निर्माणका, लोकहितकारी रचनात्मक कार्योंका तथा शान्तिसे उद्भूत आन्तरिक सामंजस्यका भविष्य समुज्ज्वल कर दे।

इंग्लैंडके हमारे मित्रोंके आगमनसे इस संभावनाकी पुष्टि हो गई है कि हमारे पारस्परिक सम्बन्धोंमें ऐसा अन्तरंग साहचर्य तथा सत्यका आधार तत्काल स्थापित हो सकता है। इस अवसरपर अपनी आन्तरिक प्रेरणासे मैं मानवताके सभी शुभ चिन्तकोंसे यह कहना चाहता हूँ कि वे इस संकटकी घड़ीमें आगे आयें और मात्र

१. देखिए पृष्ठ ३८३; यह सन्देश मार्चमें शान्ति निकेतन आये "सोसाइटी ऑफ फ्रेंड्स" के शिष्ट-मण्डलको दिया गया था। रवीन्द्रनाथ ठाकुरने शिष्टमण्डलसे इसे अपने ही हाथों गांधीजी को देनेका अनुरोध किया था, किन्तु भारत सरकारने इसकी अनुमति नहीं दी।

आस्थाके आधारपर तथा क्षमाशीलताकी उदार भावना से सत्यको स्वीकार करनेके आधारपर निर्माणके अपने इस नैतिक दायित्वको पूरा करनेका भार साहसपूर्वक अपने कधोपर ले ले।

विगतकी स्मृति हम सबके लिए कितनी ही क्लेशपूर्ण क्यो न रही हो, उससे पूर्णताकी ओर उस भविष्यकी हमारी सकल्पना धूमिल नही होनी चाहिये जिसे हमे अपने सम्मिलित प्रयत्नोसे साकार बनाना है। और सचमुच, सन्देह तथा वैमनस्य की निस्सारताके अपने अनुभवसे हमको निश्छल हार्दिक साहचर्यकी सच्चाईमें, प्रेमकी पारस्परिक प्रतीतिसे प्रेरित व्यक्तियो तथा राष्ट्रोके रचनात्मक मतैक्यकी अपार शक्तिमे और अधिक गहराईसे विश्वास करनेकी ही प्रेरणा मिलनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

एडवांस, २३-६-१९३२

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक सग्रहालय, नई दिल्ली : गाधी-साहित्य और सम्वन्धित कागजातका केन्द्रीय सग्रहालय तथा पुस्तकालय; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९ (प्रथम सस्करण) तथा पृष्ठ ३५५ (द्वितीय संशोधित सस्करण)।

साबरमती सग्रहालय . गाधीजी से सम्बन्धित आलेखोका सग्रहालय और पुस्तकालय; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९ (प्रथम सस्करण) और पृष्ठ ३५५ (द्वितीय सशोधित सस्करण)।

होम डिपार्टमेंट, बम्बई सरकार।

भारतका राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काईव्ज ऑफ इन्डिया), नई दिल्ली।

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, १९३२ : बम्बई सरकारके सरकारी आलेख।

'बाम्बे क्रॉनिकल'. बम्बईसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'बापुना पत्रो–६ : ग० स्व० गंगाबहनने' (गुजराती) : काकासाहव कालेलकर द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६०।

'बापुना पत्रो–४ मणिबहन पटेलने' (गुजराती) . मणिवहन पटेल द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती) : मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'माई डियर चाइल्ड' (अग्रेजी) : एलिस एम० बार्न्ज द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५६।

'महादेवभाईनी डायरी', भाग-१ (गुजराती) : नरहरि द्वा० परीख द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद' : काकासाहब कालेलकर द्वारा सम्पादित, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, १९५३।

'ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेरियर एल्विन' (अग्रेजी) वेरियर एल्विन, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, लन्दन, १९६४।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(४ जनवरीसे ३१ मई, १९३२ तक)

४ जनवरी : बम्बईमे 'मणि भुवन'मे गाधीजी को प्रातः तीन बजे गिरफ्तार किया गया।

वल्लभभाई पटेलको लिखे पत्रमे लोगोको सन्देश दिया।

यरवदा सेन्ट्रल जेल ले जाया गया, वल्लभभाई पटेलके साथ नजरबन्द किये गये।

पटनामे काग्रेस-अध्यक्ष, राजेन्द्रप्रसादको गिरफ्तार किया गया।

डॉ० मु० अ० अन्सारी काग्रेस-अध्यक्ष बने।

जवाहरलाल नेहरूपर मुकदमा चलाया गया और दो वर्षकी सख्त कैदकी सजा दी गई।

चार नये अध्यादेश जारी किये गये, काग्रेस और काग्रेसके झडेको छोडकर, काग्रेसके सभी सगठन गैरकानूनी घोषित किये गये।

५ जनवरी : बम्बई, कलकत्ता और दिल्लीमे भारी सख्यामे गिरफ्तारियाँ हुई और लोगोको सजाएँ दी गईं।

गुजरात विद्यापीठको गैरकानूनी घोषितकर उसपर कब्जा कर लिया गया।

६ जनवरी : बम्बईमे हडताल, कोयम्बटूरमे लाठीचार्ज।

७ जनवरी : अहमदाबादमे महादेव देसाई, द० बा० कालेलकर तथा कराचीमे जयरामदास दौलतराम गिरफ्तार हुए।

८ जनवरी . नई दिल्लीमे डॉ० मु० अ० अन्सारीकी गिरफ्तारी, शार्दूलसिह कवीश्वरने काग्रेस-अध्यक्षका पद सभाला।

९ जनवरी . वाइसरायने सप्रू और दूसरे लोगोसे मुलाकात की।

मद्रासमे च० राजगोपालाचारी, एस० सत्यमूर्तिकी गिरफ्तारी, विदेशी वस्त्रकी दुकानोपर धरना देनेवालोपर लाठीचार्ज।

१० जनवरी : बारडोलीके समीप कस्तूरबाकी गिरफ्तारी।

११ जनवरी : तिरुपुरमे लाठीचार्जमे कुमारस्वामीकी मृत्यु।

१२ जनवरी : गाधीजी को पत्र लिखनेकी अनुमति मिल गई।

१३ जनवरी : इलाहाबाद और मद्रासमे पुलिसका काग्रेस कार्यालयोपर जबर्दस्ती कब्जा।

अहमदाबादमे 'नवजीवन' कार्यालयकी तालाबन्दी।

१५ जनवरी · भारत-मन्त्री सर सैम्युअल होरको लिखे पत्रमे गाधीजी ने कहा : "हर कदम मैंने अपनी प्रेरणासे उठाया था और वह सत्याग्रहके मेरे सिद्धान्तकी तर्कसगत परिणति थी।"

सूरतमें कस्तूरबा, मणिबहन पटेल और मीठूबहनको सजाएँ दी गईं।

कलकत्तामे तीस विद्यार्थियोकी, जिनमे लड़कियाँ भी थी, गिरफ्तारी।

१६ जनवरी : बम्बईमे जमनालाल बजाज और डॉ० हार्डिकरकी गिरफ्तारी।
बम्बई सरकारके गृह विभागने गाधीजी और वल्लभभाई पटेलको सुविधाएँ देनेके आदेश जारी किये।

१८ जनवरी : सयुक्त राज्य अमेरिकाके १०६ धार्मिक नेताओने ब्रिटिश प्रधान मन्त्रीसे गाधीजी को मुक्त करनेकी अपील की।

१९ जनवरी : मद्रासमे प्रभावशाली गैर-काग्रेसी व्यक्तियोंने लाठी-चार्जके विरोधमे वक्तव्य जारी किया।

२० जनवरी : बम्बईमे 'एस० एस० गंगेज' जहाजमें सवार जे० एम० सेनगुप्तको गिरफ्तार किया गया और यरवदा जेल लाया गया।

२३ जनवरी . गाधीजी ने बम्बईके गवर्नरको लिखा कि दमन बन्द किया जाये और क्षतिपूर्तिकी जाये।

२४ जनवरी : गाधीजी को सप्ताहमे एक भेटकी अनुमति मिली।

२५ जनवरी : लार्ड विलिग्डनने विधान सभामें कहा· "सविनय अवज्ञा आन्दोलनका मुकाबला करनेके सवालपर कोई समझौता नही हो सकता . . . कोई भी सरकार, यदि वह सरकार कहलाने लायक है तो, इस चुनौतीको स्वीकार करनेमे आनाकानी नही कर सकती।"

२६ जनवरी : अहमदाबाद, बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली और लखनऊमे स्वतन्त्रता-दिवसके जुलूस निकले और गिरफ्तारियाँ हुईं।

२७ जनवरी : मीराबहन गाधीजी से मिली।

२८ जनवरी : सर सैम्युअल होरने एक रेडियो-प्रसारणमें कहा "हमारी नीति दृढता और प्रगतिकी है . . . कुत्ते भौकते रहते है, पर कारवाँ आगे बढ़ता रहता है।"

२९ जनवरी : बम्बईमे पुलिसने गोली चलाई, एक व्यक्ति मारा गया।

२ फरवरी : देवदास गाधीकी गिरफ्तारी।

५ फरवरी : गाधीजी ने यरवदा सेन्ट्रल जेलके सुपरिटेंडेंट, एम० जी० भण्डारीको पत्र लिखकर अन्य कैदियोसे मिलनेकी अनुमति माँगी।

६ फरवरी : कलकत्ता विश्वविद्यालयके दीक्षान्त-समारोहमे एक छात्राने बगालके गवर्नर सर स्टेनली जैक्सनपर गोली चलाई।

१४ फरवरी : कार्यवाहक काग्रेस-अध्यक्ष शार्दूलसिंह कवीश्वर गिरफ्तार किये गये।

१७ फरवरी . मीराबहनको बम्बई न छोड़नेके कारण गिरफ्तार किया गया और तीन महीनेकी सख्त कैदकी सजा देकर बम्बईके ऑर्थर रोड जेलमें भेजा गया।

२१ फरवरी : नारणदास गाधीको लिखे पत्रमे गांधीजी ने 'भगवद्गीता'के अन्तिम अध्यायका सार पूरा किया।

२२ फरवरी दिल्लीमे गोलमेज परिषदकी सलाहकार समितिकी बैठक वाइसरायकी अध्यक्षतामे शुरू हुई।

२४ फरवरी : सिविल सर्जन द्वारा गाधीजी की डॉक्टरी जाँच।

२६ फरवरी: एक पत्रमे कहा कि दूध छोडनेका मुख्य कारण स्वास्थ्य है।

२७ फरवरी. ब्रिटेनकी इडिपेडेट लेबर पार्टीने एक घोषणापत्र जारी किया, जिसमे भारत सरकारकी दमन-नीतिकी निन्दा की गई थी।

२८ फरवरी डॉ० मुजे और एम० सी० राजाने, हिन्दू महासभा और दलित वर्गके प्रतिनिधियोकी हैसियतसे, ब्रिटिश प्रधान मन्त्रीको तार द्वारा सूचना दी कि उन्हे सयुक्त निर्वाचन पद्धति, जिसमे जनसख्याके आधारपर सीटे सुरक्षित हो, स्वीकार है।

२९ फरवरी. घोषणा की गई कि के० वी० रेड्डीके वाद अव जी० एस० वाजपेयी, आई० सी० एस० दक्षिण आफ्रिकाके एजेंट-जनरल नियुक्त किये गये है।

१ मार्च: आर० वी० मार्टिनको लिखे एक पत्रमे गाधीजीने साथी कैदियोसे मिलनेके प्रश्नपर जल्दी निर्णय देनेको कहा।

दाएँ हाथमे दर्द होनेके कारण वाएँसे लिखना शुरू किया।

४ मार्च. दिल्लीमे गोलमेज परिषदकी सलाहकार समितिकी वैठक।

५ मार्च· गाधीजी को मुलाकातियोसे मिलनेकी अनुमतिका आदेश मिला।

नारणदास गाधीको एक पत्रमे ये हिदायते भेजी कि जो भी व्यक्ति मिलने आये, वह पहले जेल-सुपरिटेडेटको उसकी सूचना दे दे।

नवजीवन प्रेस लौटा दिया गया।

६ मार्च. एम० जी० भण्डारीको लिखे पत्रमे गाधीजीने अपने मुलाकातियोसे मिलनेके सम्बन्धमे "राजनीतिक" शब्दका स्पष्टीकरण चाहा।

७ मार्च· द० बा० कालेलकरको एक पत्रमे वताया कि नक्षत्रोकी स्थिति जाननेके लिए वे रातमे उठ जाते है।

१० मार्च महादेव देसाई गाधीजी के पास आ गये, उन्हे नासिक जेलसे यहाँ स्थानान्तरित किया गया था।

११ मार्च· सर सैम्युअल होरको लिखे पत्रमे अपना यह इरादा जाहिर किया कि दलित वर्गके लिए यदि पृथक् निर्वाचक-मण्डल बनाया गया तो वे उपवास करेगे।

१२ मार्च. महादेव देसाईके साथ खगोल-विज्ञानपर चर्चा की।

१३ मार्च: सर सैम्युअल होरने अपने पत्रमे गाधीजी को वताया कि पृथक् निर्वाचक-मण्डलके प्रश्नपर लोथियन समिति और गाधीजी के समर्थकोके विचारोपर गौर किये विना कोई फैसला नही किया जायेगा।

कस्तूरबाको छ· मासकी कैद और ५० रुपये जुर्माना, या जुर्माना न देनेपर १½ मासकी और कैदकी सजा दी गई।

१६ मार्च. बम्बईके गृह विभागने गाधीजी को साथी कैदियोसे मिलने देनेके आदेश जारी किये।

२५ मार्च: सर सैम्युअल होरने हाउस ऑफ कॉमन्समे भारतीय परिस्थितिपर वक्तव्य दिया।

२६ मार्च: गाधीजी को जमनालाल वजाज और अन्य कैदी साथियोके नाम पत्र लिखनेकी अनुमति मिली।

२८ मार्च · एच० डब्ल्यू० एमर्सनको लिखे पत्रमे "जिद्दी" किसानोंकी जमीनें बेचनेके सुझावपर दु ख प्रकट किया और यह आग्रह किया कि ऐसा कोई काम नही किया जाना चाहिए।

२९ मार्च · सर्जन द्वारा डॉक्टरी जाँच।

२ अप्रैल : दूवीवहन देसाईको लिखे पत्रमें कहा कि उनके दाये हाथमें कोई खराबी नही है। "केवल सावधानीके विचार" से वे इससे नही लिख रहे हैं।

५ अप्रैल . मैथिलीशरण गुप्तको लिखे पत्रमे 'साकेत,' 'अनघ,' 'पचवटी' और 'झकार' पर अपने विचार व्यक्त किये।

६ अप्रैल : सरकारने दिल्लीमे होनेवाले काग्रेस अधिवेशनपर प्रतिवन्ध लगाया।

७ अप्रैल . सी० एफ० एण्ड्रचूजको पत्रमे वताया कि "'आमरण अनशन' कहना भापाका एक भद्दा प्रयोग है . . . यह अनशन एक नये जीवनकी प्राप्ति तक है।"

८ अप्रैल . मीरावहनको लिखे पत्रमे अपने भोजन, कार्य और सोनेका प्रतिदिनका व्यौरा दिया।

११ अप्रैल कमला नेहरूको भेजे गये तारमे इलाहावादमे राष्ट्रीय सप्ताहके दौरान पुलिसके हमलेसे स्वरूपरानीको चोट पहुँचनेपर दु ख प्रकट किया।
लोथियन समितिकी शिमलामे वैठक।

१२ अप्रैल . गावीजी ने नारणदास गाधीको पत्र लिखकर हिदायते दी कि वे अमेरिका तार भेजकर यह स्पष्ट कर दे कि आश्रमकी नीति अपने प्रकाशनोपर विशेष अविकारोका उपभोग करने या दूसरोको वैसा अधिकार देनेकी नही है।

१५ अप्रैल : साथी कैदी शंकरराव देवसे एक पत्रमे उपवास छोडनेकी अपील की।

१८ अप्रैल : सरकारने दिल्ली काग्रेस-अधिवेशनकी स्वागत-समितिपर प्रतिवन्व लगाया।

२१ अप्रैल . सरोजिनी नायडूको वम्वई न छोड़नेका आदेश मिला।

२२ अप्रैल . वम्वईमें सरोजिनी नायडू और दिल्लीमे म० मो० मालवीय गिरफ्तार किये गये।

२४ अप्रैल : दिल्लीमे पुलिसने रणछोडलाल अमृतलालकी अध्यक्षतामे हो रहे काग्रेस-अधिवेशनको तितर-वितर कर दिया; ४०० काग्रेसी गिरफ्तार किये गये।
न्यूयॉर्कके कम्यूनिटी चर्चने गाधीजी को मानव-सेवा पदक देनेकी घोषणा की।

२७ अप्रैल . हरिलाल गाधीको लिखे पत्रमे गाधीजीने कहा : "मैं अभी भी तेरे अच्छे वननेकी आशा नही छोडूंगा, क्योकि मैं आशावादी हूँ।"

२९ अप्रैल : सैम्युअल होरने हाउस ऑफ कॉमन्समे कहा : "सविनय अवज्ञासे सम्बन्ध रखनेवाले किसी भी व्यक्तिके साथ सहयोगका कोई प्रश्न ही नही उठता। यदि श्री गाधी गोलमेज परिषदके दिनोमे जैसे सम्वन्ध थे वैसे ही पुन. स्थापित करनेका रुझान दिखाये, तो उन्हें उसमे कोई कठिनाई पेश नही आयेगी।"

३० अप्रैल मिदनापुरके डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट रॉवर्ट डगलसपर गोली चलाकर उन्हे जख्मी कर दिया गया।

७ मई : ई० ई० डॉयलको पत्र लिखकर खोये हुए पत्रोंकी छानवीन करनेकी प्रार्थना की।

८ मई · काम्पटीमे अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन हुआ।
दक्षिण आफ्रिकामें कुँवर महाराज सिह भारतीय एजेंट नियुक्त किये गये।

१० मई . लन्दनमे\ भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसकी लन्दन-शाखाकी पुन: स्थापनाका निर्णय किया गया।

११ मई : देवदास गाधीको लिखे पत्रमे गाधीजी ने बताया कि जेलसे मुक्त होनेपर उन्हे दूध लेना होगा।
ब्रिटेन जानेसे पूर्व लोथियनने भारतीय सवैधानिक सुधारोपर विदाई सन्देश दिया।

१४ मई : बम्बईमे हिन्दू-मुस्लिम दगे हुए।

१५ मई . फूलचन्द बापूजी को लिखे पत्रमे गाधीजी ने कहा : "खाने-पीनेमे जितना अकुश हम स्वय रखे उतना ही है। और इसी तरह सोना, बैठना, कातना, पीजना सब ठीक-ठीक चल रहा है। . . . पढते तो है ही।"

१८ मई : बम्बईमे मीराबहन ऑर्थर रोड जेलसे रिहा हुई।
मीराबहनको गाधीजी से मिलनेसे रोका गया।
ई० ई० डॉयलको लिखे पत्रमे गाधीजीने माँग की कि सरकार मीराबहनके सम्बन्धमे किये गये निर्णयपर पुन. विचार करे और उन्हे मुझसे मिलनेकी अनुमति दे।

२० मई : विपिनचन्द्र पालका देहावसान।

२१ मई . रणछोडलालको नौ माहकी सख्त कैदकी सजा दी गई।

२२ मई : 'नवजीवन' के प्रबन्धक और 'बम्बई समाचार' के सम्पादकको एक-एक वर्षकी सख्त कैदकी सजा दी गई।
गाधीजी ने पत्र-व्यवहारमे अग्रेजी तारीख डालना शुरू किया।

२४ मई : सत्यचरण लॉको लिखे पत्रमे गाधीजी ने पी० सी० रायके ७० वे जन्म-दिवस पर उनका अभिनन्दन किया।

२६ मई . फैनर ब्रॉकवेकी अध्यक्षतामे हुई ब्रिटिश समाजवादियोकी सभाने काग्रस-जनो, खास तौरपर जेलमे बन्द काग्रेस-जनोको, अपनी बन्धुत्वपूर्ण शुभ कामनाएँ भेजी।

२७ मई : वेरियर एल्विनको पत्र द्वारा यह सूचना दी कि 'लीड काइडली लाइट' भजनके गुजराती रूपान्तरको हर शुक्रवारको सायकाल ७ ४० पर गानेका निर्णय किया गया है और आशा है कि आप भी जहाँ कही भी होगे, ऐसा ही करेंगे।
देवदास गाधीको लिखे पत्रमे नारणदास गाधीके धैर्य, दृढता, साहस, त्याग और विवेक-जैसे गुणोकी प्रशसा की।

२८ मई . 'बगाल आतकवाद-विरोधी अध्यादेश' (बगाल ऐंटी-टेररिस्ट ऑर्डिनेंस) फिर लाग किया गया।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

इ

ई

ख

ग

च

छ

ज

झ

ट

ठ

ड

फ

ब

य

र

ल

व

श

स